आमुख

प्रस्तुत पुस्तक-'राष्ट्रपति डॉ० शंकर दयाल शर्मा के चुने हुए भाषण' प्रकाशन विभाग द्वारा प्रकाशित राष्ट्रपति के भाषणों की श्रृंखला की एक महत्वपूर्ण कड़ी है। पुस्तक में जुलाई 1992 से दिसंबर 1994 तक की अवधि में दिए गए महत्वपूर्ण भाषणों को शामिल किया गया है। इस खंड में राष्ट्रपति डॉ शंकर दयाल शर्मा के प्रतिनिधि भाषण संकलित हैं।

इन भाषणों में पाठक वर्ग को उन राजनीतिक, सामाजिक, सास्कृतिक, धार्मिक और नैतिक प्रभावों का अंतर्दर्शन हो सकेगा, जिन्होंने डॉ शंकर दयाल शर्मा के व्यक्तित्व एव विचारों को संवारा और रूपायित किया है। इन भाषणों में उनका विशाल दृष्टिकोण एवं चिन्तन परिलक्षित होता है।

पुस्तक का मूल उद्देश्य डॉ. शंकर दयाल शर्मा के विचारो की व्यापकता और गहनता तथा देश और विश्व के लोगों के जीवन एवं अवधारणाओं के प्रति उनके दृष्टिकोण को प्रस्तुत करना है। इसी कामना से प्रकाशन विभाग की ओर से यह भेंट पाठकों को समर्पित है।

अनुक्रमणिका

भाग 1

राष्ट्रीय घटनाएं

भाग 2

आर्थिक विकास

भाग 3

शिक्षा, कला और संस्कृति

भाग 4

जनसंचार

भाग 5

विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी

भाग 6

रक्षा

भाग 7

भारत और विश्व

भाग 8

संदेश

देश सेवा और आजादी की रक्षा

इस मौके पर मुझे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, देश के सभी महान नेताओं, शहीदों एव स्वतंत्रता सेनानियों का स्मरण आ रहा है, जिनके सघर्ष और कुर्बानियों के फलस्वरूप हमें आज़ादी मिली तथा हमारे देश में संसदीय लोकतांत्रिक व्यवस्था स्थापित हो सकी।

मैं विनम्रतापूर्वक कहता हूँ कि मैं अपने पद की गरिमा के अनुकूल अपने देश की सेवा करने का प्रयास करूंगा।

मैने अपनी बात विचारपूर्वक कही है, और मुझे लगता है कि आत्मचिंतन का समय उन सभी के लिये है, जो इस महान देश को आगे ले जाना चाहते हैं, जो इस देश को शांति, सौहार्द, सम्पन्नता और सामाजिक न्याय की भूमि के रूप में देखने की ललक रखते हैं—एक ऐसे मजबूत और सगठित देश के रूप में, जो विधि के शासन से पूर्णतया प्रतिबद्ध एव नैतिक एवं चारित्रिक मूल्यो से प्रेरित है; जिसमें आतंकवाद, साम्प्रदायिक और जातिगत भावना, नारी-शोषण तथा गरीबी, अशिक्षा और रोगो जैसी चुनौतियों पर विजय प्राप्त करने की शक्ति है।

यह वर्ष 'भारत छोड़ो आन्दोलन 1942' का स्वर्ण-जयंती वर्ष है। इसलिये मेरा मन महान स्वतंत्रता आंदोलन के समय के आदर्श, साहस और दृढ़-निश्चय की स्मृतियों से ओत-प्रोत है। हमें अपनी आजादी और उस आजादी की उपलब्धियों की रक्षा करनी है। हमें यह याद रखना है कि समानता के बिना आजादी निरर्थक-सी हो जाती है, और सामाजिक तथा आर्थिक न्याय के बिना समानता का अर्थ नहीं रहता।

मैं आशा और प्रार्थना करता हूँ कि अपने इस कार्यकाल के दौरान मैं लोगों की जरूरतें पूरी होते तथा चिन्ताओं को दूर होते देख सकूं, खासकर देहात के लोगो की, जिनका हर दिन अपनी आजीविका, जीवन-यापन और सुरक्षा के प्रति चिन्ता से भरा रहता है।

हम सभी देश के पुनर्निर्माण के लिये प्रयासरत हैं। ऐसे समय में हमें रास्ता

राष्ट्रपति-पद का कार्यभार सभालने के अवसर पर, नई दिल्ली, 25 जुलाई, 1992

दिखाने के लिये हमारे इतिहास के महान नेताओं के विचार हमारे पास हैं। आजादी प्राप्ति के कुछ क्षण पहले ही 14 अगस्त, 1947 को पडित जवाहर लाल नेहरू ने संविधान सभा में कहा था कि "हमें अपने सपनों को सच बनाने के लिये मेहनत करनी होगी। हमारे ये सपने पूरी दुनिया के लिये हैं। सभी मुल्कों और लोगों के लिये हैं। शांति को अविभाज्य समझा गया है, आज़ादी को भी, समृद्धि को भी। ठीक इसी प्रकार इस दुनिया मे बर्बादी को भी अलग-अलग टुकड़ों में बांटा नहीं जा सकता।"

भारत के नागरिको! सर्वधर्मसमभाव की बात हमारे चिन्तन का अग रही है। सर्वधर्मसमभाव अर्थात् सभी धर्मो के प्रति समान आदर की भावना। इस चिन्तन में जीवन जीने का एक तरीका शामिल है, जिसे सभी भारतीयो को स्वाभाविक तौर पर समझना चाहिए तथा हमारे निजी विकास, सामाजिक व्यवहार तथा राष्ट्रीय लक्ष्यो की प्राप्ति के लिये इससे निर्देश लेने चाहिये।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर ने 'भारत के बारे में विचार' सबंधी एक निबंध में बड़ी भावुकता के साथ कहा था कि, "मैं भारत को चाहता हूं। इसलिये नहीं क्योंकि मैं इसके भूगोल की पूजा करता हू या कि मैने इस धरती पर जन्म लिया है, बल्कि इसलिये क्योकि इसने अशाति के युगों में भी उन जीवत शब्दो को सुरक्षित रखा है, जो इसके महान् सपूतो की प्रदीप्त चेतना से निकले थे।"

करीब पाच हजार वर्ष पूर्व अथर्ववेद के 'पृथ्वीसूक्त' मे हमे हमारी सर्वधर्मसमभाव सबंधी दृष्टिकोण की शानदार अभिव्यक्ति मिलती है। 'पृथ्वीसूक्त' मे कहा गया है ·

"जनं बिभ्रती बहुधा विवाचसम्। नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्"

(अर्थात्, यह पृथ्वी, जिस पर विभिन्न विश्वास और चेतना के लोग एक शातियुक्त घर के समान रहते हैं, हम सभी को सुख दे।)

यजुर्वेद में कहा गया है—"मित्रस्य चक्षुषा समीक्षामहे"

(अर्थात्, हम सभी एक-दूसरे को मित्रता की दृष्टि से देखें।)

भगवद्गीता में कहा गया है :

"ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।

मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्या. पार्थ सर्वशः॥"

(अर्थात् जो लोग जिस किसी तरीके से मेरी तरफ आते हैं, मैं उसी तरह से उनकी इच्छाओं को पूरा करता हूँ। इस तरह हे पार्थ! लोग मेरे मार्ग का अनुसरण करते हैं।)

मौर्य सम्राट अशोक के शिलालेख संख्या बारह में सर्वधर्मसमभाव की अत्यंत ही गूढ़ अभिव्यक्ति मिलती है। उसमें लिखा है :

"वह जो अपने धर्म का आदर करता है, और दूसरों के धर्मो की निंदा करता है, दूसरे धर्म को अपने धर्म से हेय समझता है, और अपने धर्म को दूसरे धर्मो से बड़ा मानता है, निश्चय ही अपने धर्म की हानि करता है।"

जैन धर्म का सभी जीवों के प्रति प्रेम, करुणा और सेवा की आध्यात्मिक और बौद्धिक परम्परा भी इसी विचार को आगे बढ़ाती हैं। संत तिरुवल्लुवर के अमर ग्रंथ 'तिरुक्कुरल' में भी हमें बहुदेववाद और एकत्व की यही भावना मिलती है।

भारत में ईसाई धर्म 52 ई0 में तब आया था, जब संत थामस ने केरल में अपना उपदेश दिया था। यह यूरोप में ईसाई धर्म के पहुंचने से शताब्दियों पहले की बात है।

कुछ वर्ष पूर्व मुझे खान अब्दुल गफ्फार खान की सेवा-सुश्रूषा करने का मौका मिला था। बादशाह खान आज़ादी की लड़ाई, अहिंसा और शांति के एक शानदार नायक थे। उनमें इस्लाम की बहुत अच्छी समझ थी। वे कहा करते थे ·

"मैंने सेक्युलरिज्म गाधी से नहीं सीखा। सेक्युलरिज्म मैंने कुरान में पाया।"

बादशाह खान के ये विचार मौलाना अबुल कलाम आजाद द्वारा तर्जुमान-उल-कुरान तथा उनकी अन्य रचनाओं में की गई बौद्धिक व्याख्याओ से पूर्णतया मिलते हैं।

सिक्ख धर्म में हमें सर्वधर्मसमभाव के सर्वोत्तम विचार मिलते हैं। गुरु गोविंद सिंह द्वारा रचित इन पंक्तियों को देश के हर व्यक्ति को याद रखना चाहिए। ये पंक्तियां हैं :

देहुरा मसीत सोई, पूजा ओ नमाज ओई,
मानस सभै एक पै अनेक को प्रभाव है।
अलह अभेख सोई, पुरान ओ कुरान ओई,
एक ही सरूप सभै, एक ही बनाव है।

(अर्थात् मंदिर और मस्जिद, पूजा और नमाज तथा पुराण और कुरान में कोई फर्क नहीं है। सभी मानव जाति समान है तथा एक ही ब्रह्म की अभिव्यक्ति हैं।)

सभी धर्मो के मूल तत्व की आंतरिक एकता को स्वीकार करना सभी नागरिकों के लिये आवश्यक है। इसकी आवश्यकता देश की प्रगति के लिये भी है, तथा इसलिये भी है ताकि भारत विश्व में आपसी समझदारी, शांति और विकास में अपना योगदान कर सके। एक बार डॉ0 जाकिर हुसैन ने कहा था :

''हम चाहते हैं कि सभी राष्ट्रों में व्यक्ति और समूहो के बीच शांति हो। ये सभी एक-दूसरे पर निर्भर हैं। यदि 'सर्मन आन दि माऊंट' की आत्मा, बुद्ध का करुणा-दर्शन, हिदू धर्म का अहिंसा-विचार तथा ईश्वर की इच्छा के प्रति समर्पण का इस्लाम का आग्रह, इन सभी को इकट्ठा किया जाये, तो हम विश्वशांति का सवसे कारगर उपाय ढूंढने मे सफल हो जायेंगे।''

इन क्षणो में मुझे लग रहा है कि हम सभी के ऊपर सेवा का गुरुतर दायित्व है। कोई भी महान कार्य आत्मा से महान मांग करता है। यदि हम अपने विचार, कार्य और आत्मा से सचमुच भारतीय हैं, तो हमें पूरी दुनिया के लिये समन्वय सौहार्द, शाति तथा सम्पन्नता का मार्ग प्रशस्त करना होगा, और इस प्रकार हम सही रूप मे मनुष्य की चेतना को मानव कल्याण के लिये प्रभावित कर सकेगे।

आत्मीय व्यक्तित्व : पं० रविशंकर शुक्ल

शुक्ल जी से मेरा करीव का सम्पर्क रहा था। राज्य के पुनर्गठन में तथा नवगठित राज्य के पहले मंत्रिमंडल में मुझे उनके साथ काम करने का अवसर मिला था। उनके साथ विताये क्षणों की कई स्मृतियाँ आज भी मेरे मन और मस्तिष्क में जीवित हैं। हम लोग, जो उनसे उम्र में काफी छोटे थे, वरावर आवश्यक निर्देशन और प्रेरणा पाते रहते थे। अपने सहयोगियों के साथ उनका व्यवहार अत्यंत आत्मीय होता था। अपनी सरलता, सहजता और सहृदयता के कारण ही वे लोगों के वीच 'कक्का जी' के नाम से लोकप्रिय थे। उनका रहन-सहन, उनका पहनावा तथा उनके विचार-व्यवहार मुझे मालवीय जी और नरेन्द्र देव जी के काफी करीव लगते थे। शुक्ल जी 'सादा जीवन उच्च विचार' के सिद्धांत के हिमायती थे, जो उन्हें वापू से मिला था।

रविशंकर शुक्ल जी शुरू से ही एक स्वतंत्र चेतना वाले व्यक्ति थे। और मैं समझता हूँ कि उनकी इसी भावना ने उन्हें हमारे देश की आजादी की लड़ाई से जोड़ा और राष्ट्र सेवा की दिशा में प्रेरित किया। उन्होंने आरम्भ में ही साम्राज्यवादी शासन की सेवा करने के वजाय अध्यापन करना उपयुक्त समझा था। वाद में वे वकालत करने लगे और एक योग्य वकील के रूप में प्रतिष्ठा भी पाई। इसके वावजूद वे अपने आपको संतुष्ट नहीं कर सके। वाद में उन्हें यह संतुष्टि स्वतंत्रता आंदोलन में सक्रिय रूप से भाग लेने में मिली। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के प्रति उनके मन में शुरू से ही जिज्ञासा थी। वे सन् 1904 के वम्वई अधिवेशन तथा 1910 के इलाहावाद अधिवेशन में उत्सुकतावश गये थे। वहाँ उन्होंने वापू को देखा था, और मालवीय जी के भी सम्पर्क में आये। इन सम्पर्कों का नतीजा यह हुआ कि सन् 1920 के कांग्रेस अधिवेशन में गांधी जी के निकट सम्पर्क ने उनके जीवन को एक नई दिशा ही दे दी और अगले वर्ष वे कांग्रेस के विधिवत सदस्य वन गये। वापू का उन पर काफी प्रभाव रहा। गांधी जी जव नवम्वर 1933 में छत्तीसगढ़ के दौरे पर गये थे, तव वे शुक्ल जी के ही घर पर रुके थे। इस दौरे

पंडित रविशंकर शुक्ल के 115वें जन्म दिवस पर, नई दिल्ली, 2 अगस्त, 1992

मे शुक्ल जी हमेशा बापू के साथ रहे तथा बड़ी मात्रा में चदा इकट्ठा किया। बापू रविशकर जी को 'शुक्ल जी' कहा करते थे।

इसके बाद रविशंकर जी ने स्वतत्रता संघर्ष के हर महत्वपूर्ण आन्दोलन में भाग लिया। इन आन्दोलनों में उनकी भागीदारी इतनी सक्रिय होती थी कि उपनिवेशवादी शासकों को उन्हें गिरफ्तार करना पड़ता था। उनकी गिरफ्तारी का सिलसिला सन् 1921 से चला जो 'भारत छोड़ो आन्दोलन' तक चलता रहा। मै यह मानता हूँ कि शुक्ल जी की इन गिरफ्तारियों का उस क्षेत्र मे बड़ा गहरा असर हुआ। शुक्ल जी अपने सामाजिक और राजनैतिक कार्यो के कारण अपने क्षेत्र में काफी लोकप्रिय हो गये थे। इसलिये उनकी गिरफ्तारियों ने उस क्षेत्र के आम लोगों में एक जबर्दस्त राजनैतिक चेतना को जन्म दिया और उसे मजबूत बनाया। ऐसे ही कार्यो से हमारे देश को आजादी मिल सकी।

शुक्ल जी के बारे मे कहा जाता था कि, "वे पुष्प से कोमल किंतु चट्टान से कठोर" व्यक्ति थे। यह बात मुझे सही मालूम पड़ती है। वैचारिक दृष्टि से वे लोकमान्य तिलक के विचारों के समर्थक थे। उन्होंने अपने क्षेत्र में गणेश उत्सव की शुरुआत की थी, तथा 'होमरूल लीग' की स्थापना भी की। उनमें अपने विचारों के प्रति जबर्दस्त दृढ़ता थी। लेकिन दूसरी ओर वे एक संवेदनशील और सहज व्यक्ति भी थे। लोगो के साथ उनका व्यवहार कुटुम्ब जैसा होता था। वे हमेशा दूसरों की सहायता के लिये तत्पर रहते थे। विधान सभा में वे हमेशा अपने सहयोगियो के बचाव के लिये खुद आगे आते थे। मैं उनके मत्रिमंडल में शिक्षा एव विधि मत्री था। मुझे याद है कि एक बार मुझसे माध्यमिक शिक्षा को नि.शुल्क करने के सबंध में राज्य सरकार की भावी योजना के बारे में प्रश्न पूछा गया था, तब उन्होंने उसका उत्तर स्वयं उठकर दिया था। ऐसे व्यवहार से वे अपने सहयोगियों का मन जीत लेते थे।

पडित रविशंकर शुक्ल जी को मैं एक 'दूरदर्शी शिल्पकार' मानता हूँ। उन्होंने अपने छोटे से कार्यकाल के दौरान मध्यप्रदेश के विकास की जो नींव रखी थी, उसमें उनकी दूरदर्शिता की झलक मिलती है। आर्थिक, औद्योगिक तथा शैक्षणिक क्षेत्र में उनका योगदान ऐतिहासिक महत्व का है। वे अपने राज्य के संसाधनों तथा उसके वर्तमान और भविष्य की आवश्यकताओ से भलीभांति परिचित थे, और उसी के अनुकूल उन्होंने योजनायें बनाई और अपने समय में उन्हें लागू किया। मुझे याद है कि मध्यप्रदेश के प्रथम मुख्यमंत्री के रूप में उन्होंने जनता के नाम

अपने पहले संदेश में राज्य के प्राकृतिक एवं सांस्कृतिक वैभव की बड़ी खूबसूरती के साथ चर्चा करते हुए लोगों से धर्म, जाति, क्षेत्र और सम्प्रदाय की भावना को मिटाकर राष्ट्र निर्माण में जुट जाने की अपील की थी। उन्होंने कहा था कि, ''यहाँ वन्यश्री अपार है। ऊपर लहलहाते खेत हैं, और नीचे भूमि रत्नगर्भा है। पत्थर से लेकर हीरा तक, सभी कुछ यहाँ बिखरा है। आज आवश्यकता है कि धर्म, जाति, सम्प्रदाय और क्षेत्रों का भेदभाव भुलाकर प्रदेश की .... जनता एक मन-प्राण होकर नए विशाल मध्यप्रदेश की कल्पना को सत्य बनाने में जुट जाए।'' ठीक इसी प्रकार अपने राजनैतिक उद्देश्यो की चर्चा करते हुए विधानसभा में एक प्रश्न का उत्तर देते हुए उन्होंने कहा था, ''हम चाहेंगे कि पूरे मध्यप्रदेश में समानता आ जाये और जहाँ कहीं विषमता होगी, उसको हम दूर कर देंगे। जो चीज आगे बढ़ गई है, उसको हम पीछे नहीं हटायेंगे, और जो पीछे हैं, उसको हम बराबर ले आयेंगे। '' मैं समझता हूँ कि रविशंकर शुक्ल जी की ये बातें भले ही एक राज्य के बारे में कही गई हों, लेकिन ये पूरे देश के लिये सही हैं, और जरूरी भी हैं। संसाधनों की दृष्टि से हमारा देश विश्व के धनी देशों के समकक्ष है। आवश्यकता इस बात की है कि हमारे लोग आपसी टकराव, और कलह के रास्ते को छोड़कर एकजुट होकर कड़े परिश्रम से उसके उचित दोहन में लगें। मुझे लगता है कि हमारे राष्ट्र के पुनर्निर्माण के लिये इसके अतिरिक्त कोई भी दूसरा रास्ता नहीं है। यह बात वर्तमान पीढ़ी के लिये उतनी ही जरूरी है, जितनी कि भावी पीढ़ी के लिये। हमारे देश के लोग जब तक आपसी टकराव में अपनी ऊर्जा का क्षरण करते रहेगे, तब तक हमारी नदियों का पानी और किसान तथा मजदूरों का पसीना यूँ ही बेकार बहता रहेगा। बापू, पंडित नेहरू, हमारे स्वतंत्रता सेनानियों तथा पंडित रविशकर शुक्ल जैसों के सपनों को साकार करना देशवासियों का एक पवित्र कर्तव्य है, जिसे किसी भी स्थिति में पूरा किया जाना चाहिए। मैं समझता हूँ कि यदि आज लोग ऐसा करने का संकल्प ले सकें, तो यह उस नेता को दी गई सबसे उपयुक्त श्रद्धांजलि होगी, जिसने अपने जीवन में संघर्ष, त्याग और श्रम का मार्ग अपनाया था, और एक शक्तिशाली राष्ट्र के सपने संजोये थे।

शहीदों को श्रद्धांजलि

राजनैतिक आज़ादी पाने में हमारे राष्ट्रीय इतिहास के अनेक महान और दैदीप्तमान व्यक्ति रहे हैं। इसमें वे प्रेरणादायक व्यक्ति हैं, जिन्होंने अत्यन्त कठोर यातनायें सही किन्तु फिर भी अपने उद्देश्यों की रक्षा की। इसमे वे शहीद भी शामिल हैं, जिन्होंने भारत को आजाद कराने के लिये अपने प्राणों की आहूति दे दी। हमारा यह सघर्ष कई पीढ़ियों से जारी रहा, और अन्त में समस्त जनता के कार्यो और गतिशीलता की शक्ति से ओजस्वी अहिंसात्मक क्रान्ति द्वारा लक्ष्य प्राप्ति सम्भव हुई। हमें अपने इस इतिहास पर गर्व है। आइए, हम सभी भारत के उन वीरों और वीरांगनाओं को अपनी हार्दिक श्रद्धाजलि दें, जिन्होंने देश की आजादी के लिए अपना सर्वस्व दिया।

साथियो! मैं भारत की लोकचेतना की आन्तरिक शक्ति तथा विपरीत परिस्थितियों पर विजय पाने की उसकी क्षमता के प्रति अपनी दृढ़ आस्था व्यक्त करता हूँ, जो भारत की विशिष्टता है, तथा जो पीढ़ियों से विभिन्न क्षेत्रों में हमारी अनुपम उपलब्धियों में व्यक्त होती रही है। मैं हमारे लोगों की मूलभूत नैतिक और चारित्रिक मूल्यों के प्रति दृढ़ता तथा हमारे राष्ट्रीय लक्ष्यों को प्राप्त करने में देश की क्षमता के प्रति भी आस्थावान हूँ।

मानवीय गरिमा और स्वतंत्रता, सर्वधर्मसमभाव, लोकतंत्र और सामाजिक न्याय भारतीय जीवन के मानवतावादी आदर्शो का प्रतिनिधित्व करते हैं। ये सभी हमारे संविधान में स्वीकृत दर्शन और राष्ट्रीयता के सच्चे आधार हैं। इन आदर्शो ने हमारी आजादी के गौरवशाली संघर्ष को प्रेरित किया था। आजादी के पहले और आज़ादी के बाद के हमारे सभी प्रयासों की सफलता में इन आदर्शो के प्रति हमारी प्रतिबद्धता और अनुकरण को देखा जा सकता है। इसी प्रकार सभी प्रकार की असफलता और निराशा का कारण इन आदर्शो पर न चल पाना है। अपनी मातृभूमि को चाहने वाले देशभक्त नागरिको के रूप में हमे इन महान् आदर्शो पर चलना चाहिए तथा इन्हे अपने जीवन में उतारना चाहिए। तब ही हमारा महान् राष्ट्र सच्चे राष्ट्रीय और व्यक्ति-विकास के रास्ते पर आ सकेगा।

भारत छोड़ो आदोलन की 50वीं वर्षगाठ के अवसर पर राष्ट्र के नाम प्रसारण, दिल्ली, 14 अगस्त, 1992

सहनशीलता और समझदारी की हमारी प्राचीन परम्परा को ध्यान में रखते हुए हमारे विविधायुक्त समाज में सर्वधर्मसमभाव के सच्चे मूल्यों का सम्मान करना बहुत जरूरी है। भौगोलिक, जलवायु, भाषा तथा स्थानीय रीति-रिवाजों में व्यापक भिन्नता के बीच हमें राष्ट्रीय एकता के सर्वोत्तम मूल्यों तथा भारत के एकत्व को पूरी तरह समझना जरूरी है, जो इसकी सारी विभिन्नता को एक कर देता है। धन कमाने के अवसरों तथा धन के वितरण में फर्क होने के बावजूद सामाजिक न्याय, लोकतंत्र और विधि के शासन के सिद्धान्त का सम्मान करना महत्वपूर्ण है। एक ऐसे विश्व में, जबकि भौतिक प्रवृत्तियो का बढ़ना स्वाभाविक-सा है, हमें देश के कल्याण के लिए प्रत्येक नागरिक के कर्तव्य के महत्व को समझना आवश्यक है। साथ-ही-साथ अपने व्यक्तिगत, सामाजिक और राष्ट्रीय कार्यो में अटल नैतिक आधार बनाए रखना है। गरीबी की समाप्ति के प्रयासों में हमें सेवा के मूल्य तथा श्रम की महत्ता को याद रखना आवश्यक है। विज्ञान के विकास तथा अन्तर्राष्ट्रीय अन्तर्सम्बन्धों के अभूतपूर्व क्षणों में हमें नई तकनीकी एवं आधुनिकता के सकारात्मक तत्वों को ग्रहण करना चाहिए, साथ ही अपनी प्राचीन संस्कृति के उन्नत तत्वों से भी जुड़ा होना चाहिए। आइये, हम अपने राष्ट्रीय मूल्यों और जन-चेतना द्वारा पोषित इस भावना का स्वागत करे कि "उदार एवं शुभ विचार सभी दिशाओं से आने दो।" आजादी के पैंतालीस वर्षो के बाद, पहले से भी अधिक, हमें उस प्रबल सेवाभाव, देशभक्ति और त्याग के साथ कार्य करना चाहिए, जिसने आज़ादी के लिए हमारी राष्ट्रीय शक्ति का काम किया था।

हम भारतवासियों के सामने सकारात्मक उन्नति का एक बड़ा परिदृश्य है। लोकतंत्र की स्थापना तथा लोकतांत्रिक सरकार की संस्थाओं का सही कार्य करना हमारी आशा की पूर्ति के लिए केन्द्रीय महत्व के हैं। नेताओं तथा असाधारण व्यक्तित्व वाले सासदों के निर्देशन में लोगो की ताकत ने भारत को वर्तमान स्थिति और शक्ति तक लाया है। हमें अपने किसानों, जवानों, मजदूरो, दस्तकारो एवं उद्यमियों, वैज्ञानिकों, शिक्षकों, डाक्टरो, लेखकों, कवि और कलाकारों, हमारे सामाजिक और स्वैच्छिक कार्यकर्ताओ, हमारी न्यायपालिका, प्रशासकीय सेवाओं और सशस्त्र सेनाओं पर गर्व है। हमारे देश में विश्व की तुलना मे प्रतिभाशाली और समर्पित स्त्री-पुरुषों की सम्पदा है। राष्ट्रीय पुनर्निर्माण में मानव के इस संसाधन और क्षमता की अत्यधिक शक्ति का अत्यंत सकारात्मक प्रभाव होगा, यदि इसे सच्ची लोकतांत्रिक दृष्टि से उपयोग में लाया जाये। यह एक निर्णायक बात है कि देश के सभी लोग पूरे मन से आजादी के लाभो की रक्षा करें, और उसमे वृद्धि करें।

हमें अपने इन उद्देश्यों को प्राप्त करने में आने वाली चुनौतियों के बारे में भी जागरूक रहना चाहिए। आतंकवाद मादक पदार्थ के व्यापार से सांठगांठ करके धर्म का वेश ओढ़कर वेकसूर बच्चों, महिलाओं और पुरुषों पर कहर ढाता है। हम आतंकवाद के शिकार ऐसे परिवारों के पूर्णरूप से साथ हैं, उनके दु:ख मे सहभागी हैं। हमें आतंकवाद का पूरी तरह से खत्म होने तक उसका कड़ा मुकाबला करना है। साम्प्रदायिक भावना और जातिवाद का मुकाबला करना है। ये घातक बुराइयाँ हमारे राष्ट्रीय जीवन पर हावी हो रही हैं। लेकिन लोगों की दृढ़ इच्छा शक्ति से हमारे देश को इन बुराइयों से छुटकारा मिल सकता है। हममें से हर एक को इसे प्राप्त करने के लिए अपना-अपना कर्तव्य निभाना होगा। इसके लिये एक राष्ट्रव्यापी कोशिश की जरूरत है, और हमें इसमें सफल होने के लिए विना थके निरन्तर प्रयत्न करना है।

विश्व की निगाहें हमारे ऊपर टिकी हें। भारत ने मानवता को बहुत कुछ दिया है। विश्व के लिये भारत का संदेश शांति, मित्रता और सहयोग का रहा है। हमें सभी के सुखमय भविष्य के लिए विश्व की घटनाओं में रचनात्मक भूमिका निभानी है।

महान पुरुषों से देश सेवा की प्रेरणा

पुणे महाराष्ट्र की सांस्कृतिक राजधानी है और यहां आते हुए मुझे बहुत आनन्द हुआ है। पुणे को विद्या का पीहर माना जाता है और आधुनिक उद्योगों में भी अग्रसर है। भारत के औद्योगिक शहरों में पुणे का स्थान काफी ऊचा है। इस शहर ने पुरानी चीजों से अच्छी चीजों का चयन किया है और नई चीजो मे से हर क्षेत्र में अच्छा नाम कमाया है। पुणे हर दृष्टि से परिपूर्ण है।

हमारा देश उत्सव प्रिय देश है। देश के कोने-कोने में कोई न कोई त्यौहार मनाया जाता है। जिस तरह से उत्तर भारत मे होली, बगाल में दुर्गा पूजा, तमिलनाडु में पोंगल और गुजरात मे नवरात्र उत्सव मनाया जाता है, उसी तरह से महाराष्ट्र में गणेश उत्सव बड़े उत्साह से मनाया जाता है। गणेश उत्सव महाराष्ट्र की जनता के जीवन का एक अविभाज्य अग बन गया है।

श्री गणेश की उपासना सिर्फ महाराष्ट्र मे ही नही की जाती, बल्कि देश के अन्य स्थानों में भी की जाती है। किसी भी शुभ कार्य की शुरुआत गणेश की पूजा से की जाती है। ज्ञानेश्वरी के शुरू मे जो दोहा है मैं उसे उद्धृत करना चाहता हूँ:

ॐ नमोजी आद्या। वेद प्रतिपाद्या। जय जय स्वसवेद्या आत्मरूपा॥ 1॥
देवा तूचि गणेशु। सकल मति प्रकाशु। म्हणे निवृत्तिदासु।अवधारिजो जी॥ 2॥

'ॐ' कार और ब्रह्मा, विष्णु, महेश इन तीनो के बारे में जो एकरूपता है उस सन्दर्भ में तुकाराम महाराज कहते हैं·

ऊँकार स्वरूप गणेशाचे रूप जो तिन्ही देवांचे। जन्मस्थान॥ 1॥
अ-कार तो ब्रह्मा। उ-कार तो विष्णु। म-कार महेश्वर ऐसे जाण॥ 2॥
ऐसे तिन्ही देव। गणेश व्यसति। तो हा गणपति। महाराज॥ 3॥

प्राचीन शिल्पकला के आधार पर गणेश की मूर्ति बनाई जाती है। उसमें मूल कल्पना, ज्ञान-विज्ञान को मूर्त स्वरूप देने की कोशिश की जाती है। ज्ञानार्जन, विद्यार्जन के सहारे प्रगति की जाती है। प्रतिकूल स्थिति पर मात की जाती है।

पुणे महोत्सव के उद्घाटन के अवसर पर, पुणे, 4 सितम्बर, 1992

शुभ, आनन्दमय और अनुकूल स्थिति निर्माण की जा सकती है। ऐसी भावनाओं का गणेश केन्द्र बिन्दु हैं। इस तरह का ज्ञान और विद्या ही मानव को सही अर्थ में मुक्त कर सकती है, "सा विद्या या मुक्तये" इस तरह से गणेश शब्द के कई अर्थ हैं। गणेश का मतलब गणों का अधिपति है और शौर्य का प्रतीक भी है।

इस तरह से संकट को दूर करने वाले, सुख देने वाले गजानन्द की लोग अपने घर में पूजा करते हैं। गणेश उत्सव को सार्वजनिक स्वरूप लोकमान्य तिलक ने दिया। पहला सार्वजनिक गणेश उत्सव पुणे शहर में 1893 में मनाया गया। विदेशियों की सत्ता भारतीयों को आपस में झगड़ने के लिये हमेशा उकसाती थी। भारतीय जनता में एकता न हो, इसके लिए वह हमेशा कोशिश करते थे। देशप्रेम से प्रेरित होकर उनको इकट्टा लाने के लिए, उनमें जागृति करने के लिये, सामान्य जनता में आजादी की प्राप्ति के लिये आत्मविश्वास पैदा करने के लिये यह उत्सव शुरू किया गया था। इसी उद्देश्य से तिलक ने शिव जयन्ती उत्सव भी सार्वजनिक तौर पर मनाना शुरू किया। 1857 की क्राति के बाद ब्रिटिश सरकार इस तरह के धार्मिक उत्सवों मे जनता के एकत्रित होने में पाबंदी नही लगा सकती, इस तरह की भावना तिलक के मन में आ गई और इस स्थिति का उन्होंने कुशलता से लाभ उठाया। 1907 में गणेश विसर्जन के समय बोलते हुए उन्होंने जो भाषण किया था उसमें से कुछ वाक्य मैं उद्धृत करता हूँ:

"गणेश की आराधना करते वक्त स्वतत्रता और साम्राज्य की माग करने की हमारी परम्परा है . . आप इस शब्द का मतलब भूल गये .. कई सालों से हम इन शब्दों को तोते जैसा रट रहे थे . .. स्वतंत्रता मिलनी चाहिये, इस तरह की भावना हरेक के मन में होनी चाहिये। अब यह भावना ध्यान में रखते हुए गणेश उत्सव मनाना चाहिये .. अगले गणेश उत्सव तक आपके मन में स्वतंत्रता के लिये और तीव्र भावना होगी, ऐसी मैं कामना करता हूँ आपकी कोशिशों को एक न एक दिन फल मिलेगा। स्वतंत्रता और साम्राज्य, यह समान अर्थ के शब्द नहीं हैं ... आप शुरुआत करो, आपकी इच्छापूर्ति करने का सामर्थ्य श्री गणेश में है। स्वतत्रता प्राप्ति के लिये मन में निश्चय करो।"

इस तरह से महाराष्ट्र के गणेश उत्सव को आजादी की लड़ाई का उज्जवल इतिहास है, इस इतिहास और परम्परा की शताब्दी आज हम मना रहे हैं।

गणेश उत्सव के बहाने पिछले चार साल से जो पुणे महोत्सव चल रहा है, मैं उसको अलग दृष्टि से देखता हूँ। देश और विदेशों से हजारों पर्यटक यहां

आते हैं और यहां की जनता और संस्कृति के बारे में जानकारी हासिल करते हैं, यह बात मेरी दृष्टि से महत्वपूर्ण है। महाराष्ट्र के लोग देशप्रेमी, मेहनती, अनुशासित, संवेदनशील आदि गुणों के लिए प्रसिद्ध हैं। इन गुणों के कारण महाराष्ट्र की और देश की प्रगति और समृद्धि के लिए मदद मिली है। आज महाराष्ट्र देश के आर्थिक व्यवहारों का केन्द्र स्थान बन गया है। औद्योगिक, कृषि, सहकारी और दूसरे क्षेत्रों में जो प्रगति हुई है उसके कारण महाराष्ट्र एक प्रगतिशील राज्य बन गया है। महाराष्ट्र की शिल्प कला, चित्रकला, संगीत, रंगभूमि, वाङ्मय और संस्कृति देश के कोने-कोने में छाई हुई है। महाराष्ट्र के अजन्ता, एलोरा, कार्ले, कान्हेरी, घारापुरी आदि स्थानों पर जो शिल्पकला के उदाहरण देखने को मिलते हैं वह सर्वोत्कृष्ट है। राजा रवि वर्मा जैसे चित्रकार यहां हो गए थे। मराठी नाटक की जो परंपरा है उसका सबको गर्व है। चित्रपट और बोलपटों की शुरूआत महाराष्ट्र में हुई थी। यहां का संगीत भी विविधतापूर्ण और समृद्ध है। महाराष्ट्र प्रदेश के केन्द्र मे है और यहां विविध धार्मिक और सामाजिक भावनाओं का सगम देखने को मिलता है। महाराष्ट्र के सत ज्ञानेश्वर, तुकाराम, एकनाथ, नामदेव, सावता माली, चोखामेला, बंका, जनाबाई आदि संतों ने समता और विश्व-बंधुत्व की भावना देश में फैलाई। जातिभेद और धर्मभेद को दूर रखकर सर्वधर्मभावना की जोत जलाई। इन भावनाओं से प्रेरित होकर श्री छत्रपति शिवाजी महाराज ने अनेक कार्य किए और गरीबों के कल्याण के लिए उन्होंने राज्य की स्थापना की। यह भगवान का राज्य हैं, इस भावना से प्रेरित होकर उन्होंने कारोबार किया। महाराष्ट्र की भूमि सामाजिक समता के लिए लड़ने वालों की और गलत परंपराओं के खिलाफ आवाज़ उठाने वालों की भूमि है। अगस्त क्रान्ति की शुरुआत बम्बई के सुप्रसिद्ध गोवालिया टैंक, जिसे आज हम अगस्त क्रान्ति मैदान कहते हैं, इस स्थान पर पचास वर्ष पहले हुई थी। उस समय महात्मा गान्धी, पं0 जवाहर लाल नेहरू जैसे नेता पुणे और अहमदनगर की जेलों में बन्द थे। कस्तूरबा गांधी और महादेव भाई का अंत भी आग़ा खां पैलेस में हुआ था। महाराष्ट्र में करीब-करीब दो सौ स्थानो पर आज़ादी के दीवाने शहीद हुए थे। इस महोत्सव के वहाने महाराष्ट्र की अनेक गौरवशाली परंपराओं की जनता को जानकारी मिल जाएगी। इस तरह की मैं कामना करता हूँ।

राष्ट्रीय एकात्मकता को मजबूत करने की कोशिश हम लगातार कर रहे हैं। जिन लोगों ने राष्ट्रीयता की भावनाओं से हमें अवगत कराया, ऐसे नेताओं के जीवन का अध्ययन होना आवश्यक है। इस सन्दर्भ में महाराष्ट्र के महान पुरुषों की एक

सूची मेरे सामने आती है : छत्रपति शिवाजी महाराज, थोरले बाजीराव, माधवराव पेशवा, सरदार शिंदे, होलकर, गायकवाड आदि राजा-महाराजाओं ने आज़ादी की लड़ाई लडी हे। अहिल्याबाई होलकर का नाम भारत के सभी तीर्थस्थानों पर लिया जाता है। संत रामदास की महाराष्ट्र और राष्ट्र की संकल्पना व्यापक थी। इसी समय संत नामदेव ने कन्याकुमारी से पंजाब तक कई स्थानों पर जाकर राष्ट्रीय एकता बनाने का कार्य किया। संत नामदेव के अस्सी दोहे पवित्र गुरु ग्रन्थ साहब में समाविष्ट किए गए हैं। 1857 की क्रान्ति का नेतृत्व झांसी की रानी लक्ष्मीबाई, नाना साहेब पेशवा और तात्या टोपे आदि लोगों ने किया था। यही कार्य स्वतन्त्रता प्राप्ति तक चलता रहा। देश को आजादी का संदेश देने वाले तिलक, दादा भाई नोरोजी, फिरोजशाह मेहता, गोखले, आगरकर जैसे महान नेता महाराष्ट्र के थे। महात्मा फुले, डा0 अम्बेडकर, विट्ठल रामजी शिंदे, महर्पि कर्वे, कोल्हापुर के शाहू महाराज, आदि समाज सुधारक और वासुदेव बलवंत फडके, वीर सावरकर जेसे क्रान्तिवीर महाराष्ट्र के थे। भूदान यज्ञ के जनक विनोबा भावे जैसे महान पुरुपो को महाराष्ट्र ने देशसेवा के लिए दिया है। इस गणेश उत्सव के बहाने उन महान पुरुपो का स्मरण करना आवश्यक है जिससे हमें देश सेवा के लिए प्रेरणा मिल सके।

सौ साल पहले लोकमान्य तिलक ने जिस उद्देश्य से सार्वजनिक गणेश उत्सव की शुरुआत की थी, उस उद्देश्य को ध्यान में रखते हुए आज के सन्दर्भ मे भी यह महत्वपूर्ण है। आज फिर एक बार हमें आध्यात्मिक, सांस्कृतिक, सामाजिक, और भावनात्मक एकता की आवश्यकता है। यहां पेश होने वाले विविध कार्यक्रमों में इस दृष्टि से कोशिश की जाएगी, ऐसी मुझे उम्मीद है।

लोकमान्य तिलक ने देश की जनता की भावनात्मक एकता के लिए जो कोशिश की थी उसमें उन्होंने भापा को भी महत्व दिया था। अलग-अलग भापाओं द्वारा किया गया विचारों का आदान-प्रदान भावनात्मक एकता बढ़ाता है। स्वाभिमान के लिए राष्ट्रभापा का उपयोग करना चाहिए। तिलक की भावनाओं के अनुरूप राष्ट्रीय एकता के प्रयास होने चाहिए।

मेंने खुद भी इसके लिए कोशिश की। ज्ञानेश्वरी का हिन्दी मे भापान्तर किया और गुरु चरित्र का भी हिन्दी भापान्तर मध्य प्रदेश की जनता ने किया। "तिरुकुरल" का भी हिन्दी भापान्तर किया गया है। इस तरह की कोशिश महाराष्ट्र और दूसरे राज्यो मे भी होनी चाहिए। देश की सभी भापाएं महत्वपूर्ण हैं और हमारी महान

संस्कृति का यत्न उनके द्वारा किया जाता है। इस भावना से प्रेरित होकर मैं आपके सामने राष्ट्र की एक महान भापा मराठी में बोल रहा हूँ।

पं0 जवाहरलाल नेहरू हमेशा भारत की विविधता मे एकता के बारे में बोलते थे। इस तरह के उत्सव हमारे देश की विविधता की और एकता की झलक दिखाते हैं। साथ-साथ सांस्कृतिक, सामाजिक और भावनात्मक एकता को मजबूत बनाते हैं। स्वतन्त्रता की लड़ाई के बाद हमारा राष्ट्र एकता से बंधा है। मानव जाति के कल्याण के लिए यह एकता और मजबूत बनानी चाहिए।

स्त्री-पुरुष समानता

भारत-रत्न कर्वे जी को प्रोफेसर कहा गया, डॉक्टर कहा गया, लेकिन मुझे उनके लिए सबसे उपयुक्त नाम 'महर्षि कर्वे' जान पड़ता है। हमारी संस्कृति मे महर्षि को एक ऐसा योगी कहा गया है, जो समस्त विश्व को एक दृष्टि से देखते हुए अपने आप को उसके लिए समर्पित कर देता है। श्रीमद्भगवद्गीता के अध्याय 6 के श्लोक 32 में योगी के गुण बताते हुए कहा गया है :

आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति योऽर्जुन।

सुखं वा यदि वा दु·ख स योगी परमो मत· ॥

अर्थात् जो समस्त प्राणियों को अपने ही समान जानकर सबको समभाव से देखता है और सुख तथा दु:ख को भी समभाव से देखता है, वह परम श्रेष्ठ योगी है।

कर्वे जी के जीवन-चरित्र से परिचित हर व्यक्ति को यह लगेगा कि उनका सीधा-साधा मंत्र था—नि:स्वार्थ भाव से सेवा-कार्य करना। उनकी इस नि:स्वार्थ सेवा-भाव की प्रशंसा बापू ने 23 फरवरी, 1916 को डॉ0 कर्वे द्वारा स्थापित 'भारतीय महिला विश्वविद्यालय' में भाषण देते हुए की थी। बापू ने उस समय कहा था कि, "मुझे सचमुच मे यह स्वीकार करना चाहिए कि उनका (कर्वे जी का) उत्साह अप्रतिम है वे सत्य के अवतार है . , . हमारे पास आत्मत्याग की वह आत्मा नहीं है, जैसी कि मुझे पूना में मिली।" कहना न होगा कि डॉ0 कर्वे ने अपना सारा जीवन नि:स्वार्थ-सेवा में लगा दिया था। सन् 1908 में निष्काम कर्म का व्रत लेते हुए उन्होंने अपने-आपको 'निष्काम कर्म मठ' को समर्पित कर दिया था। उनकी आत्मकथा 'लुकिंग बैक' के पृष्ठ 90 पर इस बात का उल्लेख है कि उन्होंने सरल, शांत और साधु-जीवन की प्रतिज्ञा ली थी। निष्काम सेवाभाव के प्रति उनके मन में कितनी गहरी आस्था थी, और किस प्रकार यह भावना उनके हर कार्य के केंद्र में थी, इसके प्रमाण के लिए मैं 1902 में जारी किए गए उनके वक्तव्य का उल्लेख करना चाहूँगा। उन्होंने कहा था कि, "जिस अभिप्राय

पुणे नगर निगम द्वारा स्थापित भारत-रत्न घोंडो केशव कर्वे जी की प्रतिमा का अनावरण करते हुए पुणे, 4 सितम्बर 1992

से आश्रम की स्थापना हुई थी, और इसे चलाया जा रहा है, वह तभी पूरा होगा, जब इसमें शिक्षा पाकर और इसमें काम करके निःस्वार्थ-भाव से समाज-सुधार को ही जीवन का लक्ष्य मानकर मानव की सेवा करते हुए संसार-यात्रा करने वालों का एक वर्ग पैदा हो सके।'' मैं यह मानता हूँ कि जब तक महर्षि कर्वे जी द्वारा अपेक्षा की गई ऐसी भावना नहीं आएगी, तब तक हमारे राष्ट्र और समाज के निर्माण का काम पूरा नहीं हो सकेगा।

एक बात की ओर मैं विशेष रूप से ध्यान दिलाना चाहूंगा कि महर्षि कर्वे जी का बचपन न तो अलौकिकता से भरपूर था, और न ही वे असाधारण प्रतिभा के बालक थे। लेकिन अपने विचारों के प्रति आस्था, उद्देश्य के प्रति दृढ़ता तथा श्रम और संघर्ष के प्रति विश्वास की जबर्दस्त चेतना ने उन्हें असाधारण बना दिया था। उनके जीवन को मैं एक साधारण व्यक्ति की असाधारण कथा मानता हूं। उन्होंने अपने कार्यो द्वारा यह सिद्ध किया है कि यदि व्यक्ति के लक्ष्य ऊंचे और स्पष्ट हों तो व्यक्ति आगे बढ़ता जाता है। उनकी सफलता इस बात का प्रमाण है कि व्यक्ति में यदि कुछ करने की इच्छा हो, तो किस प्रकार साधनों के अभाव में भी शिखर तक पहुँचा जा सकता है। उनके जीवन की एक और बात ने मुझे प्रभावित किया है कि वे एक साथ बड़ा और सब कुछ कर डालने में विश्वास नहीं करते थे, बल्कि वे ऐसे व्यक्ति थे, जो थोड़े-थोड़े को मिलाकर बड़ा बनाने में विश्वास करते थे। यही कारण रहा कि इस साधनविहीन व्यक्ति ने सेवा-भाव की न जाने कितनी सस्थाएं स्थापित कीं। यहां मुझे महामना मालवीय जी की याद आ रही है, जो समाज के लिए याचक बनने में जरा भी सकोच नहीं करते थे। इस संदर्भ में मैं आप लोगों को महर्षि कर्वे के उन शब्दों की याद दिलाना चाहूंगा, जो 25 मई, 1896 को 'सुधारक' में छपे थे। उन्होने कहा था कि, ''यदि मैं देखूंगा कि और कहीं से कोई आर्थिक सहायता नहीं मिल रही है, तब भी, जब तक मैं जीवित रहूंगा, इस मूल रकम में ब्याज के अलावा कुछ-न-कुछ जोड़ता ही जाऊगा। मनुष्य की अच्छाई में मेरा गहरा विश्वास है, और मैं यह कल्पना नहीं कर सकता कि ऐसी सहायता बिल्कुल मिलेगी ही नहीं।'' मैं समझता हूं कि डॉ0 कर्वे का मनुष्य की अच्छाई के प्रति तथा अपने उद्देश्यों के प्रति यह दृढ़ विश्वास ही उनकी सफलता का एक महत्वपूर्ण कारण था। मै चाहूंगा कि हमारे देश के लोग; विशेपकर वे लोग, जो समाज-सेवा के काम मे लगे हुए हैं, इन शब्दों को मत्र के समान ग्रहण करें। इसके साथ ही उपयुक्त होगा कि यदि वे महर्षि कर्वे की आत्मकथा 'लुकिंग बैक' को भी पढ़ें। इस छोटी-सी

किंतु महत्वपूर्ण पुस्तक में समाज और लोगों के लिए अनुभवगत सत्य संकलित हैं। समाज-सेवा के कार्यो में किस तरह के अवरोध आते हैं, और किस प्रकार बिना अपना सतुलन खोये अवरोधों पर विजय पाकर अपनी सफलता की पताका फहराई जा सकती है, यह बात डॉ0 कर्वे की इस आत्मकथा से सीखने को मिलती है।

कर्वे जी ने 'मुरुड फंड' तथा 'पांच प्रतिशत मराठा फंड' की स्थापना करके समाज के प्रति अपने दायित्व-भाव का परिचय दिया था। उन्होंने 1907 में 'महिला विद्यालय', 1916 मे 'भारतीय महिला विश्वविद्यालय', 1917 मे 'प्राथमिक शिक्षा प्रशिक्षण महाविद्यालय', 1918 में 'कन्याशाला' तथा गॉव मे शिक्षा उपलब्ध कराने के उद्देश्य से सन् 1936 में 'महाराष्ट्र ग्रामीण प्राथमिक शिक्षा समिति' की स्थापना की। इस संदर्भ में मैं उनकी दो संस्थाओं का विशेप रूप से उल्लेख करना चाहूँगा। ये सस्थाएं थीं—सन् 1908 में स्थापित 'निष्काम कर्म मठ' तथा मानवाधिकारों की रक्षा के लिए 1944 मे स्थापित 'समता संघ'। नारी-उत्थान के क्षेत्र में भारतीय इतिहास में जो स्थान राजा राममोहन राय तथा ईश्वरचद विद्यासागर को प्राप्त है, वही सम्मान प्रो0 कर्वे को प्राप्त है। महान् अध्यापक डॉ0 राधाकृष्णन ने 'बंबई समाज-सुधार सघ' की हीरक जयती का एक अक्तूबर, 1963 को उद्घाटन करते हुए इस अध्यापक द्वारा महिलाओ के लिए किए गए कार्यो की मुक्त कंठ से प्रशंसा की थी।

कानूनी प्रावधानों तथा अनेक संस्थागत प्रयासों के बाद भी हमारे समाज में नारी की स्थिति बहुत संतोपजनक नहीं कही जा सकती। व्यावहारिक जीवन में आज भी उन्हें समानता प्राप्त नहीं हुई है। 18 अप्रैल, 1953 को 96 वर्ष के इस वृद्ध व्यक्ति ने 'महाराष्ट्र सामाजिक सम्मेलन' का उद्घाटन करते हुए कड़क आवाज मे अपील की थी, कि "जातिगत भेदभाव को दूर करने का प्रयत्न करो पुरुष-स्त्री असमानता न रहने दो . हमारे प्राचीन धर्मग्रंथों ने जिस सर्वभूत हितवाद के आदर्श का उपदेश दिया है, वही आज हमारा आदर्श हो, और वही हमारी पुकार हो।" महर्पि कर्वे का 'समता संघ' इसी समता का भाव भरता था। सब को मिलकर हमारे समाज में एक ऐसे वातावरण का निर्माण करने के लिये प्रयास करने हैं, जिसमें व्यक्ति की भेद-बुद्धि का स्वाभाविक रूप से शमन हो सके।

हमें यह बात याद रखनी है कि हमारे देश के पुनर्निर्माण और विकास के

लिए नारी-शक्ति की महत्ता को समझना, और सुयोग्य स्थान देना आवश्यक है। हमारी कृषि-आधारित अर्थव्यवस्था में महिलाओं का न केवल सहयोगपरक बल्कि एक स्वतंत्र महत्व है। राष्ट्र-पुनर्निर्माण के अन्य अनेक क्षेत्रो में भी महिलाओं ने अपनी क्षमता का प्रमाण प्रस्तुत किया है। नारी-शिक्षा, उनके लिए रोजगार के अवसर तथा आर्थिक सहायता उपलब्ध कराके उन्हें और अधिक सक्षम बनाये जाने की जरूरत है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि नारी के जीवन से जुड़ी दहेज, बाल-विवाह तथा विधवा-विवाह जैसी कुरीतियो को समाप्त करके उन्हें मनोवैज्ञानिक रूप से भी सुदृढ़ बनाया जाना चाहिए, ताकि उनमें आत्मविश्वास का एक नया भाव पैदा हो सके, और वे समाज में रचनात्मक भूमिका निभा सकें। हमारे देश की करीब आधी आबादी की शक्ति को यूँ ही नष्ट नही होने देना है, इस सच्चाई को महर्षि कर्वे ने समझा था।

पडित नेहरू महर्षि कर्वे के जन्मशताब्दी समारोह में शामिल होने के लिए 18 अप्रैल, 1958 को बंबई गए थे। उस समय उन्होंने महर्षि कर्वे द्वारा महिला शिक्षा में योगदान का जिक्र किया था, और अपने देशवासियो के लिए उनके आशीर्वाद की इच्छा व्यक्त करते हुए उन्होंने जो भाव व्यक्त किए थे, उसे मैं दोहराना चाहूंगा। उन्होंने अपने उद्‌गार का अन्त इन शब्दो मे किया था, ''आप उन लोगों मे से हैं, जो दूसरों को प्रेरित करते हैं, और जिनकी जिंदगी इस बात की गवाह है कि एक आदमी बिना हल्ला मचाए, चुपचाप, पवित्र भाव से कितना कुछ कर सकता है। आप जैसे शख्स नहीं रहेगे तो धरती का सत्व ही चला जाएगा।'' इसके 10 वर्ष बाद डॉ0 कर्वे द्वारा स्थापित '*श्रीमती नाथीबाई दामोदर ठाकरसी महिला विश्वविद्यालय*' के स्वर्ण जयंती समारोह का उद्‌घाटन करते हुए तत्कालीन प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा था कि, ''यह बिल्कुल सही है कि डॉ0 कर्वे को महर्षि का सम्मान प्राप्त है। हमारे पुराने ऋषियों की तरह ही उनमें सत्य और तर्क का प्रकाश निरंतर प्रकाशित होता था।''

मुझे विश्वास है कि भारत-रत्न कर्वे जी की इस प्रतिमा से सत्य और सेवाभाव की विभिन्न छटाएँ हमारे देश के लोगों के मन और मस्तिष्क को सम्मोहित करती रहेंगी। सरलता, सादगी, समानता, सद्‌भाव और शांति का जो अप्रतिम उदाहरण महर्षि कर्वे ने अपने जीवन-कार्य द्वारा प्रस्तुत किया है, उसे देखकर हमारे ऐतिहासिक चितन, प्राचीन जीवनचर्या और विचारधारा के प्रति हमारा मन और अधिक आस्थावान हो जाता है।

अद्भुत व्यक्तित्व : सरदार पटेल

सरदार पटेल को मैं हमारे देश के आत्मविश्वास, स्वाभिमान तथा आजादी के लिए कटिबद्धता का एक प्रतीक–पुरुष मानता हूँ। वे एक किसान के बेटे थे, इसलिए उनमें किसान जैसी निश्च्छलता और अपने आपको बिना किसी लाग–लपेट के सीधे–सीधे कहने का साहस एवं विश्वास था। उनके चेहरे पर हमेशा एक फौलादी दृढ़ता दिखाई देती थी। उनके व्यक्तित्व में एक अडिगता थी और उनकी आंखो में एक आजाद और मज़बूत भारत का सपना लहराता था। बारदोली सत्याग्रह में उन्होंने किसान आदोलन का नेतृत्व किया था और अपनी अदम्य इच्छा–शक्ति, स्पष्ट दृष्टिकोण, नि·स्वार्थ कर्मठता तथा कुशल संगठन शक्ति के बल पर उस समय की सबसे ताकतवर सत्ता को उन्होंने झुका दिया था। उनकी सफलता ने उस समय पूरे मुल्क मे उत्साह का जबर्दस्त संचार किया था। इस आंदोलन का उन्होंने जिस तरह से नेतृत्व किया, उससे प्रभावित होकर बापू और उनके पीछे चल रहे समूचे राष्ट्र ने उन्हे 'सरदार' का संबोधन दिया। पंडित नेहरू ने अपनी आत्मकथा में लिखा है कि, "भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के अध्यक्ष सरदार पटेल गुजरात के साहसी नेतृत्व के कारण भारत के अत्यंत लोकप्रिय और शक्तिशाली व्यक्तियों में से थे।"

आप सब जानते ही हैं कि हमारी आजादी की लड़ाई में सरदार पटेल अग्रिम पंक्ति के नेताओं में से थे। लोकमान्य तिलक ने 'स्वराज्य को जन्मसिद्ध अधिकार' बताते हुए जो सिंहनाद किया था, उसे मूर्त रूप देने वालो में सरदार पटेल प्रमुख थे। खेड़ा सत्याग्रह में पहली बार वे बापू के संपर्क में आए थे और इसके बाद से उनके अंदर छिपी शक्ति हमारे देश के सामने प्रकट होने लगी थी। बापू ने अपनी आत्मकथा के 23वें अध्याय में सरदार के बारे में उल्लेख किया है कि :

"खेड़ा आंदोलन में अन्य कार्यकर्ताओं के अलावा . . . वल्लभ भाई मेरे प्रमुख सहयोगियों में थे। इस आंदोलन में भाग लेने के लिए वल्लभ भाई पटेल को अपनी महत्वपूर्ण तथा पनप रही वकालत छोड़नी पड़ी, जबकि मालूम था कि उस वकालत को फिर से शुरू करना संभव नहीं होगा।"

हमारे देश में जितने भी महत्वपूर्ण आंदोलन हुए, उन सभी में सरदार पटेल

सरदार वल्लभ भाई पटेल के जन्म-दिवस के अवसर पर, 30 अक्तूबर, 1992

की भागीदारी प्रमुख रही। 'नमक सत्याग्रह' तथा 'भारत छोड़ो आंदोलन' में उनको गिरफ्तार किया गया। 'नमक सत्याग्रह' के शुरू होने के पहले ही उन्हें गिरफ्तार किया गया, इस प्रकार जेल जाने वाले वे पहले नेता थे।

'भारत छोड़ो आंदोलन' में दिनांक 9 अगस्त, 1942 को उन्हें गिरफ्तार करके देश के अन्य प्रमुख नेताओं के साथ अहमद नगर जेल में रखा गया। जब देश आज़ाद हुआ, तब दृढ़ सरदार पटेल को उप-प्रधानमंत्री एवं गृहमंत्री बनाया गया। उन्होंने अंग्रेजों की चालाकी को असफल करके बिना खून-खराबे के देशी रियासतों का विलीनीकरण करके देश को एक किया। हैदराबाद का भारत संघ में विलय उनकी उत्तम सूझ-बूझ और दृढ़ इच्छा-शक्ति का एक प्रमाण है। उनके इस ऐतिहासिक काम के लिये देश हमेशा उन्हे याद रखेगा।

मैं सरदार पटेल को 'गीता' के कर्मयोगी की तरह निष्कामभाव से कर्म करने वाला नेता मानता हूं। उनके सामने उद्देश्य बिल्कुल स्पष्ट रहता था और इसके बाद वे निर्भीक होकर निःस्वार्थ भाव से उसे पूरा करने में लग जाते थे। डॉ0 राजेंद्र प्रसाद ने सरदार पटेल के 'अभिनदन ग्रंथ' को भेजे गये एक लेख में उनके इन गुणों की सुंदर सराहना की है। राजेन बाबू ने लिखा है ·

''सरदार पटेल में नेतृत्व करने की अद्‌भुत क्षमता थी। उनके पास ऐसा मस्तिष्क था जो उलझी हुई स्थितियों को एक बार में ही बहुत जल्दी समझ जाता था। वे चीज़ों को स्पष्ट देख सकते थे और यदि किसी मामले पर अपना मत बना लेते थे, तो उन्हें उससे अलग करना असंभव नहीं तो कठिन जरूर था। . . . यदि वे किसी काम को एक बार हाथ में ले लेते थे तो उसे किसी भी हालत में पूरा करके ही छोड़ते थे।''

मैं समझता हूं कि सरदार पटेल के इसी गुण ने उन्हें इतना महान् नेता बनाया। श्रीमती इंदिरा गांधी ने दिनांक 18 दिसंबर, 1975 को सरदार को श्रद्धांजलि अर्पित करते हुए उन्हें ''अनुशासन और कर्तव्य का व्यक्ति'' बिल्कुल सही ही कहा था।

हम सरदार पटेल को 'लौह-पुरुष' के रूप मे याद करते हैं और इतिहास में उनकी तुलना बिस्मार्क के 'लौह एवं रक्तपात' की नीति से की जाती है। मैं इस बात से पूरी तरह सहमत नहीं हो पाता क्योंकि मैं समझता हूं कि सरदार पटेल निश्चित रूप से 'लौह-पुरुष' तो थे, लेकिन रक्तपात से उनका कोई वास्ता नहीं था। वे गांधीजी के अनुयायी थे और अहिंसा पर उनका अटूट विश्वास था। सन् 1931 के कराची अधिवेशन में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' के अध्यक्ष के रूप

में उन्होंने अहिंसा के प्रति अपनी आस्था को व्यक्त किया था। अपने अध्यक्षीय भाषण की शुरूआत करते हुए उन्होंने कहा था कि, "यह चुनौतियों से परे एक सत्य है कि भारत ने दुनिया के सामने यह प्रमाणित किया है कि सामूहिक अहिंसा की भावना न केवल आदर्शवादी स्वप्न था या कि केवल मानवीय अभिलाषा मात्र नहीं है। यह एक ठोस सच्चाई है कि हिंसा के बोझ के नीचे कराहती तथा विश्वास की इच्छुक मानवता के लिये इसमें अनन्त संभावनायें निहित है।" स्पष्ट है कि जो कोई भी बापू का अनुयायी होगा, उसकी रक्तपात की नीति के प्रति कोई आस्था नहीं हो सकती।

बापू को सरदार पटेल कितने प्रिय थे और स्वयं सरदार बापू को कितना चाहते थे, इसके लिए मैं आपके सामने मौलाना अबुल क़लाम आजाद की पुस्तक 'इडिया विंस फ्रीडम' के पृष्ठ 216 पर लिखे शब्द उद्धृत करना चाहूँगा। मौलाना आजाद लिखते है . "सरदार पटेल गांधीजी के अंदरूनी लोगों मे थे और उनके बहुत अधिक प्रिय थे।" चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने इस भावना को बहुत अच्छी तरह व्यक्त करते हुए सरदार पटेल के व्यक्तित्व एवं कार्य पर लिखी एक पुस्तक की भूमिका में लिखा था कि, "वल्लभ भाई गांधी जी के लिये बिल्कुल वही थे, जो कि लक्ष्मण राम के लिए थे।" यरवदा जेल में सरदार पटेल करीब 16 माह तक बापू के साथ रहे थे। उन क्षणों को याद करते हुए स्वय बापू ने दिनांक 9 मई, 1933 को जारी एक प्रेस वक्तव्य मे कहा था कि : "उन्होंने मुझे जो स्नेह दिया, उससे मुझे अपनी प्रिय माता की याद आ गई। मुझे नहीं मालूम था कि उनमें माता के भी गुण हैं।"

मुझे ऐसा लगता है कि सरदार पटेल का व्यक्तित्व चट्टानी था, जिसके अंदर करुणा, क्षमा और प्रेम जैसे मानवतावादी मूल्यो का एक शीतल जलकुण्ड था। वह जलकुण्ड इतना स्वच्छ और निर्मल था कि हमारी आने वाली पीढ़ियॉ उनकी स्मृतियों के इस जलकुण्ड में गोता लगाकर स्वय को धन्य करती रहेंगी।

पंडित नेहरू ने संसद में 15 दिसबर, 1950 को सरदार पटेल के निधन की दु·खद सूचना देते हुए बड़े भावुक शब्दों में कहा था ·

"इतिहास उन्हे अपने पन्नो पर नये भारत को संगठित करने और बनाने वाले व्यक्ति के रूप मे याद करेगा। हम लोगों मे से बहुत से लोग उन्हें आजादी की लड़ाई मे हमारी ताक़त की अगुआई करने वाले, संघर्ष एवं जीत के क्षणों में सही सलाह देने वाले तथा एक ऐसे दोस्त एवं सहयोगी के रूप में याद करेंगे, जिसके

ऊपर भरोसा किया जा सकता था। वे ताकत की ऐसी मीनार थे जो घबराये हुए हृदयों में प्राण फूंकता है।''

सरदार पटेल के निधन के बाद मुख्यमंत्रियों को दिनांक 18 दिसंबर 1950 को लिखे पत्र में पंडित नेहरू ने कहा था कि, ''आप लोगों को उनके बिना ही काम करना होगा। उनका स्थान लेने वाला कोई दूसरा नहीं है।''

इस वर्ष देश में 'भारत छोड़ो आदोलन' की 50वीं सालगिरह मनाई जा रही है। यह हमारे लिए एक ऐसा ऐतिहासिक वर्ष है, जबकि पूरा देश आजादी की लड़ाई, हमारे आजादी के मूल्यों तथा राष्ट्रीय नेताओं के सपनों का स्मरण कर रहा है। मैं समझता हूँ कि ऐसे वर्ष में सरदार पटेल जैसे सभी महान् राष्ट्रीय नेताओं के कार्यो और जीवन-मूल्यों के बारे में देश को अधिक-से-अधिक बताया जाना चाहिए।

सरदार पटेल ने हमारे देश को आजादी दिलाने में अपनी ताकत लगाई और फिर बाद में उसे मजबूत बनाने में अपने-आपको पूरी तरह न्यौछावर कर दिया। उन्होंने हमें जो स्वतंत्र भारत दिया है, उसे हमारे देश के लोगों को याद रखना है और समझना भी है। उसकी एकता और अखंडता की रक्षा करना सभी नागरिकों का कर्तव्य है और उनका धर्म भी। मैं सोचता हूं कि इस धर्म का पालन करके ही सरदार को सच्ची श्रद्धांजलि दी जा सकती है। सरदार पटेल ने दिनांक 17 दिसंबर, 1947 को जयपुर की एक आम सभा में बोलते हुए कहा था :

''कांग्रेस ने सत्ता शक्ति के लिए नहीं चाही थी, बल्कि सेवा के लिए चाही थी। . . . हम . . . किसी भी संकीर्ण विचारों के बारे मे नहीं सोच सकते। यह सरकार धनी-गरीब, हिंदू-मुस्लिम, पारसी और क्रिश्चियन सबकी है।''

सरदार पटेल जाति, धर्म, भाषा, क्षेत्र आदि की सभी संकीर्णताओ से ऊपर उठकर सर्वधर्मसमभाव के हमारे चिंतन के आधार पर राष्ट्रीय एकता के लिये प्रतिबद्ध थे। उन्होंने कराची अधिवेशन में कहा था कि ''मै हृदय की एकता चाहता हूँ। . . यह सबसे बड़ी बुद्धिमानी होगी।''

इसी के कुछ माह बाद पटियाला एवं पूर्व पंजाब राज्य संघ पेप्सू का उद्घाटन करते हुए सरदार ने दिनांक 19 जुलाई, 1948 को कहा था .

''भारत के सभी वीर पुत्रों का यह कर्तव्य है कि वे देखें कि विकास की गति पीछे न जाकर आगे की ओर हो। हमें यह बात समझनी चाहिए कि यदि

हमें विश्व में अपना सम्मानजनक स्थान बनाना है, तो यह केवल कहने से नहीं होगा बल्कि इसके लिए हमें हर क्षण मेहनत करनी होगी।''

सरदार पटेल के इन शब्दों को मैं आज की परिस्थितियों में बहुत ही महत्वपूर्ण मानता हूँ। मेरा विश्वास है कि उनके ऐसे विचारों तथा उनके जीवन के कार्य हमारे देश के लोगों को लगातार एक नयी राह दिखाते रहेंगे, ताकि हर व्यक्ति देश की एकता और अखंडता और उसके पुनर्निर्माण के लिए खुद-ब-खुद आगे आए।

मीरा बेन का योगदान

मीरा बेन जन्म शताब्दी के अवसर पर आयोजित इस समारोह मे शामिल होकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता है। डॉ0 सुशीला नैय्यर ने इस कार्यक्रम के बारे मे जब मुझसे चर्चा की थी, तब मुझे यह अत्यंत उचित प्रतीत हुआ कि राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के जीवन एवं कार्यो से प्रभावित होकर उनके मार्गदर्शन में उनके अनुरूप कार्य करने वालो में से एक स्वामिनिष्ठ कार्यकत्री–मीरा बेन का जन्म शताब्दी स्मृति समारोह राष्ट्रपति भवन में आयोजित किया जाए।

हमारी पीढ़ी के लोगों को याद रहेगा कि बापू मे कितना विलक्षण गुरुत्वाकर्षण था। उनकी सात्विक शक्ति, सत्याग्रह का प्रभाव, समर्पण की भावना तथा अहिसा आदि मूल्यों का प्रकाश सभी को प्रदीप्त करता था। विभिन्न विचारो के लोगो को बापू का व्यक्तित्व स्वाभाविक रूप से आकर्षित कर लेता था। पडित जवाहर लाल नेहरू तथा तेज बहादुर सप्रू जैसे नेताओं ने अपने अनुभवो के आधार पर अक्सर कहा है कि बापू से मिलने के बाद उनसे विपरीत विचार रखने वाले कुछ ही क्षणों में उनके प्रति श्रद्धावान हो जाते थे। डॉ0 राधाकृष्णन ने कहा था

"महात्मा गांधी से अलग विचार रखने वाला जब उनसे मिलता था तो मिलने के बाद उसकी मत–भिन्नता समाप्त हो जाती थी। उसके विचार उनसे मिल जाते थे और वह उनकी इच्छाओं का पालन करने लग जाता था। आज्ञा का पालन करने वाले लोग ही यह जानते हैं कि किस प्रकार दूसरो को नियत्रित किया जा है।"

बापू के नेतृत्व में लड़ी जा रही आजादी की लड़ाई ने केवल भारत के लोगों को ही आकर्षित नहीं किया, बल्कि ब्रिटेन तक के लोगों को आकर्पित किया। आप लोगों को मालूम ही है कि ब्रिटेन का भारत के ऊपर शासन था और भारत की जनता ब्रिटिश हुकूमत के विरुद्ध लड़ाई लड रही थी। इसे मै बापू के व्यक्तित्व का एक बहुत ही जबर्दस्त एवं महत्वपूर्ण प्रभाव मानता हूँ कि ब्रिटिश सत्ताधारी वर्ग में से ही एक एडमिरल की बेटी मेडलिन स्लेड अपनी आलीशान

मीरा बेन जन्म शताब्दी के अवसर पर, नई दिल्ली, 26 नवम्बर, 1992

जीवन-शैली को छोड़कर, अपने वर्ग के राजनैतिक दृष्टिकोण से अलग होकर, बापू की ओर आकर्षित हुई, आत्मसमर्पण किया तथा भारत की आजादी की लड़ाई का व्रत लिया। इसमें राष्ट्रपिता महात्मा गांधी का विलक्षण गुरुत्वाकर्पण और अनन्य असाधारण प्रभाव हमें दिखता है।

यहॉ महत्वपूर्ण बात यह भी है कि मीरा बेन अपना परिवार और ब्रिटेन को छोड़कर भारत आई। उन्होंने खादी पहनी, शाकाहारी बनीं, अहिसा के मूल्य को अपनाया, ब्रह्मचर्य का व्रत किया तथा अपने-आपको महात्मा गाधी की निजी सेवा के लिए समर्पित कर दिया। यहॉ हमें बापू के विशाल ह्रदय की प्रशंसा करनी चाहिए कि वे व्यक्ति के अन्दर के निहित सत्य के मूल्यों को पहचानते थे और फिर उसे अपना बना लेने में जरा भी संकोच नहीं करते थे, चाहे वह विरोधी खेमे का ही क्यों न हो। उन्होने ब्रिटिश एडमिरल की पुत्री को अपनी पुत्री के समान बनाया। न केवल वनाया ही बल्कि उन्हे अपने महत्वपूर्ण कार्यो मे भी शामिल किया। मीरा बेन ने भी अपने सेवा-भाव के द्वारा बापू की अपेक्षाओं को पूरा किया। यहाँ यह जानना भी महत्वपूर्ण होगा कि मीरा बेन को अपनी पुत्री बनाने के बापू के विचार का समर्थन पंडित नेहरू, सरदार पटेल, मौलाना अबुल कलाम आजाद तथा अन्य राष्ट्रीय नेताओं ने भी किया था।

बचपन से ही मीरा बेन के मन में एक खालीपन-सा था। महान संगीतकार बीथोवेन की जीवनी ने उनमें आध्यात्मिक जीवन के प्रति आकर्पण पैदा किया। इसे एक सुखद संयोग ही माना जाना चाहिए कि जीवन के उद्देश्य की तलाश करती हुई मीरा बेन रोमा रोला के पास पहुॅचीं, जिन्होंने उन्हें बापू की जीवनी पढने को दी। साथ ही रोमा रोलां ने बापू के बारे में कहा कि "वे एक दूसरे ईसा है।" बापू की जीवनी पढ़ने के बाद मीरा बेन को लगा, मानो उनकी एक सच्चे गुरु की तलाश पूरी हो गई। उन्होंने बिना देरी किए बापू के पास आने की इच्छा व्यक्त की। बापू ने मीरा बेन को भारत आने से पहले दिनांक 24 जुलाई, 1925 को पत्र द्वारा यहाँ की सारी परेशानियों से अवगत कराया था। उन्होने लिखा कि ·

"याद रखना कि आश्रम का जीवन सुखमय नही है। यह बहुत कठिन है। यहॉ हरेक को शारीरिक श्रम करना पड़ता है। इस देश की जलवायु भी ऐसी नहीं जिसके बारे में न सोचो। मैने ये बातें तुम्हें डराने के लिए नहीं बल्कि चेतावनी देने के लिए लिखी है।"

मीरा बेन ने बापू की सलाह पर एक वर्ष तक ब्रिटेन में ही श्रम प्रधान जीवन जिया और बापू के पास 20 पौंड का अनुदान भेजा। बापू ने अपने 31 दिसंबर, 1924 के पत्र में मीरा बेन को लिखा कि "तुम्हारे 20 पौंड के लिए धन्यवाद। इस धन का उपयोग चरखे को लोकप्रिय बनाने के लिए किया जाएगा। . . . यदि एक वर्ष के परीक्षण के बाद भी तुम आना चाहती हो, तो भारत में तुम्हारा आना संभवत: सही ही होगा।"

कुछ ही माह बाद मीरा बेन भारत आई और उन्होंने अपना जीवन बापू की सेवा, हमारे देश की आजादी की लड़ाई, ग्राम्य-विकास और बापू के संदेश तथा रचनात्मक कार्यक्रमों के प्रचार-प्रसार में लगा दिया।

यहॉ हमें यह सोचना चाहिए कि आखिर बापू में ऐसी कौन सी बात थी, जिसने मीरा बेन को इतना अधिक प्रभावित किया। मीरा बेन ने बापू की जीवनी पढ़ी थी। उन्होंने रामायण, महाभारत और भगवद्गीता जैसे प्रमुख ग्रंथ भी पढ़े थे। मुझे लगता है कि मीरा बेन को बापू में इन ग्रंथों का रूप साकार होता हुआ लगा। उन्होंने पाया कि बापू आज़ादी की लड़ाई के योद्धा हैं, लेकिन वह लड़ाई अहिंसात्मक है। उन्हें बापू में विज्ञान और अध्यात्म का, सिद्धान्त और व्यवहार का तथा राजनेता और संत का सुन्दर समन्वय देखने को मिला। मैं समझता हूँ कि बापू का व्यक्तित्व अनेक विविधताओं के बावजूद जितना संतुलित एवं संपूर्ण था, उतना किसी अन्य समकालीन व्यक्ति का नहीं था। इसी संपूर्णता ने मीरा बेन को बापू के प्रति इतनी तीव्रता से आकर्षित किया था।

बापू की विशिष्टता यह थी कि वे चाहते थे कि उनके मार्ग का अनुसरण करने की इच्छा रखने वाले लोग स्वयं चिंतन करें, और तब उसे अपनायें। मैं यह बताना चाहूँगा कि मीरा बेन ने बापू के सामने अपने धर्म-परिवर्तन की इच्छा व्यक्त की थी। बापू ने इस बात को अस्वीकार करते हुए उनसे कहा था कि "तुम्हें एक अच्छा ईसाई बनना चाहिए।" यह बात बापू की उस मान्यता के अनुकूल थी कि सभी धर्मो का मूल एक है तथा विभिन्न धर्म एक ही स्थान पर पहुँचाने के भिन्न-भिन्न रास्ते हैं। बापू का जोर इस बात पर था कि व्यक्ति का चाहे कोई भी धर्म हो, वह किसी भी जाति का हो, उसे सबसे पहले एक भला इंसान होना चाहिए। यह घटना बापू की सभी धर्मो का आदर करने की तथा हर व्यक्ति की विचार स्वातंत्र्य का सम्मान करने की भावना को व्यक्त करती है।

मीरा बेन जैसे ही भारत आई और गांधी जी से मिलीं, तो बापू के प्रथम

दर्शन से उन्हें एक आध्यात्मिकता का अनुभव हुआ। इस वात का उल्लेख करते हुए मीरा बेन ने अपनी आत्मकथा मे लिखा है ·

''जैसे ही मैंने प्रवेश किया, मै सफेद गद्दी पर उभरी हुई एक छोटी-सी आकृति को देखकर सचेत हो गई। मै जानती थी कि वे बापू थे, लेकिन मैं श्रद्धा ओर उल्लास से इतनी प्लावित हो गई कि मैं स्वर्गिक प्रकाश के अतिरिक्त कुछ भी देख ओर अनुभव नही कर सकी। मैं बापू के चरणों मे घुटनो के बल गिर पडी।''

बापू ने अपने घुटनों के वल पड़ी मीरा बेन को उठाया और उन्हे अपनी पुत्री मानते हुए मीरा नाम दिया। मैं बापू द्वारा दिए गए इस मीरा नाम को बहुत ही सही मानता हूँ। मीरा बेन ने मानवता के प्रति अपने प्रेम, उद्देश्य के प्रति सर्वस्व समर्पण तथा निष्ठा के द्वारा अपने इस नाम को सार्थक किया। वे ऐसी मीरा थीं, जिसके लिए सपूर्ण मानव-जाति श्रीकृष्ण के समान थी।

अपनी सेवा-भावना के कारण मीरा बेन ने बहुत जल्दी ही बापू का विश्वास जीत लिया। बापू अपनी आत्मकथा के अंशो को छपने से पहले मीरा बेन को सौंपते थे। अनेक महत्वपूर्ण मामलों पर भी बापू उनसे बातचीत करते थे। मीरा वेन जब रचनात्मक कार्यो के लिये दूर गांव में चली जाती थीं, तो बापू को उनकी अनुपस्थिति का एहसास भी होता था। अपने दिनांक 24 जून, 1931 के पत्र में उन्होने मीरा बेन को लिखा

''मै जब भी चरखा उठाता हूँ, तव तुम्हे नही पाता। और इसी तरह अन्य कार्यो मे भी होता है। तुमने सही काम किया है। तुमने अपना घर, अपने लोग और अन्य महत्वपूर्ण लोगो को मेरी व्यक्तिगत रूप से सहायता करने के लिए नहीं छोड़ा, बल्कि उन उद्देश्यों की सेवा के लिए छोड़ा है, जिनके लिए मैं काम कर रहा हूँ।''

बापू मीरा बेन की छोटी-छोटी बातो का ध्यान रखते थे। एक बार उनके बीमार पड़ जाने पर बापू ने 31 जुलाई, 1932 को मीरा बेन को लिखा था कि ''तुम विलक्षण हो। बहुत अधिक बीमार पडने के बावजूद तुम्हारा हाथ पहले की तरह की मजबूत और साफ है। मैने मालवीय जी को तार किया था। उन्होने कहा है कि वे तुम्हे तब तक अपने पास रखेंगे, जब तक तुम पूर्णत स्वस्थ नहीं हो जाती।''

मीरा बेन बापू के उद्देश्यों के प्रति इतनी ज्यादा समर्पित थीं कि उन्होंने अपनी आत्मकथा मे यह स्वीकार किया है कि "बापू से कोई बात छिपा पाना मेरे लिए आध्यात्मिक रूप से असंभव था।" इस छोटे से वाक्य से साफ मालूम पड़ता है कि वे बापू को आराध्य देवता से कम नहीं मानती थीं। जब मीरा वेन को बापू के दु:खद निधन की सूचना मिली तो वे बरामदे में खड़ी सजल ऑखो से शून्य को ताकती रह गई थीं। इसके कुछ ही दिन बाद लिखे एक लेख में उन्होंने कहा .

"मेरे लिए अब तक केवल दो थे— भगवान और बापू। आज वे दोनों मिलकर एक हो गए हैं।"

इस वाक्य से यह आभास मिलता है कि उनका भारतीय चिंतन से कितना गहरा तादात्म्य हो गया था। यह मीरा बेन का अपने आध्यात्मिक गुरु बापू के प्रति 'स्वामिभृत्य न्याय' का एक उत्तम उदाहरण है।

मीरा वेन और महादेव भाई देसाई, इन दोनों को मैं बापू की दो भुजाएं मानता हूॅ। महादेव भाई देसाई ने जहां बापू के दिन भर का लेखा-जोखा आने वाली पीढ़ी के लिए रख कर छोड़ा, वहीं मीरा वेन ने अपने सेवा-भाव के द्वारा वापू के जीवन को नियमित किया और उनकी दिनचर्या को आसान बनाया ताकि वे देश-सेवा के लिए अधिक-से-अधिक समय दे सकें।

मीरा बेन ने हमारे देश की आजादी की लड़ाई में सक्रिय रूप से भाग लिया। सन् 1932 के असहयोग आंदोलन मे उन्हें वम्बई जेल मे अन्य महिला बंदियों के साथ कैद रखा गया था। उस समय के अपने अनुभव के बारे में मीरा वेन ने जो लिखा था, उसकी प्रशसा पंडित नेहरू ने अपनी आत्मकथा में की है। पंडित जी ने लिखा है :

"मैंने कई तकलीफदेह घटनाएं सुनीं। लेकिन सवसे असाधारण वे थीं, जो मीरा बेन ने सविनय अवज्ञा आंदोलन के दौरान बम्बई जेल में क़ैद अन्य लोगों के अनुभव के साथ अपने अनुभवों को मिलाकर लिखी हैं।"

इसके वाद सन् 1942 में 'भारत छोड़ो आंदोलन' मे वापू के साथ मीरा बेन बंदी बनाई गई और पुणे के आगा खाँ महल में कैद रखी गयीं। इससे पहले वे 'गोल मेज सम्मेलन' के लिए बापू के साथ लंदन गई थीं। उन्होंने विदेशों में भी भारत की आजादी के लिए प्रचार-प्रसार किया तथा अनेक लेख लिखे, जो बापू के रचनात्मक कार्यो और देश की आज़ादी की मांग से सबंधित थे।

ब्रिटेन मे उदार विचारों की भी एक सतत धारा रही है, जो स्वतन्त्रता, सेवा और मानवीय गरिमा का लगातार समर्थन करती रही है। ए0 ओ0 ह्यूम, सी0 एफ0 एड्रूज तथा हेनरी कॉटन जैसे भारत प्रेमी अग्रेज इसी विचारधारा के थे। मीरा बेन इसी उदार मानवतावादी विचारधारा का प्रतिनिधित्व करती हैं। मैं मीरा बेन को उस सेवा-भाव का प्रतिनिधि मानता हू, जो नारी-जाति मे स्वाभाविक रूप से रहती है। उन्हे मैं उस साहस का भी प्रतीक समझता हूँ, जो मानवीय हित के लिए, अपने विचारो की आजादी के लिए समाज के विरुद्ध खड़ा होने की ताकत रखती है। मीरा बेन बापू के नेतृत्व मे किए जा रहे संघर्ष के मूल्यों के पक्ष मे अत तक खडी रहीं। उनके इस साहस से आज की पीढी को यह सबक लेना चाहिए कि हम उस सकारात्मक शक्ति का साथ देंगे, जो उच्च मानवीय मूल्यों को पाने और उसकी रक्षा के लिए संघर्ष कर रहे हें। हमारे लोगो को नकारात्मक शक्तियों को पराजित कर मानवीय सेवा, करुणा और राष्ट्रपुनर्निर्माण का व्रत ग्रहण करना होगा। बापू ने और मीरा बेन ने विश्व को यही रास्ता दिखाया है, और इसी रास्ते पर चलकर मानवीय कल्याण के लक्ष्य तक पहुचा जा सकता है।

मीरा बेन को मैं एक साधिका मानता हूॅ, एक कर्म योगिनी मानता हूॅ। उन्होने हमारे देश मे आकर मानव-सेवा की एक अनुकरणीय मिसाल प्रस्तुत की। वे भारत आई और यहां की भाषा, यहां की सस्कृति तथा यहां के लोगों में पूरी तरह घुलमिल गई। बापू के निर्देश पर उन्होंने देश के अनेक क्षेत्रों का दौरा किया। वे गांव में रहीं और वहा के लोगो की समस्याए समझीं और उन्हें अनुभव किया। इस प्रकार वे अपने-आपको पूरी तरह से तैयार करके मानवता की सेवा में लगी। वे गाव मे रहती थीं, वहा के लोगों के बीच खादी का प्रचार करती थीं और उन्हें रुई धुनने व तकली कातने की नई विधियो के बारे मे बताती थीं। वे रोगियों की सेवा करती थीं और उनमें स्वास्थ्य के प्रति चेतना जागृत करती थीं। आप जानते ही हैं कि ये सब ऐसे काम थे, जो बापू को बेहद प्रिय थे। मीरा बेन को भी ये कार्य अत्यधिक प्रिय थे। उनकी जीवन-यात्रा इस बात का जीवंत प्रमाण है कि उनका हृदय मानवीय करुणा तथा प्रेम की भावना से भरा हुआ था।

मैं विशेष रूप से बताना चाहूॅगा कि मीरा बेन का यह सेवा-भाव केवल मनुष्य तक सीमित नहीं था, बल्कि वह जीव मात्र तक फैला हुआ था। वे पशु-सेवा और प्रकृति प्रेम से जुड़ी हुई थीं। आजादी के बाद उन्होंने पर्यावरण सरक्षण के क्षेत्र में उल्लेखनीय कार्य किये। हिमालय की सुरम्य घाटियॉ उन्हे विशेष रूप

से पसंद आई। उन्होने जम्मू-कश्मीर का दौरा किया। वे टिहरी गढ़वाल में रही और वहाँ की प्रकृति को विनाश से बचाने के लिए लोगों में चेतना जागृत की। उनके ये प्रयास मनुष्य, पशु और प्रकृति के बीच समन्वय स्थापित करने के काम थे। आज जबकि पर्यावरण प्रदूषण तथा धरती के अस्तित्व को लेकर पूरा विश्व चिंतित है और उसके लिए सामूहिक प्रयास किए जा रहे है, मीरा बेन ने पहले ही इस ओर ध्यान दिलाया था।

मैं समझता हूँ कि मीरा बेन की इस जन्म शताब्दी को इस रूप में लिया जाना चाहिए कि यह वर्ष पूरे विश्व को बापू के जीवन-मूल्यो एव विचारों का स्मरण दिलाता रहे। बापू ने सत्य और अहिसा का जो उपदेश दिया था, वह शाति की स्थापना तथा शाति की सुरक्षा के लिए मत्र के समान है। उनके स्वदेशी आदोलन संबंधी विचारों को हम आर्थिक स्वावलबन का आधार मानते है। उन्होने यह बताया था कि स्थानीय आवश्यकताओं के अनुकूल स्थानीय ससाधनो का तकनीकीपूर्ण ढंग से दोहन करके ही कोई राष्ट्र आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ा हो सकता है। इसी प्रकार अस्पृश्यता निवारण तथा कुष्ठ रोगियो की सेवा के द्वारा उन्होने नि:स्वार्थ सेवा का उदाहरण प्रस्तुत किया था। धर्म, जाति और भापा संबधी उनके विचार अत्यंत उदार थे। उनका 'ट्रस्टीशिप' का सिद्धांत समानता की भावना से जुड़ा हुआ था। मुझे लगता है कि उनके इन विचारों को अपनाने से हम अनेक प्रकार की राजनैतिक, सामाजिक और आर्थिक समस्याओ से छुटकारा पा सकते है।

मीरा बेन का जीवन और उनके कार्य बापू के व्यक्तित्व और विचारो की ताकत और उसकी व्यवहारिकता का प्रमाण प्रस्तुत करते हैं। यह इस बात का भी प्रमाण प्रस्तुत करते हैं कि हमारे मूल्यों में मूलभूत एकता है। हमें अपने देश की इस एकता को पहचानना होगा और एकजुट होकर बापू के सिद्धांतो के अनुकूल नये भारत के निर्माण का काम पूरा करना होगा।

देश की अनेक समस्याओ का निदान बापू के चिंतन के अनुपम आचरण में निहित है। सेवा, मानव एकता, अहिंसा आदि का व्रत लेकर ही मीरा बेन को सच्ची श्रद्धांजलि दी जा सकती है।

कुष्ठ रोग : निवारण

यह सघ देश का प्रमुख स्वयं सेवी सगठन है जो कुष्ठ रोग के विरुद्ध लड़ी जाने वाली लडाई में सक्रियता से लगा हुआ है। यह विरोधाभास ही है कि मनुष्य के हृदय मे जहाँ करुणा और प्रेम की अगाध क्षमता है, वहीं उसका हृदय निष्ठुरता और उदासीनता से भी भरा हुआ है। कुछ लोग तथा कुष्ठ रोग से ग्रसित व्यक्ति इसके शिकार हैं। इन लोगों के लिए क्रूरता का दर्द ही पर्याप्त नहीं है, बल्कि वे जाति-वहिष्कार और दुर्व्यवहार के भी शिकार होते हैं।

हमारा चिंतन और सभी धर्मों के पवित्र ग्रथ बीमार और दुर्बल लोगों के प्रति प्रेम, समझदारी और मैत्रीभाव का सदेश देते हैं। भारत में गुरु नानक, श्री चैतन्य और स्वामी विवेकानंद जैसे आध्यात्मिक सतों ने मानवता और करुणा का संदेश दिया। महात्मा गाधीजी के मन मे कुष्ठ-रोगियो के लिए विशेप प्रेम और चिता थी। उन्होंने उन्हे शरण दी और उनकी सेवा की। बापू का यह निजी उदाहरण स्वयंसेवी कार्य तथा मानवता और परोपकारी कार्यो मे लगे अन्य क्षेत्रों के लोगों के लिए महान् उदाहरण है।

हमारे प्रथम राष्ट्रपति डॉ0 राजेन्द्र प्रसाद ने हिद कुष्ठ निवारण सघ में अध्यक्षीय भापण देते हुए 19 अप्रैल, 1955 को कहा था .

''जिस तरह के कार्यो मे आप सब लगे है, उसमें रचनात्मक प्रयासों द्वारा निष्ठुरता और तिरस्कार को समाप्त करना है। यह लोगों की इस समझदारी पर निर्भर करता है कि हम क्या करना चाहते हैं। सरकारी और स्वयसेवी कार्यो को आपसी समझदारी और सहयोग के साथ-साथ आगे बढ़ना है।

मुझे यह देखकर खुशी है कि संघ सन् 1925 से अपनी स्थापना के वर्प से संतप्त भाइयों को राहत पहुँचाने के क्षेत्र में लगातार काम कर रहा है तथा कुष्ठरोग निवारण के कार्य तथा मानवता की सेवा के लिए बहुत से कार्यकर्ताओ को प्रेरित करने मे सफलता प्राप्त की है। आज यह सरकार द्वारा स्वीकृत एक स्वैच्छिक संगठन है, जो कुष्ठ रोग निवारण के काम में लगा हुआ है।

हिद कुष्ठ निवारण सघ की वार्पिक आम बैठक मे, नई दिल्ली, 18 दिसम्बर, 1992

कुष्ठ रोग निवारण कार्यक्रमों के क्रियान्वयन में स्वयसेवी संगठनों को महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। यह जानना सुखद है कि आज करीब 285 स्वयंसेवी संगठन कुष्ठ रोगियों के राहत संबंधी कार्य में लगे हुए है। ये सरकार के राष्ट्रीय कुष्ठ निवारण कार्यक्रमों की सहायता कर रहे हैं। इनमें से अनेक स्वयंसेवी सगठन लोगों को स्वास्थ्य एवं चिकित्सा संबधी प्रशिक्षण देने के साथ-साथ इलाज एवं पुनर्वास संबंधी सेवाओं में भी लगे हुये हैं। मैं समझता हूँ कि इन स्वयसेवी संगठनो द्वारा किये गये कार्यो की महत्ता इस बात पर भी निर्भर करती है कि इन कार्यक्रमो के लिए धन की व्यवस्था उन्होंने अपने प्रयासों से की है, जिसमें लोगो की भी महत्वपूर्ण भागीदारी रही है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि इनके द्वारा कुष्ठ रोगियों को दी जाने वाली सेवा में प्रेम और करुणा शामिल हो।

कुष्ठ निवारण संघ राष्ट्रीय कुष्ठ निवारण कार्यक्रमों के अंतर्गत आने वाली स्वास्थ्य शिक्षा, पर्यावरण तथा सामुदायिक चेतना एवं प्रशिक्षण आदि अन्य कार्यक्रमों में भी लगा हुआ है। संघ के द्वारा हिंदी और अंग्रेजी मे प्रकाशित स्वास्थ्य शिक्षा कलेडर इस रोग के प्रति समाज की भावना को बदलने तथा लोगों में इसके प्रति चेतना जागृत करने का प्रभावशाली माध्यम है।

यह हर्ष की बात है कि यह कलेंडर मुफ्त बांटा गया है। मुझे बताया गया है कि लोगों की चेतना जागृत करने तथा इससे जुड़े स्वयंसेवी सगठनों के लिए संसाधन प्राप्त करने के उद्देश्य से जो नयी मोहर तैयार की गयी है वह लोगों के बीच अत्यंत प्रिय रही है। एक साल पहले तमिलनाडु के दक्षिण अर्काट जिले में 'समुदाय आधारित पुनर्वास' परियोजना शुरू की गयी थी। इसके बारे में रिपोर्ट है कि यह एक आदर्श नमूना है। आप लोग इससे सहमत होगे कि संघ को अपने हर कार्यक्रम में नयी परियोजना—'इलाज के बाद सावधानी' तथा 'इलेक्ट्रानिक माध्यमों द्वारा स्वास्थ्य शिक्षा' जैसे कार्यक्रमो को सफल बनाने का प्रयास करना चाहिए। ये वे कार्यक्रम हैं जिन्हें 1993 के बाद शुरू किया जाना है।

इसी प्रकार कुष्ठ रोग के अनुसंधान, प्रशिक्षण एवं पुनर्वास के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान करने वाले स्वर्गीय डॉ0 धर्मेन्द्र की स्मृति में भारत में कुष्ठ अनुसंधान के लिए 'धर्मेन्द्र पुरस्कार' की स्थापना की गयी है। महारोगी सेवा समिति के संस्थापक श्री मनोहरजी दीवान के नाम पर कुष्ठ रोग से संबंधित सामाजिक कार्यो के लिए 'मनोहर दीवान पुरस्कार' की स्थापना की गयी है। कुष्ठ रोग संबंधी कार्यो

को बढ़ावा देने के लिए इस तरह की जो संस्थाएँ स्थापित की गयी हैं, उन्हें सभी स्तर के डाक्टर, कार्यकर्ता तथा अन्य लोगों को प्रेरित करने के लिए अभी बहुत कुछ करना है। मदर टेरेसा के शब्दों में "कुष्ठ रोग दंड नहीं है। यदि हम इसका सही उपयोग करें तो यह ईश्वर द्वारा दिया गया एक सुन्दर उपहार हो सकता है। इसके द्वारा हम अप्रिय एव अवांछित लोगों से प्यार करना सीख सकते हैं। उन्हें केवल वस्तुएं देना ही नहीं सीखते, उन्हें यह अनुभव कराना भी सीखते हैं कि वे भी उपयोगी है, वे भी कुछ कर सकते हैं। वे अनुभव करते हैं कि उनसे प्रेम किया जाता है, उन्हें चाहा भी जाता हे ओर वे प्रेम के इस आनंद के सहभागी हो सकते है। मैं समझती हूँ कि उन्हे यह अनुभव कराने के लिए कि वे भी महत्वपूर्ण हैं, यह सर्वोत्तम इलाज है।"

केन्द्र सरकार ने कुष्ठ रोग निवारण सबधी कार्यक्रमो के निर्माण और कार्यान्वयन के लिए राष्ट्रीय कुष्ठ रोग निवारण कार्यक्रम के माध्यम से व्यापक ढाँचे वाला कार्यक्रम तैयार किया हे। इस शताब्दी के अंत तक कुष्ठ रोग की समाप्ति के सामान्य लक्ष्य को प्राप्त करने वाले सरकार के इस कार्यक्रम को स्वयंसेवी संगठनों द्वारा सहायता की आवश्यकता है। कुष्ठ रोग के संबध मे प्राप्त आधुनिक दवाइयों से इस क्षेत्र के संयुक्त प्रयासों को प्रोत्साहन मिला है और ऐसे प्रयासों को सहयोग और आपसी तालमेल से निरंतर जारी रखना चाहिए। मैं सभी स्वयंसेवी सगठनों से अपील करता हूँ कि वे भविष्य में कुष्ठ रोग के संपूर्ण निवारण के लिए राष्ट्रीय कुष्ठ रोग निवारण कार्यक्रमो को सहयोग देने हेतु अपने प्रयासो को दुगुना करें।

आप में से बहुत से लोग आज की इस बैठक मे शामिल होने के लिए राजधानी के बाहर से आए होगे; मैं इसके लिए आप सबको धन्यवाद देता हूँ और आपके समर्पित एवं स्वार्थरहित इस कार्यक्रम की सफलता के लिए कामना करता हूँ। मैं इस अवसर पर उन सभी भाई-बहनों के प्रति भी अपनी शुभकामनाएँ व्यक्त करता हूँ जो बापू के इस अत्यत प्रिय कार्य के लिए स्वयंसेवी और सरकारी एजेंसियों मे शामिल होकर काम कर रहे हैं। मैं प्रार्थना करता हूँ कि हम सबके पास ताकत और दृढ़ इच्छा-शक्ति आए, ताकि बापू द्वारा शुरू किए गए स्वार्थरहित अनुकरणीय सेवा कार्य के माध्यम से समाज को कुष्ठ रोग के कलक से मुक्त किया जाए। इस समय मुझे बापू के वे शब्द याद आ रहे हैं, जो उन्होने 'हरिजन' के दिनाक 2 नवम्बर, 1947 के अंक में लिखे थे :

"अन्य संक्रामक रोगों की अपेक्षा कुष्ठ रोग को अधिक कलंकित क्यों माना जाना चाहिए? सही कुष्ठ रोग तो दूषित मस्तिष्क से जुड़ा हुआ है। मनुष्य जाति को नीची निगाह से देखना तथा किसी भी समुदाय या मनुष्य के वर्ग को तिरस्कृत करना बीमार मस्तिष्क का प्रतीक है और यह शारीरिक कुष्ठ रोग से भी अधिक बुरा है।"

सांप्रदायिकता की समस्या से मुक्ति

आज से 43 साल पहले 26 जनवरी, 1950 को हमारे देश का संविधान लागू हुआ था। हमारा संविधान हमारे जीवन-मूल्यों, उद्देश्यों तथा लोगों के पवित्र संकल्पों का प्रतिनिधित्व करता है। संविधान इतिहास को, भविष्य की संभव चुनौतियों के प्रति सावधान और प्रगति के सुअवसरों को ध्यान में रखकर बनाया गया है।

जिस चिंतन ने भारत-वर्प को सहस्त्रों वर्पो से अनुप्राणित किया है उसके सर्वव्यापी, अजेय एव सुदृढता प्रदान करने वाले आदर्श हमारे संविधान में निबद्ध है और सभी देशवासियों की सम्पन्नता और खुशहाली का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

हमारे संविधान में अतर्निहित आदर्श, दर्शन व दूरदृष्टि हमें एक राष्ट्र का स्वरूप प्रदान करते हैं और बेहतर भविष्य के हमारे स्वप्न को सुगम बना देते हैं।

अनेक प्रकार की बाधाओं के होते हुए भी, हमारे संविधान मे समष्टिमूलक विचारधारा के प्रति अपनी दृढ निष्ठा के फलस्वरूप हमने राष्ट्र-निर्माण के अनेकानेक क्षेत्रो मे निर्णायक प्रगति की है। हमे अनेक क्षेत्रों में अनगिनत सफलताएँ प्राप्त हुई हैं और इसका श्रेय हमारे संविधान में वर्णित व्यावहारिक आदर्शवाद के साथ-साथ राष्ट्र-प्रेम से परिपूर्ण हमारे अनथक प्रयासो को जाता है।

वस्तुत: संविधान में उल्लिखित बुद्धिमतापूर्ण बातों का पूर्ण पालन न कर पाने अथवा इसमें विफल रहने के कारण ही लगभग हमारी सभी समस्याएँ उत्पन्न हुई हैं।

साथियों, आज जो मै कह रहा हूँ, उस पर गभीरतापूर्वक विचार करें, क्योंकि स्वतंत्रता प्राप्त करने के पश्चात् यहाँ तक आने पर अपना भारत आज इतिहास के दोराहे पर खड़ा है, और हमारा भविष्य वैसा ही होगा, जैसा हम उसे तय करेंगे।

हमारे समक्ष दो रास्ते हैं। एक रास्ता है परस्पर समझदारी, शांति, आपसी समायोजन, मैत्री, सहयोग, संयुक्त प्रयास का, जो एक-दूसरे को बल प्रदान करते

गणतत्र दिवस (1993) की पूर्व-सध्या पर राष्ट्र के नाम सदेश, नई दिल्ली, 25 जनवरी, 1993

हैं। इससे हमारे जैसे विशाल और जन-बहुल राष्ट्र में प्रत्येक समुदाय, क्षेत्र और व्यक्ति को आत्म-सम्मान, समृद्धि और खुशहाली प्राप्त होगी।

जैसे-जैसे हम प्रगति के मार्ग पर अग्रसर होते चले जायेंगे, हम अपने मार्ग में आने वाली प्रत्येक बाधा को— फिर चाहे वह निर्धनता, पूर्वाग्रह, असुरक्षा की भावना, अज्ञानता अथवा नाना प्रकार की शारीरिक व्याधियाँ ही क्यों न हों— दूर कर पायेंगे। सतत् गतिशीलता से ही हमारा राष्ट्र प्रगति करता हुआ स्वयं को एक ऐसे शक्तिशाली राष्ट्र के रूप मे ढाल सकेगा, जो कि संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए सदैव सन्नद्ध होगा। इस आदर्श स्थिति तक पहुँचने में हम सक्षम हैं। हमारे यहॉ विद्वानों और संसाधनों की प्रचुरता है तथा इस लक्ष्य को पाने के सुअवसर भी हैं। हम यह करके दिखा सकते हैं। प्राचीन काल में कभी हमारा देश ऐसा था। हमारा संविधान भी इसी लक्ष्य को आलोकित करता है।

दूसरा रास्ता हमें कलह, पीड़ा, व्यथा और क्लेशो की ओर ले जाता है और इस दु:खद अवस्था के लिए संकीर्ण विचारधारा, कथ्य एवं कृत्य उत्तरदायी हैं। क्या इस बारे में कुछ और अधिक कहने की आवश्यकता है? इससे पूर्व कि हम सांप्रदायिकता का परित्याग करने का निश्चय करे और इस विषाक्त प्रवृत्ति को बढ़ावा देने वाले सौदागरो को अनावृत्त करे, हमें इस भयानक स्थिति को और कहॉ तक जारी रहने देना चाहिए?

साम्प्रदायिकता प्रत्येक व्यक्ति, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र, सामाजिक, आर्थिक व राजनीति के लिए एव वस्तुत: संपूर्ण राष्ट्र के लिए एक अत्यधिक विध्वंस का डर पैदा करती है। कुछ ऐसे भ्रमित व्यक्तियों को, जो साम्प्रदायिक पूर्वाग्रहों को हवा देते हैं एवं साम्प्रदायिक-हिंसा में स्वयं संलिप्त रहते हैं अथवा साम्प्रदायिक हिंसा को बढ़ावा देते हैं, सर्वनाश का— उनका अपना भी— आह्वान करने वालों की संज्ञा देनी होगी। भारत में साम्प्रदायिक दृष्टिकोण अपनाना सबसे बड़ी मूर्खता है। लेकिन कुछ व्यक्ति इस प्रकार का दुराग्रह करते हैं और कुछ दूसरे व्यक्ति भी इसका शिकार हो जाते हैं।

साम्प्रदायिकता से साम्प्रदायिकता बढ़ती है। अंततोगत्वा, इससे किसी को भी लाभ नहीं है। जब हम पर साम्प्रदायिकता का भूत सवार होता है, तो उससे हम सभी को हानि ही होती है।

साम्प्रदायिकता के अपरिहार्य दुष्परिणामों को, यदि किसी साक्ष्य की आवश्यकता है, तो उसे हाल ही में देश में व्यापक पैमाने पर हुए दंगों एवं फैली

हिंसा में देखा जा सकता है। इस उन्माद एवं हिंसा से पीड़ित निर्दोष व्यक्तियों, महिलाओं और बच्चों की स्थिति को देखकर मेरा हृदय विचलित हो उठता है। जीवन अथवा आत्म-सम्मान को पहुँची क्षति, डर एवं आशंका से नष्ट हुए आपसी सबधों एव एकता की प्रतिपूर्ति कौन कर सकता है? आम व्यक्तियो, निर्धन और कमजोर व्यक्तियो को ही सर्वाधिक कष्ट झेलने पड़ते हैं। इस प्रकार के दगो और हिसा से सर्वप्रथम ऐसे ही व्यक्ति प्रभावित होते हैं और वे इस स्थिति से सबसे पीछे ही उबर पाते हैं। मज़दूरी, जीविकोपार्जन के साधनों और आश्रय की दृष्टि से उन्हे हुई क्षति की समुचित प्रतिपूर्ति कौन कर सकता है?

इस विपय की गभीरता को अन्य महत्वपूर्ण पहलुओं की दृष्टि से भी समझना अत्यावश्यक है। जव तक साम्प्रदायिकता की समस्या से हमें मुक्ति नहीं मिलती है, तव तक एक कल्याणकारी राज्य के समग्र साधनो को विकसित करते हुए प्रति व्यक्ति आय के स्तर में वृद्धि करने, लाभप्रद नियोजन के सृजन, आत्म-निर्भर एवं प्रतिस्पर्धात्मक अर्थ-व्यवस्था बनाने के अपने महत्वपूर्ण कार्यो में हम एक राष्ट्र के रूप में अपनी सम्पूर्ण क्षमताओ का उपयोग नहीं कर पायेंगे। राष्ट्र का सम्पूर्ण ध्यान कहीं दूसरी ओर चला जाता है। बाहरी तत्वों के पड्यंत्रो से राष्ट्र की सुरक्षा को भी खतरा बढ़ जाता है।

हमारे गणतंत्र के एक संवैधानिक प्रमुख के नाते, मैं हमारी मिली-जुली, अनेक प्रकार की संस्कृतियो से समृद्ध शासन-व्यवस्था में राष्ट्रीय हित एवं सभी व्यक्तियो की खुशहाली की संरक्षा के लिए निहित मर्यादाओं में रहते हुए अपना भरसक प्रयत्न करूँगा।

मित्रो, भारत सभी महान् धर्मो की भूमि रहा है और सीधी सच्चाई यह है कि सभी धर्मो मे, उनके नैतिक उपदेशो में समानता स्पष्ट दृष्टिगोचर होती है। हम भारतीयो को इस तथ्य को समझना चाहिए। अत· धर्म और साम्प्रदायिकता में उतना ही विरोध है, जितना कि पवित्रता और अपवित्रता में अथवा अच्छाई और बुराई में।

हम सभी को व्यक्तिगत, सामूहिक, एक राष्ट्र एव एक गणतंत्र के रूप में साम्प्रदायिकता का प्रतिरोध करना चाहिए, इसे समूल नष्ट कर देना होगा। हमें इसमें दृढ़ता का परिचय देना चाहिए। ऐसा करने पर ही हम अपनी आस्था और अपनी मातृ-भूमि के प्रति सच्ची श्रद्धा से उसकी सेवा कर सकेंगे तथा रक्षा कर सकेगे।

हम भविष्य में स्वयं को ऐसा सिद्ध कर सकेंगे। जिस कर्तव्य-निष्ठता से

माँ अपने शिशु का लालन-पालन करती है, कृपक अपने खेत-खलिहान का ध्यान रखता है, मजदूर अपने औज़ारों को संभालता है, सिपाही अपने हथियारों की देख-रेख करता है, उसी भावना से राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के परस्पर जुड़े हुए विभिन्न क्षेत्रो में निर्दिष्ट भूमिका का निर्वाह करने के लिए ससदीय लोकतंत्र की हमारी व्यवस्था के प्रत्येक अंग और घटक को सतत् रूप से चेष्टारत रहना चाहिए। विधायिका, कार्यपालिका, न्यायपालिका और संचार माध्यमों की भूमिका का महत्व इस दृष्टि से और भी बढ़ जाता है कि उन्हें पूर्ण स्वतत्रता के साथ अपने-अपने दायित्वों का निर्वहन करना होता है। हमारे स्वतंत्रता-सेनानियों, प्रशासनिक सेवाओं के अधिकारियों, सशस्त्र बलों, वैज्ञानिको, इंजीनियरों, अध्यापकों, चिकित्सकों, लेखकों, कवियों और कलाकारो, हमारे सामाजिक और स्वय-सेवी संगठनो के कार्यकर्ताओं और विशेषत: भारत की महिलाओं को मिलाकर प्रतिभा, कार्यक्षमता और निष्ठा के अजस्र भंडार का सृजन होता है। यह परमावश्यक है कि विधि के शासन को बनाये रखने, स्वतंत्रता की रक्षा और इससे प्रोद्भूत लाभप्रद स्थिति के विस्तार और भारत की भावी सन्तति को सौहार्द, एकता, उत्पादक प्रयास और प्रसन्नता का वातावरण प्रदान करने के लिए दृढ़-निश्चय के साथ हम सभी इस पुनीत कार्य में तत्पर हो। हमें एक नये भारत— जहाँ सर्वत्र शांति हो— जो समय की कसौटी पर खरे उतरे अपने आदर्शो, नैतिक मूल्यो के प्रति सत्यनिष्ठ हो और जो विविध रूपों में अपनी विलक्षण प्रतिभाओं को परिलक्षित करे, ऐसे भारत के निर्माण के लिए राष्ट्रीय एकता की भावना से प्रेरित होकर मिलकर प्रयास करना चाहिए। हम एक ऐसे भारत का निर्माण करे, जिसकी ओर सम्पूर्ण विश्व आदर से देखे।

साथियो, मैं आप सभी की ओर से भारत के नैतिक मूल्यों में अंतर्विष्ट मूलभूत लचीलेपन, हमारे राष्ट्र में अंतर्निहित शक्ति और प्रत्येक चुनौती का सामना करने के संकल्प एव हमारे सुस्पष्ट राष्ट्रीय लक्ष्यों की पूर्णत: प्राप्ति में हमारी आस्था की अभिव्यक्ति करना चाहूँगा।

सम्पूर्ण विश्व हमारी ओर दृष्टि लगाये हुए है। भारत का अपने पड़ोसी देशों और विश्व के सभी देशों के लिए सर्वदा यही सदेश रहा है और रहेगा कि हम शांति, मैत्री और सहयोग के पक्षधर हैं। हम विश्व परिदृश्य मे सम्पूर्ण मानव-जाति के कल्याण के लिए सजग एव सक्रिय भूमिका निभाते रहेगे।

कल हमारे 44वें गणतंत्र दिवस पर, जब हम अपना राष्ट्रीय ध्वज तिरंगा

फहरायेगे, तब हमें अपने स्वतंत्रता के ध्वज को नमन करना चाहिए, अपने राष्ट्रीय सकल्प को दोहराना चाहिए और हमें स्वयं को अपनी मातृभूमि के प्रति पुन समर्पित करना चाहिए।

गौतम बुद्ध का संदेश

इस अवसर पर मेरे मस्तिष्क मे अनेक विचार आ रहे हैं जो हमारे देश के महान् चिंतकों से जुड़े हुए है। अभी जिस स्तूप का उद्घाटन हुआ है उसमें गहरा अर्थ छिपा है और मुझे ऐसा लगता है कि स्तूप के पीछे छिपे उन प्रतीकात्मक अर्थो को जानना चाहिए, जिसकी परिकल्पना हमारे विचारको ने की थी।

स्तूप का गोलार्द्ध विश्व के आकाश का तथा शिखर पर स्थित कलश उसके अक्ष का प्रतीक माना जाता है। यह गोलाकार भाग विश्व के सम्[illegible] अस्तित्व का अर्थ भी देता है। घटते हुए क्रम में बनाए गए कंगूरे आध्यात्मि[illegible] के विभिन्न स्तरों को अभिव्यक्त करते हैं। जब स्तूप की बनावट [illegible] अंतर आया तब उसके प्रतीक अर्थ में भी अतर आया। उसक[illegible] क समय का नियामक तथा विश्व के मापक का अर्थ देता है। इस [illegible] की अवधारणा भी जुड़ जाती है। स्तूप की आकृति में अधखिल [illegible] भी देखा जाता है। इस प्रकार मुझे लगता है कि स्तूप अपने स्व[illegible] चतन की व्यापकता को समोये हुए है। आज यहाँ एक ऐसे ही [illegible] होना निश्चित रूप से प्रसन्नता की एक बात है।

गौतम बुद्ध की बहुत बड़ी विशेषत[illegible] है कि उन्होंने व्यक्ति के मस्तिष्क, उसकी बौद्धिक क्षमता त[illegible] महत्त्वपूर्ण माना है। बुद्ध ने पूरी प्रखरता के साथ जीवन मे ता[illegible] को स्थापित किया और यह बताया कि विश्व की गतिविधियाँ [illegible] आधारित है। इस संदर्भ में मैं 'धम्मपद' के शुरू के दो श्लोक [illegible] रखना चाहूँगा जिनमें इस बात की पुष्टि होती है। पहल[illegible]

मनो पुब्बङ्गमा धम्मा मनो[illegible]
मनसा चे पट्ठेन भासति [illegible]
ततो 'नं दुक्खमन्वेति चक्क[illegible] ॥

श्लोक का अर्थ है कि म[illegible] प्रकार की मनःस्थितियों का

शांति-स्तूप का शुभारभ करते हुए, व[illegible]

अग्रगामी है, मस्तिष्क ही नियामक है, और वह ही सभी मन:स्थितियों का निर्माता है। यदि किसी की वाणी और कर्म बुरे विचारों से निसृत है, तो दु:ख उसी तरह अनिवार्य है, जैसे कि गाड़ी के पहिये उसमें जुते हुए बैल के खुरों के चिह्नों का अनुसरण करने के लिए बाध्य हैं।

'धम्मपद' का दूसरा श्लोक है :

मनो पुब्बङ्गमा धम्मा मनोसेट्ठा मनोमया।
मनसा चे पसन्नेन भासति वा करोति वा।
ततो 'नं सुखमन्वेति छाया' व अनपायिनी॥

अर्थात्, मस्तिष्क हमारी सभी प्रकार की मन स्थितियों का अग्रगामी है, मस्तिष्क ही नियामक है, और वह ही सभी मन.स्थितियों का निर्माता है। यदि किसी की वाणी और कर्म पवित्र विचारो से निसृत हैं, तो सुख उसी तरह उसके साथ रहता है, जैसे कि व्यक्ति को उसकी छाया नहीं छोड़ती।

बुद्ध ने तार्किकता को हमेशा अपने व्यवहार और विचारों के केन्द्र में रखा। मुझे लगता है कि यह उस समय की बहुत बड़ी जरूरत थी। बुद्ध का समय एक ऐसा समय था, जब धर्म के क्षेत्र में भावना महत्वपूर्ण होती जा रही थी और समाज के यर्थाथ से उसका सबध कटता जा रहा था। धर्म व्यक्ति के आचरण से हटकर आडम्बर का रूप ले रहा था। ऐसे समय में गौतम बुद्ध ने व्यक्ति के मस्तिष्क की तार्किकता को सामने रखकर समाज को एक नया रास्ता दिखाया। वे यथार्थ के समर्थक थे, और आडम्बर के विरोधी। वे अंधानुकरण के कितने विरोधी थे, इसे इनके इस कथन से जाना जा सकता है :

"तापाच् छेदाच् च निकषात् सुवर्णामिव पण्डितै:।
परीक्ष्य मद्वचो ग्राह्यं भिक्षवो न तु गौरवात्॥

अर्थात्, जैसे जानकार जन सोने को तपाकर, काटकर, कसौटी पर कस कर परखते हैं और फिर उसे ग्रहण करते हैं, वैसे ही हे भिक्षुओ। मेरे वचनो को भी परख कर ग्रहण करो, केवल भक्तिवश उन पर विश्वास न करो।

—संयुक्तनिकायवचन

मुझे लगता है कि आज विशेषकर धर्म के क्षेत्र मे जो आपाधापी, सघर्ष और कट्टरता है, उसका कारण यही है कि धर्म अपने समय की जरूरत तथा व्यक्ति के आचरण से हटकर अंधानुकरण का रूप लेता जा रहा है। गौतम बुद्ध का संदेश इन सबके लिए एक प्रकाश-स्रोत की तरह है।

गौतम बुद्ध धर्म और जाति जैसे विषयों से परे थे। वे व्यक्ति की समानता पर विश्वास करते थे। उनके संघ में हर व्यक्ति प्रवेश का अधिकारी था, बशर्ते कि वह इच्छा-रहित, सीधा-साधा जीवन जीने को तैयार हो। उनके लिए साधना का अर्थ था, अपनी आध्यात्मिक शक्ति का उत्थान करके शाति प्राप्त करना। इसलिए वे 'अंतदीप' की बात कहा करते थे। यहाँ तक कि भगवान् बुद्ध का जो अतिम वचन है, उसमें भी उन्होंने अपने शिष्यों को अप्रमत्त और एकाग्रचित होकर अपनी साधना मे लगे रहने का उपदेश दिया है। बुद्ध का अंतिम वचन था :

''हंदा दानी भिक्खवे आमन्तयामि वो,
वयधम्मा संखारा, अप्पमादेन सपादेथऽति।''

जिस नगर मे इस स्तूप का शुभारंभ हो रहा है, वह स्थान बापू की कर्मस्थली रही है। 'भारत छोड़ो आंदोलन' की कार्य-योजना यहीं से बनी थी और यहीं से बापू ने पूरे विश्व को सेवा का मार्ग दिखाया था। इसी नगर में जापान के फूजी गुरुजी 4 अक्तूबर, 1933 को बापू से थोड़े समय के लिए मिले थे। उस थोड़े से समय में ही फूजी गुरुजी बापू के व्यक्तित्व और विचारो से इतने अधिक प्रभावित हुए कि उन्होंने वर्धा में स्तूप बनाने का निर्णय लिया। उस मुलाकात में बापू ने फूजी गुरुजी से कहा था :

''बुद्ध के उपदेश केवल मनुष्य के भाईचारे के लिए ही ज़रूरी नहीं हैं, बल्कि पूरे जीव-जगत के भाईचारे के लिए जरूरी हैं।''

(हिंदू, 12-10-1933)

बापू ने दिनाक 20 अगस्त, 1938 के 'हरिजन' में गौतम बुद्ध को जीवन की पवित्रता का सशक्त प्रवक्ता मानते हुए सीधे-सादे शब्दों में कहा था :

''वे शांति के महान् उपदेशको में से थे।''

ऐसे महान् चिंतक गौतम बुद्ध का प्रभाव केवल भारत में ही नहीं बल्कि भारत के बाहर अनेक देशों पर पड़ा। जापान उनमें से एक है। मैं समझता हूँ कि भारत और जापान के बीच दर्शन और संस्कृति के आधार पर जो यह भावनात्मक जुड़ाव है, वह अत्यंत महत्व का है। जापान के अतिरिक्त बुद्ध के विचार भारत को अपने पड़ोसी देशो तथा बाहर के अन्य देशों से भी जोड़ते हैं। यह बुद्ध के विचारों की व्यावहारिकता और प्रभावोत्पादकता का परिणाम है।

मैं समझता हूँ कि गौतम बुद्ध की तार्किकता को स्वीकार करके ही विश्व

मानवता के लिए एक सुंदर और शांतिपूर्ण ससार की रचना की जा सकती है।

वर्धा से थोड़ी ही दूरी पर चंद्रपुर है, जहॉ मौर्य सम्राट अशोक का शिलालेख मिला है, जिसमें करुणा, सेवा, शांति और सुखमय तत्वों के आंतरिक संबंधों को प्रकट किया गया है। हमारे यहॉ के चिंतन और संस्कृति में प्राचीन काल से शांति को पर्याप्त महत्व दिया गया है। वेद में प्रार्थना की गयी है :

द्यौ:शान्तिरन्तरिक्षं शान्ति:पृथ्वी
शान्तिराप:शान्तिरोषधय: ।
वनस्पतय·शान्तिर्विश्वेदेवा शान्तिर्ब्रह्म
शान्ति.सर्व शान्तिरेवशान्ति:सामाशान्तिरेधि ॥
ॐ शान्ति·शान्ति·शान्ति: ॥

इस श्लोक में आकाश, अंतरिक्ष, पृथ्वी, औपधि, वनस्पति, समुद्र आदि अर्थात् म्पूर्ण जल-थल और नभ में शांति की कामना की गयी है।

इस शाति की कल्पना समन्वय के आधार पर की गयी है। यह शांति तालमेल और आपसी समझदारी से उत्पन्न शाति है। आपसी समझदारी की यही भावना वौद्ध दर्शन से प्रभावित सम्राट अशोक की थी। पेशावर के पास शाहबाजगढ़ मे सम्राट अशोक का जो शिलालेख मिला है, उसमे दूसरो के साथ समन्वय, समझदारी और सहनशीलता की वात कही गयी है। शिलालेख में लिखा है ·

"सलवढ़ि तु बहुविध,
तस तू इयो मुल यं वचगुति किति अतप्रपंडपुज व परपपंडगरन व नो सिय
अपकरणसि लहुक व सिय तसि प्रकरणे,
पुजेतविय व चु परप्रषंड तेन तेन अकरेन,
एव करतं अतप्रपडं वढेति परप्रपंडंस पि च उपकरोति,
तद अथ करमिनो अतप्रपंडं क्षणति परप्रपडस च अपकरीति,
यो हि कचि अतप्रपडं पुजेति परप्रषंडं
गरहति सव्रे अतप्रषडभतिय व किति अंतप्रषंडं
दिपयमि ति सो च पुन तथ करंतं
सो च पुन तथ करतं बढ़तरं उपहंति
अतप्रषंडं ॥"

अर्थात्, "आध्यात्मिक शक्ति की वृद्धि, कई रूपों में प्रकट होती है। पर

उसकी जड़ है, वाणी का संयम, ताकि हम अपने धर्म की बड़ाई करने से बच सकें, या दूसरों के धर्म की निन्दा करने से बच सकें या बिना वजह दूसरों के धर्म के बारे में हल्की बातें करने से बच सकें। सुयोग्य अवसर आने पर दूसरे धर्म को मानने वालों का समुचित सम्मान करना चाहिए। इस तरह हम अपने स्वयं के धर्म वालों का सम्मान बढ़ाते हैं और दूसरे धर्म वालों की भी सहायता करते हैं। इसके विपरीत चलने पर हम अपने धर्म को भी नुकसान पहुँचाते हैं और दूसरों के धर्म का भी अपकार करते हैं। जो अपने धर्म का आदर करता है और दूसरे धर्मो की निन्दा करता है, उसे अपने धर्म से नीचा दिखाता है, और अपने धर्म को दूसरे धर्मो से बड़ा मानता है; वह वास्तव में अपने ही धर्म को सबसे अधिक हानि पहुँचाता है।''

आज विश्व के अस्तित्व के सामने आणविक अस्त्र के उपयोग का खतरा मंडरा रहा है। जापान ने इस खतरे को भोगा है और हमारे चिन्तन में शान्ति की बात सदियों से चली आ रही है। इसलिए हम दोनों देश शांति की ज़रूरत को अच्छी तरह से समझते हैं और इसकी महत्ता का सम्मान करते हैं। मुझे लगता है कि विश्व-शांति के लिए गौतम बुद्ध का संदेश बहुत अधिक प्रासंगिक है।

इस स्तूप को मैं अपने यहां के ऐसे प्राचीन दर्शन, जीवन-मूल्यों को वर्तमान जीवन-मूल्यों से जोड़ने का प्रतीक मानता हूँ। मेरा विश्वास है कि यह 'शांति-स्तूप' वर्तमान और भविष्य की पीढ़ियों के लिए हमेशा शांति, आदर्श और प्रेरणा का काम करता रहेगा।

साम्प्रदायिक सद्भावना

हमारे सामने आज सबसे महत्वपूर्ण कार्य लोगो के मन में उस विश्वास और साम्प्रदायिक सौहार्द को फिर से स्थापित करना है, जिसे पिछले वर्ष 6 दिसम्बर और उसके तत्काल बाद घटी दु:खद घटनाओं के कारण गहरा धक्का लगा है। धर्मनिरपेक्षता और विधि की सर्वोच्च सत्ता जैसी आधारभूत बातों को भी अब खतरा पैदा हो गया है। राजीतिक दलों, बुद्धिजीवियो, प्रभावशाली नेताओं और अन्य प्रभावी लोगों को इस बढ़ते हुए साम्प्रदायिक कुप्रचार को रोकने के लिए मिलकर विरोध करना चाहिए, ताकि हम राष्ट्र निर्माण के कार्य में लग सकें और अपने आधारभूत मूल्यों को अक्षुण्ण बनाए रख सकें। हमें साम्प्रदायिक सद्भाव की भावना को, जो कि सदैव ही हमारे समाज की विशेपता रही है, और अधिक मजबूत करना होगा।

राम जन्म भूमि–बाबरी मस्जिद विवाद के मुख्य मुद्दे को संविधान के अनुच्छेद 143 के अधीन उच्चतम न्यायालय को भेजा जा चुका है। सरकार ने भी परिसर की लगभग 68 एकड़ भूमि का अधिग्रहण कर लिया है और सरकार अब राम मंदिर तथा मस्जिद के निर्माण कार्य का संचालन करने के लिए दो पृथक न्यास गठित करने संबंधी कार्रवाई कर रही है। सरकार इस बात का भरसक प्रयास करेगी कि निर्माण कार्य दोनो सम्बन्धित समुदायों की सलाह और सहयोग से और दोनों समुदायों के प्रमुख तथा जिम्मेदार नेताओ की सक्रिय भागीदारी से पूरा किया जाए। सरकार इस महत्वपूर्ण कार्य के लिए सभी वर्गो के लोगों का समर्थन चाहती है और उनके सहयोग की अपेक्षा रखती है।

जम्मू और कश्मीर में सीमापार से आतंकवादियों को प्रशिक्षण और हथियार तथा अन्य सामग्री में अभी भी कोई कमी नहीं आई है। अत्यधिक कठिन स्थितियों में कार्य करने की मजबूरी के बावजूद हमारे सुरक्षा बल इस चुनौती का मुकाबला करने का भरसक प्रयास कर रहे हैं। राज्य मे आतंकवादियों के कायरतापूर्ण कार्यो, बार–बार बद का आह्वान किएं जाने और आर्थिक तथा वाणिज्यिक क्रियाकलापों

ससद के समक्ष अभिभाषण, ससद भवन, नई दिल्ली, फरवरी 22, 1993

में रुकावट पैदा किए जाने के कारण जम्मू और कश्मीर की जनता को जिस प्रकार की कठिनाई और तगी का सामना करना पड़ रहा है, सरकार उसके प्रति पूरी तरह से सचेत है। राज्य में कार्रवाई कर रहे सुरक्षा बलों से भी कुछ मामलों में ज्यादती हुई है। इस सबध में दोषी लोगों को दंडित किए जाने के लिए शीघ्र कार्रवाई की गई है। लोगों की शिकायतो को दूर करने और राजनीतिक प्रक्रिया के पुनः बहाल करने के प्रथम कदम के रूप मे राज्य स्तर पर एक बहुदलीय सलाहकार परिषद का गठन किया गया है, ताकि वह परिषद प्रशासन और लोगों के बीच सेतु का कार्य कर सके। इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाने के लिए जिला स्तर पर समितियां बनाने के भी प्रयास किए जा रहे हैं। अक्तूबर, 1992 में एक संसदीय शिष्टमंडल ने घाटी का दौरा किया। राज्य में लोकतान्त्रिक प्रक्रिया की बहाली की दिशा में वातावरण तैयार करने के लिए केन्द्रीय गृह मत्री ने राजनितिक दलों के नेताओं के साथ विचार-विमर्श किया है।

पंजाब में लोकतांत्रिक ढग से निर्वाचित सरकार द्वारा सत्ता संभालने के बाद राज्य के लोगों के जीवन में भारी सुधार हुआ है। अलगाववादी और विघटनकारी ताकतों के खिलाफ स्पष्ट संदेश देने के लिए इन बहादुर लोगों को इसका श्रेय दिया जाना चाहिए। राज्य मे लगभग 13 वर्ष के अंतराल के बाद नगर पालिका के चुनाव हुए हैं और लगभग 9 वर्ष के अंतराल के बाद पंचायतों के चुनाव सम्पन्न हुए हैं। इन चुनावों से नई उमंग और उत्साह पैदा हुआ है। राज्य के सामाजिक आर्थिक विकास पर नए सिरे से बल दिया जा रहा है। सरकार पजाब में सभी अनसुलझे मसलों का उचित एवं सौहार्दपूर्ण समाधान निकालने और राज्य सरकार द्वारा आतंकवाद के खिलाफ किए जा रहे उपायों के लिए उसे सभी प्रकार की सहायता प्रदान करने के लिए वचनबद्ध है।

पूर्वोत्तर क्षेत्र में कुल मिलाकर स्थिति नियंत्रण में है। इस क्षेत्र में बुनियादी ढांचे के विकास की गति में, विशेष रूप से रेल, सड़क और दूरसचार में तेजी लाने के लिए कदम उठाए गए हैं। राज्य सरकारें और पूर्वोत्तर परिषद ने कृषि, बागवानी और मत्स्य पालन आदि के विकास के लिए नए कार्यक्रम शुरू किए हैं। केन्द्र सरकार एक कृषि विश्वविद्यालय और एक प्रौद्योगिकी संस्थान की स्थापना कर रही है। विकास के इन सभी कार्यक्रमों में लोगों की भागीदारी पर बल दिया जा रहा है। नागालैंड और मेघालय में हाल ही में चुनाव सम्पन्न हुए हैं।

पिछले वर्ष एक अप्रैल को शुरू हुई आठवीं पंचवर्षीय योजना के कार्यान्वयन का कार्य तेज़ी से आगे बढ़ रहा है। वर्ष 1991-92 की कीमतों पर कुल निवेश 7 लाख 98 हजार करोड़ रुपए की महत्वपूर्ण वृद्धि हुई है। इस निवेश में से सार्वजनिक क्षेत्र का परिव्यय 4 लाख 34 हजार एक सौ करोड़ रुपए होगा। हमारी आर्थिक नीति में हुए परिवर्तनों के अनुसार अब हम निर्देशात्मक योजना की ओर बढ़ रहे हैं।

वर्ष 1992-93 में आर्थिक स्थायित्व के कार्यक्रम और सरचनात्मक सुधारो की प्रक्रिया और अधिक मजबूत हुई है। वर्ष 1991-92 मे सकल घरेलू उत्पाद की वृद्धि दर 1 2 प्रतिशत थी और वर्ष 1992-93 में यह दर लगभग 4 प्रतिशत होने की आशा है। पिछले वर्ष के गतिरोधों, औद्योगिक क्षेत्र की अपेक्षाकृत धीमी गति और वित्तीय क्षेत्र की समस्याओं को ध्यान में रखते हुए वृद्धि दर अत्यधिक महत्वपूर्ण है।

वर्ष 1992-93 मे औद्योगिक उत्पादन में अप्रैल से अक्तूबर, 1992 तक की अवधि में 3 8 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि पिछले वर्ष इसी अवधि में लगभग एक प्रतिशत की कमी आई थी। इसी प्रकार अप्रैल-दिसम्बर 1992 की अवधि में निर्यातो मे डालर के रूप में लगभग 3 4 प्रतिशत की वृद्धि हुई, जबकि पिछले वर्ष इस अवधि में 3 7 प्रतिशत की कमी आई थी। ऋणों की अदायगी के संबंध में रूस के साथ हाल ही में हुए करार से रूस में परम्परागत बाजारों को किए जाने वाले हमारे निर्यातों को फिर से प्रारम्भ करने में मदद मिलेगी। हमारे पास 5 बिलियन अमरीकी डालर की पर्याप्त विदेशी मुद्रा रिजर्व है। मुद्रास्फीति पर नियंत्रण करके सरकार के एक प्रमुख उद्देश्य को पूरा कर लिया गया है, क्योंकि मुद्रास्फीति की वार्षिक दर जो अगस्त, 1991 में 16 7 प्रतिशत तक पहुच गई थी, जनवरी, 1993 के अतिम सप्ताह में घटकर 7 प्रतिशत रह गई है।

हाल ही मे विदेशी मुद्रा संबंधी नियंत्रणों को उदार बनाने के लिए महत्वपूर्ण परिवर्तन किए गए हैं। नई आर्थिक नीति से विदेशी प्रत्यक्ष निवेश की हमारी कार्यविधि भी काफी उदार हो सकी है। अगस्त 1991 से जनवरी 1993 के अंत तक अनुमोदित कुल पूंजी निवेश 2.3 खरब अमरीकी डालर से भी अधिक हो गया है, जो लगभग 35 हजार करोड़ रुपए के मूल्य की परियोजनाओं के लिए पर्याप्त होगा। लगभग 25 करोड़ डालर की विदेशी पूंजी वाले कई ऐसे अन्य प्रस्ताव भी विचाराधीन हैं, जिससे 7,500 करोड़ रुपए के कुल मूल्य की परियोजनाएं

शुरू की जा सकती हैं। इनमें से अधिकांश निवेश प्राथमिकता के क्षेत्रों में है, जैसे : ऊर्जा के क्षेत्र में 24 प्रतिशत, पैट्रोलियम में 26 प्रतिशत, रसायन में लगभग 8 प्रतिशत, खाद्य संसाधन उद्योग में लगभग 12 प्रतिशत और विद्युत उद्योग में 8 प्रतिशत। शेष 22 प्रतिशत परिवहन, टैक्सटाइल, दूरसंचार और औद्योगिक मशीनरी के लिए है। गैर प्राथमिकता वाली उपभोक्ता मद 4 प्रतिशत से कुछ कम है।

राष्ट्रीय नवीकरण कोष का गठन करके उसे प्रभावी बनाया गया है, जिससे औद्योगिक कामगारो को पुनर्गठन की प्रक्रिया से नुकसान न पहुंचे। नेशनल टेक्सटाइल कारपोरेशन का नवीकरण किया जाना इसका पहला महत्वपूर्ण कार्यक्रम है, जिसके लिए राष्ट्रीय नवीकरण कोष, कार्यशील पूंजी, पुन:प्रशिक्षण एव पुनर्वास उपायों तथा स्वैच्छिक सेवा-निवृत्ति स्कीमों के लिए धन मुहैया कराएगा। यह स्कीम बहुत तेजी से प्रगति कर रही है और अब तक लगभग 22,000 कामगारों को इससे लाभ प्राप्त हुआ है।

सरकार ने सुधार प्रक्रिया से संबधित सामान्य मुद्दों पर तथा क्षेत्र से संबंधित विशिष्ट मामलो पर श्रमिक प्रतिनिधियो से परामर्श किया है। श्रम राज्य मंत्रियों की बैठक और भारतीय श्रम सम्मेलन में हमारे औद्योगिक संबंध विषयक विधियो को नवीकृत करने के मामले की जांच की गई है। सरकार इन परिवर्तनों को उच्च प्राथमिकता देती है क्योंकि यह आशा की जाती है कि इनसे उत्पादन और उत्पादकता बढ़ेगी, मजदूरों की आय अधिक होगी और औद्योगिक संबंध सौहार्दपूर्ण होंगे।

हमारी औद्योगिक अर्थव्यवस्था में लघु उद्योग क्षेत्र का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि यह बड़ी मात्रा मे रोजगार के अवसर जुटाने और देश में चारों ओर औद्योगिक गतिविधियों को फैलाने में सक्षम है। वर्ष 1992-93 मे लघु क्षेत्र में 129 लाख व्यक्तियो के रोजगार में होने और कुल उत्पादन एक लाख 66 हजार 4 सौ करोड़ रुपए का होने का अनुमान है, जो पिछले वर्ष के मुकाबले 4 प्रतिशत की वृद्धि दर को दर्शाता है। औद्योगिक क्षेत्र में काम की धीमी गति को देखते हुए इसे सराहनीय कहा जा सकता है। पूरे उद्योग क्षेत्र में नवीकरण की प्रक्रिया को ध्यान में रखते हुए लघु उद्योग क्षेत्र के निष्पादन में वर्ष 1993-94 के दौरान महत्वपूर्ण सुधार होने की उम्मीद है। लघु यूनिटों की बकाया राशि का अन्य उद्योगों द्वारा तुरन्त भुगतान कराने की दिशा में महत्वपूर्ण पहल की गई है। अब माल प्राप्त करने या सेवाएं प्रदान किए जाने के तीस दिन के भीतर भुगतान कर देना अपेक्षित होता है।

आज पूरे विश्व में यह बात स्वीकार की जा रही है कि किसी भी राष्ट्र की आर्थिक शक्ति उसके उत्पादन की गुणवत्ता, विश्वसनीयता और कीमत के आधार पर अन्तर्राष्ट्रीय बाज़ार में उसकी प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता पर निर्भर होगी। अत. हमारा यह प्रयास होना चाहिए कि हम अगले कुछ वर्षो में डालर के रूप मे 15-20 प्रतिशत प्रति वर्ष की सतत निर्यात वृद्धि दर प्राप्त कर लें। सरकारी नीति का मूल आधार सभी सम्भव तरीकों से निर्यात को बढ़ावा देना ओर उसकी वृद्धि पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली सभी बाधाओं या अवरोधो को दूर करना होगा।

कृषि भारतीय अर्थ-व्यवस्था और उसके जन-जीवन का मुख्य आधार है। चूंकि कृषि अभी भी पूर्णत· वर्षा पर निर्भर है, इसलिए वर्ष 1991-92 में खाद्यान्नों का उत्पादन लगभग 90 लाख मीट्रिक टन घट गया, जबकि उस वर्ष 16 करोड़ 70 लाख मीट्रिक टन उत्पादन होने का अनुमान था। इससे सार्वजनिक वितरण प्रणाली और उपभोक्ता कीमतों पर दबाव पड़ा है। लेकिन सीमित मात्रा मे गेहूं का आयात करने का निर्णय समय पर ले लिए जाने से उसकी कीमत पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा हे। मई और दिसम्बर 1992 के बीच कीमतों में वृद्धि 3.6 प्रतिशत तक सीमित रही, जबकि पिछले वर्ष इसी अवधि में 35 प्रतिशत की वृद्धि हुई थी। मुझे यह कहते हुए प्रसन्नता हो रही हे कि चालू वर्ष में बिहार के भागों और कुछ अन्य राज्यों के भागों के सिवाय अच्छा मानसून रहा है। इस वर्ष कुल खरीफ खाद्यान्न का उत्पादन 10 करोड़ मीट्रिक टन होने का अनुमान है, जबकि पिछले वर्ष 9.142 करोड़ मीट्रिक टन था। खरीफ के चावल की अधिप्राप्ति संतोषजनक है और अब तक 90 लाख मीट्रिक टन से अधिक की अधिप्राप्ति हो चुकी है। रबी की फसल अच्छी होने की सम्भावना है तथा ऐसी आशा है कि यह लगभग 7 करोड़ 60 लाख से 7 करोड़ 70 लाख मीट्रिक टन तक होगी। खरीफ के तिलहन का उत्पादन लगभग 16 लाख मीट्रिक टन तक हो गया है। अक्तूबर 1992 को समाप्त होने वाले चीनी-वर्ष में हमारा चीनी का उत्पादन 133 लाख मीट्रिक टन था, जिसके फलस्वरूप भारत विश्व का सबसे बड़ा चीनी उत्पादक देश बन गया। इन सब बातो का कीमतों एवं उपलब्धता पर सराहनीय प्रभाव पड़ा है। कृषि क्षेत्र में देश की उपलब्धियां हमारे कृषकों के कठोर परिश्रम एवं उद्यम का स्पष्ट प्रमाण हैं।

हमारी कृषि योजनाओं का लक्ष्य केवल आत्मनिर्भर होना नहीं है। हमारी

दृष्टि में यह एक ऐसा क्षेत्र है, जो कि अत्यधिक सम्भावना वाला है और किसानों तथा ग्रामीण मजदूरों को अधिक आय देने में सक्षम है। इस क्षेत्र में वृद्धि को प्रोत्साहित करने के लिए अगस्त 1992 में धान का न्यूनतम समर्थन मूल्य 40 रुपए प्रति क्विंटल बढ़ा दिया गया था और अप्रैल 1993 से प्रारम्भ होने वाले बाजार-मौसम के लिए गेहूं का न्यूनतम समर्थन मूल्य 55 रुपए क्विटल बढ़ा दिया गया है। गेहूं के लिए प्रति क्विटल 25 रुपए का बोनस देने का भी निर्णय लिया गया है। गन्ने का न्यूनतम परिनियत मूल्य चीनी-वर्ष 1991-92 के लिए 3 रुपए प्रति क्विंटल बढ़ा कर 26 रुपये प्रति क्विंटल कर दिया गया था। चीनी-वर्ष 1992-93 में इसे और अधिक बढ़ा कर 31 रुपये प्रति क्विंटल कर दिया गया है। फास्फेटिक तथा पोटेशिक उर्वरकों पर से कंट्रोल हटा लिए जाने के परिणामत: नि:संदेह थोड़े ही समय में उनकी कीमत बढ़ गई है। इस वृद्धि के प्रभाव को कम करने के लिए सरकार ने एक बार की सहायता के रूप में राज्य सरकारो और संघ राज्य क्षेत्रों को 340 करोड़ रुपए दिए है। यूरिया की कीमत 10 प्रतिशत घट गई। सरकार ने छोटे एव सीमांत किसानो के लिए कृषि के बुनियादी ढाचे का विकास करने के लिए 500 करोड़ रुपए की एक मुश्त सहायता देने की घोषणा की है। इन उपायों और आगामी वर्ष में शुष्क खेती पर अधिक ध्यान दिए जाने के कारण किसानों के हितों की काफी रक्षा होगी।

समाज के कमजोर वर्गो के हितों की रक्षा के लिए सरकार द्वारा कार्यान्वित किए जा रहे महत्वपूर्ण कार्यक्रमों में से एक कार्यक्रम नवीकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली है। सरकार ने इस योजना के तहत निर्धारित जनजातीय, सूखा पीड़ित, रेगिस्तानी एव निर्दिष्ट पहाड़ी क्षेत्रो के 1700 ब्लाकों में प्रति वर्ष वितरण के लिए 20 लाख मीट्रिक टन अतिरिक्त खाद्यान्न अलग से रखने का निश्चय किया है। जब से नवीकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली प्रारम्भ की गई है, तब से इन ब्लाकों में 10,121 नई उचित दर दुकाने खोली गई हैं और 26 लाख अतिरिक्त राशनकार्ड जारी कर दिए गए हैं।

चालू वर्ष के दौरान जिला स्तर पर उपभोक्ता समाधान एजेंसियों के गठन से संबंधित कार्य आगे बढ़ाया गया और मेघालय राज्य के सिवाय समूचे देश मे जिला फोरम बनाए गए हैं। इस समय देश भर में 447 जिला फोरम कार्य कर रहे हैं।

ग्रामीण विकास के क्षेत्र में आठवीं योजना में ग्रामीण बुनियादी आर्थिक ढांचे

को सुदृढ़ करने के लिए चलाए जा रहे अन्य कार्यक्रमो के साथ जवाहर रोजगार योजना को और समन्वित ग्रामीण विकास कार्यक्रम को एकीकृत करने पर अत्यधिक बल दिया गया है, जिससे ऐसी स्थायी और उत्पादक आर्थिक परिसम्पत्तियां सृजित की जा सकें, जिनसे और अधिक रोजगार के अवसर पैदा हों। सातवीं योजना मे आबंटित छह हजार एक सौ उन्नासी करोड़ रुपए और वास्तविक व्यय दस हजार नौ सौ छप्पन करोड़ रुपए की तुलना में आठवीं पंचवर्षीय योजना मे ग्रामीण विकास के लिए परिव्यय बढा कर 30,000 करोड़ रुपए कर दिया गया है।

72वां सविधान संशोधन विधेयक 1991, जिसे पिछले सत्र में ससद के दोनों सदनों ने पारित कर दिया है, अधिनियमित किए जाने पर कार्यात्मक रूप मे नियमित चुनावो को सुनिश्चित करके तथा शक्तियों एव वित्तीय संसाधनों के पर्याप्त हस्तातरण द्वारा पंचायती राज संस्थानों को प्रभावी रूप से सुदृढ़ करेगा। अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लोगों के लिए पंचायतों में सीटो के आरक्षण की व्यवस्था ग्रामो मे उनकी जनसंख्या के अनुपात में की गई है। जिन सीटो के सीधे ही चुनाव कराए जाएगे, उनमें से एक तिहाई सीटे महिलाओं के लिए आरक्षित हैं। इसके अलावा अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति के लिए आरक्षित सीटों में से एक तिहाई सीटे अनुसूचित जाति तथा अनुसूचित जनजाति की महिलाओ के लिए नियत की गई हैं। इस कानून में अध्यक्ष के पद के लिए भी आरक्षण का प्रावधान है। यदि राज्य विधान मडल चाहें तो पिछड़े वर्गो के लिए भी आरक्षण की व्यवस्था कर सकते हैं।

नगर पालिका शासन को सुदृढ़ वनाने और यह सुनिश्चित करने के लिए कि नगर पालिकाएं स्थानीय सरकार की प्रभावी इकाई के रूप में कार्य करे, ससद द्वारा 73वां सविधान सशोधन विधेयक, 1991 पारित किया गया है। इसमें अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति, महिलाओं और पिछड़े वर्गो के सदस्यों के लिए आरक्षण का प्रावधान रखा गया है, जैसा कि पंचायत के मामले मे पहले किया गया था।

वर्ष 1992-93 के दौरान सरकार ने रोग नियत्रण कार्यक्रमों को प्राथमिकता दी है। इन कार्यक्रमों में 2000 ई तक एड्स नियंत्रण, कुष्ठ रोग के उन्मूलन, जनजाति क्षेत्रो में मलेरिया नियत्रण और पिछड़े क्षेत्रो मे तपेदिक के उपचार के लिए अल्पकालिक केमो-चिकित्सा भी शामिल है। मोतियाबिन्द के कारण होने वाले अंधेपन के उपचार के लिए सात राज्यो में गहन कार्यक्रम चलाए जाने का प्रस्ताव है।

1991 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या की औसत वार्पिक वृद्धि दर, जो 1971–81 के दशक में 2.22 प्रतिशत तक पहुंच गई थी, घटकर 2 14 प्रतिशत रह गई है। सन् 1990 में प्रति एक हजार की जनसंख्या पर जन्म-दर 30 2 थी, जो 1991 में घटकर 29.3 रह गई है, किन्तु 1 95 प्रतिशत की वर्तमान मूल वृद्धि दर अभी भी बहुत अधिक है। अत. जनसख्या के स्थिरीकरण को सर्वाधिक राष्ट्रीय प्राथमिकता दी जाएगी।

अगले पाच वर्षो में चार लाख सफाई कर्मचारियों की मुक्ति और उनके पुनर्वास के लिए एक व्यापक कार्यक्रम आरम्भ किया गया है। सफाई कर्मचारियों के लिए एक सांविधिक राष्ट्रीय आयोग गठित किया जा रहा है, जो इस कार्यक्रम का प्रभारी होगा।

राष्ट्रीय अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति वित्त और विकास निगम की प्राधिकृत शेयर पूंजी 75 करोड़ रुपए से बढाकर 125 करोड़ रुपए कर दी गई है। यह निगम अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के उद्यमियो के लाभ के लिए आय उत्पन्न करने वाली स्कीमों के लिए धन प्राप्ति मे निरतर सहायता करता रहेगा। अब तक निगम ने 277 63 करोड़ रुपए मूल्य की 312 स्कीमें मंजूर की हैं, जिसमे से अब तक 54.05 करोड रुपए संवितरित किए जा चुके हैं। यह निगम रोजगार और स्वरोजगार हेतु कौशल बढ़ाने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम भी आयोजित कर रहा है। अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियों में साक्षरता और शिक्षा का स्तर बढ़ाने के लिए 48 जिलों में आवासीय विद्यालय स्थापित करने का प्रस्ताव है।

डा बाबा साहेब अम्बेडकर के शताब्दी समारोह वर्प मे उनकी स्मृति को श्रद्धांजलि के रूप मे डा अम्बेडकर राष्ट्रीय पुरस्कार, डा अम्बेडकर राष्ट्रीय पुस्तकालय, विश्वविद्यालयो में डा अम्बेडकर पीठों और डा अम्बेडकर विदेश शिक्षा वृत्ति जैसी स्कीमों का प्रबंध करने के लिए डा अम्बेडकर फाउंडेशन की स्थापना की गई है। इसके अतिरिक्त सरकार ने डा अम्बेडकर की सम्पूर्ण कृतियों और उनके भापणों के अनुवाद और प्रकाशन का कार्य भी आरम्भ कर दिया है। डा अम्बेडकर पर एक पूरी फीचर फिल्म का भी निर्माण किया जाएगा।

राष्ट्रीय पिछड़ी जाति वित्त और विकास निगम, जिसकी प्राधिकृत शेयर पूंजी 200 करोड़ रुपए है, वित्त का एक अतिरिक्त जरिया होगा और सामाजिक और शैक्षिक रूप से पिछडी जातियो में तकनीकी और उद्यम कौशलो को बढ़ाने में सहायता प्रदान करेगा।

संसद ने राष्ट्रीय अल्पसंख्यक आयोग अधिनियम-1992 पारित कर दिया है, जिसमें इस आयोग को सवैधानिक दर्जा प्रदान किया गया है और इसे सिविल न्यायालय की शक्तियां दी गई हैं। आयोग के मुख्य कार्य होंगे-अल्पसंख्यकों की प्रगति और उनके विकास का मूल्यांकन करना, संवैधानिक सुरक्षा उपायों को मानीटर करना और उन पर सिफारिशें करना, विशिष्ट शिकायतों को देखना, अध्ययन और अनुसंधान करना, उपयुक्त उपायो का सुझाव देना और समय-समय पर सरकार को रिपोर्ट प्रस्तुत करना।

पिछड़ी जातियों के लिए सरकारी नौकरियों में आरक्षण से सम्बन्धित मुद्दों पर उच्चतम न्यायालय का निर्णय लागू करने के लिए सरकार ने कार्रवाई आरम्भ कर दी है। सरकार सामाजिक रूप से उन्नत व्यक्तियो और वर्गो को, सम्पन्न व्यक्तियों को अन्य पिछड़ी जातियों में से निकालने के लिए सम्बन्धित सामाजिक-आर्थिक मानदडों को लागू करते हुए आधार विनिर्दिष्ट करेगी। नागरिकों की अन्य पिछड़ी जातियो की सूचियों मे शामिल करने के लिए किए गए अनुरोधों और विनिर्दिप्ट जातियों से अधिक अथवा कम जातियो को शामिल करने के संबंध में की गई शिकायतो पर विचार करने, उनकी जांच करने और उन पर सिफारिश करने के लिए एक स्थाई निकाय गठित करने के लिए अध्यादेश जारी किया गया है। इस निकाय द्वारा दी गई सलाह सामान्यत· सरकार के लिए बाध्यकारी होगी।

अनौपचारिक क्षेत्र में निर्धन महिलाओं की अल्पावधि और मध्यम अवधि के विकासात्मक ऋण की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए सरकार का प्रस्ताव गैर सरकारी सगठनों जैसी मध्यवर्तीय एजेसियों के माध्यम से एक राष्ट्रीय महिला कोप स्थापित करने का है। सामाजिक सुरक्षा नेट के रूप मे किए जा रहे प्रयासो के एक भाग के रूप में इस कार्यक्रम के लिए निधि का आबटन कर दिया गया है।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति, 1986 की समीक्षा की गई है, और मई, 1992 में इस नीति में आवश्यक संशोधन किए गए। प्रारम्भिक शिक्षा को सर्वतोमुखी बनाना, सम्पूर्ण साक्षरता प्राप्त करना, शैक्षिक अवसरों की समान सुलभता, महिलाओं की शिक्षा और विकास, माध्यमिक शिक्षा का व्यवसायीकरण, उच्च शिक्षा का एकीकरण, तकनीकी शिक्षा का आधुनिकीकरण और सभी स्तरों पर शिक्षा की गुणवत्ता, विपयवस्तु एवं प्रक्रिया में सुधार करना शिक्षा के क्षेत्र में ऐसे विषय हैं, जो राष्ट्रीय प्रयत्नों में अपना प्राथमिक स्थान बनाए हुए हैं। प्रारम्भिक शिक्षा में हमने अपना

ध्यान केवल छात्रों का नाम दर्ज किए जाने से हटाकर इस बात पर केन्द्रित कर दिया है कि उनकी उपस्थिति बनी रहे और शिक्षा का लक्ष्य पूरा हो। संशोधित नीति में यह सुनिश्चित करने का संकल्प किया गया है कि इस दशक में 14 वर्ष तक की आयु के सभी बच्चों को संतोषप्रद गुणवत्ता वाली निःशुल्क और अनिवार्य शिक्षा उपलब्ध हो जाए। सम्पूर्ण साक्षरता अभियान नीति पर आधारित राष्ट्रीय साक्षरता मिशन को प्रशंसनीय परिणामों की उपलब्धि हुई है और वर्ष 1996-97 तक देश के 75 प्रतिशत जिलो को इस मिशन के अन्तर्गत लाया जाएगा। आगामी वर्षो में शिक्षा प्रणाली के क्षेत्र मे स्वस्थ प्रबंधन सिद्धांतों को अनुप्राणित करने और शैक्षिक प्रबंधन को विकेन्द्रित करने पर बल दिया जाएगा।

विज्ञान और प्रौद्योगिकी के क्षेत्र में उत्साहवर्धक प्रगति हुई है। मई 1992 में ए एस एल वी का सफल प्रक्षेपण स्वदेशी प्रक्षेपण प्रौद्योगिकी मे महत्वपूर्ण विकास है। जुलाई 1992 में किया गया इन्सेट-2 ए का प्रक्षेपण और उसका सफलतापूर्वक कार्य प्रारम्भ कर देना परिष्कृत बहु-उद्देशीय उपग्रह बनाने की हमारी क्षमता का सूचक है। इस वर्ष जून में इन्सेट-2 बी और पी एस एल वी का प्रक्षेपण करने की योजना से हमारे अतरिक्ष कार्यक्रम को और अधिक प्रोत्साहन मिलेगा। अंटार्कटिका में 11वी वैज्ञानिक खोज यात्रा पूरी कर लेना और 12वें अभियान का शुभारम्भ करना वर्ष 1992 में किए गए अन्य उल्लेखनीय विकास कार्य हैं। कृषि और स्वास्थ्य से सम्बद्ध जैव प्रौद्योगिकी साधन का लाभ उठाने के संबंध में जो प्रयास किए जा रहे हैं, उन्हें जारी रखा जाएगा।

इस वर्ष परमाणु ऊर्जा के क्षेत्र मे एक महत्वपूर्ण उपलब्धि रही है-3 सितम्बर, 1992 को 220 मेगावाट के काकरापाड़ा ऐटोमिक पावर स्टेशन यूनिट-1 का चालू किया जाना तथा 24 नवम्बर, 1992 को इसे ग्रिड के साथ जोड़ दिया जाना।

हमारे सशस्त्र बल हमारी क्षेत्रीय अखडता की सुरक्षा करने के लिए हर समय तैयार रहते हैं। जन-शक्ति योजना और प्रबन्धन कार्य में सुधार और रक्षा प्रौद्योगिकी में आत्मनिर्भरता के संबंध मे किए गए निवेशों के अब अच्छे परिणाम प्राप्त हो रहे हैं।

सशस्त्र बलों ने इस वर्ष अनेक अवसरों पर कानून और व्यवस्था बनाए रखने और राहत और बचाव कार्य करने में सिविल प्राधिकारियो की सहायता की है। उन्होंने अपना कार्य प्रशंसनीय समर्पण की भावना से किया है।

रक्षा उत्पादन के क्षेत्र में, विशेप रूप से अतिरिक्त पुर्जो के स्वदेशीकरण

और आत्मनिर्भरता के संबंध में सुदृढ़ प्रयास किए गए हैं। परिवर्तित औद्योगिक नीतियो को ध्यान में रख कर ही रक्षा और सिविल क्षेत्र की उत्पादन यूनिटों के बीच के संबंधों की पारस्परिक सुदृढ़ता को प्रोत्साहित करने के लिए कदम उठाए गए हैं।

सेवारत और सेवानिवृत्त सशस्त्र बल के कार्मिकों के कल्याण में वृद्धि करने के लिए सरकार वचनवद्ध है।

हमने अपनी विदेश नीति के उद्देश्यों का द्विपक्षीय और अन्तर्राष्ट्रीय फोरम दोनों में दृढ़तापूर्वक अनुसरण किया है। पड़ौसी देशों के साथ संबंध और सुदृढ़ करने पर बल दिया गया और इसके अच्छे परिणाम सामने आए हैं। इन देशों के जिन महत्वपूर्ण व्यक्तियो ने भारत का दौरा किया, उनमे श्रीलंका के राष्ट्रपति, बंगलादेश की प्रधानमंत्री, नेपाल के प्रधानमंत्री और भूटान नरेश भी शामिल हैं। इन दौरो के परिणामस्वरूप इन देशों के साथ हमारे संबंध मजबूत हुए हैं। बंगलादेश की प्रधानमंत्री के दौरे के समय बंगलादेश को तीन बीघा का गलियारा पट्टे पर सौंप देने की हमारी वचनवद्धता पूरी की गई थी। भूटान नरेश के आगमन के समय महत्वपूर्ण सकोप बहुउद्देशीय परियोजना के लिए गहन अन्वेषण कार्य करने हेतु दोनों देशो के बीच एक सहमति-ज्ञापन पर हस्ताक्षर किए गए।

पाकिस्तान द्वारा जम्मू-कश्मीर और पंजाब में लगातार आतंकवाद और तोड़फोड़ की कार्रवाइयों मे मदद दिए जाने के बावजूद हमने विभिन्न द्विपक्षीय समस्याओ को सुलझाने का प्रयत्न किया है। इस लक्ष्य को ध्यान में रखकर प्रधानमंत्री ने पिछले वर्ष दो बार पाकिस्तान के प्रधानमंत्री से बातचीत की। दुर्भाग्यवश हमारे प्रयासो से इस दिशा में कोई विशेष प्रगति नहीं हुई। हम पाकिस्तान से अनुरोध करते हैं कि वह जानबूझकर कोई विवाद खडा न करे और भड़काने वाली कार्रवाइयो से दूर रहे तथा हमारे साथ अपने संबंधों का एकतरफा लाभ उठाने के लोभ से बचे। द्विपक्षीय बातचीत के अलावा हमारे पास और कोई विकल्प नहीं है।

पुराने मतभेदो को भुलाकर सरकार लगातार चीन के साथ एक अच्छे पड़ौसी जैसे संबंध बनाने की नीति पर चल रही है। हम सीमा संबंधी विवाद का एक निष्पक्ष, उचित और दोनों पक्षो को स्वीकार्य हल निकालने का भी प्रयास कर रहे हैं। पिछले वर्ष दोनों देशों के बीच उच्च स्तरीय यात्राओं में से एक यात्रा हमारे भूतपूर्व राष्ट्रपति श्री आर. वेकटरामन की थी। इस वर्ष चीन के विदेश मंत्री की भारत यात्रा पर आने की सम्भावना है। हमारे प्रधानमत्री भी चीन की यात्रा पर जाएंगे।

हम अमरीका के राष्ट्रपति श्री क्लिटन तथा उनके प्रशासन के साथ मिलकर आपसी सहमति, विश्वास और साझा मूल्यो तथा समान हितो के आधार पर दोनो देशों के बीच संबध स्थापित करने के इच्छुक हैं शीत युद्ध की समाप्ति के बाद बदली हुई अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियो में भारत-अमरीका संबधों को मजबूत करने की दिशा में गति आई है, जिससे कई अन्य क्षेत्रो में सहयोग के साथ-साथ राजनीतिक स्तर पर भी दोनो देशों के बीच समझबूझ की भावना बढ़ी है।

राष्ट्रपति येल्तसिन की यात्रा से द्विपक्षीय और अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के मुद्दो पर विचारों के विस्तृत आदान-प्रदान का मौका मिला है। कश्मीर के सबध मे हमने अपनी स्थिति स्पष्ट की। राष्ट्रपति येल्तसिन ने स्पष्ट रूप से भारत को अपने देश का पूरा समर्थन दिए जाने की बात कही है। इस यात्रा के दौरान ऋण की अदायगी के मुद्दे को सुलझाया गया तथा कई करारो पर हस्ताक्षर किए गए, जिससे कि दोनों देशों के बीच भावी मित्रता और घनिष्ट सबधो की मजबूत नींव रखी जा सकी है।

पिछले महीनों में हमें पश्चिमी यूरोप के तीन महत्वपूर्ण शासनाध्यक्षों का अपनी भूमि पर स्वागत करने का अवसर मिला है। ब्रिटेन के प्रधानमंत्री श्री जॉन मेजर हमारे गणतंत्र दिवस समारोह में मुख्य अतिथि थे। उनकी यात्रा से भारत-ब्रिटेन मैत्री और सहयोग बढ़ा है तथा लोकतत्र और धर्मनिरपेक्षता के सिद्धात पर कायम रहने की हमारी प्रतिबद्धता के प्रति ब्रिटेन की सहमति की फिर से पुष्टि हुई है। उन्होंने आतकवाद से निपटने में पूरा सहयोग देने का वायदा किया है। इस यात्रा का एक और महत्वपूर्ण परिणाम यह हुआ कि इससे भारत और ब्रिटेन के बीच आर्थिक और वाणिज्यिक सहयोग को और अधिक बढ़ावा मिला है। इस महीने के शुरू में हमने स्पेन के राष्ट्रपति श्री फिलिप गोंजालेज का स्वागत किया। हाल ही में जर्मनी के चासलर हेलमुट कोल अन्तर्राष्ट्रीय सद्भाव के लिए जवाहर लाल नेहरू पुरस्कार प्राप्त करने भारत की यात्रा पर आए। इन महत्वपूर्ण यात्राओं से इस बात का परिचय मिलता है कि देश के सामने उपस्थित विभिन्न समस्याओं को सुलझाने की हमारी क्षमता तथा हमारी लोकतात्रिक एवं सर्वधर्म सम्मान की प्रणाली की मजबूती की सराहना विदेशों में हो रही है। इन यात्राओं से हमारी विदेश नीति और हमारे आर्थिक सुधार के कार्यक्रमों को और अधिक समर्थन मिला है।

यह संयोग की बात है कि भारत और जापान के बीच राजनयिक संबधों

की चालीसवीं वर्षगांठ पर वर्ष 1992 में प्रधानमंत्री जापान की यात्रा पर गए और उन्होंने दोनों देशों के बीच शांति समझौते पर हस्ताक्षर किए। हमारी आर्थिक उदारीकरण की नीति में जापान की दिलचस्पी बढ़ने का इस बात से पता चलता है कि भारत में जापान के प्रत्यक्ष निवेश में वृद्धि हुई है। हम सभी स्तरों पर जापान के साथ संबंधों को मजबूत करने के लिए वचनबद्ध हैं।

हमने मध्य एशिया के नव स्वतंत्र देशों के साथ अपने संबंधों को मजबूत बनाने पर विशेष बल दिया है, जिनके साथ हमारे वर्षों पुराने सांस्कृतिक संबंध रहे हैं। पिछले वर्ष उज्बेकिस्तान, कजाकिस्तान, किर्गिस्तान तथा तुर्कमेनिस्तान के राष्ट्रपतियों की भारत यात्रा के बाद मध्य एशिया में भारत से उच्चस्तरीय यात्राएं हुईं। कुछ दिन पहले ताजकिस्तान के प्रधानमंत्री भारत की यात्रा पर आए थे। इस यात्रा के दौरान ऐसे करारों पर हस्ताक्षर किए गए, जिनसे मध्य एशिया के सभी देशों के साथ हमारे संबंधों को एक नया और दीर्घकालीन आयाम मिला है।

सामरिक महत्व के आणविक भंडारों में कमी लाने के लिए अमरीका और रूस के बीच हुई स्टार्ट-II संधि का हम स्वागत करते हैं तथा इसे सही दिशा में उठाया गया कदम मानते हैं। बहुपक्षीय निरस्त्रीकरण के क्षेत्र में रासायनिक शस्त्र समझौते का सफलतापूर्वक सम्पन्न होना एक महत्वपूर्ण घटना है, जिसमें व्यापक विनाश के सभी प्रकार के हथियारों को समाप्त करने की व्यवस्था है। यह एक विश्वव्यापी और भेदभाव रहित संधि है, जिसे भविष्य में होने वाली वार्ताओं के लिए एक आदर्श के रूप में देखा जाना चाहिए। यह व्यापक निरस्त्रीकरण के लिए भारत की कार्य योजना को एक दृढ़ आधार प्रदान करती है, जिसे 1988 में प्रधानमंत्री राजीव गांधी ने संयुक्त राष्ट्र संघ में प्रस्तुत किया था। इस क्षेत्र में उल्लेखनीय परिणामों को प्राप्त करने के लिए क्षेत्रीय अथवा उप-क्षेत्रीय दृष्टिकोण की नहीं अपितु एक विश्वव्यापी दृष्टिकोण की आवश्यकता है।

समय की आवश्यकता है कि संयुक्त राष्ट्र संघ पुनः शक्तिशाली हो और इसकी कार्य सूची अधिक सुस्पष्ट हो। संयुक्त राष्ट्र संघ का प्रभाव इस बात पर निर्भर करेगा कि वह अपनी सरचना को प्रजातांत्रिक बनाने और व्यवस्थित करने में कितना सक्षम है ताकि यह अपने सदस्यों की चिंताओं का समायोजन और प्रतिबिंब कर सके।

संयुक्त राष्ट्र संघ, गुट निरपेक्ष आंदोलन, राष्ट्रमंडल और ग्रुप-15 में बहुपक्षीय

स्तर पर हमारी सहभागिता अपनी प्राथमिकताओ और चिताओ के सामान्य ढाचे के अन्तर्गत ही रही है। पिछले सितम्बर में जकार्ता मे गुट निरपेक्ष शिखर सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर प्रधानमंत्री के भाषण से विचार-विमर्श का मार्ग प्रशस्त हुआ, जिसमें गुट निरपेक्ष आदोलन की सतत सार्थकता पर पुन. बल दिया गया और भावी कार्यसूची को प्राथमिकता दी गई ताकि इसकी विशिष्ट चिताओ के मामलो पर ध्यान केन्द्रित किया जाए।

रियो डी जेनेरियो मे जून, 1992 मे हुए पर्यावरण एव विकास पर सयुक्त राष्ट्र सम्मेलन (यू एन सी ई डी) के दौरान प्रधानमत्री के भाषण मे पर्यावरण और विकास के बीच अभिन्न सबध बनाए रखने पर जोर दिया गया, जो पर्यावरण तथा विकास सबधी सभी मसल्लों को हल करने की दिशा मे अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के क्षेत्र में मील का पत्थर साबित हुआ। विकासशील देश पर्यावरण को सुरक्षित रखने के व्यापक प्रयास में विकसित देशो के साथ शामिल हो सके, इसके लिए उनको प्रौद्योगिकी का हस्तातरण करने तथा अतिरिक्त ससाधन उपलब्ध कराने के भारत के प्रस्ताव का सम्मेलन मे व्यापक स्वागत तथा समर्थन किया गया।

माननीय सदस्यगण, देश आज जिस सकट के दौर से गुजर रहा है, उसमे आपके कंधो पर भारी जिम्मेदारी आ पडी है। पिछले वर्ष जहा आपने उल्लेखनीय स्तर पर सहयोग देखा, वहीं असहमति के प्रबल पक्ष भी देखे। ये सब एक जीवत लोकतत्र को प्रदर्शित करते है। मुझे पूरा विश्वास है कि इस वर्ष समस्याओ से निपटने के लिए आप पूरे देश के समक्ष अपने उत्कृष्ट आचरण और नेतृत्व का परिचय देगे। राष्ट्र इस महान सस्था के प्रतिनिधियो से इससे कुछ भी कम की आकाक्षा नही रखता। आपको साहस, बुद्धिमत्ता और अनुशासन के साथ राष्ट्र का मार्गदर्शन करना है।

समाज सेवक सीताराम सेकसरिया

सीताराम सेकसरियाजी के नाम से मैं अच्छी तरह परिचित रहा हूं। चूंकि मैं शिक्षा से लम्बे समय से जुड़ा रहा, इसलिए महिला-शिक्षा के क्षेत्र में सेकसरियाजी द्वारा किए गए कामों के बारे में मैं जानकारी रखता था। उनके जीवन की सरलता, उनकी सहजता तथा समाज के प्रति उनके समर्पण का भाव भी मुझे विशेष रूप से आकर्षित करते थे। इसलिए जब मुझे यह आमंत्रण प्राप्त हुआ, तो मैंने इसे सहज तौर पर स्वीकार कर लिया।

सीताराम सेकसरियाजी एक सामान्य व्यावसायिक परिवार में पैदा हुए थे। छोटी उम्र में ही राजस्थान के कई अन्य मारवाड़ियो की तरह वे भी कलकत्ता आ गए थे। मैं सीताराम सेकसरियाजी के कलकत्ता आगमन को उनके जीवन की एक निर्णायक घटना मानता हूं। उन्नीसवीं सदी के उत्तरार्द्ध से ही कलकत्ता हमारी आजादी की लड़ाई का मुख्य केन्द्र था। इसके साथ-ही-साथ यह वैचारिक दृष्टि से पुनर्जागरण आदोलन का भी केन्द्र था। इन दोनो बातों का बड़ा सकारात्मक प्रभाव सेकसरियाजी पर पड़ा। सन् 1917 में जब कलकत्ता में 'भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस' का अधिवेशन हुआ, तव वे बापू, लोकमान्य तिलक तथा जमनालाल बजाज जी की प्रेरणा से कांग्रेस में शामिल हो गए। बापू का उनके जीवन पर सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। इस सबध में उन्होने कहा भी है कि-

"गांधीजी के सम्पर्क का जरा-सा स्पर्श जो भावना, जो संस्कार दे गए, वे कभी नहीं मिटे।"

बाद में 'नमक सत्याग्रह' में भाग लेने के लिए सेकसरियाजी ने अपना व्यवसाय तक त्याग दिया और अपने-आपको पूरी तरह स्वतत्रता आंदोलन, नारी-शिक्षा, अस्पृश्यता निवारण तथा खादी एव राष्ट्र-भाषा के प्रसार के लिए समर्पित कर दिया। सेकसरियाजी सन् 1930, सन् 1932 और सन् 1942 में जेल गए और कुल करीब तीन वर्ष तक जेल में रहे। इस दौरान उन्होंने पूरे साहस और निष्ठा के साथ निजी स्वार्थ से दूर रहकर राष्ट्र की सेवा की और आजादी की प्राप्ति के लिए कष्ट उठाए।

सीताराम सेकसरिया जन्म शताब्दी समारोह के अवसर पर, कलकत्ता, 14 मार्च, 1993

सीताराम सेकसरियाजी को मैं हमारे देश के प्रमुख समाज-सेवकों और समाज-सुधारको मे से एक मानता हूॅ। उन्होंने केवल तन-मन से ही नहीं, बल्कि धन से भी समाज की सेवा की। मैं यहां यह बात विशेष रूप से कहना चाहूगा कि वे समाज से सबधित संस्थाओ की स्थापना इसलिए नही कर सके क्योकि वे धनी थे, बल्कि मैं समझता हूॅ कि वे ऐसा इसलिए कर सके क्योंकि वे यह जानते थे कि अपने पास के धन का किस प्रकार से सर्वोत्तम प्रयोग किया जा सकता है और सामाजिक कार्यो के लिए कैसे धन इकट्ठा किया जाता है। इस दृष्टि से उन्हें मैं 'बंगाल का मदन मोहन मालवीय' कहना चाहूंगा। उन्होंने स्वयं का तथा अन्य लोगों से अनुदान प्राप्त करके अनेक संस्थाओ की स्थापना की, जो आज उनकी स्मृति की गाथा कहते हैं। संस्थाए बनाने और उन्हे सचालित करने में वे बेजोड़-से थे। 'भारतीय भाषा परिषद्', 'भारतीय संस्कृति संसद्', 'साहित्यकार संस्था', 'हरिजन सेवक संघ', तथा 'शुद्ध खादी भंडार' जैसी अनेक सस्थाओं की स्थापना करके उन्होने समाज के सामने भाषा, संस्कृति, साहित्य, समाज सेवा, राजनैतिक जागरण और आर्थिक उत्थान के लिए धन के समुचित तथा उपयुक्त प्रयोग का एक अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत किया है।

मैं यहां इस बात का भी विशेष रूप से उल्लेख करना चाहूंगा कि सीताराम सेकरिया जी की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह रही कि उनका जन्म भले ही राजस्थान में हुआ, लेकिन उनकी कर्मभूमि बंगाल की यह मिट्टी ही रही। उन्होंने इसी बंगाल की धरती पर अनेक संस्थाओं के बीज बोए; उन्हें पाला-पोसा और बडा किया। इसे मैं उनकी एक बहुत बड़ी विशेषता मानता हूं कि वे जहां गए, वही के हो गए; वहीं रमे, वहीं अर्जित किया और सब कुछ उसी को दे दिया। ऐसे लोगों को मैं समाज का एक ऐसा सेतु समझता हूँ, जो भाषाओं और संस्कृतियों को एक दूसरे के नज़दीक लाकर उनके संबंधों को और मजबूत बनाने का काम करते हैं।

सेकसरियाजी राजस्थान के एक परम्परावादी परिवार मे पैदा हुए थे। राजस्थान में आज भी सती होने जैसी दुर्भाग्यपूर्ण घटनाएॅ सुनी जाती हैं। यह कम महत्व की बात नहीं है कि आज से करीब 70 वर्ष से भी अधिक पहले उन्होने महिलाओ के उद्धार की बात सोची थी और उन्हे अज्ञानता के अंधकार से निकालकर समाज के सामने लाने का प्रयास किया था।

सेकसरियाजी ने अपनी डायरी में दिनांक 7 नवम्बर, 1956 को स्त्री-शिक्षा के बारे में अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये थे :

"मेरी निगाह में मानव-जाति को उन्नत करने के लिए, विकसित करने के लिए, संस्कारित और सत्यवान बनाने के लिए माता को यानी स्त्री-समाज को उन्नत करना, संस्कारित बनाना, विकसित करना, अधिक जरूरी और अधिक शुभ कार्य है। इस विचारधारा के साथ मैं स्त्री-शिक्षा का काम कर रहा हूं।"

स्त्री-शिक्षा के लिए उन्होंने सन् 1920 में 'मारवाड़ी बालिका विद्यालय' तथा सन् 1954 में 'श्री शिक्षायतन' की स्थापना की। उनका 'वनस्थली विद्यापीठ' आज देश की नारी-शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण संस्था है। वे 'प्रयाग महिला विद्यापीठ' के संचालक भी रहे। सन् 1937 में उन्होंने 'मातृ सेवा सदन' की स्थापना की। महिला साहित्यकारों को पुरस्कृत करने के लिए उन्होंने 'सेकसरिया पुरस्कार' की स्थापना की। इस दृष्टि से मैं सेकसरियाजी को राजा राममोहन राय तथा ईश्वर चंद्र विद्यासागर की परपरा से प्रभावित एक महत्वपूर्ण समाज-सुधारक मानता हूं, जिन्होंने नारी के अदर चेतना जगृत करके उन्हें आत्मसाक्षात्कार कराने में अपना योगदान किया। पिछले दिनों मुझे महाराष्ट्र में महर्षि कर्वे जी की प्रतिमा के अनावरण का अवसर मिला था। महर्षि कर्वे ने भी महिला-शिक्षा के क्षेत्र में ऐतिहासिक कार्य किए थे। यही कार्य सेकसरियाजी ने बंगाल और राजस्थान में किया। यहा मैं आप लोगो को यह भी बताना चाहूंगा कि सेकसरियाजी डॉ महर्षि कर्वे जी के कार्यो के प्रशंसक थे, और उन्होंने अपने खर्चे से उनकी जीवनी छपवाई थी। मुझे लगता है कि नारी-शिक्षा के लिए किए गए अनेक प्रयासों के बावजूद इस क्षेत्र में अभी बहुत कुछ किया जाना बाकी है। हमारी स्वयसेवी संस्थाएं तथा उद्योगपतियों को चाहिए कि वे इस दिशा में सकारात्मक कदम उठाएं, ताकि हमारे राष्ट्र की वह शक्ति, जो छिपी हुई है, जो उपेक्षित है, सामने आ सके। निश्चित रूप से इससे परिवार, समाज और अंततः पूरा राष्ट्र लाभान्वित होगा। सेकसरियाजी द्वारा शिक्षा में किए गए महत्वपूर्ण कार्यो को देखकर विश्व कवि गुरुदेव रवीन्द्र की इन पंक्तियों का अनायास ही स्मरण हो आता है-

ज्ञान मोंदिरे जलायेछो तुमि जे नबो आलोक शिखा।
तोमार शकोल भ्रातार ललाटे दिली उज्जल टिका॥
(ज्ञान के मदिर में तुमने जो आलोक शिखा प्रज्ज्वलित की।
इससे तुम्हारे समस्त भातृवृंद के ललाटो पर उज्ज्वल टीका लगी॥)

सेकसरियाजी साहित्यिक और सुसंस्कृत प्रवृत्ति के पुरुप थे। गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, आचार्य काका साहब कालेलकर, हजारी प्रसाद द्विवेदी और महादेवी वर्मा जैसी साहित्यिक विभूतियों से उनके निकट के संबंध थे। गुरुदेव की 'शाति निकेतन' में 'हिन्दी भवन' स्थापना करने की इच्छा को सेकसरियाजी ने अपने अनुदान द्वारा पूरा किया था। आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का खर्च सेकसरियाजी ने उठाया, ताकि वे शांति निकेतन में अपना अध्यापन कार्य जारी रख सकें। आर्थिक दृष्टि से कमजोर साहित्यकारो की सहायता की भावना से प्रेरित होकर उन्होंने इलाहाबाद में 'साहित्यकार संसद' का आयोजन किया था।

सेकसरियाजी स्वयं भी एक संवेदनशील लेखक थे। उनके संस्मरण 'स्मृति करण', एवं 'बीता युग : नई याद' शीर्पक से प्रकाशित हुए हैं। हाल ही में मैंने उनके 'एक कार्यकर्ता की डायरी' शीर्पक से प्रकाशित दोनों भाग पढ़े। मैंने पाया कि उनकी डायरी में एक साहित्यकार की संवेदना तथा कलात्मकता है। लेकिन इससे भी महत्वपूर्ण बात मुझे यह लगी कि उनमें आत्मनिरीक्षण करने की तटस्थ दृष्टि भी है। मैं आत्मालोचन की उनकी इस ईमानदारी को वहुत महत्वपूर्ण मानता हूं, और समझता हूं कि यही वह ताकत है, जिससे व्यक्ति निरंतर अपने को सुधारते हुए चलता है। शायद यह वहुत वड़ा कारण था कि सेकसरियाजी निरंतर सफलता के सोपानों को पार करते गए। उनकी यह डायरी इस वात का भी प्रमाण है कि उनका व्यक्तित्व कितना संस्कारित था तथा वे साध्य और साधन की एकता में कितना विश्वास रखते थे। मैं चाहूंगा कि उनकी डायरी के अप्रकाशित अंश प्रकाशित हों, क्योंकि उनमें केवल निजी जीवन के प्रसंग ही नहीं हैं, वल्कि इतिहास से जुड़ी बातें भी होंगी।

वापू के व्यक्तित्व और उनके जीवन-दर्शन के प्रति सेकसरियाजी में अत्यंत श्रद्धा थी। बापू उन्हें अपने पत्र में 'भाई सीताराम' लिखकर सम्वोधित करते थे। वे 'दलित सुधार सोसाइटी' से जुड़े और अस्पृश्यता निवारण का काम किया। इसके साथ-ही-साथ राप्ट्रभापा के प्रचार-प्रसार में भी लगे रहे। वे 'पूर्व भारत राप्ट्रभापा प्रचार समिति' के अध्यक्ष भी रहे। इस रूप में उन्होंने वंगाल, उड़ीसा और असम में हिन्दी भापा के लिए महत्वपूर्ण काम किए।

नेताजी सुभाप चन्द्र बोस का भी उन्हे स्नेह प्राप्त था। दिनांक 20 दिसम्वर, 1936 के एक पत्र में सुभाप जी ने सेकसरियाजी को लिखा था, ''आप जैसे मित्रों के स्नेह ने ही मुझे अपने जीवन में सारे अप्रिय अनुभवों के दौरान बल प्रदान

किया है।" सन् 1945 में आज़ाद हिन्द फौज के सेनानियों के पुनर्वास के लिए जो समिति बनाई गई थी, सेकसरियाजी उसके सचिव चुने गए थे। बगाल में लोग उन्हें कितना चाहते थे, और उनके प्रति कितना सम्मान भाव रखते थे, उसका प्रमाण इस बात से भी मिलता है कि सन् 1949 में कलकत्ता में हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए जो 'अमन कमेटी' बनाई गई थी, उसके वे अध्यक्ष निर्वाचित हुए थे।

सीताराम सेकसरियाजी के जन्मशताब्दी समारोह के इस अवसर पर मैंने उनके जीवन, उनके कार्यो तथा उनके आदर्शो के बारे में आप लोगों के सामने एक हल्की-सी रूपरेखा प्रस्तुत करने की कोशिश की है। मैं समझता हू कि अपने साधनों का जिस तरह समाज-हित मे प्रयोग सेकसरियाजी ने किया था, वह किसी भी समाज के लिए एक अनुकरणीय उदाहरण है। आज जबकि हमारे देश में आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के कार्य किए जाने हैं, गरीब एवं तिरस्कृत वर्ग को सामने लाना है, महिलाओं को समाज में समान स्थान दिलाना है, मैं समझता हू कि सेवा-भाव के कार्यों के द्वारा इस उद्देश्य की प्राप्ति में बड़ा सहयोग किया जा सकता है। कलकत्ता आरम्भ से ही उद्योग और संस्कृति के क्षेत्र में देश का महत्वपूर्ण केन्द्र रहा है। मैं समझता हूं कि यहा के लोग, विशेषकर सम्पन्न वर्ग के लोग अपने साधनों को सामाजिक हित मे लगाकर इस क्षेत्र में स्वय को सर्वोच्च स्थान पर प्रतिष्ठित करेगे। गुरुदेव रवीन्द्र ने समाज का आह्वान करते हुए कहा था :

एसो कोर्मी, एसो ज्ञानी, एसो जनकल्याण ध्यानी,

एसो तापसो राज हे।

एसो हे धीशक्ति सम्पद, मुक्तबंधो समाज हे॥

(आओ पुरुपार्थियो, आओ ज्ञानियो, आओ जनकल्याण से प्रेरित व्यक्तियो, आओ तपस्वीगण।

बुद्धि एवं शक्ति रूपी सम्पत्ति से युक्त जन आओ, और समाज को बधनमुक्त करो।)

मेरा भी आप सबसे यही अनुरोध है।

जनप्रतिनिधि कर्णी सिंह

अपने जीवन में कर्णी सिह जी ने अपने क्षेत्र के लिए, अपने राज्य के लिए और अपने देश के लिए सेवा के जो काम किए हैं, उसे देखते हुए उनकी प्रतिमा का लगाया जाना उपयुक्त है। मैं इस अवसर पर उन्हे अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

देश की स्वतंत्रता के समय राज्यों को भारत का अग बनाने में महाराजा शादूल सिंहजी ने अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान दिया था। मुझे अच्छी तरह याद है कि उस समय एक ओर दूसरे ढंग के प्रयास जारी थे, जिसमें तत्कालीन चेम्बर्स ऑफ प्रिंसेस के अध्यक्ष भोपाल नवाब ने कुछ दूसरा करने की कोशिश की थी। लेकिन उनके प्रयत्न विफल रहे। हम लोग देश के राजे-राजवाड़ों को भारत का अंग बनाने में लगे हुए थे। उसके लिए बीकानेर के महाराजा का राष्ट्रप्रेम, जनमानस की आशा-आकांक्षाओं के प्रति उनकी श्रद्धा, राष्ट्रहित के प्रति उनकी समझ तथा उनके व्यक्तिगत योगदान को मैं ऐतिहासिक महत्व का मानता हूँ। हमारे प्रथम राष्ट्रपति डॉ राजेंद्र प्रसाद ने इसी नगर में महाराजा शार्दूल सिह जी की प्रतिमा का अनावरण करते हुए 2 सितंबर, 1954 को कहा था :

''इसका श्रेय महाराजा बीकानेर को जाता है कि अपने स्पष्ट निर्णय द्वारा उन्होंने रियासतों का सही और समयानुकूल मार्गदर्शन किया। ऐसे समय मे, जब भारत एक ओर विभाजन की त्रासदी से गुजर रहा था, तथा दूसरी ओर बिखराव का खतरा सभावित था, महाराजा शार्दूल सिह जी अपनी दूरदर्शिता और राष्ट्रभक्ति द्वारा प्रेरित होकर चट्टान की तरह खड़े रहे, और इस खतरे को उलट दिया।''

शार्दूल सिंहजी के इस निर्णय की प्रशंसा पंडित नेहरू तथा सरदार पटेल ने भी की थी। सरदार पटेल ने महाराजा शार्दूल सिंह जी को 27 जनवरी, 1950 को अपने पत्र में उन्हें राजाओं को भारत संघ से शामिल कराने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने वाले व्यक्ति के रूप में बताते हुए कहा था –

''वे अटल राष्ट्रभक्तिपूर्वक देश के साथ खडे थे।''

कर्णी सिह की प्रतिमा का अनावरण करते हुए, बीकानेर, 10 अप्रैल, 1993

डॉ कर्णी सिह जी ऐसे परिवार से थे, और उन्होंने अपने को इस परिवार का सच्चा उत्तराधिकारी सिद्ध भी किया।

बीकानेर नगर की स्थापना के पॉच सौ वर्प पूरे होने के अवसर पर मुझे यहॉ राव बीका जी की प्रतिमा का अनावरण करने का अवसर मिला था। आज मुझे इस नगर के एक लोकप्रिय जनप्रतिनिधि डॉ कर्णी सिंह जी की प्रतिमा के अनावरण का मौका दिया गया है। इसके लिए मैं बीकानेर के लोगों का आभारी हूॅ।

पॉच सौ वर्प के इतिहास को अपनी गोद में समेटे यह बीकानेर नगर हमारे देश के प्रमुख ऐतिहासिक और आधुनिक नगरों मे है। विशेपकर स्थापत्य कला के क्षेत्र में इसका अपना विशिष्ट स्थान है। लालगढ़ का पैलेस, राव कल्याणमल की छतरी राजस्थान के वीरतापूर्ण भावों की सवेदनात्मक अभिव्यक्ति हैं। यहॉ का अनूप पांडुलिपि सग्रहालय देश के जाने–माने संग्रहालयों में से है, जहॉ हमारी सांस्कृतिक विरासत सुरक्षित है। ऐसे महत्वपूर्ण नगर के डॉ कर्णी सिंह जी थे, और उन्होने स्वय को ऐसे क्षेत्र के लोगों की सेवा में लगाया।

कर्णी सिह जी का व्यक्तित्व शौर्य, राप्ट्रप्रेम, साहस, धैर्य और मानवीय सवेदना का मिलाजुला रूप था। हालांकि वे राजपरिवार मे पैदा हुए, वहीं उनका लालन–पालन हुआ कितु आम जनता से जुड़कर उनके लिए काम करने की भावना उनके जीवन का प्रमुख लक्ष्य था। इसी भावना से प्रेरित होकर देश के पहले आम चुनाव में वे खड़े हुए तथा विजयी रहे। उस समय वे कुल 28 वर्प के थे। मैं समझता हूॅ कि वे लोकसभा के सबसे कम उम्र के सदस्य रहे होंगे। इसके बाद लगातार 25 वर्प तक वे इस क्षेत्र के लोगों का लोकसभा में प्रतिनिधित्व करते रहे। सन् 1971 से 77 तक लोकसभा में हम लोग साथ ही थे।

अपने ससदीय जीवन में वे अनेक समितियो के सदस्य रहे तथा लोकसभा में विभिन्न विपयो पर होने वाली बहसों मे सक्रिय रूप से भाग लिया, अपने विचारों को प्रभावशाली तरीके से रखा और उसके परिणाम भी सामने आए। लोकसभा का सदस्य बनते ही उन्होने देश के आम लोगों की मूलभूत जरूरत को आवाज देते हुए 17 दिसबर, 1952 को कहा था –

''आपको यह मानना होगा कि कल्याणकारी राज्य में प्रत्येक व्यक्ति के लिए अपने योग्य काम प्राप्त करना उसका जन्म–सिद्ध अधिकार होता है।''

मैंने हाल ही में कर्णी सिंह जी द्वारा लोकसभा में दिये गये भापण देखे।

मैंने पाया कि उनके भाषणों में देश की आम समस्याएँ और उनके निराकरण की चिंता मुख्य रूप से थी। 'लूणकरणसर - बीकानेर लिफ्ट सिंचाई परियोजना', जो 1968 में शुरू हुई थी, उसका श्रेय कर्णी सिंह जी को जाता है। उन्होंने इस योजना के लिए पहली बार 22 मार्च, 1957 को लोकसभा में सुझाव दिया था। बाद में उन्होंने 1959 में एक फिल्म बनवाकर दिल्ली के लोगों को जनता की पानी की समस्या से अवगत कराया था।

संसद की बहसों में भाग लेकर उन्होंने राजस्थान और बीकानेर के लिए अनेक योजनाओं को पारित करवाया। यहाँ के उद्योग, यहाँ की जल-विद्युत, परिवहन व्यवस्था, रेडियो स्टेशन तथा मेडिकल कॉलेज डॉ कर्णी सिंह की देन हैं। वे उन लोगों में से थे, जो यदि किसी एक समस्या को उठाते हैं, तो तब तक के लिए उसके पीछे पड़ जाते हैं, जब तक कि उसे प्राप्त न कर लें। लोगों के बीच उनकी लोकप्रियता का यह एक बहुत बड़ा कारण था और मैं समझता हूँ कि यह उनके जीवन का सबसे बड़ा संदेश भी है। यह संदेश है — एक लोकतांत्रिक नेता का आम लोगों से समरस होकर उनकी समस्याओं के समाधान के लिए सक्रिय रूप से लगातार प्रयास करते रहने का। कर्णी सिंह जी महाराजा होते हुए भी लोगों से समरस थे। जब वे शासक थे, तब भी आम लोगों के आदमी थे, और जब सांसद बने तब भी आम लोगो के आदमी रहे। वे जितना लोगों को समझते थे, लोग भी उन्हें उतना ही समझते थे। उन्होंने अपने लोगों का जीवन स्तर बढ़ाने, उन्हें सुरक्षा का भाव देने, उनमें राजनैतिक चेतना जागृत करने तथा उनके सामाजिक और सांस्कृतिक विकास के लिए काम किया। मैं समझता हूँ कि ऐसा बनना ही हमारे जन-प्रतिनिधियों का कर्तव्य है, यही उनका धर्म है, और यही स्वयं उनके हित में भी है।

कर्णी सिंह ने निजी स्तर पर भी जनकल्याण के प्रति अपने कार्यो को हमारे सामने रखा। समाज-सेवा की भावना से प्रेरित होकर उन्होने अनेक ट्रस्टों की स्थापना की और उसके लिए अपनी अचल संपत्ति तथा नकद धनराशि भी दी। इन ट्रस्टों द्वारा किये जाने वाले कामों में गरीब एवं निर्धन छात्रों एव व्यक्तियों की सहायता करना, पुरातात्विक वस्तुओं का संरक्षण एवं शोध, धार्मिक स्थानों का प्रबंध, सांस्कृतिक गतिविधियाँ, खेलों को प्रोत्साहन देना जैसे अनेक उपयोगी और ज़रूरी कार्य शामिल हैं। यहाँ तक कि वे संसद से मिलने वाली अपनी राशि निर्धन एवं प्रतिभाशाली छात्रों को दे देते थे। अकाल जैसी प्राकृतिक विपदा वाली

स्थितियो में वे स्वय सहायता कार्यो मे भाग लेते थे और लोगों के दु:ख मे हाथ बटाते थे।

एक सफल एवं लोकप्रिय जनप्रतिनिधि होने के साथ-साथ वे लेखक, चित्रकार और प्रसिद्ध निशानेबाज भी थे। स्वय कर्णी सिह जी के पूर्वजों में से एक पृथ्वीराज 'डिगल' के प्रसिद्ध कवि रहे हैं, जिन्होंने 'क्रिसन रुक्मणी री वेलि' काव्य लिखा था। पृथ्वीराज के गुणों की प्रशंसा उनके समकालीन कवि नाभाजी ने अपने ग्रथ 'भक्तमाल' में तथा कर्नल टाड ने भी की है। कर्णी सिह जी ने अपने परिवार की इस परपरा को आगे बढ़ाया। उनके शोध प्रबध 'बीकानेर राजघराने का केद्रीय सत्ता से सबध' पर उन्हे डॉक्टरेट की उपाधि दी गई। यह तथा उनकी सस्मरणात्मक पुस्तक 'फ्रॉम रोम टू मास्को' मैंने देखी है।

उनका शोध-प्रबध इस बात का प्रमाण है कि उनके पास घटनाओं के विश्लेषण की अच्छी क्षमता थी। इसमें सकलित तथ्य ऐतिहासिक महत्व के हैं। उनकी दूसरी पुस्तक में यात्रा वृतात का आनंद आता है। अपने जीवन मे खिलाड़ी होने के नाते मुझे यह पुस्तक रुचिकर भी लगी।

कर्णी सिहजी एक अच्छे निशानेबाज थे। इसके लिए जो एकाग्रता जरूरी होती है, वह उनमे थी। उनकी यह एकाग्रता जनसेवा में भी दिखाई देती है। 'क्ले पिजन' और 'स्कीट-शूटिग' मे वे हमारे देश के राष्ट्रीय चैपियन रहे। ओलम्पिक तथा एशियाई खेलों मे उन्होने हमारे देश का प्रतिनिधित्व किया था, जिसके लिए उन्हे 1962 में 'अर्जुन पुरस्कार' से भी सम्मानित किया गया। वे किस प्रकार खेलों को राष्ट्रीय भावना से जोड़ देते थे, इसके लिए मैं उनकी पुस्तक 'फ्रॉम रोम टू मास्को' के पृप्ठ 264 पर लिखे उनके शव्द उद्धृत करना चाहूँगा। उन्होंने लिखा है

"अपने देश पर गर्व करने वाले एक भारतीय के रूप मे मैं अनुभव करता हूँ कि भारतीय खिलाड़ी किसी एक बड़े परिवार के सदस्य है, भले ही वे देश के केसी भी भाग के क्यों न हो।"

उनके इस कथन मे यही संदेश झलकता है कि जाति, धर्म, भापा, क्षेत्र आदि के भेदभाव से ऊपर उठकर एक टीम की तरह हमें अपने देश को आगे ले जाने के लिए जुट जाना चाहिए, और एक अच्छे निशानेबाज की तरह हमें अपने लक्ष्य को भेदना है। मैं समझता हूँ कि यदि हमारे देश के लोग, विशेपकर

बीकानेर के लोग इसे अपने जीवन का लक्ष्य बना सके तो यह उनकी कर्णी सिहजी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

कर्णी सिंह ने सुदूर-पूर्व देशों की यात्रा से लौटने के बाद लोकसभा मे 24 नवबर, 1964 को कहा था :

"हम भाग्यशाली हैं कि हम स्वतत्र हैं और हम एक स्वतत्र देश में एक स्वतंत्र मानव जाति की तरह रह सकते है।"

इस स्वतत्रता की रक्षा करना, उसे और अधिक मजबूत बनाना तथा उस आजादी का लाभ आम लोगों तक पहूंचाना, यह हमारे देश के हर नागरिक का कर्त्तव्य है। कर्णी सिंहजी के दादा गगा सिंह जी अपने पोते को 'सैनिक बालक' कहा करते थे। आज हमारे देश के हर लड़के को एक 'सैनिक बालक' तथा हर व्यक्ति को एक 'युवा सैनिक' की उत्साहपूर्ण भावना से काम करना है। मेरी सबसे यही अपील है कि हमारे देश के लोग संकीर्णता से ऊपर उठकर एक टीम भावना से संचालित होकर राष्ट्र के निर्माण का सकल्प लें।

सामूहिक विकास के लिए

मेरे विचार में अतर्संसदीय सघ के सम्मेलन का महत्व लोकतांत्रिक शासन प्रणालियों वाले राष्ट्रों के प्रतिनिधियों का एक मंच पर एकत्र होना मात्र नहीं अपितु इससे कहीं अधिक है। सम्मेलन में लोकतंत्र और उसके उद्देश्यों, मूल्यों, अपेक्षाओं तथा लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं एवं लोकतंत्र के समक्ष आने वाले प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष सभी प्रकार के खतरों पर स्पष्ट रूप से ध्यान केन्द्रित किया जाना चाहिए और हम सभी को मिलकर इस उद्देश्य को प्राप्त करने का प्रयास करना चाहिये।

यहा हमारा लक्ष्य एक ऐसे उज्ज्वल भविष्य का निर्माण करना है जिसमें प्रत्येक मानव सौहार्दपूर्ण एव प्रगतिशील वातावरण में गरिमापूर्ण, रचनात्मक, समृद्ध और प्रसन्नतापूर्वक जीवन जी सके। लोकतात्रिक दृष्टिकोण वनता ही तव है जवकि हम मानव अधिकारों के महत्व के प्रति जागरूक हो जाते हैं और हमें यह सत्य वोध हो जाता है कि शासनतंत्रों में मानव अधिकारों को सुनिश्चित करके ही मान्व जाति का कल्याण किया जा सकता है।

इस शताव्दी के दौरान विश्व के विभिन्न देशों में हुई राजनैतिक और संवैधानिक घटनाओं ने दो महत्वपूर्ण पहलुओं को उजागर किया है। इस वात को अव सभी स्वीकार करने लगे हैं कि मानव अधिकारों को मानने और उनको अमल में लाने से समाज में स्थिरता आती है तथा कमजोर वर्ग ऊपर उठता है। अब यह तथ्य सभी की समझ में पूरी तरह आ गया है कि स्थिर तथा प्रगतिशील समाज मानव अधिकारों पर ही आधारित है।

यह अनुभव सिद्ध बात है कि जिन राजनैतिक प्रणालियों में मानव अधिकारों को नकारा गया या दवाया गया था, वे निश्चित रूप से विफल हुई क्योंकि संवैधानिक, कानूनी तथा राजनैतिक दोपों से अभिशप्त इन प्रणालियों का कार्य अन्यायपूर्ण और अव्यावहारिक रहा।

89वे अतर्संसदीय सम्मेलन मे उद्घाटन, नई दिल्ली, 12 अप्रैल, 1993

लोकतांत्रिक दृष्टिकोण विश्व के विभिन्न देशों के अनुभवो के प्रति जागरूकता से पुष्ट होता है।

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि लोकतत्र को सुदृढ़ बनाने मे विश्व के अनेक भागों के प्रबुद्ध चिंतकों और नेताओं का महत्वपूर्ण योगदान है और उनके प्रयासों का परिणाम शुभ निकला है।

ब्रिटेन में मानव अधिकार विधेयक, 1688 लाने की प्रेरणा देने वाली प्रसिद्ध क्रान्ति, 1776 का अमेरिकी स्वतंत्रता सग्राम, मानव अधिकारों की घोपणा के निमित्त 1789 की फ्रांस की क्रांति और भारत को 1947 में स्वतंत्रता दिलाने वाला भारत का अहिंसापूर्ण स्वतंत्रता संग्राम विश्व के इतिहास के कुछ ऐसे उदाहरण हैं। ये घटनाएं विश्व में हो रही प्रगति को प्रतिबिम्बित करती है, जिनसे पता लगता है कि मानव जाति एक आदर्श मानव समाज के लक्ष्य की ओर बढ़ रही है। आज लोकतांत्रिक शासन पद्धति को एक आदर्श शासन पद्धति के रूप में देखा जाना चाहिए जिसको विकसित करने में अनेक व्यक्तियो का योगदान रहा है। लोकतत्र को सुदृढ़ करने के लिए किये गये प्रयास से सभी लाभान्वित होते है और लोकतत्र यदि कमज़ोर होता है तो सभी को हानि उठानी पड़ती है।

अब हमें यह महसूस करना चाहिए कि लोकतंत्र की रक्षा करना सामूहिक रूप से पूरी मानव जाति का दायित्व है। एक स्वस्थ लोकतांत्रिक प्रणाली के निर्माण की आवश्यकता महसूस करने तथा उसे परिभापित करने के लिए लोकतंत्र के सिद्धातों में नेतृत्व की भूमिका, संसदीय संस्थाओ, विकास-उपलब्धियों तथा राज्य के स्वरूप पर अत्यधिक बल दिया गया है। तथापि, मेरे विचार से लोकतत्र के सिद्धांतों में अभी तक इस विपय का प्रर्याप्त विश्लेपण नहीं हुआ है कि लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के बनाने या बिगाड़ने में बाहरी प्रभावो की क्या भूमिका है। इन बाहरी प्रभावों का गंभीर रूप से विश्लेपण तथा मूल्याकन करने की आवश्यकता है।

मानव अधिकारों को मानना तथा लागू करना, विश्वसनीयता तथा समाज का खुलापन लोकतन्त्र के स्तम्भ हैं और लोकतांत्रिक राज्य के अनिवार्य अंग हैं, किन्तु ये ही कभी-कभी इसकी कमजोरी भी बन जाते है। ऐसे तत्व विद्यमान हैं जो लोकतांत्रिक राज्य की स्वाभाविक संभावनाओं को सीमित करने तथा नष्ट करने के लिए इसकी भी मूलभूत विशेपताओ का दुरुपयोग करते हैं तथा विध्वंस और विनाश करते हैं।

आज हमें यह अवश्य महसूस करना चाहिए कि अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद, विशेष रूप से जब यह बाहर के किसी देश द्वारा कराया जाता है, लोकतंत्र के लिए एक गंभीर खतरा बन जाता है। इसे ऐसा नहीं समझा जाना चाहिए कि यह कोई अलग-थलग तथा किसी देश विशेष की स्थानीय समस्या है। आतंकवादियों द्वारा निर्दोष लोगों की हत्या करना तथा निजी और सरकारी सम्पत्ति को क्षति पहुंचाना सभी समाज को क्षति पहुंचाना हैं। जहाँ भी ऐसे तत्व घात लगाए बैठे हैं, हमें उनकी पहचान करनी चाहिए, उनकी भर्त्सना करनी चाहिए तथा उन्हें समाप्त करना चाहिए क्योंकि ये ही मानव समाज के असली दुश्मन हैं और इन्हीं से मानव समाज का भविष्य खतरे में पड़ गया है।

सभी देशों तथा राष्ट्रों की नियति एक समान है। सन् 1947 में इसी कक्ष में हमारे एक गणमान्य राजनीतिज्ञ और विश्व स्तर के नेता पंडित जवाहर लाल नेहरू (जिनका जन्म सन् 1889 में हुआ था और इसी वर्ष अन्तर्संसदीय संघ का भी गठन हुआ था) ने 'एक विश्व' के बारे में अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था "शांति, स्वतंत्रता, सम्पन्नता और विनाश अविभाज्य हैं क्योंकि आज विश्व को अलग-अलग टुकड़ों में नहीं बांटा जा सकता।" उन्होंने 'स्थायी प्रासंगिकता' के सिद्धांत को प्रतिपादित किया था और सम्पूर्ण विश्व के देशों की साथ-साथ प्रगति एवं समृद्धि के लिए एक व्यावहारिक दृष्टिकोण प्रस्तुत किया था।

जब हम ऐसे 'एक विश्व' में गरीबी, बीमारी, पिछड़ेपन और हिंसा की समस्याओं का विश्लेषण करते हैं और उनके हल ढूंढने का प्रयास करते हैं तब हमें वास्तव में परस्पर निर्भरता का बोध होता है।

सम्मेलन में भाग लेने वाले नेता व्यक्तिगत और सामूहिक रूप में इस विश्व मत को और अधिक रेखांकित कर अपना महत्वपूर्ण योगदान दे सकते हैं कि परस्पर निर्भरता मानव समाज की तात्कालिक और दूरगामी दोनों ही आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अनिवार्य है।

जिस प्रकार हम असमानता, अर्द्ध-विकास, बीमारी तथा विवादों पर काबू पाने के लिए जागरूकता तथा राजनीतिक सक्रियता में वृद्धि करने की बात करते हैं उसी प्रकार हमें परस्पर-निर्भरता से सभी को होने वाले लाभों के प्रति और अधिक जागरूक होना चाहिए और एक-जुट होकर कार्य करना चाहिए। ऐसा हमें विशेष रूप से शांति, निरस्त्रीकरण और विकास के लिए, अपने पर्यावरण की सुरक्षा के लिए और मानवीय मूल्यों की रक्षा के लिए राजनीतिक, आर्थिक

और प्रौद्योगिक आदि सभी क्षेत्रो में करना चाहिए। लोकत
में नेतृत्व प्रदान करना चाहिए और विश्व-व्यापी प्रयास
करनी चाहिए। इसे मानव जाति के उत्थान के लिए
के रूप में लिया जाना चाहिए।

माननीय प्रतिनिधिगण, आपके समक्ष सम्मेल
लिए एक लम्बी कार्य-सूची है। यद्यपि हम
हमारी संस्कृतियां और जलवायु भिन्न-भिन्न है
लोकतात्रिक दृष्टिकोण और मानव जाति
हैं। अब आप शांति, निरस्त्रीकरण और पर, जो
लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से ही प्राप्त करेगे। मुझे
विश्वास है कि यह सम्मेलन मानव जाति ऐसा संदेश देगा जिससे
लोकतात्रिक आदर्शो की सर्वश्रेष्ठता निश्चित रूप से होगी, जिसका सृजन करने
के लिए हम परिश्रम कर रहे हैं तथा जिससे लोकतंत्र को नष्ट करने का षड्यंत्र
करने वाले तत्वो का दृढ़तापूर्वक मुकाबला किया जा सकेगा।

आज से लगभग 6000 वर्ष पूर्व लिखे गये एक ग्रन्थ के एक श्लोक की याद आती है। हमारे प्राचीन सतों ने ऋग्वेद मे कहा है

"सं गच्छध्वं सं वदध्व स वो मनासि जानताम्।
समानं मंत्रम् अभिमत्रये व समानेन वो हविषा जुहोभि
समानी व आकुति. समाना ह्रदयानि व·
समानम् अस्तु वो मनो यथा व सुसहासति।"

कर्मयोगी लोकमान्य तिलक

मुझे अच्छी तरह याद है कि आज़ादी की लड़ाई में शामिल हम युवकों के लिए उस समय किस प्रकार लोकमान्य तिलक का नाम एक अदम्य ऊर्जा और प्रेरणा का काम करता था। आज भी उनका नाम याद आते ही मुझे ऐसा लगता है मानो कि किसी ने रोशनी का ढेर मेरे अदर उडेल दिया हो। वे निश्चित रूप से उसी तरह इस धरती के तिलक थे, जिस तरह से सूरज आसमान का तिलक है।

सन् 1880 से लेकर 1920 तक का चालीस वर्ष का भारतीय इतिहास का काल लोकमान्य तिलक की आवाज से गूजता रहा है। इस समय की बौद्धिक, राजनीतिक तथा सस्कृति के अध्यायों के पन्नों पर लोकमान्य के पदचिन्ह देखे जा सकते हैं। 'मराठा' और 'केसरी' पत्रों के माध्यम से उन्होने भविष्य की पत्रकारिता को दिशा दी, जिसका प्रभाव साहित्य पर भी पडा। उनके स्वतत्रता के सिद्धांत ने भारतीय राजनीति में नया जोश पैदा किया, तथा उनके सुधारो एव चिंतन ने भारतीय सस्कृति की जड़ो को सीच कर उसे हरा-भरा किया और घना भी किया।

मेरी समझ से तिलक हमारी सांस्कृतिक धरोहर की सर्वोत्तम देनों में से एक थे। बापू ने अपनी आत्मकथा में उन्हें 'महासागर-सा' कहा है। अनेक स्थलों पर तिलक के व्यक्तित्व की प्रशंसापूर्ण स्मृति करते हुए, अत मे उनके निधन की सूचना पाकर बापू के मुह से अचानक यह भाव निकला था

"मेरा सबसे मजबूत रक्षक चला गया।"

बापू ने यदि उन्हे अपनी आत्मकथा मे "अपनी शक्ति" के रूप में याद किया है, तो यह बात विशेष रूप से गौर करने की है।

लोकमान्य तिलक के सार्वजनिक जीवन मे प्रवेश के समय आजादी की लड़ाई ने सक्रिय जन-आंदोलन का रूप नहीं लिया था। मैं स्वतत्रता आंदोलन में तिलक का सबसे बड़ा योगदान यह मानता हूँ कि उन्होंने इस संघर्ष से आम

लोकमान्य तिलक पुरस्कार ग्रहण के अवसर पर, पुणे, 1 अगस्त, 1993

लोगों को जोड़ा, उनमें राजनैतिक चेतना जागृत की, उनमें अपने देश और अपने देश की संस्कृति के प्रति गौरव का भाव पैदा किया, उनकी सोई हुई ऊर्जा को जागृत किया और उसको संचित किया। वे लोगों के अत्यंत प्रिय नेता थे। इसका अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि उनकी गिरफ्तारी पर हड़ताल हो जाया करती थी। लोगों ने उनकी साठवीं जन्मतिथि धूमधाम से मनाई थी। मैं समझता हूँ कि एक तरह से उन्होंने स्वतंत्रता आंदोलन के लिए वह सारी पृष्ठभूमि तैयार की थी, जिसके आधार पर बापू अपने आंदोलन को जोर-शोर से आगे बढ़ा सके।

तिलक प्रखर बुद्धि के अद्‌भुत राजनेता थे। सन् 1908 में अपने मुकदमे की पैरवी के रूप में दिया गया उनका भाषण एक मिसाल है। उसमें न केवल तथ्यों भर की प्रस्तुति है, बल्कि सीधे-सीधे अपने देशवासियों से आजादी के लिए की गयी एक भावनात्मक अपील भी है। उन्होंने पूरी निर्भीकता के साथ कहा था :

''यद्यपि जूरी ने मेरे विरुद्ध निर्णय दिया है, फिर भी अपनी अंतरात्मा की राय में मैं स्पष्टतः निर्दोष हूँ। वस्तुतः मनुष्य की शक्ति से भी अधिक क्षमतावान दैवीय शक्ति है। वही प्रत्येक व्यक्ति और राष्ट्र के भविष्य की नियंत्रणकर्त्ता है। हो सकता है कि दैव की यही इच्छा हो कि स्वतंत्र रहने की बजाय कारागार में रहकर कष्ट उठाने से ही मेरे अभीष्ट कार्य की सिद्धि में अधिक योग मिले।''

इसी प्रकार उनकी पुस्तक 'गीता रहस्य' केवल भारतीय ही नहीं बल्कि पश्चिमी चिंतकों के उनके गहन अध्ययन, विश्लेषण और भारतीय संदर्भ में उनकी प्रस्तुति का एक सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करती है। महान् चिंतक अरविंद घोष ने उनकी 'गीता रहस्य' के बारे में बिल्कुल सही कहा था :

''यदि तिलक जी चाहते तो इस एक ग्रंथ से मराठी साहित्य और नीति-शास्त्र के इतिहास में एक अनोखा स्थान पा सकते थे। किंतु विधाता ने उनकी महत्ता के लिए वाङ्मय का क्षेत्र नहीं रखा था। इसलिए केवल मनोरंजनार्थ उन्होंने अनुसंधान का महान् कार्य किया।''

उनकी पुस्तक 'ओरियान' तथा 'द आर्कटिक होम इन द वेदाज़' भारतीय दर्शन संबंधी उनकी सूझबूझ की गवाह हैं। उनके समाचार-पत्र 'मराठा' और 'केसरी' उनके तीक्ष्ण तथा मौलिक विचारों को हमारे सामने रखते हैं।

शिक्षा से उनका गहरा जुड़ाव रहा। आपके इसी पूना शहर से उन्होंने अपनी

स्नातक तक की शिक्षा पाई थी और यहीं बाद में 'फर्ग्यूसन कॉलेज' की स्थापना में अपना योगदान दिया। उन्होने स्कूल में पढ़ाया और बाद में अपने विचारो और कार्यो के द्वारा लोगों को पढ़ाते रहे। श्रीमती इंदिरा गाधी ने बिल्कुल सही कहा था :

"तिलक एक महान् विद्वान थे। आजन्म शिक्षक थे। भय रहित नेता थे। इन सबसे ऊपर ऐसे राष्ट्र भक्त थे, जो स्वराज्य के लिए जिए और स्वराज्य के लिए मरे।"

मैं समझता हूँ कि यही उनकी सबसे बड़ी शिक्षा भी थी।

मुझे लगता है कि उनके मस्तिष्क की प्रखरता उनका यह सबसे प्रमुख गुण था, जो उन्हें अपने समकालीन लोगो में एक विलक्षणता प्रदान करता है। अपने आदर्शो के प्रति स्पष्ट दृष्टि तथा निर्भीकता के साथ गीता के कर्मयोगी की तरह उसमे लगे रहना उनके व्यक्तित्व की सवसे बडी विशेपता थी। वे जो कहते थे, वही करते थे तथा जो वे कर सकते थे वही कहते थे। कथनी और करनी की इस एकरूपता ने उनकी बातो मे एक नई चमक और जवर्दस्त प्रभाव की क्षमता पेदा कर दी थी। मैं कह सकता हूँ कि वे अपने आचरण के द्वारा राष्ट्रीय स्वाभिमान की शिक्षा देने वाले सच्चे आचार्य थे।

राजनीति और शिक्षा के साथ-साथ सामाजिक क्षेत्र में भी उनका योगदान रहा है। मानवीय गरिमा की रक्षा और उसे बढाना उनके सभी सामाजिक कार्यो के केद्र मे रहा है, जो सीधे-सीधे उनकी स्वातत्र्य चेतना से जुड़ जाता है। उन्होंने विधवा-विवाह का समर्थन किया। बाल-विवाह का विरोध किया। इस प्रकार समाज मे मानव की मूलभूत गरिमा को स्थापित करने की कोशिश की। उन्होंने इसी पूना शहर मे भाषण देते हुए सन् 1890 मे कहा था ·

"समाज-सुधार के बारे में बाते अधिक होती रही हैं, लेकिन अब हमें यह याद रखना है कि हमें आम लोगों के बीच यह काम करना है। यदि हम अपने आपको उनसे अलग कर लेंगे तो सुधार असभव हो जाएगे। . . मैं समझता हूँ कि प्रत्येक को सुधार स्वयं से शुरू करना चाहिए और दूसरो को सिद्धांत की बजाय अपने आचरण से बदलने की कोशिश करनी चाहिए।"

यहा भी तिलक ने सामाजिक सुधार से जनता को जोड़ने की बात की। जनता को जोड़ने तथा अपने आचरण द्वारा उन्हें प्रेरित करने की उनकी यही चेतना राजनीतिक क्षेत्र में भी दिखाई पड़ती है।

लोकमान्य तिलक में अपने देश के लोगों के मन और मस्तिष्क की गहरी पकड़ थी। इसे समझते हुए उन्होंने लोगों के अन्दर सांस्कृतिक चेतना पैदा करके उन्हें एकजुट होकर संघर्ष करने को प्रेरित करने की दृष्टि से 'गणेश उत्सव' और 'शिवाजी उत्सव' जैसे सांस्कृतिक कार्यक्रम शुरू किए और उनका अपने समय के लोगों पर जबर्दस्त सकारात्मक प्रभाव भी पड़ा। महाराष्ट्र में ही नहीं बल्कि अब देश के अन्य भागों में भी ये उत्सव हमारे सांस्कृतिक जीवन के अंग बन चुके हैं। मैं आप लोगों को इस बात के लिए बधाई देता हूँ कि इस वर्ष आप 'गणेश उत्सव' का शताब्दी वर्ष पूरा करने जा रहे हैं। इसे मैं इस दूरदर्शी जननेता के प्रति दी गई एक उत्तम श्रद्धांजलि मानता हूँ।

अपनी संस्कृति से गहरे रूप से जुड़कर ही कोई व्यक्ति उदात्त चेतना तक ऊपर उठ सकता है, लोकमान्य तिलक इसके प्रमाण थे। उन्होंने अपने एकमात्र ध्येय की पूर्ति के लिए राष्ट्रीय एकता के महत्व को अच्छी तरह से समझा था और इसके लिए वे जाति, धर्म, क्षेत्र और भाषाओं की सीमाओं से ऊपर उठकर प्रयत्न करते रहे। 'गीता' उनकी सबसे प्रिय पुस्तक थी और कर्मयोग उनका सर्वोत्तम जीवन-दर्शन। 'गीता रहस्य' में उन्होंने जो बात कही है, वह उनके सर्वधर्मसम्मान की दृष्टि का सुन्दर उदाहरण प्रस्तुत करती है। उन्होंने लिखा है :

"गीता धर्म कैसा है? . . . वह सम है, अर्थात् वर्ण, जाति, देश या किसी अन्य भेदों के झगड़े में नहीं पड़ता, बल्कि सब लोगों को एक जैसी ही सद्गति देता है। वह अन्य सब धर्मों के विषय में यथोचित सहिष्णुता दिखलाता है। वह ज्ञान, भक्ति और कर्मयुक्त है।"

(गीता रहस्य : पृष्ठ-508)

वे बिना थके लगातार चलते रहने वाले राही थे। ऐसा शायद ही कोई सप्ताह होता था, जिसमें उन्होंने जनसभा को संबोधित न किया हो। पढ़ना, लिखना, साथियों से विचार-विमर्श करना और जनसभा को संबोधित करना—कमोवेश रूप से यही उनके जीवन की दिनचर्या थी। रुकना तो मानो उन्होने सीखा ही नहीं था। यहां तक कि ब्रिटिश हुकूमत ने उनके लेखों को आपत्तिजनक मानते हुए जब उन्हें छः साल के लिए मांडले जेल में भेज दिया, तब भी सींखचों में क़ैद होने के बावजूद वे न तो रुके, न थके। 'गीता रहस्य' जैसी अमूल्य निधि उसी समय की देन है।

आज जबकि ऐसे महापुरुप की पुण्य-तिथि है, हमे अत्यन्त पवित्र मन के साथ यह सोचना चाहिए कि हम कैसे सच्चे भाव से उन्हें श्रद्धाजलि दे सकते हैं। स्वतंत्रता के जिस जन्मसिद्ध अधिकार के लिए उन्होंने अपना जीवन उत्सर्ग किया, वह हमारे अनेक महान् नेताओं की कुर्बानियों से हमें प्राप्त हो गई है। लेकिन रास्ता यहीं खत्म नहीं होता, बल्कि यहां से एक नये रास्ते की शुरूआत होती है।

आज दो बड़े कार्य हमारे राष्ट्र के सामने हैं। पहला है—आजादी की रक्षा करना और दूसरा है—राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का कार्य। कोई भी ऐसा कार्य, जिससे हमारी राष्ट्रीय एकता, सास्कृतिक चेतना तथा समाज के ताने-बाने को नुकसान पहुँचता है, उसका विरोध लोगो द्वारा सामूहिक रूप से किया जाना चाहिए। क्योकि नकारात्मक शक्तियों से जहां एक ओर हमारे राष्ट्र की स्वतंत्रता को चुनौती मिलती है, वहीं राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य में भी रुकावट आती है। हमें यह याद रखना चाहिए कि तिलक जैसे नेता हमारे देश को क्यों आजाद कराना चाहते थे? उनका सीधा-सा मकसद था—हम आजाद हों, ताकि हम स्वयं अपने भाग्य का निर्धारण कर सकें, और सब लोगों को सुखी बना सकें। लेकिन जब तक राष्ट्र की सामूहिक शक्ति संकल्प लेकर विकास कार्य में नहीं लगती तथा विकास को बाधा पहुँचाने वाली शक्तियों का विरोध नहीं करती, तब तक स्वराज्य के जन्मसिद्ध अधिकार का संकल्प पूरी तरह से पूरा नही होता। हम लोगों पर इस संकल्प को पूरा करने का दायित्व है और हमे इसे पूरा करना है। मुझे अपने देश के लोगों की शक्ति, उनकी क्षमता और उनकी सकारात्मक चेतना पर पूरा भरोसा है और यह विश्वास है कि वे हमारे नेताओ के अधूरे सपनों को पूरा करेगे।

ऊर्जा के प्रतीक स्वामी विवेकानंद

19वीं सदी के उत्तरार्द्ध का काल हमारे देश के इतिहास में इसलिए विशेष महत्व का है, क्योंकि इस समय देश में अनेक महापुरुषों का जन्म हुआ था। इनमें समाज-सुधारक थे, चिंतक थे तथा राजनेता थे। विवेकानंदजी इसी युग में अवतरित हुए एक ऐसे महान चिंतक थे, जिन्होंने अपनी प्रखर वाणी द्वारा केवल देश में ही नहीं, बल्कि अमरीका एवं यूरोपीय देशों में भी भारतीय संस्कृति की गूंज पैदा की। उन्होंने वेदांत की व्याख्या की और अपनी व्याख्या में विश्व के सभी धर्मो का सार निहित करते हुए वे विचार व्यक्त किए, जो इस नई दुनिया के लिए व्यावहारिक थे। यहां हमें यह याद रखना चाहिए कि विवेकानद जी के विचार न तो भौतिकता का सीधे-सीधे खंडन करते है, न ही केवल आध्यात्मिकता का उपदेश देते हैं, बल्कि इन दोनों के समन्वय पर आधारित एक ऐसी जीवन-पद्धति की बात करते हैं, जो इस वैज्ञानिक युग में मानवीय जीवन के लिए सबसे अधिक उपयोगी हो सकती है। एक प्रकार से उन्होंने भौतिकता के जाल मे फंस कर तड़पते हुए मानव को मुक्ति का रास्ता दिखाया। भौतिकता के कारण व्यक्ति कितना अकेला होता जा रहा था, इसे इसी बात से जाना जा सकता है कि 11 सितम्बर, 1893 को शिकागो मे आयोजित 'विश्व धर्म महासभा' में जब उन्होंने अपने भाषण की शुरूआत 'अमरीकावासियो, बहनो और भाइयो' के सम्बोधन से की तो हाल तालियों से गूज उठा था। इसका मतलब यह हुआ कि उन्हें यह सम्बोधन अत्यंत भावनात्मक, नया और अच्छा लगा था।

विवेकानंदजी हमारे राष्ट्रीय गौरव के प्रतीक थे, और एक ऐसे समय में गौरव के प्रतीक बने, जब हमारा देश गुलाम था, तथा विदेशों में उसकी छवि एक असभ्य एव पिछड़े लोगों के देश के रूप में थी। यह वह समय था, जब दासता में जकड़ी भारतीय मानसिकता सोई हुई थी, और उसमें आत्मविश्वास घर कर रहा था। ऐसे समय मे विवेकानंद जी ने विश्व में भारतीय संस्कृति का झंडा फहराकर हिन्दुस्तान के प्रत्येक व्यक्ति को गौरव से भर दिया और उनकी सोई हुई चेतना को जगाया, उकसाया और कर्म की ओर प्रवृत्त किया। 12 नवम्बर,

स्वामी विवेकानद की प्रतिमा का अनावरण करते हुए, पुणे, 1 अगस्त, 1993

1897 को लाहौर के युवाओ को सम्बोधित करते हुए उन्होंने कहा था :

उतिष्ठत जागृत प्राप्य वरान्निबोधत।

अर्थात्, ''जागो, उठो और जब तक उद्देश्य पूरा न हो जाए, तब तक रुको नहीं।''

उनके व्यक्तित्व में एक आकर्पण था, गम्भीरता थी। उनकी वाणी में एक जादू था। वे एक उपदेश की तरह नहीं, बल्कि पूरे अधिकार से बोलते थे। उनकी दृष्टि मे कर्म करना ही उपासना था तथा कारखाने, स्कूल, खेत और खेल के मैदान ईश्वर के साक्षात्कार के वैसे ही उत्तम और योग्य स्थान थे, जैसे किसी साधु की कुटी या मदिर का द्वार। मैं इस बात को उनकी बड़ी देन मानता हूं कि उन्होने धर्म को सीधे-सीधे समाजसेवा और समाज विकास से जोड़ा। इसी भावना से प्रेरित होकर उन्होंने 'रामकृष्ण मिशन' की स्थापना की। और महत्वपूर्ण बात यह है कि पहली बार उन्होंने सतो और मठों को समाज से अलग न करके सीधे-सीधे सामाजिक कार्यो मे लगाया। उनकी दृष्टि मे इन मठों का काम मात्र आध्यात्मिक उत्थान करना ही नहीं था, बल्कि सामाजिक उत्थान भी था। इसलिए 'रामकृष्ण मिशन' शैक्षणिक सस्था चलाने, अस्पताल खोलने, अनाथालय चलाने तथा बाढ़, सूखा, तूफान एवं महामारी जैसे अवसरों पर लोगों के पुनर्वास एवं राहत के काम में भी लगे रहते है। अमेरिका में अपने द्वारा स्थापित 'श्रीरामकृष्ण मिशन' के युवा सन्यासियों के नाम प्रेपित एक संदेश में उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था

''मेरे बच्चो! तैयार हो जाओ, अपनी कमर कस लो तुम्हीं हो इस देश की आशा जाओ उनके लिए अपनी बलि चढ़ा दो, अपने सारे जीवन को उनकी सेवा की वेदी पर उत्सर्ग करने का व्रत लो। आगे बढ़ो- उनतीस करोड अभागे नर-नारियो के लिए, जो प्रतिदिन नीचे-से-नीचे खिसकते चले जा रहे हैं।''

कितना उदात्त है यह वाक्य!

अपने जोशीले एवं अनुभव तथा सत्य से जगमगाते वाक्यों के द्वारा उन्होंने हमारे देश की ऊर्जा को गतिशील किया, ऊर्जस्वित किया और समाज-कल्याण के काम में लगाया। यह कहना गलत नही होगा कि यही ऊर्जा आगे चलकर हमारे स्वतंत्रता आदोलन मे परिणित हुई। मुझे रोम्या रोलां की यह बात सही मालूम पडती है·

"आधुनिक भारत की तीन विभूतियां-गाधी, रवीन्द्र, अरविन्द घोप-बहुत अंश तक इसी तरुण वेदांत संन्यासी द्वारा बोए गए बीजों से विकसित हुए हैं।"

विवेकानंदजी विश्व मानव की मूलभूत एकता में विश्वास करते थे। इसके लिए सहिष्णुता प्रधान गुण माना जाता है। उन्होंने स्वयं को ऐसे धर्म का प्रतिनिधि बताते हुए 'विश्व धर्म महासभा' में कहा था .

"मैं एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने में गर्व का अनुभव करता हूं, जिसने संसार को सहिष्णुता तथा सार्वभौमिक स्वीकृति दोनों की ही शिक्षा दी है।"

इसी प्रकार 27 जनवरी सन् 1900 को कैलिफोर्निया में अपने जीवन का उद्देश्य बताते हुए उन्होने कहा था .

"हमें हिन्दुओं की आध्यात्मिकता, बौद्धों की करुणा, ईसाइयों की कर्मण्यता तथा मुसलमानों का भाईचारा अपने व्यावहारिक जीवन मे प्रदर्शित करना चाहिए।"

इसे मैं भारतीय चिंतन की सबसे बड़ी ताक़त और विशेपता मानता हूं।

हमारे देशवासियों को ही नहीं बल्कि पूरे विश्व को यह बात याद रखनी है कि एक ऐसे वर्ष में, जबकि शिकागो सम्मेलन का शताब्दी वर्प मनाया जा रहा है, इस बात के विशेप प्रयास किए जाने चाहिए कि सर्वधर्मसम्मान की यह चेतना विश्व के जन-जन तक पहुंचे। आज विश्व की क्षमता, जो व्यर्थ के पारस्परिक विवादों में नष्ट हो रही है, उसे इसके माध्यम से बचाया जा सकता है तथा उसे मानवीय विकास एवं मानवता के उत्थान मे लगाया जा सकता है।

मुझे लगता है कि हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने जिस तरह के भारत का सपना देखा था, उसकी लकीरें विवेकानदजी ने खींच दी थीं। हमारे संविधान में जिस पंथनिरपेक्षता और समाजवाद की बात कही गई है, वह विवेकानंदजी के विचारों में देखने को मिलती है। उन्होंने हमेशा गरीबों के उत्थान की बात की और नारी स्वतंत्रता पर ज़ोर दिया। शिक्षा को वे व्यक्ति और राष्ट्र के विकास का आधार मानते थे. जिसे आज हम अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के रूप मे देख रहे हैं। नारी शिक्षा के प्रति भी उनका बहुत ज़ोर था। वे कहते थे ·

"पहले अपने यहां की महिलाओं को शिक्षित करो और उन्हें उन पर छोड़ दो। इसके बाद वे तुम्हें बताएंगी कि उन्हें किस प्रकार के सुधारों की ज़रूरत है।"

हमारे देश में विवेकानंदजी का जन्म दिन 'युवा दिवस' के रूप में मनाया जाता है। इसे मैं विवेकानंदजी के प्रति व्यक्त की गई सच्ची श्रद्धांजलि मानता

हूं। क्योंकि मुझे यह लगता है कि उनके कर्म का सिद्धांत व्यक्ति को हमेशा युवा बनाए रखता है। जब वे कहते है कि "यदि तुम्हें जीवन की अभिलाषा है, तो उसके लिए तुम्हें प्रतिक्षण मरना होगा," या कि जब वे कहते है कि "डरना नहीं! क्योंकि मनुष्य जाति के इतिहास में देखा जाता है कि जितनी शक्तियों का विकास हुआ है, सभी साधारण मनुष्यों के भीतर से हुआ है," तो ऐसे वाक्य सुनकर स्वाभाविक रूप से शरीर में ऊर्जा की एक विद्युत तरंग दौड़ जाती है।

आजादी के 46 वर्ष मे हमने काफी कुछ किया है इसके बावजूद अभी भी देश मे गरीबी, उत्पीड़न, नारी-शोषण, अशिक्षा, बीमारी तथा धार्मिक उन्माद जैसी अनेक समस्याए हैं। जब तक ये समस्याए रहेगी, तब तक यह नहीं कहा जा सकता कि हमने इस महापुरुप के सपनों को पूरा किया है। इसलिए मेरी देश की, विशेपकर युवा-शक्ति से यह अपील है कि वे गरीबों की मदद के लिए आगे आएं और उन कारणो को जड़ से उखाड़ फैंकने में अपनी शक्ति लगाएं, जो उनकी दीनता का कारण बनी हुई हैं।

निश्चित रूप से चिंतन की दृष्टि से भारत विश्व में महान रहा है, किन्तु आर्थिक, सामाजिक विकास की दृष्टि से अभी उसका स्थान पिछड़ा हुआ है। विवेकानंदजी ने अपने विचारो के द्वारा आध्यात्मिक और भौतिक उत्थान में समन्वय लाने की बात कही थी। यह समन्वय तब तक असम्भव है, जब तक कि हमारे लोग तथा हमारी सामाजिक एवं सांस्कृतिक संस्थाएं सच्चे मन से सामने आकर समर्पित भाव से इन कार्यो मे न लगें। मैं समझता हूं कि ऐसा करना ही इस महापुरुष के प्रति अपनी सच्ची श्रद्धांजलि देनी होगी और ऐसा करके ही हम उनकी प्रतिमा की स्थापना के द्वारा स्वीकार किए गए दायित्वों को पूरा कर सकेंगे। मेरा विश्वास है कि विवेकानदजी की यह प्रतिमा लोगों के विचारों को उदात्त बनाकर उन्हें निरतर सामाजिक एवं मानवीय हित के लिए प्रेरित करती रहेगी।

राष्ट्रीय एकता

मैं महान राष्ट्रीय नेताओं, शहीदों और स्वतंत्रता सेनानियों को आदरपूर्वक अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ, जो स्वतंत्रता के लक्ष्य के साथ आत्मसात हो गए थे और जिनकी तकलीफों और कुर्बानियों की ऊर्जा ने राष्ट्रीय मन को जगाया, विशाल जन-शक्ति को सक्रिय किया और स्वतंत्रता प्राप्त की।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी के प्रेरक नेतृत्व में एकता की भावना, समर्पण का उत्साह तथा राष्ट्रीय संकल्प से भारत को आज़ादी मिली है। 15 अगस्त, 1947 को बापू ने कहा था:

''आज से आप लोगों को कांटों का ताज पहनना है। सत्य और अहिंसा की भावना पैदा करने के लिए निरंतर प्रयास करना होगा। विनम्र बनें। सहिष्णु बनें। इसमें संदेह नहीं कि ब्रिटिश सरकार से टक्कर की चुनौती ने आपकी उदात्त भावनाओं को उभारा था। लेकिन अब हर दृष्टि से आपकी पूरी-पूरी परीक्षा ली जाएगी। याद रखें कि आपको भारत के सुदूर देहात मे फैले हुए गरीबों की सेवा करनी है।''

मित्रो, हमें याद रखना है कि आज़ादी की लड़ाई भारत की जनता ने सत्याग्रह और अहिंसा के माध्यम से लड़ी थी। इतिहास में सबसे विशाल शक्तिशाली साम्राज्य का मुकाबला हमारे देशभक्तों ने बिना किसी भौतिक साधन के किया। हमें पूरी तरह समझना चाहिए कि राष्ट्रीय एकता और आत्मनिर्भरता की शक्ति के फलस्वरूप ही स्वतंत्रता संग्राम में हमारी जीत हुई, हम आज़ाद हुए।

आज़ाद हुए अब हमे 46 वर्ष हो गये हैं। इस बीच राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के अनेक क्षेत्रों में हमने निश्चित ही निर्णायक प्रगति की है। उच्च कोटि के नेताओं तथा सांसदों के नेतृत्व में भारत की जनशक्ति ने देश को वर्तमान स्थिति और मज़बूती तक पहुंचाया है। हमारे देश में समर्पित एवं प्रतिभाशाली नारियों एवं पुरुषों की प्रचुर संपदा है, जिनकी गुणवत्ता की तुलना विश्व के सर्वोत्तम स्तर से की जा सकती है। हमारे सामने देश के विकास और प्रगति का विशाल काम है। हमारा राष्ट्रीय

स्वतंत्रता दिवस (1993) की पूर्व सध्या पर राष्ट्र के नाम सदेश, नई दिल्ली, 14 अगस्त, 1993

ध्येय सामाजिक न्याय के साथ सर्वांगीण उन्नति करना है। अपने इस उद्देश्य में हमारी सफलता के लिए राष्ट्रीय एकता और आत्मनिर्भरता अनिवार्य हैं। ये तत्व हमारी आज़ादी की लड़ाई में निर्णायक थे। अव ये और भी अधिक आवश्यक हैं, क्योंकि आज हमें वदलते हुए विश्व में अपनी आज़ादी से प्राप्त लाभों को सुरक्षित रखना है ओर उन्हें वढ़ाना है। हम सभी ओर से मिली सहायता और सहयोग की सराहना करते हैं, उसका स्वागत करते हैं, लेकिन अंतत· हमें अपने ही साधनों पर निर्भर रहना होगा। हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जो अत्यधिक परावलंबी रहते हैं, वे स्वयं कमजोर और असहाय से होते जाते हैं।

हमारे सामने जो महान सभावनाए और चुनौतियाँ हैं, उनके लिए किसान, जवान, मजदूर तथा देश के प्रत्येक नागरिक को दृढ़सकल्प और नई उमग के साथ काम करना होगा। विशेपकर भारत की नारियों को राष्ट्र-निर्माण के प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक गतिविधि में समान सहयोगी के रूप में अपने उचित स्थान तक पहुँचना होगा। हममे से प्रत्येक को अपने-अपने कर्तव्य में तल्लीन होकर देश और लोगों की सेवा मे जुटे रहना चाहिए, वजाए इसके कि दूसरों के कर्तव्यों के बारे में ही सोचते रहे।

हमारे देश के पास ऐसे दो महान् गुण हैं, जिनसे हमें लगातार लाभ मिलता रहेगा और हमारे राष्ट्रीय लक्ष्यो को प्राप्त करने में हमें ताकत मिलती रहेगी। हमें इन गुणों को पूर्ण विस्तार देना चाहिए तथा उनको किसी भी प्रकार की क्षति से सुरक्षित रखना चाहिए। इनमे एक तो यह है कि भारत के लोगों में समन्वय और सामंजस्य की भावना स्वाभाविक है। इसी कारण हमारे देश के पूर्व से पश्चिम तथा उत्तर से दक्षिण तक के लोग शातिपूर्वक एक-दूसरे के साथ मिलकर रहते हें, एक-दूसरे के रीति-रिवाज और परंपरा को आत्मसात करते हैं तथा एक-दूसरे की मान्यताओं एवं धार्मिक चिंतन का आदर करते हैं। सचमुच, इस प्रकार हमारे देश के लोग उभरते विश्व-समुदाय के लिए एक महत्त्वपूर्ण संदेश देते हैं। विविधता में एकता हमारी विरासत एवं हमारे राष्ट्रीय जीवन की अंतर्भूत विशेपता है। साथ ही भविष्य में हमारे विकास का आधार भी यही हैं। सदियों से हमने इस सत्य को समझा है कि सभी धर्मो का मूलभूत सिद्धांत एक ही है। हमारे विचारों और कार्य-प्रणाली पर इसका वडा गहरा और सकारात्मक प्रभाव पड़ा है। निश्चित ही हमारे राष्ट्रीय जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में इस शक्ति का व्यापक और दूरगामी महत्व है। उदात्त दृष्टिकोण तथा पारस्परिक सामंजस्य की भावना हमारे लिए अत्यंत

आवश्यक है। यह एक सच्चाई है कि संकुचित-संकीर्ण विचार और कार्य वाले लोगों का देश कभी महान बन ही नहीं सकता।

हमारा एक दूसरा बड़ा गुण यह है कि हमने लोकतत्र को अपनाया है और हमारे यहाँ संसदीय शासन व्यवस्था है। इस सशक्त आधार पर हमे अनेक निर्माण कार्य करने हैं। हमारे देश में लोकतात्रिक दृष्टिकोण के लगातार विकास को दुनिया ने माना है। हमारा लोकतंत्र आश्वस्त करता है कि यहॉ प्रत्येक व्यक्ति, समुदाय, राज्य और क्षेत्र के अधिकार तथा देश के हित की रक्षा होगी। हमारी लोकतांत्रिक व्यवस्था ही दुर्बल वर्गो को लगातार शक्ति प्रदान करने, उनके विकास के लिए पूरे अवसर उपलब्ध कराने तथा उन्हें स्वतंत्रता के लाभ में भागीदार बनाना सुनिश्चित करेगी।

इसलिए मै निर्विवाद रूप से हमारे देश की आर्थिक, सामाजिक एवं राजनीतिक, सभी समस्याओं का सामना करके उनसे उबरने की राष्ट्र की ताक़त के प्रति अपना पूरा विश्वास व्यक्त करता हूँ। राष्ट्र की इस ताक़त के द्वारा हमारी सभी समस्याओं का समाधान देश की महान विरासत और शहीदों तथा स्वतंत्रता आंदोलन के महान् नेताओं के सपनों के पूर्णत. अनुरूप भी रहेगा, यह मेरा दृढ़ विश्वास है।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधो के क्षेत्र में भारत हमेशा अपने पड़ोस के देशों तथा विश्व के सभी देशों एव लोगो के साथ शाति, मित्रता और सहयोग का पक्षधर रहा है। अपनी हाल की विदेश यात्रा में मैंने यही भाव व्यक्त किए थे, जिसे यूरोप, पश्चिम एवं मध्य-एशिया के नेताओ ने भलिभांति सराहा। एक शक्तिशाली, सगठित और समृद्ध देश के रूप मे भारत हमेशा विश्व के हर क्षेत्र में रचनात्मक भूमिका निभाता रहेगा। हमारी इस नीति के प्रति किसी को शंका करने की कोई गुजाइश नहीं है।

मित्रो, आज जबकि हम एक शुभ पर्व मनाने की तैयारी कर रहे हैं, मेरा ध्यान हमारे विशाल देश के विभिन्न भागों में आई हुई बाढ़ एवं सूखे से प्रभावित अनेक परिवारो के लोगों पर है। तथा उन करोड़ो लोगों पर है जो गरीबी, अशिक्षा तथा बीमारी का जीवन जी रहे है। जैसा कि बापू ने हम लोगो को सिखाया था, हमें कृतसंकल्प और संगठित होकर इन समस्याओं का मुकाबला करना है। आइए, हम सभी इस पवित्र कार्य में अपना-अपना ठोस और अर्थपूर्ण योगदान करने की

शपथ ले तथा अपने महान देश को आगे ले जाने के लिए एकजुट होकर प्रयास करे। आइए, भारतीय के रूप में हम अपनी एकता व्यक्त करें, एक-दूसरे को ताक़त प्रदान करें तथा एक-से भविष्य की ओर कदम बढ़ाएँ।

कर्मठता के पर्याय राजीव गांधी

इस समय मेरे दिमाग में अनेक विचार आ रहे हैं। राजीव गांधी के बारे में मेरी यादें सन् 1952 के उस समय से हैं, जबकि हमारे प्रधानमंत्री पंडित नेहरूजी तीन मूर्ति भवन में रहते थे और उस समय राजीव गांधी केवल आठ वर्ष के थे। पंडितजी, श्रीमती इंदिरा गाधी और फिरोज गांधी से अपने दशकों से भी लंबे संबंधों के कारण यह स्वाभाविक था कि मैं राजीव को जानता। बाद मे मैंने उन्हें हमारे देश के भविष्य को बनाने वाले तथा विदेशी मामलों में भारत के प्रभाव को बढ़ाने वाले नेता के रूप में उभरते हुए देखा।

मित्रो, आइए हम सब राजीव गांधी द्वारा किए गए कई उपकारों के लिए उन्हें याद करें, जिसकी शुरूआत श्रीमती इंदिरा गांधी की हत्या के कारण उत्पन्न अत्यन्त गम्भीर स्थिति मे उनके नेतृत्व से होती है। उस विभीपिका ने देश में असुरक्षा की गहरी भावना पैदा की थी। राजीव गांधी ने सत्रास, दु:ख तथा हमारे देश की एकता और सुरक्षा को गम्भीर खतरे के समय एक गम्भीर उत्तरदायित्व वहन किया था। हालांकि वे निजी दु:ख से गम्भीर रूप से प्रभावित थे और सरकारी काम में भी नए थे। उनकी नि:श्छलता और उद्देश्य के प्रति स्पष्टता ने लोकचेतना पर अपनी गहरी छाप छोड़ी। एक पुत्र एवं एक प्रधानमंत्री के रूप में उन्होंने अटल धैर्य के साथ अपने कर्तव्यो को निभाया। उन्होंने घोपणा की कि . "सरकार का प्रधान बनाकर देश ने मुझे एक महत्वपूर्ण दायित्व सौंपा है। अभी सबसे बड़ी ज़रूरत अपना संतुलन बनाए रखने की है।. सांप्रदायिक पागलपन हमको केवल बर्बाद ही करेगा. भारत के प्रधानमंत्री के रूप मे मै इसकी अनुमति नहीं दे सकता और न ही दूंगा।"

राजीव गांधी ने लोगों में आत्मविश्वास और आशा पैदा की। उन्होंने चुनावी जीत में अपनी पार्टी का नेतृत्व किया और पंडितजी के नेतृत्व में प्राप्त जीत से भी अच्छी विजय पाई। सचमुच वे एक ऐसे नेता के रूप में माने जाने लगे थे,

---

ससद के केन्द्रीय कक्ष मे भूतपूर्व प्रधानमत्री श्री राजीव गाधी के चित्र का अनावरण करते हुए, नई दिल्ली, 20 अगस्त, 1993

जो अपनी युवा गतिशीलता, आदर्शवाद तथा देश के मूल्यो के प्रति लगाव के कारण देश मे व्यापक एवं सकारात्मक परिवर्तन की अगुवाई करता है।

उन्होंने भारत को एक मजबूत, सगठित, शांतिपूर्ण और समृद्ध देश बनाने एवं राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के लिए एक अत्यंत चुनौतीपूर्ण प्रारूप तैयार किया, एक ऐसा देश बनाने के लिए जिसका विश्व भर में सम्मान हो और जो मानवीय सभ्यता की उन्नति मे अपना योगदान कर सके।

इस महान् काम के लिए उनके पास समय बहुत कम था। स्पष्टत· उन्हें अपनी जिदगी के लिए लगातार मिलनेवाली धमकियों की जानकारी थी। मैं उनके शब्दो को दोहरा रहा हूॅ। उन्होंने कहा था "लोग कहते हैं कि मैं बहुत जल्दबाजी करता हूॅ। मैं अधीर हूॅ। मैं क्या करूॅ? मेरे पास उसे करने के लिए बहुत थोड़ा समय है, जो मुझे करने ही हैं।" राजघाट पर और कोलम्बो मे उन पर हुए हमले उनके विरुद्ध काम कर रही घृणित शक्तियो की याद दिलाते हैं। हम सबको गभीर रूप से परेशान करने वाली इन घटनाओ ने हमारे देश और मानवता के प्रति सेवा के उनके सकल्प को और दुगुना करके उसे गहरा किया।

वे एक साथ कई क्षेत्रों में पूरी वीरता के साथ प्रतिबद्ध होकर सघर्परत रहे। वे चाहते थे कि भारत हमेशा से स्वीकृत राष्ट्रीय मूल्यों के साथ पूरी तरह तालमेल बैठाकर 21वीं सदी में प्रवेश करे। उन्होने कहा था · "भारत हमेशा से कुछ आधारभूत मूल्यो का पक्षधर रहा है। ये मूल्य सत्य, अहिसा और एक मानवता के हैं, जहा आपस मे कोई अतर नहीं होता।" वे चाहते थे कि भारत अपनी प्राचीन सस्कृति के नैतिक एवं चारित्रिक मूल्यो का आज के वैज्ञानिक युग में तकनीकी विकास के साथ समन्वय करके आगे बढ़े।

प्रधानमंत्री के रूप में उनके पाच वर्प के कार्यकाल मे देश आधुनिकीकरण और आर्थिक विकास की ओर निर्णायक रूप में आगे बढ़ा। इसके साथ ही हमारी सस्कृति और आध्यात्मिक विरासत के महान् आंतरिक मूल्यों के प्रति राष्ट्रव्यापी चेतना विकसित हुई। दायित्वपूर्ण प्रशासन के महत्व को पहचानते हुए उन्होने जिले और ग्राम स्तर की प्रशासनिक व्यवस्था में सुधार करने के लिए व्यक्तिगत रुचि ली। आम लोगों की रोजमर्रा की ज़रूरतों और चिताओं ने उनका ध्यान आकर्पित किया। उन्होने विज्ञान और तकनीकी प्रबधन के आधुनिक तरीकों को व्यापक रूप से लागू किया। देश मे पीने के पानी, खाने का तेल और सचार व्यवस्था जैसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में विकास को तेज करने के लिए उन्होने जिन टेक्नोलॉजी मिशनों

की स्थापना की थी, वह एक साहसिक कदम था। उन्होंने बिखरे हुए किन्तु एक-दूसरे से सम्बद्ध गरीबी, बीमारी अशिक्षा एवं असंतुलित विकास की समस्याओं के लिए विज्ञान और तकनीकी के प्रयासों को प्रोत्साहित किया। कृषि, उद्योग तथा अर्थव्यवस्था के अन्य क्षेत्रों को उनसे रचनात्मक प्रोत्साहन मिला। वे लगातार बिना थके भारत के लोगों की भावनात्मक एकता को मजबूत करने के लिए संघर्ष करते रहे तथा उन्होंने धर्मनिरपेक्षता की आवश्यकता पर ज़ोर दिया, जिसको उन्होंने हमारे देश के विकास और समृद्धि के लिए अत्यंत महत्वपूर्ण आधार बताया। मतदान की न्यूनतम आयु में कमी करना हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली की परिधि को व्यापक बनाने की दृष्टि से उनका एक महत्वपूर्ण योगदान है। हालांकि वे राष्ट्रव्यापी जन द्वारा समर्थित, संसद में अभूतपूर्व बहुमत वाली सरकार का नेतृत्त्व कर रहे थे, इसके बावजूद उन्होंने उल्लेखनीय बुद्धिमत्ता के साथ राजनैतिक गतिशीलता के लिए महत्वपूर्ण मापदंड स्थापित किए। इस उद्देश्य के लिए उन्होंने लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण तथा पंचायती राज हेतु भी संघर्ष किया।

अपने देश के मामलों की यह गतिशीलता उनके अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के क्षेत्र के दृष्टिकोण से मेल खाती है। श्री राजीव गांधी ने अपने पड़ोसी देशों द्वारा मांगे जाने पर उन्हें तत्परता से सहायता उपलब्ध कराई। श्रीलंका के अशांतिपूर्ण द्वीप में शांति स्थापित करने तथा परेशान तमिलों को ज़रूरी मदद देने के लिए उन्होंने सन् 1987 में भारत-श्रीलंका संधि पर हस्ताक्षर किये। मालदीव के मामले में उन्होंने अपने इस मित्र पड़ोसी देश में शांति भंग करने वाली कार्रवाई को रोकने के लिए आपातकालीन सहायता दी। सार्क संगठन के प्रति वे कटिबद्ध थे तथा इसके सदस्य देशों के बीच सहयोग बढ़ाने और तनाव को कम करने के लिए उन्होंने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। उन्होंने दिसम्बर, 1988 में बीजिंग की यात्रा की, जिसे चीन के लोगों तथा दुनिया ने भारत के इस महान् पड़ोसी देश के साथ हमारे संबंधों के इतिहास में एक महत्वपूर्ण मोड़ के रूप में माना था।

श्री राजीव गांधी ने निरस्त्रीकरण के लिए पांच द्वीपों के छः देशों के साथ पहल की थी, जो वस्तुतः विश्व के सामने उपस्थित सबसे महत्वपूर्ण समस्याओं में से एक समस्या थी। निरस्त्रीकरण के लिए यह एक व्यवहारिक तथा समयबद्ध योजना थी। पहले से ही मौजूद मजबूत नींव पर श्री राजीव गांधी ने नवंबर, 1986 में ऐतिहासिक 'दिल्ली घोषणा-पत्र' पर हस्ताक्षर किये, जो आज अहिंसात्मक विश्व के निर्माण की दिशा में एक महत्वपूर्ण कदम सिद्ध हुआ है। उन्होंने रंगभेद की

घृणित व्यवस्था से लड़ने के लिए अग्र पंक्ति के राज्यों को सहायता देने के उद्देश्य से 'अफ्रीका कोप' की स्थापना की, जिसके वे अध्यक्ष थे। यह श्री राजीव गांधी के निजी प्रयास का परिणाम था, जिससे नामीबिया को आज़ादी मिलने की प्रक्रिया तेज़ हुई। उत्तर-दक्षिण, दक्षिण-दक्षिण सहयोग तथा पर्यावरण के मामलो मे श्री राजीव गांधी ने भारत की आवाज बुलद की, जिसे सयुक्त राष्ट्र संघ, गुटनिरपेक्ष आंदोलन तथा राष्ट्र मण्डल देशों के मंचों पर पूरे आदर के साथ सुना गया। 'अतरिक्ष सुरक्षा कोष' शुरू करने में उन्होंने मुख्य भूमिका निभाई थी। सितबर 1989 में बेलग्रेड में आयोजित गुटनिरपेक्ष आदोलन के सम्मेलन तथा अक्तूबर, 1989 में क्वालालम्पुर मे आयोजित राष्ट्र मण्डल देशों के सम्मेलन में उनके दृष्टिकोण को व्यापक समर्थन मिला।

पॉच साल के छोटे-से कार्यकाल मे अतर्राष्ट्रीय मामलो में किये गये उनके अभूतपूर्व योगदान को देखते हुए श्री राजीव गांधी के अतिम सस्कार के समय 63 देशो के विश्व-नेताओं का आना उन्हें दी गई उपयुक्त श्रद्धाजलि है।

मित्रो, उनके व्यक्तित्व की चमक, उनके उत्साह तथा उनकी प्रसन्नता को भला कौन भुला सकता है, जिसने हर मिलने वाले को उत्साहित और आकर्पित किया। वे सबका अत्यत ध्यान रखने वाले और चितनशील व्यक्ति थे। हममें से प्रत्येक को उनके कहे शब्द या किये गये कार्य कुछ-न-कुछ याद हैं।

आज, जबकि हम उनकी स्मृति के सम्मान में यहां इकट्ठे हुए हैं, मुझे राजीव गाधी के वे शब्द याद आ रहे हैं, जो उन्होंने 1984 मे अपनी मॉ श्रीमती इदिरा गाधी के जन्म दिवस पर कहे थे। उन्होंने कहा था · ''जब भी कोई व्यक्ति किसी निश्चित ऊँचाई पर पहुँचता है, तो उसकी शारीरिक उपस्थिति महत्वपूर्ण नही होती। महत्वपूर्ण होते हैं-उसके विचार, उसकी नीतियॉ, जिनके लिए वह डटा रहा है।'' राजीव गांधी लोकतंत्र की वेदी पर कुर्बान होने वाले शहीद थे, जिन्होंने लोगों की इच्छाओ का प्रतिनिधित्व करने की प्रक्रिया मे योगदान किया। हमारे ससदीय लोकतत्र में श्री राजीव गाधी की निर्णायक भूमिका को अच्छी तरह से समझने वाले को इस सच्चाई को याद रखना चाहिए कि उनकी हत्या भारतीय राजनीति के ढॉचे पर किया गया एक प्रहार था। उन पर किया गया प्रहार लोकतंत्र, मानवतावाद तथा हमारे देश के विकास और समृद्धि के विरुद्ध विद्वेपी शक्तियों का एक पड्यंत्र था।

आज राजीव गांधी हमारे साथ नहीं है, लेकिन उनके प्रतिष्ठित पूर्वजों द्वारा

स्थापित परंपरा के आधार पर राष्ट्र के आदर्शो तथा लक्ष्यो के लिए की गई उनकी सेवाओं की याद हमारे साथ है। इन पूर्वजो मे से तीन के चित्र इस ऐतिहासिक कक्ष मे हमारे सामने हैं। राजीव गांधी ने मार्च, 1987 मे कहा था: ''हमे मानवतावाद के लिए एक नई दृष्टि की जरूरत है। एक ऐसी दृष्टि की, जो सत्य और अहिसा पर आधारित हो, एक ऐसी दृष्टि जो जीवन के असंख्य सुन्दर रूपों का पोपण करें। . इस दृष्टि के व्यक्त रूप एवं मानवता के आध्यात्मिक अनुभव को अपनी भूमिका निभानी चाहिए।''

सत्य और अहिंसा के पुजारी

संसद भवन के प्रागण में बापू की प्रतिमा तथा संसद के केन्द्रीय कक्ष मे लाल वहादुर शास्त्री जी के चित्र का अनावरण करके मुझे अपार प्रसन्नता हो रही है। मैं बापू की मूर्ति तथा शास्त्री जी का चित्र संसद में लगाने का स्वागत करता हूँ तथा इसके लिए सबंधित व्यक्तियों को अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ।

मैंने अभी 'संसद में लाल बहादुर शास्त्री' पुस्तक का लोकार्पण किया। मैं इस कार्य की प्रशंसा करता हूँ। साथ ही आज सम्मानित दोनों कलाकारों को अपनी बधाई देता हूँ।

आज वापू तथा उनके मार्ग पर चलने वाले शास्त्री जी की जन्म तिथि है। ये हमारे देश के ऐतिहासिक चिन्तन तथा उदात्त सस्कृति की विश्व को महान् देन हैं।

मुझे अच्छी तरह याद है कि जब मैं इलाहावाद में विद्यार्थी के रूप में एक हॉस्टल में रहता था, तब बापू आनन्द भवन से निकल कर मेरे हॉस्टल के सामने से गुजरते थे। मैं भी उनके पीछे-पीछे चलता था। लेकिन वे इतना तेज़ चलते थे कि उस उम्र में उनके पीछे चलने में मेरी सॉस फूल जाती थी। मैंने अनुभव किया है कि सचमुच उनके आदर्शो पर चलना कितना कठिन काम है। लेकिन इसके बावजूद इन आदर्शो पर चलकर ही सुनहरे भविष्य तक पहुंचा जा सकता है।

बापू ने अपने जीवन-कार्य और व्यवहार द्वारा हमारे देश के सामने सत्य, अहिंसा, निष्काम सेवा, त्याग, प्रेम और सहिष्णुता का अनुपम उदाहरण प्रस्तुत किया। उन्होंने सादा जीवन जिया। देश के आम लोगों से जुड़ कर तथा उनकी सेवा के प्रति स्वयं को समर्पित करके उन्होंने हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन को एक जन आन्दोलन वना दिया था। वे अपने सिद्धांतों के प्रति कटिबद्ध होकर सम्पूर्ण समर्पण की भावना से कर्म करने वाले गीता के निष्काम कर्मयोगी थे। वापू की मान्यता थी कि ऊँचे लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए साधन भी पवित्र होने चाहिए।

वापू की प्रतिमा तथा केन्द्रीय कक्ष मे लाल वहादुर शास्त्री के चित्र का अनावरण करते हुए, नई दिल्ली, 2 अक्टूबर, 1993

उनका हृदय अत्यन्त विशाल और उनका चिन्तन अत्यन्त उदार था। उनमें किसी भी प्रकार की सकीर्णता नहीं थी। वे सभी धर्मो का समान रूप से आदर करते थे। उनकी मान्यता थी कि ईश्वर एक ही है, उस तक पहुॅचने के रास्ते अलग-अलग हैं। 16 मार्च, 1947 के 'हरिजन' में उन्होने लिखा था

''जिस प्रकार एक पेड़ पर लाखों पत्तियॉ होती हैं, उसी प्रकार ईश्वर एक है और धर्म अनेक हैं।''

सच बात तो यह है कि बापू मानव धर्म के सच्चे अनुयायी थे और उनके लिए मानव सेवा ही सच्चा धर्म था। वे सेवा धर्म को सभी धर्मो का मूल मानते थे। धर्मराज युधिष्ठिर ने महाभारत मे कहा है ·

''न त्वह कामये राज्यं, न स्वर्ग न पुनर्भवम्।

कामये दु:ख तप्ताना प्राणिनाऽअर्त नाशनम्॥

बापू को यह श्लोक अत्यन्त प्रिय था। इस श्लोक का अर्थ यह है कि न तो मुझे राज्य की इच्छा है, न स्वर्ग की और न ही मोक्ष की। मैं तो केवल दु.खी प्राणियो के दु·ख दूर करना चाहता हूॅ।

बापू का दूसरा अत्यन्त प्रिय भजन था

वैष्णव जन तो तेने कहिए।

जे पीड पराई जाणे रे॥

इसमें कोई दो मत नहीं कि बापू ने भक्त नरसी के इस पद को अपने जीवन का मूल मंत्र बनाया और इसी के अनुकूल अन्त तक मानव सेवा में लगे रहे।

बापू ने यह बात स्पष्ट रूप से कही थी कि लोगो के कार्य की कसौटी यह होनी चाहिए कि उससे दूर-दराज के गांवो में रहने वाले सबसे गरीब आदमी को कितना फायदा पहुँच सकता है। अपनी शहादत के मात्र 12 दिन पहले 18 जनवरी, 1948 को उन्होने 'हरिजन' में लिखा था—

''भारत मे सच्ची लोकतत्र की इकाई गाव हैं। इसमे प्रत्येक गाव के गरीब लोगों की भागीदारी होनी चाहिए।''

बापू केवल उपदेश ही नहीं देते थे, बल्कि वे जो कुछ कहते थे उसे करते भी थे। उनकी कथनी और करनी मे कोई अन्तर नही होता था। इसीलिए उनकी

वात में वजन होता था और उसका प्रभाव भी पड़ता था। बापू ने देश के गांवो तथा तिरस्कृत, पद-दलित एवं शोषितों के लिए जो कुछ कहा, उसे किया भी।

मैं इसी संदर्भ में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा सन् 1931 के कराची अधिवेशन में प्रस्तुत किए गए मानव अधिकार सबंधी प्रस्ताव की याद दिलाना चाहूंगा। उस प्रस्ताव में स्वतंत्रता प्राप्त होने पर मानव की गरिमा की रक्षा, समानता, सामाजिक न्याय, सर्वधर्मसमादर, प्राथमिक शिक्षा, वच्चे, श्रमिक एवं किसानों के हित, महिला अधिकार तथा अल्पसंख्यकों की संस्कृति, भापा और लिपि की रक्षा की प्रतिज्ञा की गई थी। मौलिक अधिकार संवंधी यह प्रस्ताव प्रस्तुत करते हुए वापू ने 31 मार्च, 1931 को कहा था :

''इस प्रस्ताव को पारित करते समय हम अपने लोगों और विश्व के सामने यह स्पष्ट करते हैं कि हम उस समय क्या करेंगे, जब सत्ता में आ जाएंगे।''

यह राष्ट्र को हमारे नेताओ द्वारा दिया गया वचन है, जिसे हमारे लोगों को पूरा करना है। हालांकि इस बारे में वहुत कुछ किया गया है, लेकिन यह सच है कि अभी बहुत अधिक किया जाना है।

वापू लोकतत्र को एक राजनीतिक व्यवस्था से अधिक एक संस्कृति, सोचने का एक तरीका तथा काम करने की एक पद्धति मानते थे। उनके लिए लोकतंत्र का मतलब था— गॉव का विकास, ग़रीवों का उत्थान तथा सहयोग और सहिष्णुता की भावना। 'दी ऑर्ट ऑफ लिविंग' के पृष्ठ 162 पर उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा था :

''यदि हम जन-जन में लोकतंत्र की सच्ची आत्मा का संचार करना चाहते हैं, तो हम असहिष्णु होना बर्दाश्त नहीं कर सकते।. . . असहिष्णुता अपने आप में एक प्रकार की हिसा है, और यह सच्ची लोकतांत्रिक आत्मा के विकास में वाधक है।''

यही वात उन्होंने कराची अधिवेशन में कही थी :

''हमें अपने लोगों में सहिष्णुता की भावना भरनी है।''

बापू अपने सिद्धान्तों पर अटल थे। उन्होने 'माई फिलासफी ऑफ लाईफ' के पृष्ठ 52 पर लिखा है:

''कुछ आन्तरिक सिद्धान्त होते हैं, जिन पर समझौता नहीं होता तथा व्यक्ति

को उन सिद्धान्तों पर चलने के लिए अपना जीवन कुर्बान करने के लिए भी तैयार रहना चाहिए।"

बापू का जीवन हमें बताता है कि चाहे कितनी भी कठिन परिस्थितियाँ आई हों, वे अपने सिद्धान्त से कभी नहीं हटे। मुझे विश्वास है कि हमारे देश के जनप्रतिनिधि, जब लोगों की आकांक्षाओं को लेकर इस संसद भवन में प्रवेश करेंगे, तब बापू की यह प्रतिमा उन्हें ग़रीबों की सेवा, सहिष्णुता, साधनों की पवित्रता तथा सिद्धान्तों के प्रति अटलता का संदेश देगी।

यह एक सुखद संयोग है कि आज शास्त्री जी की भी जन्म-तिथि है। इस अवसर पर संसद के इस ऐतिहासिक कक्ष में, जहां हमारे देश के चोटी के नेताओं तथा मार्गदर्शकों के चित्र लगे हुए हैं, यह उचित है कि वहां शास्त्री जी का भी चित्र लगाया गया है।

बापू ने अपने समय में जिन करोड़ों लोगों को प्रभावित किया था, उनमें शास्त्री जी प्रमुख लोगों में थे। शास्त्री जी ने अपने ऊपर बापू के प्रभाव को स्वीकार करते हुए 4 नवम्बर, 1964 को विजयवाड़ा में 'गांधी स्तूप' की आधारशिला रखते हुए कहा था :

"मैं अपने युवा काल से ही गांधी जी के विचारों और उनके जीवन दर्शन से बहुत प्रभावित था।..... वे केवल एक इन्सान या व्यक्तित्व भर नहीं थे, बल्कि वे एक विचार बन गए थे।..... मुझे वे दिन याद हैं, जब हम गांधी जी को सुनते थे, और अपने अन्दर ऐसा महसूस करते थे, मानो कि हम पवित्र हो गए हों।"

इसमें कोई दो राय नहीं कि शास्त्री जी ने बापू के आदर्शों का पूरी तरह अनुसरण किया। जब वे केवल 17 वर्ष के थे, तभी उन्होंने बापू के आह्वान पर अपनी पढ़ाई छोड़ दी थी। गांधी जी के विचारों के अनुरूप ही शास्त्री जी ने ग्राम्य विकास का संकल्प लिया। उन्होंने किसानों की वेहतरी के लिए काम किया तथा अपने आपको पीड़ित, तिरस्कृत एवं दलितों की सेवा में लगाया।

मुझे शास्त्री जी को निकट से जानने का सौभाग्य मिला था। बापू की तरह ही उनकी सादगी, सहजता, सरलता तथा उत्कट राष्ट्र प्रेम और देश के प्रति आत्म-समर्पण की भावना मेरे लिए अविस्मरणीय हैं। वे हमारे देश की आम जनता के प्रतीक थे तथा हमारे जीवन दर्शन के उच्च मूल्यों के प्रतीक थे।

जहां तक मैंने शास्त्री जी को समझा है, मैं यह बात पूरी दृढ़ता के साथ कह सकता हूँ कि "सादा जीवन उच्च विचार" तथा देश के प्रति सम्पूर्ण सर्मपण की भावना उनके जीवन का मूल मंत्र था। उनमें चट्टान की तरह दृढ़ता थी तथा पर्वत की तरह अपने सिद्धान्तो के प्रति वे अटल रहते थे।

उनमें एक विलक्षण राजनैतिक सूझ-बूझ थी। कठिन से कठिन परिस्थितियों में भी स्वय को संतुलित रखना तथा सामने वालों में भी सतुलन का भाव पैदा कर देना उनके व्यक्तित्व की अद्‌भुत विशेपता थी।

जो अपने को जन सेवा में लुटाते हैं, वे ही इतिहास के निर्मम प्रवाह में टिके रहते हैं। बापू एवं शास्त्री जी स्वय को लुटाने वाले लोगों में से थे। वे ऐसे लोगों में थे, जो स्वयं को खोने में ही स्वय को पाने का आनन्द पाते हैं। इसीलिए वे अत्यत विनम्र थे। अहकार तो उन्हें छू तक नहीं पाया था। बचपन में गुरुनानक देव के एक दोहे ने शास्त्री जी को प्रभावित किया था, और वे जीवन भर उसी के अनुकूल बने रहे। वह दोहा था .

नानक नन्हे होई रहें, जैसी नन्ही दूब।
और रूख सब सूखिहैं, दूब रहेगी दूब॥

वे गीता के कर्मयोगी की तरह थे, जिसकी केवल कर्म के प्रति अडिग आस्था रहती है, और जो फल की तनिक भी चिंता नहीं करता। वे उत्तर प्रदेश सरकार में मत्री रहे, केन्द्र मे विभिन्न पदों पर रहे। वहां अपनी दक्षता की छाप भी छोड़ी, किन्तु पदों के प्रति हमेशा अनासक्त रहे। कामराज योजना मे उन्होंने अपने केन्द्रीय मत्री के पद से तुरंत त्यागपत्र दे दिया था। सन् 1956 में अलियालूर में हुई रेल दुर्घटना की नैतिक जिम्मेदारी लेते हुए उनके द्वारा दिए गए त्यागपत्र ने देश को सुखद आश्चर्य से भर दिया था। इसे मै उनके नैतिक साहस तथा अनासक्त भाव का प्रमाण मानता हूँ। उनके इस कार्य से हमारे जनप्रतिनिधियों का कद बढ़ा था, और उनमे एक गम्भीर दायित्व बोध भी पैदा हुआ।

यह बात उल्लेखनीय है कि शास्त्री जी एक सामान्य से परिवार में पैदा होकर अपनी मेहनत, ईमानदारी, त्याग, सेवा की भावना, दृढ़ निश्चय तथा आत्म विश्वास के बल पर प्रधानमत्री पद तक पहुँचे। इस प्रकार मुझे वे हमारे देश की भविष्य की पीढ़ी की आस्था के सर्वोत्तम आलम्बन मालूम पड़ते है। यह आस्था है— हमारे देश की लोकतात्रिक व्यवस्था के प्रति तथा सदियों से चले आ रहे त्याग और सेवा की भावना के प्रति।

बापू के आदर्शो का अनुसरण करने के कारण शास्त्री जी में त्याग और सेवा की भावना कितनी स्वाभाविक और गहरे रूप मे पैठी हुई थी, इसके लिए मैं आप लोगों के सामने 15 अगस्त, 1964 को स्वतत्रता दिवस के अवसर पर उनके द्वारा कहा गया एक वाक्य रखना चाहूँगा। उन्होंने बड़े सहज रूप में कहा था:

"मैं चाहता हूं कि हरेक शहर का रहने वाला, हरेक गांव का रहने वाला अपने पड़ोसी को देखे कि कहां मुसीबत है, कौन तकलीफ उठा रहा है और अगर हमें अपने खाने में कुछ कमी करके भी दूसरे को देना पड़े, तो उसके लिए तैयार रहना जरुरी है।"

वे आज़ादी की लड़ाई के निर्भीक सिपाही थे। उन्होंने सन् 1930 के 'नमक कानून तोड़ो आन्दोलन' तथा सन् 1942 के 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में बढ़-चढ़ कर भाग लिया और जेल गए। इन 12 वर्षो के दौरान वे सात बार जेल गए थे।

अपनी कर्मठता के कारण वे देश की आज़ादी के बाद उत्तर प्रदेश तथा केन्द्र में विभिन्न महत्वपूर्ण पदों पर रहे। केन्द्र में उन्होंने रेल और परिवहन, संचार, वाणिज्य, उद्योग तथा गृह मत्री जैसे महत्वपूर्ण पद सम्भाले और उन पर अपनी प्रशासकीय दक्षता की छाप छोड़ी। इस रूप में शास्त्री जी की दो बाते मुझे महत्वपूर्ण लगीं। पहली तो यह कि उन्होंने अपनी नीतियों में देश के आम लोगों के हित को प्राथमिकता दी। दूसरी यह कि वे अपने व्यक्तिगत स्पर्श द्वारा अपने मंत्रालय में एक गतिशीलता पैदा कर देते थे। अपने मंत्रालय के कार्यो में उनका दृष्टिकोण अत्यन्त व्यवहारिक तथा औपचारिकताओं से दूर होता था। प्रधान मंत्री पं जवाहर लाल नेहरू ने शास्त्री जी के व्यक्तित्व के बारे में सन् 1956 में कहा था :

"मैं विश्वास के साथ कह सकता हूँ कि ईमानदार, दृढ़ संकल्पी, शुद्ध आचारव्रती, महान परिश्रमी, ऊँचे आदर्शो में पूर्ण आस्थावान और निरन्तर सजग व्यक्ति का नाम है— लाल बहादुर शास्त्री।"

आज, जबकि लोकतंत्र के इस मन्दिर में हमने उनका चित्र स्थापित किया है, मुझे यह ज़रूर लगता है कि लोकतंत्र के प्रति उनके विचारो का उल्लेख करूँ। 11 जून, 1964 को राष्ट्र के नाम प्रसारित अपने संदेश में उन्होंने कहा था :

"लोकतंत्र जिस तरह हमारे देश में पनपा और बढ़ा है, वह निश्चय ही एक बड़ी बात है। ... लोकतंत्र हमारे देश की पुरानी परंपरा रही है। भारत सदा व्यक्ति के प्रति आदर और सम्मान की भावना से प्रेरित हुआ है। विभिन्न

विचारधाराओं के रहते हुए भी सहनशीलता भारत का प्रधान गुण रहा है। मेरा विश्वास है कि यदि लोकतंत्र को सफल बनाना है, तो हमें ऐसे रास्ते निकालने होंगे, जिनसे ज्यादा से ज्यादा मेल-जोल और बातचीत कर समझौते और शान्ति के साधन खोजे जा सकें।''

मै समझता हूँ कि शास्त्री जी ने लोकतंत्र की जो यह बात कही थी, वह केवल राजनीति के क्षेत्र के लिए ही जरूरी और महत्त्वपूर्ण नहीं है, बल्कि इसका संबध देश के नागरिकों के आम जीवन से भी है। सही मायने में हमारे नेतृत्वकर्ताओ को लोकतंत्र की इस आत्मा को देश के जन-जन की आत्मा बनाना है। मुझे लगता है कि इससे देश के विकास के रास्ते में आने वाली रुकावटें समाप्त हो सकेंगी और हमारा देश उस मंजिल तक पहुँच सकेगा, जिसका सपना बापू, पं. जवाहर लाल नेहरू, लाल बहादुर शास्त्री तथा अन्य स्वतंत्रता सेनानियों ने देखा था।

इसी के अनुकूल बापू ने हमारे राष्ट्र की जनशक्ति को जागृत किया था। शास्त्री जी की भी हमारे देश की संगठित जन शक्ति पर पूरी आस्था थी। उन्होंने ''जय जवान जय किसान'' के अपने जोशीले उद्‌बोधन द्वारा राष्ट्र की इस शक्ति को जागृत किया था। राष्ट्रीय संकटों से निपटने के लिए उन्होंने हमेशा जन शक्ति का सहारा लिया। चाहे अनाज की कमी का संकट हो, अथवा विदेशी आक्रमण के क्षण, उनकी आवाज़ पर एकजुट होकर देश ने उनका पूरा-पूरा साथ दिया।

हमे याद रखना चाहिए कि सन् 1965 में पाकिस्तान युद्ध के बाद जब वे एक विजयी प्रधान मंत्री के रूप में अन्तर्राष्ट्रीय महत्व की वातचीत के लिए ताशकंद जा रहे थे, तब वे अपनी माता की चरणरज छूकर गए थे। इसे मैं इस रूप मे लेता हूँ कि वे वहां हमारी संस्कृति तथा हमारे देश का वसुधैव कुटुम्बकम् का सदेश लेकर गए थे। इस महान् कार्य में उन्होने अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया। मै यह कहना चाहूँगा कि वे शान्ति के लिए ही मरे। अपने देश के परम्परागत जीवन दर्शन तथा बापू, प. नेहरू एवं शास्त्री जी द्वारा दिखाए गए रास्ते का अनुसरण करते हुए हम हमेशा ही अपने पड़ोसी देशों तथा दुनिया के अन्य देशों के साथ मित्रता और सहयोग के संबध कायम करना चाहते हैं और उन्हें बढ़ाना चाहते है। यह हमारी नीति है और इसमें ही सभी राष्ट्रों और वहा के लोगों का हित है। विवादों से किसी को भी लाभ नहीं मिलता बल्कि अन्तत. उससे नुकसान ही होता है। यह बात प्रत्येक व्यक्ति एवं राष्ट्र को समझनी होगी। बापू एव शास्त्री जी की शहादत को इसी सदेश के रूप में लिया जाना चाहिए।

शान्ति और सहयोग की यह भावना हमारी सच्ची राष्ट्रीय सास्कृतिक विरासत है, और इसे ही हमारे लोगो को और मजबूत बनाकर राष्ट्र का पुनर्निर्माण करना है। मैं समझता हूॅ कि हमारे नेताओ को याद रखते हुए राष्ट्र के विकास मे अपना योगदान करना ही बापू एवं शास्त्री जी के प्रति सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

बापू का सपना

अभी मैंने यहां का संग्रहालय देखा, तो मेरे मन में एक बात आई कि क्यों न इस बात पर कुछ कहा जाए कि बापू आज के परिप्रेक्ष्य में किस तरह सामयिक (रिलेवेंट) हैं, और किस तरह आज भी बापू के मार्ग पर चलकर हम और हमारा देश आगे बढ़ सकता है, मानव आगे बढ़ सकता है।

अभी आवश्यकताओं को बढ़ाने की चर्चा की गई। इसी को कहते हैं उपभोक्तावाद (कज्यूमरिज्म)। कंज्यूमरिज्म क्या कर देता है, उसका सबूत हमें रूस और इन देशों में देखने को मिला। आवश्यकताओं का कोई अंत नहीं होता। उससे और आगे जाने की बात मन में उठती है, फिर उससे और आगे जाने की बात। इसके नतीजे में समाज में गड़बड़ी होती है, तथा शासन-व्यवस्था बिगड़ती है। बापू ने हमें सिखाया था कि किस प्रकार अपनी आवश्यकताओं को सीमित रखना चाहिए।

आज दुनिया 'बॉयोगैस' की बात कर रही है, 'रिनुएवल रिसोर्सेस ऑफ इनर्जी' की बात कर रही है। बापू ने यही बात उस समय कही थी। मैं आपको बापू की एक बात बताऊं। बापू के पास जो चिट्ठियां आती थीं, वे उनके पीछे और किनारे की खाली जगह में लिखा करते थे। कागज की बचत का सीधा संबंध वृक्षों को बचाने से है, पर्यावरण को बचाने से है। बापू ने इसके द्वारा यह बताया कि किसी भी चीज को जाया मत करो, नष्ट मत करो, बल्कि एक ही वस्तु का बार-बार इस्तेमाल करो।

बापू जब हुए थे, उस समय और भी बड़े-बड़े महान लोग थे, लेकिन क्या बात थी कि करोड़ों लोग बापू के पीछे चल पड़े। यह इसलिए क्योंकि बापू जो कहते थे, वही करते थे, जो स्वय करते, वही कहते थे। उनका हृदय स्वच्छ था। उनमें कहीं आडम्बर नहीं था। हम इसी कारण बापू के पीछे चल पड़े। हम सबको चिंतन करना है कि हम आज आज़ादी के बाद कितना आगे बढ़ सके हैं, बापू के रास्ते पर चल सके हैं। मैं तो यह मानता हूं कि हमारे पास इसके अलावा कोई रास्ता नहीं है।

साबरमती आश्रम की प्रार्थना सभा मे, अहमदाबाद, 17 अक्तूबर, 1993

अभी यहा प्रार्थना हुई। इसमें कितना बड़ा सदेश हम सबके लिए है। अभी इस प्रार्थना मे आया–"ईश्वर अल्लाह तेरे नाम"। हम जेल में प्रार्थना करते थे– "मंदिर–मस्जिद तेरे धाम।" क्या हमारे लोगों में यह बात बैठ पाई? अभी सभी धर्मों की प्रार्थना की गई। यही बात हमारे यहां बहुत पहले से कही गई है–"एकम् सत् विप्रा बहुधा वदन्ति'। (ईश्वर एक है, सत्य एक है)। लेकिन आज स्थिति यह है कि हम उसके लिए आपस में लड़ रहे हैं। हमें इस बात को सोचना पडेगा। बापू एक बात कहते थे, "दूसरे पर मत डालो, स्वयं जितना बने, उतना करो।"' इसलिए हमें दूसरे के बारे में न सोचकर, खुद इस बारे मे आगे आकर कुछ करना होगा।

बापू ने यहां से 'दांडी मार्च' की शुरूआत की थी। इस दांडी मार्च ने केवल इसी देश को प्रभावित नहीं किया था, बल्कि बाहर के लोगो को भी किया था। मारीशस ने तो इस दिन को अपना 'स्वाधीनता दिवस' घोषित किया।

मैं उस समय मारीशस गया था। मारीशस को आज़ाद कराने वालो में से एक शिव सागर राम गुलाम ने बताया कि उन्होंने 'दाडी मार्च' के दिन को मारीशस की आज़ादी के दिन के रूप मे इसलिए चुना, क्योंकि यह हमे याद दिलाएगा कि गरीबों के लिए हमें काम करना है। बापू ने नमक चुना था, आम आदमी की आवश्यकता को पूरा करने के लिए। बापू मारीशस गए थे, तब उन्होने वहा के लोगों से कहा था, "जमीन से जुड़े रहो और यहां के जन–जीवन से भी जुड़े रहो।"

बापू की हर बात इतनी गहरी होती थी कि यदि उसे ही समझ लें तो बड़े–बड़े काम हो जाएं। मैं आपको बताऊं कि शुरू में खादी चली थी तो वह बहुत मोटी होती थी। ऐसी नहीं होती थी, जैसी आज हम पहने हुए हैं। एक बार की बात है, मोतीलाल नेहरू कांग्रेस में नए–नए आए थे। उन्हें खादी पहननी पड़ती थी। एक बार उनको जुकाम हो गया। वे खादी के रूमाल से बार–बार नाक साफ कर रहे थे। बापू ने उनसे पूछा कि क्या बात है? उन्होंने कहा, "मै यह देख रहा हूं कि खादी जीतती है या मेरी नाक।" मतलब यह कि इस मोटी खादी से मेरी नाक रहेगी या नही। बापू ने कहा : "दोनों अलग कहां हैं?" इतने में ही कितनी बडी बात बापू ने कह दी।

आज के लोग पूछते हैं कि खादी अभी तक क्यो चलती है? बीच मे कुछ प्रयास भी हुए। जब मैं कांग्रेस का अध्यक्ष था, तो कुछ लोग यह बात कहते

थे कि इसमें से दो बातें निकाल दी जाए तो नए लोग आएंगे-एक खादी और दूसरा मद्यनिपेध। इंदिरा जी ने कहा अध्यक्ष से पूछ लो, क्योकि वे मेरे मन की बात जानती थी। कुछ लोग मेरे पास आए। मैंने उनसे कहा- जो चाहे करो, तब इस पार्टी का नाम 'काग्रेस' न रखना। तब बापू का नाम लेने का हक हमें नहीं रहेगा।

एक बार बापू से किसी ने कहा-"बापू, खादी मैली जल्दी हो जाती है।" बापू का जवाब था · "खादी को मैल पसंद नहीं।" मैं इसको दूसरी तरह से कहता रहा हू, "खादी में जो भी बुराई होती है, दूर से दिखती है। अगर इसमें एक भी धब्बा होगा, तो वह दिखेगा।" आज हम लोग जो खादी पहनते हैं, उन पर कितनी बड़ी जिम्मेदारी है, यह बात भूल जाते हैं । यह बापू के साथ अन्याय है। अपने साथ भी अन्याय है। हमें इन बातों को याद रखना है। हमारे बच्चे और बच्चियों को याद रखना है।

हम पुरानी पीढ़ी के लोगों को देखना है कि हम अपने पीछे क्या छोड़कर जा रहे हैं। बापू तो हमारे बीच से गए। वे हमें आज़ादी दे गए और अपनी शहादत से हमे उपदेश भी दे गए। हमने देखा कि किस प्रकार से साम्प्रदायिकता में अंधा व्यक्ति बापू जैसे व्यक्ति की भी हत्या कर सकता है। हमारे लिए कितना बड़ा सबक है। हमको इस छोटे चितन से उबरना है। मरते समय भी उन्होने 'हे राम।' कहा था, उनके मन में किसी तरह का कोई द्वेष नहीं था। हम वैसे के वैसे तो नहीं बन सकते, लेकिन प्रयास तो कर ही सकते हैं।

आज सबको एक-एक करके यह समझ में आ रहा है कि बापू की बातें कितनी गम्भीर और गहरी थीं, और आज भी बापू मानवमात्र के लिए कितने अधिक ज़रूरी हैं। बापू के रास्ते पर चलना थोड़ा कठिन ज़रूर है, लेकिन हम प्रयास तो कर ही सकते हैं। क्योंकि इसके अलावा रास्ता भी नहीं है।

पुराने जमाने मे कहते थे कि ऐसे स्थानों पर जाने का फल तब मिलता है, जब पिछले जन्मों का सत्कर्म उदय होता है। इस स्थान पर आने को मैं किसी पुण्य का ही फल मानता हूं। यहा आकर मन की शुद्धि होती है। अभी हमने प्रार्थना की। बापू कहा करते थे कि प्रार्थना, विशेप रूप से सामूहिक प्रार्थना मानस-शुद्धि के लिए उतनी ही आवश्यक है, जितना कि शरीर की शुद्धि के लिए स्नान। इसलिए मैं समझता हूं कि हम यहां आए हैं, तो अपने मन को शुद्ध करें, बापू द्वारा दिखाए रास्ते के अनुरूप चलने का प्रयत्न करें। मेरी ईश्वर से प्रार्थना है कि

वह हमे शक्ति दे कि हम उसके योग्य साबित हो सके। जिस देश में, जिस भूमि पर बापू ने जन्म लिया, जहा उन्होंने काम किया और जिनकी वजह से आज हम सिर उठाकर कहते हैं कि हम बापू के देश से आए हैं, तो यह हमारा धर्म बनता है कि हम उनके अनुरूप अपने को ढालें। ईश्वर हम सबको सन्मति दे, ताकि हम सही रास्ते पर चल सकें।

मुझे बताया गया कि यहां बापू के पत्रों को तथा दूसरी बातों को इकट्ठा करने का काम हो रहा है। यह काम आने वाली पीढ़ी के लिए जरूरी है। मैं इसके लिए इस आश्रम को बधाई देता हूं।

विश्व और शांति

आज श्रीमती इंदिरा गांधी के 76वें जन्म दिवस पर उनकी स्मृति में शांति, निरस्त्रीकरण एवं विकास के लिए स्थापित किया गया इंदिरा गांधी पुरस्कार प्रसिद्ध अर्थशास्त्री, विचारक एवं निर्माता डॉ. सवुरो ओकिता को देते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है।

हमें इस वात का दु:ख है कि हम यह पुरस्कार उन्हें मरणोपरांत दे रहे हैं। इस वर्ष फरवरी में जव डॉ. ओकिता का देहांत हुआ, तव हम भारत के लोगों ने अपना एक अच्छा मित्र खोया था, जिनका हम युद्धोत्तर जापान के पुनर्निर्माण के शिल्पकार तथा भारत और जापान की मित्रता और सहयोग मे योगदान देने वाले विद्वान के रूप में आदर करते हैं।

डॉ सवुरो ओकिता को असाधारण प्रेरक क्षमता के साथ ही साथ उल्लेखनीय अन्तर्दृष्टि एवं दूरदृष्टि वरदान के रूप में मिले थे। अपने सेवाकाल के शुरूआत में ही द्वितीय विश्व युद्ध के दौरान डॉ. ओकिता ने युद्ध की क्षमता वढ़ाने वाले औद्योगिक उत्पादनों के स्थान पर अनाज, सोयावीन और नमक जैसी जीवनोपयोगी वस्तुओं के उत्पादन पर ज़ोर दिया था। उनके इस दृष्टिकोण को स्वीकार करने और लागू करने से जापान सैन्य-पराजय की कठिन घड़ियों में अकाल के सदमे से उवर सका। युद्ध के तुरन्त वाद डॉ ओकिता ने मुद्रास्फीति एवं निराशा से नष्ट हुई जापानी अर्थव्यवस्था को उवारने के लिए अथक परिश्रम किया। इससे डेढ़ दशक के अन्दर ही अर्थव्यवस्था को युद्ध-पूर्व के स्तर तक फिर से ले आया गया। 'जापान के प्लानिंग व्यूरो ऑफ दी इकोनोमिक प्लानिंग एजेंसी' के महानिदेशक के रूप में डॉ. ओकिता 'नेशनल इनकम डवलिंग प्लान' तैयार करने वाले प्रमुख व्यक्ति थे। इस योजना ने जापान की अर्थव्यवस्था को फिर से रूपान्तरित किया तथा जापान को आर्थिक रूप से महान शक्ति वनाने की दिशा में सक्रिय किया। व्यावहारिक दृष्टिकोण, लागत के प्रति सतर्कता तथा निरंतर तकनीकी आविष्कार जापान के असाधारण विकास के मुख्य कारण हैं। इस संदर्भ में डॉ.

डॉ सवुरो ओकिता को (मरणोपरात) शाति, निरस्त्रीकरण एवं विकास हेतु इंदिरा गाधी पुरस्कार देते हुए, नई दिल्ली, 19 नवम्वर, 1993

ओकिता का यथार्थवाद एवं व्यावहारिक समझ उनकी इस चेतावनी में अच्छी तरह व्यक्त हुई है, ''जापान के सामने आने वाले समय में मुख्य समस्या यह आएगी कि विश्व के अन्य देशों के साथ किस प्रकार सद्भाव के साथ रहा जाए।''

वे उन कुछ लोगों में से थे, जिन लोगों ने यह समझा था कि शांति और समृद्धि उसी प्रकार अविभाज्य हैं, जिस प्रकार आधुनिक विश्व मे विध्वस अविभाज्य है। उन्होंने पृथ्वी के अन्य विकासशील क्षेत्रों की स्थिरता और प्रगति को सुरक्षा तथा उन्नत जीवन के लिए आवश्यक माना था।

यह स्वाभाविक था कि डॉ सबुरो ओकिता भारत के मित्र होते, और उन्होंने पारस्परिक लाभ के लिए भारत और जापान के संबंधों को बढ़ाने हेतु इतना कुछ किया। वे अकसर भारत आते रहते थे तथा 'भारत-जापान आर्थिक विकास संयुक्त समिति' के कई वर्षो तक अध्यक्ष रहे। सन 1977 में उन्होने मौलाना आज़ाद स्मारक व्याख्यान दिया था, जिसमें उन्होंने विकासशील देशों की अर्थव्यवस्था तथा जापान के आर्थिक विकास के अनुभवों को आमने-सामने रखकर चर्चा की थी। अपने उस उल्लेखनीय भाषण में डॉ ओकिता ने राष्ट्रीय आत्मनिर्भरता, तकनीकी को आत्मसात एवं स्वीकार करने तथा उद्योग एवं कृषि के क्षेत्र में शिक्षा और विकास के जीवंत संबंध एवं सक्रियता के महत्व पर ज़ोर दिया था। उनका वह दृष्टिकोण 16 वर्ष बाद आज भी उतना ही ताज़ा, प्रासंगिक और उपयोगी लग रहा है जितना कि वह उस समय था। उनकी स्पष्टवादिता, सद्भाव, मित्रता एवं भारतीय संस्कृति के प्रति सवेदनशीलता ने सभी को अभिभूत किया।'उन्होंने भारत और जापान के दीर्घ संबंधों को समृद्ध बनाया।

जैसा कि हम सभी जानते हैं, हमारे दोनो देशों की मित्रता की परम्परा सदियों पुरानी है। आठवीं शताब्दी अर्थात् सन् 736 में सम्राट शोमू ने बौद्ध भिक्षु बोधिसेन भारद्वाज को नारा में बौद्ध दर्शन सिखाने के लिए बुलाया था। उन्हें जापान की पचास ध्वनियों की वर्णमाला को व्यवस्थित करने के लिए भी सम्मानित किया गया था। इससे वहां की लेखन प्रणाली लोगों के लिए सरल बनी थी। यदि बुद्ध का करुणा का संदेश लाखों वर्षो से भारत और जापान के बीच सेतु का निर्माण करता रहा है, तो आज शांति और विकास की अनिवार्यता हमें एक-दूसरे के निकट लाती है। जापान ही एकमात्र ऐसा देश है, जिसने परमाणु बम के भयावह दुष्प्रभाव को झेला है। यह एक ऐसी घटना थी, जिसने प्रत्येक एशियाई देश की स्मृति में एक जख्म छोड़ दिया है। अपनी आज़ादी के बाद से भारत लगातार शांति एवं

निरस्त्रीकरण के प्रति मानव जाति की चिता को व्यक्त करता रहा है, तथा पारस्परिक समझदारी एव सहयोग पर आधारित विकास के लिए प्रयास करता रहा है। भारत और जापान की मित्रता के ऐतिहासिक संबंध आज काफी बढ़ गए हैं। श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा था "भारत और जापान को असमानता की समाप्ति के लिए मिलकर काम करना चाहिए तथा मानव जाति के अस्तित्व की रक्षा एवं विकास को सुनिश्चित करने के लिए सहयोग करना चाहिए।"

आज श्रीमती इंदिरा गांधी को हमारे बीच से गए 9 वर्ष से भी अधिक हो गए हैं, और शीत युद्ध की समाप्ति के बाद से विश्व एक नए चरण में प्रवेश कर रहा है। फिर भी श्रीमती इंदिरा गांधी की आशा और आकांक्षा, उनकी दृष्टि तथा चेतावनी से भरे शव्द आज पहले से भी कहीं अधिक प्रासंगिक हैं। उन्होंने कहा था "शाति की सुरक्षा किए जाने की ज़रूरत होती है। सदाचार की तरह ही शाति भी तब ही हमारी रक्षा करती है, जब हम उसकी रक्षा करते है। केवल सह-अस्तित्व की भावना में ही अस्तित्व की रक्षा है। विकास, स्वाधीनता निरस्त्रीकरण और शाति एक-दूसरे से घनिष्ठ रूप से जुड़े हुए हैं।"

विश्व में परिवर्तन के वर्तमान चरण तथा ससार भर में विभिन्न राष्ट्रों एव क्षेत्रों के पारस्परिक नए सतुलन से स्थापित हो रही नई व्यवस्था को देखते हुए यह आवश्यक है कि शांति की शक्तियों को संगठित एवं मज़बूत करने के प्रयासों को दुगना किया जाए, निरस्त्रीकरण की प्रक्रिया तेज़ की जाए तथा विकास कार्यो को क्रियाशील किया जाए। इसके साथ ही निरंतर सतर्क रहने की भी ज़रूरत है। प्रभुत्व जमाने की प्रवृत्ति का प्रतिकार करना होगा। श्रीमती इदिरा गाधी ने हमें प्रभुत्व जमाने के नए तरीको एवं उपनिवेशवाद के नए रूपों के प्रति पहले ही सतर्क किया था जैसे कि एकाधिकारिक धन की शक्ति और उसके द्वारा दबाव डालना, तकनीकी ज्ञान से वचित करना, प्रचार तत्र द्वारा भ्रमित कर लोगों के मस्तिष्क और व्यवहार को अनजाने मे परिवर्तन करना।" उन्होंने कहा था- "इसके प्रतिरोध के लिए हिम्मत एवं महाद्वीप एवं महाद्वीपों के बीच सच्चे एवं सम्पूर्ण अर्थ में लोकतांत्रिक दृष्टिकोण की आवश्यकता है। यह भारत के प्रयासों का हमेशा से ही मुख्य ध्येय रहा है और रहेगा। इस विषय में हमें और किसी के द्वारा प्रवचन की कतई जरूरत नहीं है।

जैन चिन्तन की देन

श्रवणबेलगोला पूरे विश्व में प्रसिद्ध है। गोमतेश्वर की यह विशाल प्रतिमा मूर्तिकला, प्रतीकार्थ और अभियांत्रिकी का एक आश्चर्य है। यह प्रतिमा जैन परम्परा की प्राचीनतम, और साथ ही जैन सिद्धान्त और ज्ञान की स्थायी प्रासंगिकता का भी प्रतिनिधित्व करती है। गोमतेश्वर ने पिछले एक हजार साल से पीढ़ी-दर-पीढ़ी को लगातार प्रेरित किया है। यह जैन दर्शन, धर्म और सस्कृति के बारे में लोगों की जागरूकता बढ़ाती रही है, और बढ़ाती रहेगी।

आज भगवान बाहुबली के सान्निध्य में होने के कारण यह स्वाभाविक है कि "गोमतेश-थुडी" का स्मरण हो। शौरसेनी प्राकृत में इन श्लोको की रचना करीब एक हजार वर्ष पूर्व महान जैन सन्त, दार्शनिक और कवि आचार्य नेमीचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती ने की थी। आचार्य नेमीचन्द्र चामुण्डराय के गुरु थे। चामुण्डराय को बाहुबली की इस विशाल प्रतिमा का निर्माण करवाने वाले के रूप में जाना जाता है। इस बात का उल्लेख मिलता है कि "गोमतेश-थुडी" की रचना भव्य महा-प्रतिस्थापना महोत्सव के पश्चात् की गई थी, और इसका स्तवन भी हुआ था। इसके बाद ही आज से 1012 वर्ष पूर्व सन् 981 में प्रथम महामस्तकाभिषेक हुआ था।

हम सब यहां गोमतेश्वर के महा-मस्तकाभिषेक समारोह में सम्मिलित होने के लिए इकट्ठे हुए हैं। मैं समझता हूँ कि इससे अधिक और क्या उपयुक्त होगा कि इस शुभारम्भ समारोह के अवसर पर मैं उसी प्राचीन और उदात्त प्रेरणा के आठ श्लोकों का स्तवन करूँ, जिनमें गोमतेश्वर की स्तुति की गई है :

[1]

विसट्ट कंदोट्ट-दलाणुयारं
सलोयणं चंद-समाण-तुडं।
घोणाजियं चंपय-पुप्फसोहं
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥

भगवान गोमतेश्वर बाहुबली के महामस्तकाभिषेक समारोह का उद्घाटन करते हुए, श्रवणबेलगोला (कर्नाटक), 2 दिसम्बर, 1993

[2]

अच्छाय-सच्छ जलकत-गंडं
आबाहु-दोलत-सुकण्ण-पास।
गइद-सुंडुज्जल-बाहुदंडं
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥

[3]

सुकंठ-साहा जिय-दिव्व-सखं
हिमालयुद्दाम-विसाल-कध।
सुपेक्खणिज्जायल-सुट्ठुमज्झं
त गोम्मटेस पणमामि णिच्च॥

[4]

विज्ञायलग्गे पविभासमाणं
सिहामणिं सव्व-सुचेदियाण।
तिलोय-संतोसय-पुण्णचंदं
तं गोम्मटेस पणमामि णिच्चं॥

[5]

लया-समक्कत-महासरीर
भव्वावली-लद्ध-सुकप्परूक्खं।
देविदविदच्चिय-पायपोम्म
तं गोम्मटेस पणमामि णिच्चं॥

[6]

दियबरो जो ण य भीइजुत्तो
ण चाबरे सत्तमणो विसुद्धो।
सप्पादि-जंतुप्फुसिदो ण कंपो
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्च॥

[7]

आसं ण जो पेक्खदि सच्छदिट्ठि
सोक्खे ण वंछा हयदोसमूलं।
विराय-भावं भरहे विसल्ल
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥

[8]

उपाधि-मुत्तं धण-धाम-वज्जियं
सुसम्म-जुत्तं मय-मोह-हारयं।
वस्सेय-पज्जंतमुववासजुत्तं
तं गोम्मटेसं पणमामि णिच्चं॥

सीधे और शाब्दिक अर्थ में ये पद बाहुबली की प्रतिमा की महामहिमा और सौन्दर्य के प्रति प्रशंसात्मक भाव जागृत करते हैं। लेकिन सूक्ष्म अर्थ आध्यात्मिक उन्नति की चरम सीमा पर पवित्रता और परिपूर्णता प्राप्त करने से है। जैन दर्शन और ज्ञान के अनुसार यह स्थिति तब आती है, जब मनुष्य भौतिक जगत के सभी प्रकार के संबंधों, प्रभावों और दबावों से मुक्त हो जाता है, और परम मोक्ष प्राप्त करता है।

यही जीत का वह स्तर है, जो जैन धर्म का उद्देश्य है। यह ध्यान देने योग्य है कि जैन शब्द 'जिन' से बना है, जिसका धातु रूप 'जि' है, जो प्रभुत्व, विजय और श्रेष्ठता का अर्थ देता है।

इस उद्देश्य के लिए यह विचारों की वह आश्चर्यजनक और गूढ़ विरासत है, जो जैन दार्शनिकों तथा सत्य की खोज करने वालों द्वारा हमें दिए गए हैं। आज बौद्धिक ज्ञान के इस खज़ाने की गुणवत्ता और मात्रा की दृष्टि से पहले से भी अधिक आवश्यकता है। हालांकि इसका जन्म बहुत पुराने समय मे हुआ था, लेकिन इसकी प्रासंगिकता आज भी है। यह प्रासंगिकता आज की मानव जाति के लिए है, और भविष्य की मानव जाति के लिए भी रहेगी।

ज्ञात से अज्ञात की ओर बढ़ने के लिए तर्क का उपयोग, विश्लेषण की तकनीकी, परिभाषा, निगमन, प्रतिपादन और द्वन्द्वात्मक विस्तार जैन सिद्धान्त और ज्ञान की धारा के मुख्य तत्व है। जैन विचारकों के ये दृष्टिकोण अत्यत वैज्ञानिक थे, जो अनेक विषयों में सूक्ष्मता और स्पष्टता के साथ व्यक्त हुए हैं। इनमें से अनेक विपयों ने आधुनिक वैज्ञानिकों, सैद्धान्तिकों, भौतिकशास्त्रियों, गणितज्ञों तथा ब्रह्माण्ड-विज्ञानियों का ध्यान आकर्पित किया है। यहॉ जैन बौद्धिक परम्परा के उपस्थित विद्वान जैन धर्म की इस व्यापकता से परिचित हैं। कुछ ऐसे लोग भी होंगे जो पदार्थ, काल, व्योम और ऊर्जा संबंधी प्राचीन जैन सिद्धान्तों से परिचित होंगे। इन विषयों पर साहित्य का सागर उपलब्ध है। 'तत्वार्थ सूत्र' में आचार्य

कुंदकुंद के शिष्य जैन संत उमास्वामी ने जैन बौद्धिकता की प्रखरता को बड़े मनोहारी ढंग से प्रस्तुत किया है।

रूपिण: पुग्दला:, इस सूत्र के इन दो शब्दों में पदार्थ की परिभाषा दी गई है : "जिसका आकार है, वह पदार्थ है।" "अणव: स्कन्धाश्च·, अणु और परमाणु से पदार्थ होता है।" इस सूत्र में अद्‌भुत अन्तर्दृष्टि मिलती है · स्यौल्यसंस्थान भेदतमऽछायाऽतपोधोतवन्तश्च।

"ध्वनि, चुम्बकत्व, जड़-ऊर्जा, गुरुत्वाकर्षण, तड़ित, ताप, विकिरण तथा विभिन्न दूरी के प्रकाश भी पदार्थ हैं।" भेद सधातेभ्य उत्पद्यन्ते , "कणों के संविलय और विखण्डन से अणु बनते हैं।" भेदादणु., "विखण्डन से अणु अलग होते हैं।" तद्‌भावाव्यय नित्यम्·, "पदार्थ स्थायी (अनश्वर) है, हालाकि इसके स्वरूप में परिवर्तन हो सकता है।" ये जैन दर्शन के पदार्थ के बारे मे अनगिनत निष्कर्षो में से कुछ हैं।

इसी तरह प्राचीन जैन दार्शनिकों ने काल के बारे मे भी वैज्ञानिक विचार किया था। सोऽनन्तसमय·, "क्षणों का अनन्त उत्तरोतर संकलन।" वर्तनापरिणामक्रिया: परत्वापरत्वे च कालस्य·, "काल पदार्थ और अवस्था में परिवर्तन की दर को मापने का पैमाना प्रदान करता है।"

व्योम के संबंध मे कहा गया है—आकाशस्यानन्ता:, "व्योम की इकाईयां अनन्त हैं, व्योम के अंतर्गत अनन्त विन्दु हैं।" निष्क्रियाणि च:, "व्योम गति एवं विश्राम का माध्यम है, किन्तु स्वयं गतिहीन है।" ये सभी जैन बौद्धिकता के व्यापक एवं चमकते हुए कण है। अन्तरिक्ष विज्ञान, ज्योतिष शास्त्र, भू-विज्ञान, गणित, भौतिक शास्त्र, वनस्पति शास्त्र एवं पौध-विज्ञान, रसायन शास्त्र तथा मौसम विज्ञान आदि ज्ञान के कुछ ऐसे व्यापक क्षेत्र हैं, जिन्होने जैन इतिहास में प्रतिभाशाली मस्तिष्कों का ध्यान आकर्पित किया।

मैंने इनका उल्लेख इसलिए किया है, क्योंकि यह समझना ज़रूरी है कि ऐसी उच्च कोटि की बौद्धिकता ने जैन दर्शन के सिद्धान्तों, धर्म और ज्ञान का निर्माण और विकास किया है। अहिसा, अपरिग्रह, अस्तेय, सत्य और ब्रह्मचार्य जैसे दृष्टिकोण तथा जैन धर्म के स्याद्‌वाद, अनेकातवाद और सम्यक दृष्टि को इस परिप्रेक्ष्य में और अच्छी तरह समझा जा सकता है। मन-मस्तिष्क की एकाग्रता, विकास और उपयोग के लिए आंतरिक अनुशासन, पद्धति तथा नियमों को भी इसी संदर्भ में और अच्छी तरह समझा और सराहा जा सकता है।

"हिसाऽनृतस्तेयाब्रह्मपरिग्रहेभ्यो विरतिव्रतम्", ये पाच व्रत है। इन पांचों व्रतों को पांच-पाच आचरणों द्वारा मजबूत बनाया गया है। हम जानते है कि ये जैन मार्ग के लिए आवश्यक हैं। अब यह प्रत्येक व्यक्ति पर है कि वह आज के यथार्थ में इन सभी व्रतों के समन्वित उद्देश्य को पूरा करने के लिए अपनी बुद्धि का प्रयोग करे।

अहिसा के बारे में बताए गए पांच आचरण विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। 'सर्वव्रतसिद्धि' जैन सत श्रीमत पूज्यपादाचार्य द्वारा रचित महत्त्वपूर्ण ग्रथ है, जिसमें बताया गया है कि आत्म-संयम होना चाहिए—विचारों का, वचन का, शारीरिक गतिविधियों का, वस्तुओं के स्थापन और स्थानान्तरण का तथा भोजनादि का "वान्मानोगुप्तीर्यादान निक्षेपण समित्यालोकितपान भोजनानि पंच।"

अहिंसा का अर्थ केवल शारीरिक हिसा या चोट का वर्जन नही है, बल्कि यह एक व्यापक सिद्धान्त है, जिसमे किसी की भावना को भी चोट पहुंचाना वर्जित है। अहिंसा के पुजारी महात्मा गांधी ने इसे सुदर और सरल शब्दों में बताया है.

"पूर्ण अहिसा है—बुरे विचारो की पूर्ण अनुपस्थिति . . इसलिए सभी के प्रति सद्भावना ही व्यावहारिक रूप मे अहिसा है।" प्रत्येक व्यक्ति, हमारे पूरे देश और सम्पूर्ण मानव जाति के लिए जैन सिद्धान्त का मूल आधार, अहिंसा, एक शाश्वत आवश्यकता है। अहिसा के आचरण से हमारे निजी और राष्ट्रीय जीवन में वरदानों का वर्पाव हो सकता है। हमें इसके लिए प्रयास करना चाहिए। हमें जैन धर्म के विचारो पर ध्यान देना है, और यह समझना है कि सच्चे अर्थो में अहिसात्मक समाज की स्थापना की कोशिश की शुरुआत खुद से करनी होगी। यह शुरुआत स्वयं को दायित्वपूर्ण बनाकर तथा अपने विचारों, वचनों एव कार्यो में नियत्रण लाकर करनी होगी। अहिसा भारत का धर्म रहा है, और भारत का धर्म रहना चाहिए। अहिसा पूरे विश्व के लिए भारत का संदेश रहा है और रहना है। अहिसा में ही समानता का अधिकार निहित है, क्योंकि सबसे बडी हिसा शोषण और जबरन लादी गई गरीबी है। अहिसा भारत की लोक चेतना, भारत के राष्ट्रीय वातावरण, तथा प्रत्येक बस्ती, गाव, नगर, शहर और क्षेत्र, प्रत्येक परिवार और प्रत्येक व्यक्ति के जीवन की कठिनाईयों का शमन करने वाला तत्व रहा है। यह राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य में हमारी शक्ति का स्रोत रहा है। अहिंसा सबके विकास, समृद्धि और सुख के हमारे प्रयासो में हमारी ताकत रही है। हम सबको जैन धर्म की यह बात याद रखनी है कि "हिसादिष्विहामुतापायावद्यदर्शन",

अर्थात हिंसा का परिणाम होता है, अनन्त विपत्ति और दुर्दशा। हम सबको जैन धर्म की यह बात याद रखनी है : "मैत्रिप्रमोद कारुण्यमाध्यस्यानि", "प्राणि मात्र के प्रति दया का भाव रखें।"

एक और विचार मेरे मन में है, और उसे मैं यहां श्रवणबेलगोला में बोलते समय व्यक्त करना चाहता हूँ। यह विचार मानव द्वारा जीवित प्राणियों की हिंसा और पशु, पक्षियों तथा मछलियों को मारकर उनका भक्षण करने के विपय में है। मैं शाकाहार के पक्ष में हूँ। प्राचीन जैन धर्म के अनुसार मांसाहार के वर्जन को अब आधुनिक चिकित्सा विज्ञान का भी आधार है। चिकित्सा शोधों ने यह पता लगाया है कि अनेक तरह की बीमारियॉ मासाहारी भोजन करने से होती हैं। अब दिन-पर-दिन विकसित देशों के लोग भी अपने स्वास्थ्य के लिए मांसाहार से हट रहे हैं। यह अच्छा होगा कि हम भी जीवित प्राणियों की हत्या और मांसाहार न करने के पक्ष में हो जाएं।

बन्धुओ, यहां गोमतेश्वर के चरणों में शताब्दियों से अनेक जैन अर्हतों ने तपस्या की है। यहां कठिन तप, दृढ़ आत्मसंयम और ध्यान द्वारा कैवल्य ज्ञान और मोक्ष प्राप्ति का अभ्यास किया गया है। शिलालेख, ताम्रपत्र और पाण्डुलिपियॉ श्रवणबेलगोला के समृद्ध इतिहास और पवित्रता की गवाह हैं। इस क्षेत्र में संस्कृत, पाली और प्राकृत के अनेक अभिलेख उपलब्ध हैं। इसके साथ ही जैन ज्ञान के अनेक प्रमाण तथा मेरे द्वारा बताए गए विभिन्न विपयो पर अनगिनत जैन विचारकों के जीवन कार्यो का कोप है। इस साहित्य का बहुत बड़ा भाग प्राकृत भापा में है। सच्चाई तो यह है कि प्राकृत-साहित्य का एक बहुत बड़ा भाग जैन दर्शन के बारे में है, जो जैन विद्वानों, मुनियों और श्रमणों के लेखन से संबधित है। प्राकृत भापा करीब 15 शताब्दियों से भी अधिक समय तक महत्वपूर्ण माध्यम थी। यह समय पाली भापा के प्रचलन समय से दुगुना है। प्राकृत के अभिलेख और पाण्डुलिपियॉ हमारे देश के अनेक भागों में उपलब्ध हैं। इससे यह पता चलता है कि प्राकृत का भारत की कई विकसित भापाओं, जिनमे हिन्दी, मराठी, गुजराती, कन्नड़, बगला और तेलुगु शामिल हैं, निकट का संबंध रहा है। हमारे देश में पाली भापा के साहित्य को सूचिबद्ध करने, उनकी रक्षा करने तथा उनके प्रकाशन, अनुवाद और व्याख्या की दृष्टि से प्रशंसनीय काम किया गया है किन्तु प्राकृत भाषा के बारे में अभी विशेष ध्यान दिया जाना बाकी है। यह बात याद रखी जानी चाहिए कि भगवान महावीर के उपदेश प्राकृत मे थे, जिन्हें संकलित करने का

पहला प्रयास पाटलिपुत्र सम्मेलन में ईसा पूर्व चौथी सदी में किया गया था। यह काम करीब 900 वर्षो बाद पांचवीं शताब्दी में वल्लभी सम्मेलन मे पूरा हुआ, जिसका आयोजन देवर्धी की देख-रेख मे हुआ था। इसके बाद करीब 1600 वर्षो तक हमारे देश के विभिन्न भागो के जैन विद्वानों ने वल्लभी के इन ग्रन्थों को पढ़ा है, और उनकी व्याख्या की है। इसलिए इन्हें संकलित करने, तालिका बनाने, विश्लेपित करने और प्रकाशित करने का एक विशाल काम अभी किया जाना है।

प्राकृत की रचनायें इसी तरह उत्कृष्ट हैं, जिस तरह महाराष्ट्री प्राकृत में हाल शातवाहन की 'गाथासप्तशती', पैशाची बोली में लिखी गुणाढ्य की 'वृहद्कथा' और प्रवरसेन की लिखी 'सेतुबन्ध' गाथा मे हमे प्राचीन भारत के देहात की जीवन्त झांकी मिलती है। इस ग्रंथ मे ग्रामीण लोक जीवन के सुख अैर दुख, गॉव के लोगो की इच्छा-आकाक्षाए और उनकी जीवन-दृष्टि की अप्रतिम झलक मिलती है।

इसलिए मुझे अत्यन्त प्रसन्नता है कि श्रवणबेलगोला में प्राकृत भाषा और साहित्य के अध्ययन और शोध के लिए एक महत्वपूर्ण संस्थान स्थापित किया गया है। मुझे विश्वास है कि यह संस्था प्राकृत के कोष को आधुनिक भारतीय भापाओं में लोगों के सामने लाने का महत्वपूर्ण काम करेगी।

मित्रो, अपने इन्ही शब्दो के साथ मै जैन दर्शन, इतिहास और सस्कृति के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते हुए गोमतेश्वर के महामस्तकाभिषेक समारोह की शुरुआत करता हूॅ। इसके साथ ही राष्ट्रीय प्राकृत अध्ययन एवं शोध संस्थान का उद्घाटन करता हूॅ।

किसानों के प्रवक्ता चौधरी चरण सिंह

चौधरी चरण सिह उन भारतीय विभूतियों में से हैं जिन्होंने अपनी कर्मठता, लगन और आम लोगों के विकास के प्रति समर्पण के कारण समाज मे अपना एक अलग स्थान बनाया। लोकप्रियता की ऊचाइयों पर पहुंच कर भी वे खेत की माटी और भूमि की गंध को नहीं भूले। जीवन भर एक सघर्पशील नेता के रूप में वे भारतीय ग्रामीण जीवन के उत्थान और गांवों की प्रगति के लिए जूझते रहे।

चौधरी चरण सिह का जन्म एक ऐसे परिवार में हुआ था जिसने सदैव ही भारतीय अस्मिता के लिए संघर्प किया। उनके पितामह श्री बादाम सिह 1857 में अंग्रेजों के खिलाफ राजा नाहर सिह के सहयोगी रहे और बाद मे जब राजा नाहर सिह के राज्य को अग्रेजो ने अपने साम्राज्य मे शामिल कर लिया तो उन्हें यमुनापार बुलदशहर जिले के भटौना गांव मे शरण लेनी पडी। बाद में वे नूरपुर पहुंचे। यहा श्री चरण सिह के परिवार को गाव वालों ने खेती के लिए कुछ जमीन प्रदान की। चौधरी चरण सिह ने अपने लेखन में कई स्थानों पर उस स्थिति का ज़िक्र किया है, जब वे पाच साल के थे और अपने पिता के साथ अपने खेतों में काम करते थे। बचपन से ही इस अनुभव का उन पर उत्कट प्रभाव पड़ा। 25 दिसम्बर, 1977 को महाराजा सूरजमल के शहीदी दिवस पर एक भापण मे उन्होंने कहा था ·

''मेरे संस्कार उस गरीब किसान परिवार के संस्कार हैं जो धूल और कीचड़ के बीच एक छप्परनुमा झोपड़ी मे रहता है। मैने अपना बचपन उन किसानों के बीच बिताया है जो खेतों में नगे बदन अपना पसीना बहाते हैं।''

अपने प्रारम्भिक जीवन मे ही चौधरी साहब ने देश के उत्थान में गांवों के विकास के निर्णायक महत्व को पूरी तरह समझ लिया था। स्वय को इस ध्येय के प्रति समर्पित करके उन्होंने उच्च शिक्षा प्राप्त करने का संकल्प लिया। लखनऊ विश्वविद्यालय से कानून की डिग्री लेकर उन्होंने ग़ाज़ियाबाद में 1926 में अपनी

ससद भवन के केन्द्रीय कक्ष मे चौधरी चरण सिंह के चित्र का अनावरण करते हुए, नई दिल्ली, 23 दिसम्वर, 1993

प्रैक्टिस शुरू की। यह वह समय था जब पूरा देश महात्मा गांधी के नेतृत्व में विदेशी दासता से मुक्ति पाने के प्रयास कर रहा था। महात्मा गांधी के आह्वान पर चौधरी चरण सिंह भी इस लड़ाई में कूद पड़े। फलस्वरूप, नमक सत्याग्रह में वे जेल गए, 1940 में व्यक्तिगत सत्याग्रही के रूप में गिरफ्तार हुए, और 1942 के "भारत छोड़ो आंदोलन" में भी वे कैद किए गए। इस दौरान वे कांग्रेस पार्टी के संगठन कार्यों से भी जुड़े रहे। कठोर संघर्ष और कष्टमय राजनीतिक अनुभवों के पश्चात भी उनके मन में किसी तरह का कोई दुराव-छुपाव नहीं था। उनकी निर्भीकता और साफगोई हमारे यहां के आम किसानों के चरित्र का प्रतिनिधित्व करती है। उनके ये शब्द विशेष उल्लेखनीय हैं ·

'खेती एक ऐसा व्यवसाय है जहां प्रकृति के साथ संघर्ष में एक किसान को धैर्य एवं अध्यवसाय के पाठ रोजाना पढ़ने पड़ते हैं। फलत: उसमें दृढ़ता और सहनशीलता उत्पन्न हो जाती है। इससे एक ऐसे चरित्र का निर्माण होता है जो अन्य किसी व्यवसाय में नहीं हो सकता।'

भारतीय किसानों के लिए चौधरी साहब ने जो कुछ भी किया है वह ऐतिहासिक महत्व का है। 1937 में वे पहली बार बागपत-ग़ाज़ियाबाद क्षेत्र से तत्कालीन संयुक्त प्रांत की धारासभा के लिए चुने गए। उस समय उनकी आयु 35 वर्ष की थी। 31 मार्च और 1 अप्रैल, 1938 के 'हिन्दुस्तान टाइम्स' में 'कृषि विपणन' शीर्षक से उनका एक लेख दो किस्तो मे प्रकाशित हुआ। इस लेख में गांव और कृषि की समस्याओं के प्रति उनकी गहरी समझ स्पष्ट रूप से उजागर होती है। इसी लेख के प्रकाशन के बाद पंजाब में तत्कालीन कृषि मंत्री सर छोटूराम ने मंडी समिति एक्ट पास करवाया था। संयुक्त प्रांत में भी चौधरी साहब इस तरह का बिल रखना चाहते थे, परन्तु तभी धारा सभा भंग कर दी गई, लेकिन उन्होंने 1939 में धारा सभा में ऋण निर्मोचन विधेयक पास करा लिया। इस विधेयक के पारित होते ही उत्तर प्रदेश में लाखों गरीब किसानों को ऋण से मुक्ति मिल गई थी। स्वतंत्रता प्राप्ति के बाद उत्तर प्रदेश सरकार ने 1952 में जो जमींदारी उन्मूलन एवं भूमि सुधार विधेयक पारित किया था उसे तैयार करने का दायित्व भी मुख्यमंत्री गोविन्द बल्लभ पंत ने चौधरी साहब को सौंपा था। इसी प्रकार चौधरी साहब ने 1953 में 'चकबंदी कानून' तथा 1954 में 'भूमि संरक्षण कानून' बनवाया। इससे कृषि को वैज्ञानिक स्वरूप प्राप्त करने में सहायता मिली।

चौधरी साहब वर्ग भेद और जात-पात के विरोधी थे और वे सभी वर्गो को समानता का दर्जा दिए जाने और सर्वधर्मसमभाव के पक्षधर थे। सविनय अवज्ञा आंदोलन में गिरफ्तारी से रिहा होने के बाद जब सन् 1933-34 में महात्मा गांधी ने सामाजिक न्याय का अपना कार्यक्रम चलाया, तो ग़ाज़ियाबाद अंचल में इसे सचालित करने की बागडोर चौधरी चरण सिह ने ही सम्भाली। उन्होंने अपनी पुस्तक 'इकोनोमिक नाइटमेअर ऑफ इडिया · इट्स कॉजेज एड क्योर' मे जाति-प्रथा की बुराई का जिक्र करते हुए लिखा है कि, " . जाति-प्रथा के कारण ही भारत के विभिन्न धार्मिक समूह सामाजिक और राजनैतिक रूप से एक-दूसरे के समीप नहीं आ सके, तथा एक सुदृढ़ समाज का निर्माण नहीं हो सका।"

चौधरी चरण सिह ने राजनीति के साथ-साथ एक स्वतंत्र विचारक और मौलिक लेखक के रूप मे भी अपनी प्रतिभा दिखाई। आर्थिक और राजनीतिक मामलों मे वे महात्मा गाधी को अपना गुरु मानते थे। इसीलिए उनका आर्थिक चिंतन गाधी जी के अधिक करीव दिखाई पड़ता है। उनकी आर्थिक नीति ग्रामोन्मुख थी। चोधरी साहब ग्राम्य विकास के लिए कुटीर एवं लघु उद्योगों को अत्यत महत्वपूर्ण मानते थे, और अर्थव्यवस्था के विकेन्द्रीकरण की बात कहते थे। सन् 1982 में लिखे अपने एक लेख में उन्होने स्पष्ट रूप से लिखा था कि, " गरीबी से बचकर समृद्धि की ओर बढ़ने का एकमात्र मार्ग गांव तथा खेतो से होकर गुजरता है।"

इस वारे में दो राय हो ही नहीं सकती कि देश के किसानो में नई जागृति पैदा करने, उनमें आत्म-सम्मान और आत्म-गौरव की भावना जगाने तथा उन्हें सामाजिक दृष्टि से महत्त्व प्रदान करने हेतु चरण सिह जी ने अथक एव सफल प्रयास किया। उनके नेतृत्व और संगठनात्मक प्रयासों के कारण किसान और पिछड़े वर्ग के लोग सगठित होकर देश की मुख्य धारा में आ गए।

चौधरी साहब की सबसे बड़ी चिता यही थी कि लोगों में व्याप्त गरीबी को किस प्रकार दूर किया जाए। जीवन पर्यत वे इन्हीं प्रयासों में लगे रहे। देश के राजनेताओं को भी वे इस बारे मे निरंतर सचेत करते रहे। जुलाई, 1979 में प्रधानमंत्री का पद ग्रहण करने के बाद चौधरी साहब ने कहा था :

"इस देश के राजनेताओं को याद रखना चाहिए कि (उनके लिए) इससे अधिक देशभक्तिपूर्ण उद्देश्य और कुछ नहीं हो सकता कि वे यह सुनिश्चित करे कि कोई भी बच्चा भूखे पेट नहीं सोयेगा, किसी भी परिवार को अपनी अगले

दिन की रोटी की चिता नहीं होगी तथा कुपोपण के कारण किसी भी भारतीय के भविष्य और उसकी क्षमताओं के विकास को अवरुद्ध नहीं होने दिया जाएगा।'

स्वतंत्रता सेनानी, प्रशासक, प्रसिद्ध संसदविद् तथा केन्द्र और राज्य मे मंत्री के रूप में तथा अंतत: भारत के प्रधानमंत्री के गौरवपूर्ण पद पर कार्य करते हुए चौधरी चरण सिह ने हम सबके मानस पटल पर अमिट छाप छोड़ी है। राष्ट्र के प्रति चौधरी साहब की एकनिष्ठ सेवा के लिए संसद के इस ऐतिहासिक केन्द्रीय कक्ष में उनके चित्र का अनावरण कर आज हम उनका औचित्यपूर्ण सम्मान कर रहे हैं।

हमारी संसद देश के नागरिकों की आकाक्षाओं का प्रतीक है। मुझे आशा है कि संसद के केन्द्रीय कक्ष में चौधरी चरण सिह का यह चित्र हमारे सांसदों को विकासशील व्यवस्था का लाभ दूर-दराज क्षेत्रों में रहने वाले ग्रामीणों तथा पिछड़े वर्गो तक पहुचाने के प्रति कटिबद्ध रहने को प्रेरित करेगा। यह एक महान दायित्व है जिसे हमारी वर्तमान और आने वाली पीढ़ी को निभाना है।

जैन धर्म का सार

इस वर्ष फाउंडेशन द्वारा यह पुरस्कार लोकसभा के अध्यक्ष, श्री शिवराज पाटिल जी को दिया गया है। मैं इसके लिए श्री पाटिल जी को अपनी बधाई देता हूं।

पिछले कई वर्षो से श्री शिवराज पाटिल मेरे परिचित रहे हैं। उनकी सरलता और सौम्यता ने देश के लोगों का ध्यान आकृष्ट किया है। उनमें मैंने जीवन-मूल्यों के प्रति आस्था का भाव पाया है। मैं समझता हू कि 'जय तुलसी फाउंडेशन' के इस निर्णय से हमारी लोक-चेतना में नैतिक मूल्यों के प्रति और भी निष्ठा का भाव पैदा होगा।

'अणुव्रत आंदोलन' को में एक गतिशील और व्यावहारिक आंदोलन मानता हूं। यह एक ऐसा नैतिक आंदोलन हे, जो लोगों के विचार और व्यवहार में सकारात्मक परिवर्तन लाना चाहता हे। उनके विचारों में परिवर्तन लाकर उन्हें आध्यात्मिकता के रास्ते पर लाना चाहता है। विचारों में बदलाव का यह काम दो तरीकों से होता है-सिद्धांत से ओर व्यवहार से। 'अणुव्रत' की विशेषता यह हे कि इसमें व्यवहार को प्रमुखता दी गई है। इस व्रत के अन्तर्गत जीवन की उन छोटी-छोटी बातों के बारे मे बताया गया है, जिससे व्यक्ति में एक स्वस्थ चेतना पैदा हो सके, और उसका नैतिक और आध्यात्मिक उत्थान हो सके। इसलिए मैं इसे एक नैतिक आंदोलन और एक मानवतावादी आंदोलन मानता हूं।

'उपासकदशांक' में 'श्रावक' के 12 व्रतों का उल्लेख है। इनमें से पांच 'अणुव्रत' हैं। ये व्रत हैं-अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य और अपरिग्रह। जैन धर्म में इन पाच व्रतों को इतना महत्व दिया गया है कि इन्हें ''महाव्रत'' कहा गया है। इनमें भी 'अहिसा' को सबसे ऊंचा स्थान दिया गया है। यह माना गया है कि अहिसा धर्म का सार है। व्यास जी ने भी महाभारत में यही बात कही थी। यही बात महावीर स्वामी और गौतम बुद्ध ने कही और इसी को बापू ने आगे बढ़ाया था। महावीर स्वामी ने कहा था :

''अणुव्रत पुरस्कार'' प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 29 दिसम्बर, 1993

''जिस प्रकार इस ससार में अणु से छोटी कोई वस्तु नही है, तथा आकाश से बड़ी कोई वस्तु नहीं है, उसी प्रकार अहिसा-व्रत से अधिक सूक्ष्म और विशाल कोई व्रत नही है।''

महावीर स्वामी का मानना था·

धम्मो मंगलमुक्किट्ठ, अहिसा स जमो तवो।

देवा वि त नमसति, जस्स धम्मे सया मणो॥

अर्थात्, धर्म उत्कृष्ट मगल है। अहिसा, सयम और तप उसके लक्षण हैं। जिनका मन सदा धर्म में रमा रहता है, उसे देव भी नमस्कार करते हैं।

इस अहिसा का संबध केवल किसी की हत्या न करने तक सीमित नहीं है, बल्कि यह अत्यंत व्यापक विचार है। हमारे यहां कहा गया है 'सर्वभूतेषु संयम· अहिसा', अर्थात् प्राणिमात्र के प्रति सयम रखना, अपनी असत्य प्रवृत्तियो को रोकना तथा किसी को भी कष्ट न पहुंचाकर उनके प्रति मैत्री भाव रखना ही अहिसा है। इसके अन्तर्गत किसी का दिल न दुखाने तक की बात आ जाती है। यह बात सादगी की भावना से सीधे-सीधे जुड़ जाती है। जब कोई दिखावा करता है, तो इससे निश्चित रूप से गरीबो का दिल दुखता है। इसीलिए जैन धर्म में तथा 'अणुव्रत' में सादगी को इतना अधिक महत्व दिया गया है।

'अणुव्रत' के सबध में मुझे कुछ जानकारी है, और मैं इससे प्रभावित भी रहा हूं, भले ही यह विचार जैन-धर्म का विचार हो, लेकिन मैं इसे मानवमात्र का विचार मानता हूं। इस दृष्टि से मै 'अणुव्रत' के उद्देश्यो मे से प्रथम उद्देश्य की चर्चा करना चाहूगा, जो अत्यत महत्वपूर्ण है। इसका पहला उद्देश्य है

''जाति, वर्ग, देश और धर्म का भेदभाव न रखते हुए मानवमात्र को सदाचार की ओर आकृष्ट करना।''

इसलिए मैंने कहा कि यह आंदोलन किसी जाति, किसी क्षेत्र, या किसी धर्म तक सीमित न होकर सम्पूर्ण मानव जाति का आंदोलन है। इसे इसी व्यापक रूप में लिया जाना चाहिए, और समस्त मानवजाति द्वारा इसके मूल्यों को अपने जीवन में उतारने की कोशिश की जानी चाहिए। अच्छी बाते जहा से भी मिलें, ग्रहण की जानी चाहिएं।

जैन-धर्म मे सम्यक् दर्शन, सम्यक् ज्ञान और सम्यक् चरित्र की बात कही

गई है। मैं मानता हूं कि अणुव्रत आंदोलन के तत्व सम्यक् चरित्र के लिए वहुत जरूरी हैं। जव तक व्यक्ति मे प्राणिमात्र के प्रति दया की भावना नहीं होगी, अपनी इन्द्रियों पर उसका नियंत्रण नहीं होगा, सत्य के प्रति उसमें गहरी निष्ठा नहीं होगी, तथा त्याग और सेवा की भावना नहीं होगी, तव तक व्यक्ति का चरित्र सुदृढ़ नहीं हो सकता। व्यक्ति इन मूल्यों को अपने अंदर समाहित करके ही आध्यात्मिक उत्थान के रास्ते पर आगे वढ़ सकता है।

'उपनिपद्' में कहा गया है-'तत् त्वमसि', अर्थात् "वह तुम हो"। इसका अर्थ यह है कि वह तुम्हीं हो, जो देवत्त्व की स्थिति को प्राप्त कर सकता है। 'सोऽहम्' का अर्थ भी यही है-"वह मैं हूं"। अर्थात् मैं ही व्रह्म हूं। लेकिन जीवन की आपाधापी ओर दुर्गुणों के कारण आत्मा की यह अदम्य शक्ति ढक जाती है, और कमजोर पड़ जाती है। 'अणुव्रत आंदोलन' आत्मा की इसी सुप्त पड़ी हुई शक्ति को धीरे-धीरे जागृत करने का आंदोलन है। यह एक प्रकार से आध्यात्मिक उपचार का आंदोलन है।

आज का समाज भोतिकवाद के रास्ते पर तेज़ी से आगे वढ़ रहा हे। उसके सामने उपभोग करने के लिए रोज़ नई-नई वस्तुएं आ रही हैं। इसलिए वह अधिक-से-अधिक संग्रह करना चाहता है, ताकि अधिक-से-अधिक वस्तुओं का उपभोग कर सके। दुर्भाग्य यह है कि जैसे ही उसे एक चीज मिल जाती है, वैसे ही उसके अंदर दूसरी के लिए इच्छा पैदा हो जाती है। इस सिलसिले का अंत कभी नहीं होता। इसका नतीजा यह होता है कि शोपण की प्रवृत्ति वढ़ती है। अपराध वढते हैं। चरित्र की वुराइयां वढ़ती हैं तथा समाज मे अनेक तरह की अव्यवस्थाएं फैलती हैं। आज की दुनिया को इस वात को समझना होगा कि भोग के साथ त्याग भी जरूरी है, संग्रह के साथ सेवा भी ज़रूरी है। 'अणुव्रत आंदोलन' का विचार अपरिग्रह का विचार है। मुझे इस वात में कोई संदेह नहीं है कि चाहे विज्ञान कितनी भी तरक्की कर ले, चाहे व्यक्ति कितना भी वौद्धिक हो जाए, तथा चाहे समाज कितना भी सभ्य और सम्पन्न हो जाए, लेकिन जव तक लोगों मे ये मानवीय गुण नहीं आएंगे, तव तक न तो उसका सच्चा विकास हो सकता है, ओर न ही उसे सच्चा सुख और सच्ची शांति मिल सकती है। विज्ञान और अध्यात्म का समन्वय करना ही होगा। ज्ञान और भावना का समन्वय करना ही होगा। यदि भोग आज के समाज की मुख्य प्रवृत्ति वनती जा रही है, तो उसे यह समझना होगा कि विना त्याग के भोग अधूरा ही रहता है। केवल भोग करने की

प्रवृत्ति से समाज में शोपण बढ़ता है, असमानता आती है और अंततः अव्यवस्था फैलती है। भोग के साथ त्याग का योग ज़रूरी है।

मैं समझता हूं कि 'अणुव्रत आंदोलन' के अनुसरण से व्यक्ति में संतुलन की यह क्षमता आती है। मेरा विश्वास है कि 'अणुव्रत आंदोलन' समाज को सही रास्ता दिखाने में सफल होगा। हमारे पास नैतिक-मूल्यों का कोई विकल्प नहीं है, इसे समझना होगा।

एक चिंतक राजनेता डॉ० सम्पूर्णानंद

विद्यार्थी ओर अध्यापक के रूप में मैं उत्तर प्रदेश में रहा हूं। उस समय डॉ. सम्पूर्णानंद जी की चर्चाएं हुआ करती थीं, जिन्हें मैं ध्यान से सुना करता था। मैंने उनके लिखे लेख तथा कुछ पुस्तकें भी पढ़ी हैं। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान हम युवाओं के लिए उनके सामाजिक और राजनैतिक विचार एक दिशा-निर्देश का काम करते थे। ऐसे में निश्चित रूप से यह मेरे लिए व्यक्तिगत रूप से भी प्रसन्नता की वात है कि मुझे यह अवसर दिया गया। इसके लिए मैं सम्पूर्णानंद जी के परिवार के सदस्यों के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूं।

जव कभी भी मुझे सम्पूर्णानंदजी का स्मरण आता है, एक साथ कई तस्वीरें उभरने लगती है। वे स्वतंत्रता सेनानी तो थे ही, लेकिन इसके साथ-ही-साथ ज्ञान के प्रति गहरे लगाव के कारण उन्होंने जो काम किए, वे भी स्थाई महत्व के हें। सरकार के विभिन्न पदों पर रहकर उन्होंने जो नीतियां वनाई और उन्हें जिस कुशलता के साथ लागू किया, उन्हें आज भी लोग याद करते हैं। इन दोनों स्थितियों को देखने पर मुझे प्लेटो का वह चिंतन अनायास ही याद जाता है, जिसमें उन्होंने एक 'दार्शनिक शासक' की वात कही थी। निश्चित रूप से इसे मैं एक ऐसा विलक्षण ओर अद्‌भुत संयोग मानता हूं, जो सम्पूर्णानंद जी में देखने को मिली।

स्वतंत्रता आंदोलन के समय गांधी जी के व्यक्तित्व ने उस समय के अधिकांश संवेदनशील व्यक्तियों को प्रभावित किया था। इसी से प्रभावित होकर सम्पूर्णानंद जी भी वीकानेर राज्य की नौकरी से त्याग-पत्र देकर स्वतंत्रता आंदोलन में कूद पड़े थे, जिस कारण उन्हें 6 वर्ष की लम्वी सज़ा हुई थी। यहीं से उनके कर्मठ एवं त्यागपूर्ण सार्वजनिक जीवन की शुरुआत हुई, वाद में 'नमक आंदोलन' तथा 'भारत छोड़ो आंदोलन' में भी उन्होंने पूरी सक्रियता से भाग लिया, जिसके कारण व्रिटिश सरकार ने उन्हें कारावास की सज़ा दी। साइमन कमीशन के वहिष्कार का भी उन्होंने शानदार नेतृत्व किया था। सन् 1934 में आचार्य नरेन्द्र देव एवं जयप्रकाश नारायण जी के साथ मिलकर उन्होंने कांग्रेस समाजवादी पार्टी वनाई। जब देश स्वतंत्रता पाने के करीव था, तो सन् 1946 के चुनाव में वे प्रांतीय धारा

सम्पूर्णानद जी पर डाक टिकट जारी करते हुए, नई दिल्ली, 10 जनवरी, 1994

सभा के लिए निर्वाचित हुए और शिक्षा, सूचना एवं श्रम मंत्री बनाए गए। आज़ादी के बाद सन् 1954 में वे हमारे देश के सबसे बड़े प्रांत और अपने गृह प्रदेश के मुख्यमंत्री बने। बाद मे वे राजस्थान के राज्यपाल भी रहे।

सम्पूर्णानंद जी के व्यक्तित्व की विशिष्टता इस बात में नहीं है कि वे इतने महत्वपूर्ण पदों पर रहे, बल्कि इससे कहीं अधिक इस बात में है कि उन्होंने इन पदों पर रहते हुए इन पदों को एक गरिमा दी। राष्ट्र-हित के लिए अपने अधिकारों का उचित उपयोग तथा दायित्वों का पूर्ण निर्वाह करते हुए इन पर अपने व्यक्तित्व की छाप छोड़ी। एक कुशल एव दक्ष प्रशासक के रूप में वे एक सिद्धातवादी एव आदर्शवादी व्यक्ति थे। उनमे अपने आचरण की जो शुद्धता और स्पष्टता थी, उनके मन में नैतिक मूल्यों के प्रति जो दृढ़ता थी, उसने स्वाभाविक रूप से उनके अंदर एक स्वाभिमान की भावना पैदा कर दी थी। उनके इस स्वाभिमान को किसी तरह का अहंकार नहीं समझा जाना चाहिए, बल्कि एक ऐसे अनिवार्य गुण के रूप में लिया जाना चाहिए, जो समाज-हित में कार्य करने के लिए ज़रूरी होता है।

डॉ सम्पूर्णानंद मूलत विद्या प्रेमी व्यक्ति थे। इसीलिए लम्बे समय तक उन्होंने विद्यालय एवं महाविद्यालयों मे अध्यापन का कार्य किया। काशी विद्यापीठ में उन्होंने दर्शनशास्त्र पढ़ाया। अपनी निजी रुचि के कारण जहा तक मुझे मालूम है, वे अन्तर्राष्ट्रीय विधि भी पढ़ाया करते थे।

ज्ञान के प्रति आकर्पण का ही परिणाम था कि उन्होंने करीब 24 पुस्तकें लिखीं, जिनमें राजनीति, इतिहास, दर्शनशास्त्र, विज्ञान, विधि, साहित्य, भापा, खगोल विज्ञान तथा ज्योतिप विज्ञान जैसे विपय शामिल है। वे हिन्दी साहित्य का बृहद इतिहास, हिन्दी विश्वकोश तथा हिन्दी शब्द सागर के भी सम्पादक रहे।

इसके साथ ही साथ डॉ सम्पूर्णानद एक सफल पत्रकार भी थे। उन्होंने 'टुडे', 'मर्यादा' तथा 'जागरण' समाचार-पत्रों का सम्पादन किया। वे 'नागरी प्रचारिणी पत्रिका' के भी सम्पादक रहे।

डॉ सम्पूर्णानंद जी के व्यक्तित्व का एक और पक्ष रहा है, जिसका मै यहां उल्लेख करना चाहूंगा। अपने देश की भापा और संस्कृति के प्रति उनके मन में गहरा अनुराग था। यह बात विशेप रूप से ध्यान देने की है कि उन्हे वाराणसी मे देश के पहले संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना करने का श्रेय प्राप्त है। उनकी मान्यता थी कि हमारी अपनी भापाओं में हमारे अपने संस्कारों के बीज है, इसलिए

हमारे विद्यार्थियों को इसका अध्ययन कराया जाना चाहिए, ताकि वे अपनी संस्कृति से गहरे रूप से जुड़ सकें। इस दृष्टि से डॉ. सम्पूर्णानंद बापू के विचारों के अधिक करीव थे। शिक्षा मंत्री के रूप में भी उन्होंने गांधी जी की बुनियादी शिक्षा के लिए महत्वपूर्ण काम किए थे। जव संविधान सभा में हिन्दी को राजभापा बनाने की वात आई थी, तो उसका उन्होंने जोरदार पक्ष लिया, और उसमें सफलता भी मिली।

उनके सिद्धांतों में व्यावहारिकता का गुण होता था। इस तरह की उन्होंने कुछ अच्छी शुरूआत भी की थीं। उन्होंने श्रमिकों के हितों के लिए राष्ट्रीय मजदूर कांग्रेस का गटन किया और चीनी मजदूर संगटन की स्थापना की। इसी प्रकार उनके अधिकारों की रक्षा के लिए कारखानों में वर्कर्स कमेटियां वनवाई। अपराधियों के साथ अच्छा व्यवहार करके उनका हृदय परिवर्तन की दृष्टि से उन्होंने "खुली जेल" के भी मानवतावादी प्रयोग किए थे।

सम्पूर्णानंद जी को देखकर या कि उनके कुछ विचारों को सुनकर कुछ लोगों के मन में यह गलत धारणा वन जाती है कि वे परम्परावादी थे। मैं इस वात से सहमत नहीं हो पाता। मेरा यह मानना हे कि वे न तो परम्परावादी थे और न ही तथाकथित आधुनिकतावादी। उनके व्यक्तित्व में, उनके विचारों में और समस्याओं के प्रति उनके दृष्टिकोण मे प्राचीन और नवीन का मिश्रण था। वे इस वात को अच्छी तरह समझते थे कि हमारे कार्य और विचारों की जड़ें हमारी अपनी संस्कृति में होनी चाहिए, लेकिन हम पश्चिमी विचार एवं विज्ञान की पूरी तरह उपेक्षा करके आधुनिक युग में आगे नहीं वढ़ सकते। इसलिए वे अक्सर दोनों के मिश्रण की वात करते थे। भाव और तर्क, परम्परा और विज्ञान तथा आदर्श और सिद्धात के समन्वय से ही एक संतुलित स्थिति आ सकती है। उनके विचारों मे हमें यह वात दिखाई पड़ती है। मुझे वे एक तार्किक एवं उदार दृष्टिकोण वाले व्यक्ति मालूम पड़ते हैं। उनके विचारों में एक अजीव तरह का संयम था। एक ऐसा संयमी व्यक्ति ही धर्म के वारे में यह वात कह सकता है कि "यदि प्रत्येक व्यक्ति अपने कर्त्तव्यों का पालन करे, तो सव को अपने अधिकार आप ही मिल जाएंगे। यही धर्म का मूल भाव है।"

यही वात उनके "विराट" के चिंतन में देखने को मिलती है। वे स्वयं उदार विचार एवं उदात्त भावों के व्यक्ति थे। इसीलिए अन्य लोगों से उसी तरह की अपेक्षा करना स्वाभाविक था। वे चाहते थे कि देश का प्रत्येक नागरिक सभी

तरह की संकीर्णताओं से ऊपर उठकर "विराट चेतना" वाला बने। उन्होंने लिखा है, "विराट की भावना को प्रारम्भ से ही व्यक्ति और समुदाय के जीवन का मूलाधार बनाना पड़ेगा। ऐसा समाज लोकतंत्रीय होगा, क्योंकि लोकतंत्र ही एक ऐसी राजनैतिक व्यवस्था है, जो स्वाधीनता और स्वतंत्रता के विकास के अनुकूल है।"

मुझे सम्पूर्णानंद जी के इस विचार मे देश की अनेक समस्याओं का समाधान मालूम पड़ता है। क्योकि जब व्यक्ति में विराट की भावना आ जाती है, तब वह धर्म, जाति, भाषा तथा क्षेत्र जैसी बातों से स्वाभाविक तौर पर ऊपर उठ जाता है।

मुझे लगता है कि सम्पूर्णानंद जी के जो विचार हैं, उन्हें लोगों के सामने लाया जाना चाहिए। समाजवाद और लोकतंत्र के बारे में उन्होने अनेक स्थानो पर बहुत ही सतुलित ढग से विचार किया है। करीब चार साल पहले ही सम्पूर्णानंद जी की जन्म शताब्दी मनाई गई थी। उस समय इस दिशा मे कुछ काम हुआ था, लेकिन अच्छा होगा कि ऐसे विचारको का साहित्य लोगो तक पहुंचे, ताकि लोग उनके व्यक्तित्व और विचारों से अच्छी तरह परिचित हो सकें। सम्पूर्णानंद जी उन लोगों मे से थे, जिनके कार्य और विचार हमारे देश के चिंतन और राजनैतिक व्यवस्था के विकास का एक अनिवार्य अंग है। ऐसे व्यक्तियों से परिचय का अभाव होना एक प्रकार से बीच की कड़ी है। इससे अतत: हमारा ही नुक्सान होगा। इस दृष्टि से मैं भारत सरकार को फिर से एक बार बधाई देना चाहूगा कि उसने डॉ सम्पूर्णानंद जी पर डाक टिकट निकाल कर देश की स्मृति में उन्हे फिर से तरो-ताजा किया है।

चुनौतियों का मुकाबला

हमारा गणतत्र दिवस राष्ट्रीय सकल्प का दिवस है। यह एक ऐसा समय है, जब हमें अपने चारों ओर की दुनिया के बीच एक राष्ट्र के रूप में अपनी स्थिति के बारे में सोचना है। यह एक ऐसा अवसर है, जब हमे एक नागरिक के रूप में आजादी की उपलब्धियों की रक्षा और उसके विस्तार के लिए अपने कर्तव्यों के बारे में आत्मचितन करना है।

आज, जबकि हम अपने गणतत्र दिवस के 45वें वर्ष में प्रवेश कर रहे हैं, हममें से प्रत्येक को यह समझना चाहिए और उसी समझ के अनुसार काम करना चाहिए कि अब वर्तमान विश्व लगातार हमारी ताकत, हमारी क्षमता, हमारे गुण और आदर्श तथा हमारी प्रत्येक प्रणाली और प्रत्येक क्षेत्र की परख करेगा। सीधी समझ और व्यावहारिक बुद्धि यह कहती है कि पहले से भी अधिक वर्तमान सच्चाइयो को देखते हुए हमे अपने ही ससाधनों के बल पर खड़ा होने के लिए अपने आपको सगठित करना चाहिए। ये ससाधन मानव-शक्ति, संस्थाए, भौतिक पदार्थ और आध्यात्मिकता के हैं। सचमुच, हमें अपने को और अधिक सुदृढ़ बनाने के लिए सामूहिक रूप से पूरे आत्मविश्वास के साथ अधिक-से-अधिक सघर्ष करना होगा, चाहे यह काम कितना भी कठिन क्यो न हो।

पिछले तीन सौ वर्षो से कुछ ही देशों के आपसी सबंध विश्व के इतिहास का निर्धारण करते आ रहे हैं, हालांकि ये देश अलग-अलग समय मे विभिन्न गुटों तथा एक-दूसरे के साथ विवाद और लड़ाइयों में उलझे रहे हैं। हमारे देश में और विश्व के अन्य भागों में समानता और मानवीय गरिमा के लिए वीरता के साथ सिद्धात रूप में जो संघर्ष किया गया है, वह इस सदर्भ में अत्यत महत्वपूर्ण है।

आज और भविष्य में भी विश्व की राजनीतिक-अर्थव्यवस्था के मुख्य स्वरूप का निर्धारण उन देशो द्वारा किया जाएगा, जो वैज्ञानिक और तकनीकी विकास तथा औद्योगीकरण में आगे होंगे तथा जो विश्व-व्यापार एव वाणिज्य के क्षेत्र में नियंत्रणकारी स्थान रखते होगे।

गणतत्र दिवस (1994) की पूर्व-सध्या पर राष्ट्र के नाम सदेश, नई दिल्ली, 25 जनवरी, 1994

आज विश्व में अपेक्षाकृत शांति है। आपसी टकराव के खतरे नाटकीय ढंग से कम हुए हैं, और उसके स्थान पर मित्रता और आपसी सहयोग के आसार बढ़े हैं। प्रमुख देश मिलकर एक नई विश्व-व्यवस्था बनाने के लिए तत्पर हैं।

इस दिशा में प्रभावशाली और दूरगामी पहल शुरू हो गयी है। अमेरिका, यूरोप, अफ्रीका और एशिया महाद्वीप के बीच एक नया विश्व-संतुलन स्थापित किया जा रहा है। संरक्षित जगतिकरण तथा व्यापक नियंत्रण के लिए ढांचा बनाया जा रहा है। नये क्षेत्रीय और कटिबंधीय संगठन भी उभर रहे हैं। महत्वपूर्ण अंतर्राष्ट्रीय संगठन दुनिया के लोगों के लिए शांतिपूर्वक यह नया वातावरण बना रहे हैं।

मित्रो, इन नयी व्यवस्थाओं का एक व्यक्ति के रूप में, तथा एक राष्ट्र के नागरिक के रूप में हम सब पर प्रभाव पड़ेगा। हम सबको मिलकर इन चुनौतियों का मुकाबला करना है, और अपनी ओजस्विता सिद्ध करनी है।

हम सब इसे पूरी तरह समझें कि सकारात्मक गतिशील परिवर्तन के लिए हमारे पास संसाधन हैं। हमारे देश के पास प्रतिभाशाली और निष्ठावान ऐसे व्यक्तियों की प्रचुर संपदा है, जो विश्व के लोगों के बराबर तथा उनसे आगे निकलने की क्षमता रखते हैं। हमने लोकतंत्र से जुड़कर लोकतान्त्रिक सरकार की धारणा, प्रक्रिया और उसकी आवश्यकताओं को आत्मसात किया है, जो हमारे लिए लाभदायक और अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। हमने अपने अनुभवों का लाभ उठाते हुए संघ राज्य, जिला, तहसील तथा गांवों के स्तर पर संसदीय लोकतंत्र की संस्थाएं बनाई हैं, और उनका विकास किया है। हमें सच्चे लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण को मात्रा और गुण की दृष्टि से प्रोत्साहित करना है और लोकतंत्र के साथ-साथ आर्थिक लोकतंत्र को विकसित करना है। इससे हमारे देश की विशाल मानवीय शक्ति की बहुमुखी रचनात्मक प्रतिभाओं को अभिव्यक्ति और विकास के अवसर मिल सकेंगे।

अपनी उल्लेखनीय जैव-विविधता, खनिज संपदा, मानवीय प्रतिभा, संस्थागत संरचना तथा विश्व के भूगोल में हमारे देश की महत्वपूर्ण स्थिति का विवेकपूर्ण तरीके से इस्तेमाल करके हम अपने देश का अच्छा विकास कर सकते हैं। यह सब करते हुए अपने महत्वपूर्ण राष्ट्रीय-मूल्यों को साफ तौर पर पूरी तरह से याद रखना है। प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, व्यक्तिगत स्वतंत्रता अधिकार और कर्तव्य तथा समानता और सामाजिक न्याय, सेवा और निःस्वार्थता तथा इसके लिए दृढ़ संकल्प का भाव हमारे कार्यों को निर्दिष्ट करें।

आइए, हम सब अपने सत-महात्माओ की वाणियो का चिंतन करें और अपने इतिहास से शिक्षा लें। विविधता में एकता और समानता हमारी विरासत के अंतर्भूत तत्व हैं, तथा हमारी राष्ट्रीय शक्तियों के महत्वपूर्ण स्रोत हैं। सदियो से हमने इस सत्य को आत्मसात किया है, और अभिव्यक्त भी किया है कि सभी धर्मो के आतरिक मूल्य और उद्देश्य एक-से हैं। हमारे अपने राष्ट्रीय जीवन के राजनीतिक, सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र के कार्यो मे प्रतिदिन इस समझ की पूरी तरह अभिव्यक्ति होती रहनी चाहिए।

दोस्तो, हम भारतीयों को यह पूरी तरह ध्यान रखना है कि दुनिया इतिहास के एक नये चरण में तेजी के साथ प्रवेश कर रही है, जिसमें देश के प्रत्येक नागरिक को इस नये परिप्रेक्ष्य में राष्ट्रीय हित के अपने कर्तव्यों का नये ढग से विश्लेषण करना है, उसे अपनाना है और उसे अपने-अपने जीवन और कार्यक्षेत्रों में पूरा करना है।

भारत के किसानो, जवानो और मजदूरों को, दस्तकारो और उद्यमियों को, वैज्ञानिकों, इजीनियरों और चिकित्सकों को, शिक्षकों, लेखकों, कवियों और कलाकारों को, जनप्रतिनिधियों, न्यायाधीशों और प्रशासनिक अधिकारियों को, सशस्त्र सैन्य-बलो और विशेपकर महिलाओं को अपने-अपने कर्तव्यों के बारे मे चिंतन करना है। हममें से हर एक को पूरी निष्ठा और लगन के साथ अपने निजी और सामूहिक दायित्वों को समर्पण भाव के साथ पूरा करना है।

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने कहा था : "मै चाहता हूँ कि भारत यह समझ ले कि उसके पास आत्मा है, जो पूरे विश्व की समस्त भौतिक शक्ति-समीकरणों पर भी विजय पा सकती है।"

हमारी यह विजय सत्य, अहिसा और सृजनात्मक प्रयासों के प्रति हमारी निर्भीक निष्ठा के बल पर होगी। यह विश्व की अंतरात्मा को जगायेगी, तथा पूर्व और पश्चिम के देशों एवं लोगों में लोकतत्र की आध्यात्मिक और नैतिक शक्ति को जागृत करेगी।

भारत सभी देशों और लोगों के साथ शांति, मित्रता और सहयोग चाहता है, विशेपकर इस उपमहाद्वीप के अपने पडोसियो के साथ तथा एशिया के उन देशों के साथ, जिनसे हमारे पारिवारिक एवं सास्कृतिक संबध है।

हम संपूर्ण मानवता के कल्याण के लिए विश्व के मामलो में रचनात्मक भूमिका निभाने के लिए प्रतिबद्ध है।

इसी प्रकार हम पूरे उत्साह के साथ अपनी स्वतंत्रता, राष्ट्रीय सार्वभौमिकता और अखंडता की रक्षा करेगे। भारत-शासन और भारत की जनता इस बारे में किसी भी तरह की दखलंदाजी कभी बर्दाश्त नहीं करेगी।

आइए हम सब उन लोगों के सपनों को पूरा करने का प्रयास करे, जिन्होने भारत की आजादी के लिए अपना सब कुछ न्यौछावर कर दिया था। आइए, हम सब इस तरह सेवा करें कि आने वाली पीढ़ियाॅ हमें इस रूप में याद करे कि हमने भी अपना कर्तव्य भली-भाति निभाया।

पंजाब केसरी लाला लाजपत राय

हमारी आज़ादी की लड़ाई के इतिहास में लाला लाजपत राय का नाम बहुत ही जाना पहचाना नाम है। हालांकि जब उनका निधन हुआ था, तब मेरी उम्र छोटी थी। किन्तु इसके बाद जब मैंने आगे पढ़ाई जारी रखी, और स्वतंत्रता संघर्ष से जुड़ा, उस समय लाला लाजपत राय का नाम हम जैसे युवाओं के लिए एक आदर्श और प्रेरणा का स्रोत बन गया था। मुझे याद है कि उस समय कुछ ऐसे महत्वपूर्ण नाम थे, जो हर जोशीले नौजवान के होठों पर हुआ करते थे। उनमे लोकमान्य तिलक के साथ-साथ लाला लाजपत राय का नाम भी था। उस समय प्रत्येक युवा बाल, पाल और लाल के नाम की अद्‌भुत त्रिवेणी में डुबकी लगाना चाहता था।

लाला लाजपत राय के मन में देश प्रेम की भावना भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के साथ ही आ गई थी, जो लगातार बढ़ती चली गई। उनका उत्कट राष्ट्र प्रेम लोकमान्य तिलक की परम्परा का राष्ट्र प्रेम था। अपनी सस्कृति और अपने राष्ट्र की अस्मिता के प्रति स्वाभिमान की भावना उनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। आप लोगों को मालूम ही होगा कि ब्रिटिश सरकार द्वारा प्रायोजित मिस केथरिन मेओ ने उस समय 'मदर इडिया' पुस्तक लिखी थी, जिसमें भारतीयो को असभ्य दर्शाया गया था। वे लाला लाजपत राय ही थे, जिन्होने 'अनहैप्पी इडिया' नामक पुस्तक लिखी और उस पुस्तक का तीखा जवाब देकर भारतीयो के स्वाभिमान को बढ़ाया था।

केवल इतना ही नहीं बल्कि लाला लाजपत राय ने विदेशी जन-मानस में भारतीय सभ्यता, सस्कृति और आज़ादी के लिए उनकी माग और संघर्ष की छवि बनाने के लिए कई पुस्तकें लिखीं। इसके लिए उन्होंने जापान और अमरीका जैसे देशों की यात्राएं कीं, और वहा व्याख्यान देकर लोगों को भारत के बारे में बताया। जब वे उपनिवेशवादी सरकार द्वारा बर्मा मे निर्वासित किए गए, उस समय उन्होंने महत्वपूर्ण पुस्तकों की रचना की। वे लम्बे समय तक किसी न किसी कारण से विदेशो में रहे और भारतीय स्वतंत्रता की पैरवी करते रहे। उनके इन कार्यो से

अखिल भारतीय स्वतत्रता सेनानी सगठन द्वारा लाला लाजपत राय के जन्म दिवस पर आयोजित समारोह मे, नई दिल्ली, 28 जनवरी, 1994

जहां हमारे देश की आजादी की लड़ाई के प्रति अन्तर्राष्ट्रीय जनमत बनाने में मदद मिली, वहीं स्वयं हमारे देश के लोगों में एक गौरव, स्वाभिमान और आत्मविश्वास का भाव पैदा हुआ। उनके इन कार्यो को देखते हुए उन्हें भारतीय सस्कृति का सच्चा राजदूत भी कहा जा सकता है।

लाला लाजपत राय ने अपने विचारों को व्यक्त करने के लिए उर्दू में 'वंदेमातरम्' नामक दैनिक और अग्रेजी में 'दि पीपुल' शीर्षक से साप्ताहिक अखबार निकाला। उनके तीव्र विचारों की ऊर्जा उनके लेखन की प्रभावशाली शैली में किस प्रकार व्यक्त होती थी, इसके लिए मैं आप लोगो के सामने 'वदेमातरम्' के प्रथम अंक में व्यक्त उनके विचारों का एक अंश रखना चाहूंगा। उन्होने लिखा था :

''मेरा मजहब हकपरस्ती (सत्य की उपासना) है, मेरी मिल्लत (धर्ममत) क़ौमपरस्ती (राष्ट्र की पूजा) है, मेरी इबादत ख़लकपरस्ती (विश्व की उपासना) है। मेरी अदालत मेरा अंन्त·करण है, मेरी जायदाद मेरी कलम है, मेरा मंदिर मेरा दिल है और मेरी उमंगें सदा जवान हैं।''

इसमें कोई दो मत नहीं कि लाला लाजपत राय हमेशा एक युवा की तरह जिए और अंत में एक युवा की तरह ही मरे। सच तो यह है कि वे किसी शूरवीर की तरह लड़ते हुए मरे, और मरने के बाद देशवासियों के दिलो में और भी अधिक जोश-खरोश के साथ जी उठे। बापू ने इस 'शेर-ए-पंजाब' के निधन पर अपनी श्रद्धाजलि देते हुए 'यंग इंडिया' के 22 नवम्बर, 1928 के अक में बिल्कुल सही लिखा था :

''जब तक हिन्दुस्तान के आसमान में सूरज चमकता रहेगा, तब तक लाला जी जैसा व्यक्ति नहीं मर सकता। लाला जी का अर्थ था-एक सस्था। अपनी युवावस्था से ही उन्होंने देश की सेवा को अपना धर्म बनाया। उनकी राष्ट्रभक्ति संकीर्ण नही थी। वे अपने देश को इसलिए प्यार करते थे, क्योंकि वे विश्व को प्यार करते थे।'' पूरे देश को मालूम :के सन् 1928 में जब लाला जी साइमन कमीशन का बहिष्कार कर कर रहे थे, उस समय हुए लाठी के प्रहार उनके निधन का कारण बने। इसके बावजूद वे दिल्ली में आयोजित अखिल भारतीय कांग्रेस समिति की बैठक में शामिल हुए थे। उस समय उन्होंने एक भविष्यवक्ता की तरह जो बात कही थी, वह 19 वर्ष बाद सही साबित हुई। उन्होने कहा था .

"मेरे शरीर पर पड़ी लाठी का प्रत्येक वार साम्राज्य के ताबूत की कील सिद्ध होगा।"

लाला लाजपत राय के इन शब्दों में अपने देशवासियों की संघर्ष शक्ति, अदम्य साहस तथा उत्कट जीवन-इच्छा के प्रति विश्वास की भावना झलकती है। ऐसा वाक्य वही व्यक्ति कह सकता है, जिसने अपने आपको राष्ट्र और राष्ट्र के लोगो के साथ पूरी तरह आत्मसात कर दिया हो और इसके बदले में राष्ट्र के लोगो ने भी उसे अपना बना लिया हो। लाला लाजपत राय ऐसे ही महान नेताओं में थे।

शिक्षा और समाज सुधार के क्षेत्र में भी लाला लाजपत राय का महत्वपूर्ण योगदान रहा है। पिता के द्वारा उन्हें शिक्षा के संस्कार मिले थे, जो डी.ए.वी. जैसे कालेज की स्थापना के रूप मे व्यक्त हुए। वे स्वयं एक अच्छे लेखक, निर्भीक पत्रकार और ओजस्वी वक्ता थे।

आर्य समाज के माध्यम से उन्होने सामाजिक कुरीतियो को दूर करने के प्रयास किए। अस्पृश्यता ओर स्वदेशी के मामले में वे बापू के प्रशंसक और समर्थक थे। उन्होने 'लोक सेवक मडल' की स्थापना की, और अपनी सारी सम्पत्ति उसी को समर्पित कर दी। बाढ़ और अकाल जैसे प्राकृतिक संकट के समय वे स्वयं लग जाते थे, तथा लोगो को भी लगाते थे। दलितों एवं तिरस्कृतों को समाज में सम्मानजनक स्थान दिलाने के लिए उन्होने काफी काम किया। उनके लिए मनुष्य-मनुष्य था, चाहे वह किसी भी जाति, भाषा, धर्म या क्षेत्र का हो। भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के कलकत्ता के विशेष अधिवेशन के अध्यक्ष के रूप मे उन्होंने कहा था :

"हम एक ऐसे नए तरह के लोकतंत्र का वायदा करते हैं, जिसमें रंग, धर्म, जाति, सभ्यता और संस्कृति के आधार पर कोई भेदभाव नहीं होगा। यह मनुष्य और मनुष्य के बीच अतर करने वाले उन किसी भी भेदभावों को स्वीकार नहीं करेगा, जो समाज के आडम्बर के कारण मौजूद हैं। इसका उद्देश्य मनुष्य की गरिमा को ऊचा उठाना है।"

यह हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं का मुख्य सपना था। इसी के लिए उन्होने आजादी चाही थी और इसी के लिए लाजपत राय जैसे देशभक्तों ने अपनी कुर्बानिया दी थीं। अंत में उनकी शहादत सफल हुई तथा हमे आजादी मिली। अब यह आज की पीढ़ी और आने वाली पीढ़ी का धर्म है कि वे हमारे नेताओं के इन सपनों को पूरा करे।

हमें एक ऐसा समाज बनाना है, एक ऐसा देश बनाना है, जिसका प्रत्येक व्यक्ति सम्पूर्ण मानवीय गरिमा के साथ जीते हुए समाज और राष्ट्र के विकास में अपना भरपूर योगदान करे। स्वतत्रता आंदोलन के समय की पीढ़ी ने हमें आजादी दिलाई। अब यह प्रत्येक नागरिक का फर्ज है कि उस आज़ादी के लाभ को प्रत्येक व्यक्ति तक पहुंचाने के प्रयास करे। लोकतंत्र अपनी सच्ची आत्मा के अनुरूप तभी पूरी तरह से काम कर सकेगा, जब हमारे देश की लोक शक्ति संगठित होकर देश को आगे बढ़ाने में लगे। इस काम के लिए विशेषकर युवाओं को आगे आना होगा क्योंकि उनके पास सबसे अधिक और ताजी ऊर्जा होती है, और उनकी आखो मे एक अच्छे भविष्य का सपना पल रहा होता है। उनके सामने एक लम्बा भविष्य होता है, जिसके लिए उन्हें अपने वर्तमान को अधिक से अधिक सक्रिय करना होगा। मै इस अवसर पर लाला लाजपत राय के उन शब्दों को दुहराना चाहूगा, जो उन्होंने नागपुर में आयोजित अखिल भारतीय महाविद्यालय विद्यार्थी सम्मेलन में 1920 में कहे थे। उन्होंने युवकों से अपील की थी :

"हमारे पास जो भी ताकत है, जो भी समय है और जितने भी साधन है, उन सबको स्वराज्य प्राप्ति के लिए एक स्थान पर केन्द्रित किया जाना चाहिए।"

उस समय ऐसा किया गया, जिसके नतीजे मे हमें आजादी मिली। मैं समझता हूं कि इसी भावना की आज फिर से जरुरत है। अगर हमारे देश के लोग अपनी रचनात्मक ऊर्जा और अपने साधनों को राष्ट्र निर्माण मे लगा दें, तो ऐसी कोई ताकत नही, जो हमें सफल होने से रोक सके।

मैं आशा करता हूं कि लाला लाजपत राय का यह जन्म दिवस हमारे देश के लोगों में कर्म और राष्ट्र प्रेम की उत्कट भावना को और भी मज़बूत बनाएगा।

निरस्त्रीकरण की आवश्यकता

श्रीमती इदिरा गांधी ने शान्ति, निरस्त्रीकरण और विकास को सभी राष्ट्रो और लोगों की नैसर्गिक और महत्वपूर्ण जरूरतों के रूप में जाना था। उनकी यह सोच मानवीय स्थिति के सम्पूर्ण हालात की उनकी गहरी समझ और दूरदर्शी दृष्टि का परिणाम थी। उन्होंने मानवीय गरिमा और कल्याण के उद्देश्य के लिए दृढ़ता और अदम्य साहस के साथ सघर्प किया। एक ऐसे समय में जब शीत-युद्ध के शक्तिशाली तनावों के बीच मानवता उलझ कर रह गई थी, वे शान्ति और विश्व एकता के उद्देश्य की एक साहसिक प्रणेता के रूप मे उभरीं। इन्दिरा गांधी ने एक ऐसे उद्देश्य की प्राप्ति के लिए संघर्प किया जो भारतीय सोच की विरासत पर आधारित था और जिसकी अभिव्यक्ति हमारी स्वतंत्रता प्राप्ति के समय पं0 जवाहर लाल नेहरू ने की थी। सविधान सभा मे प0 नेहरू ने कहा था : ''शान्ति को अविभाज्य कहा जाता है। इसी प्रकार से पूरे विश्व में, जिसे अब अलग-अलग टुकड़ों में नहीं वाटा जा सकता, स्वतंत्रता भी अविभाज्य है और समृद्धि भी अविभाज्य है तथा इसी प्रकार तबाही को भी विभाजित नहीं किया जा सकता।''

यह एक सुखद सयोग है कि यह प्रतिष्ठित पुरस्कार एक ऐसे विशिष्ट, बौद्धिक, एवं मानवतावादी तथा चेक गणराज्य के उस नेता को दिया जा रहा है जिसके देश और लोगो ने इन्दिरा गांधी को गहरे रूप से प्रभावित किया था। श्रीमती इन्दिरा गांधी ने कहा था, ''विद्यार्थी जीवन मे मै यूरोपीय इतिहास की एक काली अवधि के दौरान अपने पिता के साथ पहली बार प्राग आई   यह यात्रा मेरे लिए एक प्रकार की राजनैतिक शिक्षा के समान थी   एक महत्वपूर्ण सत्य मेरे मस्तिष्क में अंकित हो गया: साहस पर कितना कुछ निर्भर करता है।'' ये शब्द उन्होनें जून, 1972 में प्राग के चार्ल्स विश्वविद्यालय में पं0 जवाहर लाल नेहरू के साथ 1938 में द्वितीय विश्व महायुद्ध के ठीक पहले की गई अपनी यात्रा के अपने अनुभवों का ज़िक्र करते हुए कहे थे।

द्वितीय विश्व युद्ध के उन वर्पो में स्वतत्रता और मानव गरिमा के प्रति भारतीय

चेक गणराज्य के राष्ट्रपति श्री वात्सलाव हावेल को शाति, निरस्त्रीकरण और विकास के लिये इदिरा गाधी पुरस्कार 1993 प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 8 फरवरी, 1994

संघर्ष अपनी चरम सीमा पर पहुंच चुका था। श्रीमती इंदिरा गाधी ने एक बहुत ही महत्वपूर्ण बात कही, ''विपमता की यह एक कर्ण रेखा थी जिसने हमारे बीच एक गहरा सबंध स्थापित कर दिया।'' यह संबंध था जो भारत और राष्ट्रपति हावेल के देश के लोगों के बीच स्थापित हुआ।

इतिहास जानता है कि भारत में स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने मानवीय गरिमा, मानव अधिकारो और सभी देशों के लोगों की स्वतंत्रता के उद्देश्य को सर्वोपरि रखा। 1936 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के लखनऊ अधिवेशन में अपने भाषण मे पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था, ''विश्व की उन सभी प्रगतिशील ताकतो को, जो राजनीतिक और सामाजिक बंधनो को तोड़कर मानवीय स्वतंत्रता मे आस्था रखती हैं, फासीवादी और साम्राज्यवादी हथकडो के विरुद्ध उनके संघर्ष में हम अपना पूरा समर्थन देते हैं, क्योंकि हमें इस बात का अहसास है कि हमारी लड़ाई एक-सी-है। हम अपने युग की भावना का प्रतिनिधित्व कर रहे हैं और अपने तथा अन्य देशों के अनगिनत व्यक्तियों के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रहे है। जन साधारण और विश्व की अन्य ताक़तो के साथ एकनिष्ठ होने का उल्लास हमें यह भावना प्रदान करता है कि हम एक ऐतिहासिक भविष्य के वाहक है।''

हमारे संविधान में मानव अधिकारों की जोरदार अभिव्यक्ति के पीछे एक तीखा परन्तु महान इतिहास छिपा है। राष्ट्रीय मूल्यों के प्रति हमारे लोगों की राष्ट्रव्यापी प्रतिबद्धता ही हमारी प्रगति का सच्चा आधार है। अपनी सस्कृति तथा सोच, और अपने महान नेताओं और विचारकों से प्रेरणा लेकर तथा चारो ओर विद्यमान श्रेष्ठतम विचारों को आत्मसात करके हमने इस कार्य प्रणाली को अपनाया है।

विभिन्न विचारधाराओं, धार्मिक विश्वासों और आस्थाओ के प्रति सम्मान की भावना भारतीय आध्यात्मिक विरासत का मूल तत्व है। हमने माना है कि यह भावना एक ऐसे सभ्य समाज की रचना के लिए आवश्यक है, जिसमे लोगों की नैसर्गिक प्रतिभा और रचनाशीलता प्राकृतिक रूप से स्वतंत्र अभिव्यक्ति प्राप्त करे। वास्तव में, यही वह दृष्टिकोण है जिसने भारत को एक बनाए रखा है और साम्राज्यवादी ताकतों की 'फूट डालो और राज करो' की नीति को विफल किया है। विश्व के अन्य देशों के लिए भारत का यह एक महत्वपूर्ण संदेश है।

राष्ट्रपति वात्सलाव हावेल के रूप में एक अत्यंत सुहृदय व्यक्ति हमारे सामने

हैं। वे एक मौलिक विचारक हैं, उनमें एक रचनाधर्मी की आत्मा है और एक ऐसे राजनयिक के गुण हैं जिसके विचारों और नेतृत्व ने मानव जीवन के अर्थ और उसकी जरूरतो के प्रति हमारे भीतर एक नई और गहरे रूप से सवेदनशील जागरूकता का संचार किया है। राष्ट्रपति हावेल के देश में 'मखमली क्रांति' ने जिस सदाशय के साथ मानवतावाद, अहिसा और सत्य के जिन आदर्शो को साकार किया है, वे भारत के ही ऐसे राष्ट्रीय मूल्य हैं जिनसे हमारा गहरा लगाव है।

राष्ट्रपति हावेल यूरोप में व्यापक परिवर्तनों के एक प्रेरक स्रोत के रूप मे कार्य कर रहे हैं। उनमे हमे अपने समय के एक अग्रणी बुद्धिजीवी और संकल्प शक्ति के धनी एक साहसिक व्यक्ति की छवि दिखाई देती है। तीन बार जेल की यात्रा कर, लगभग पांच वर्षो की यातना से गुजर कर उन्होने अपनी अदम्य आस्था के वल पर ही घने अंधकार से चलकर एक नई सुबह तक का सफर तय किया है। वात्सलाव हावेल ने अपने राष्ट्र की अन्तरात्मा को मुखरित किया और अन्तत· उनके विरोधियों तक को यह स्वीकार करना पड़ा कि वे अपने सिद्धांतो और आस्थाओं के प्रति सदैव ही वचनबद्ध रहेगे।

''शक्तिहीनों की शक्ति'' शीर्षक से सन् 1978 में लिखे अपने एक लेख में श्री वात्सलाव हावेल ने लिखा था, ''विचारधारा किसी प्रणाली की खामियों और व्यक्ति के बीच एक पुल का निर्माण कर उस प्रणाली-विशेष के उद्देश्यों और जीवन के उद्देश्यों के वीच की खाई को पाटती है। ये हमें एक झूठा आभास देती है कि उस प्रणाली की जरूरतें जीवन की जरूरतों से ही निकलती है। यह दिखावे की एक दुनिया है जो वास्तविकता का बाना धारण कर हमारे सामने आती है।''

उन्होंने कहा था कि वास्तविक सवाल यह है कि ''सुनहरा भविष्य क्या सचमुच सदैव हमसे इतनी दूर ही रहेगा। क्या, इसके विपरीत, ऐसा नहीं है कि ये काफी लंबे समय से, हमारे पास पहले से ही मौजूद है, और स्वय अपनी दृष्टिहीनता और कमजोरियों के कारण हम इसे अपने चारों ओर, अपने ही भीतर नहीं देख पा रहे और इसका विकास नहीं कर रहे?'' इस प्रकार मनुष्यों की स्थिति को बदलने के लिए मिलजुल कर पहल करने, परस्पर समन्वय तथा सद्भाव और आपसी समझ-बूझ की आवश्यकता पर उन्होंने जोर दिया।

राष्ट्रपति हावेल ने एक विचारक, लेखक और नेता के रूप में सम्पूर्ण राजनीतिक पटल को प्रभावित किया है।

सन् 1977 में राष्ट्रपति हावेल मानव अधिकारों के चार्टर 77 के सह संस्थापक बने। न्याय विरुद्ध रूप से सजा पाए लोगों की रक्षा के लिए वनाई गई समिति के भी वे सदस्य रहे। मानव अधिकारों और स्वतंत्रता को सुरक्षित रखने की अपनी सतत क्रियाशीलता के कारण वे 1979 से 1983 तक जेल में बंदी रहे। रिहाई के बाद उन्होंने 'लारगो डिजेलेटो'. 'टेम्पटेशन' और 'स्लम क्लीयरेन्स' — तीन प्रमुख नाटक लिखे। 'लारगो डिजेलेटो' में उन्होंने एक व्यवस्था विरोधी लेखक और विचारक के समक्ष आने वाले दबावों का अत्यंत शक्तिशाली चित्रण किया। नवम्बर, 1989 में श्री हावेल नागरिक मंच आंदोलन के एक नेता बन गए। उनके नेतृत्व और संदेश की यह महानता ही थी कि जब चेकोस्लोवाकिया ने चेक और स्लोवाक गणराज्यों के रूप में अलग होने का फैसला किया तो विभाजन की सारी प्रक्रिया बिना किसी प्रकार की हिंसा के, शांतिपूर्ण ढंग से सम्पन्न हो गई।

यूरोप में प्रजातान्त्रिक सुधारों के प्रति अहिंसात्मक आंदोलन ने जो वदलाव पैदा किए हैं, वे दूरगामी महत्व के हैं। यूरोप में बहुदलीय प्रणाली पर आधारित प्रजातंत्र के पुनर्भाव से लोगों को अपने राष्ट्रीय कौशल के अनुरूप समाज को ढालने के अवसर मिले हैं। आधुनिक यूरोप के इतिहास पर व्यवस्था विरोधी नाटककार हावेल के संदेश ने निसस्देंह ही एक शक्तिशाली प्रभाव डाला है। बहुलवाद, सद्भाव और एकता के इस संदेश ने, जो इंदिरा गांधी को अत्यंत प्रिय था, विश्व में शांति और आपसी समझ-बूझ की प्रक्रियाओं को निश्चित ही सकारात्मक रूप से आगे बढ़ाया है।

जनवरी, 1990 में राष्ट्रपति हावेल ने अपनी एक आकांक्षा, एक लक्ष्य को अभिव्यक्त किया था। मैं उसे उद्धृत करता हूं, "हमारा देश . . प्रेम, सद्भाव तथा आत्मिक और वैचारिक शक्ति के पुंज रूप में स्थायी रूप से अव अपना प्रकाश बिखेर सकता है। यही वह चमक है जिसे अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अपने विशिष्ट योगदान के रूप में हम पेश कर सकते हैं।"

हमारी यह मान्यता है कि उनके यह शब्द उन्हीं आदर्शो द्वारा प्रेरित है जिन्हें श्रीमती इंदिरा गांधी और उनसे पहले पं0 जवाहर लाल नेहरू और महात्मा गांधी ने आने वाली पीढ़ियों को राह दिखाने के उद्देश्य से एक जाज्वल्यमान मशाल के रूप में ऊँचा उठाए. रखा।

राष्ट्रपति हावेल ने राजनीति में उसके अत्यन्त आवश्यक आयाम — नैतिकता-

को पुनर्स्थापित करके महान सेवा की है। मानवतावाद और राजनीति को एकजुट करने का उनका संदेश मानवीय गरिमा, आशा और सत्य पर आधारित एक नए समाज के निर्माण का संदेश है। वास्तव में वे 1993 के इंदिरा गांधी पुरस्कार के एक सुयोग्य पात्र हैं। इस पुरस्कार की उनके द्वारा स्वीकृति, भारत और चेक गणराज्य को एक सूत्र में बांधने वाले घनिष्ठ सांस्कृतिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक बंधनों को परिलक्षित करती है। एक बेहतर विश्व के निर्माण के प्रति हमारे समान आदर्शों और समर्पणभाव की प्रासंगिकता का भी यह एक महत्वपूर्ण प्रतीक है।

राष्ट्र की उपलब्धियां

नए वर्ष में आपको सम्बोधित करते हुए मुझे यह महसूस हो रहा है कि आज देश का परिप्रेक्ष्य विगत वर्ष की तुलना मे बदला हुआ है। वर्ष 1993 के शुरू में हमारे सामने अनेक कठिनाइयां आई, लेकिन जैसे-जैसे यह वर्ष बीतता गया, हमारे नागरिकों ने अत्यधिक स्वस्थ प्रतिक्रिया अपनाई, और 1993 का वर्ष समाप्त होते-होते निश्चित ही आशा की किरण सामने दिखाई देने लगी। सभी मोर्चो पर निरंतर प्रगति हुई, जिसका आभास कानून तथा व्यवस्था की सुधरती हुई स्थिति, खाद्यान्नों का रिकार्ड उत्पादन, खरीद के अभूतपूर्व स्तर, खाद्यान्नों के वहुत वड़े भंडार, मुद्रास्फीति को एकल अंकीय स्तर पर वनाए रखने, विदेशी मुद्रा के संतोषजनक भंडार, व्यापारिक घाटे में पर्याप्त कमी, निर्यात मे वृद्धि, मूलभूत संरचना के कुछ आवश्यक क्षेत्रों के कार्य-निष्पादन में सुधार और प्रत्यक्ष तथा पोर्टफोलियो, दोनों में अधिक विदेशी पूंजी निवेश से मिलता है। ये सभी हमारे उभरते हुए आशावाद के प्रतीक हैं, और इसके औचित्य को सिद्ध करते हैं। हमने राष्ट्रीय स्तर पर अपनी ऊर्जा को और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर अपने विश्वास को फिर से प्राप्त कर लिया है। हमारे पास इस सर्वतोमुखी उपलब्धि पर संतुष्टि महसूस करने का कारण है, और इसका प्रमाण है। लेकिन हमने अपने सामाजिक और आर्थिक विकास के लिए जो लक्ष्य निर्धारित किए हैं, उन्हे प्राप्त करने के लिए हमे अभी बहुत कुछ करना है। इसी आशा के आधार पर सरकार 1994 में अपने लक्ष्य की ओर अग्रसर हो रही है।

कानून और व्यवस्था की स्थिति में व्यापक सुधार आया है। पूर्वोत्तर क्षेत्रों में विद्रोह की स्थिति नियंत्रण में रही। पिछले वर्ष पंजाब में जो सफलता प्राप्त हुई, उसे और सुदृढ़ किया गया है। देश के पांच राज्यों और राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली में चुनाव शांतिपूर्ण ढंग से सम्पन्न हुए। सरकार इस सुधार की उपलब्धियों को बनाए रखने के लिए दृढ़ संकल्प है, और शेप महत्वपूर्ण क्षेत्रों में यह प्रक्रिया प्रारम्भ करने के लिए प्रयासरत है।

पिछले वर्ष लगभग इसी समय राष्ट्रीय परिदृश्य पर अयोध्या मसले की छाया

ससद के समक्ष अभिभाषण, नई दिल्ली, 21 फरवरी, 1994

रही। विध्वंस और उसके बाद हुए दंगों के सम्भावित असर को लेकर लोगों में गहरी चिता व्याप्त थी। देशवासियों में व्याप्त बुद्धिमत्ता और दूरदर्शिता को ही यह श्रेय प्राप्त है कि तरह-तरह की जो भ्रांतियां फैलाई जा रही थीं, वे सब गलत साबित हुई। वातावरण में पर्याप्त सुधार आया है, और हम इस विवाद के स्थायी समाधान की आशा कर सकते हैं। संविधान के अन्तर्गत यह मामला उच्चतम न्यायालय को सौंपा गया है, और इस न्यायालय द्वारा उस पर कार्यवाही की जा रही है। उच्चतम न्यायालय की राय को ध्यान में रखते हुए सरकार समुचित उपाय करेगी।

अयोध्या का मसला आज साम्प्रदायिकता को राजनीति से जोड़ने में निहित खतरे का ज्वलत उदाहरण है। इस विकार को दूर करना और धर्म तथा राजनीति; दोनों को अपने-अपने न्यायसंगत क्षेत्रों में बनाए रखना अत्यंत महत्वपूर्ण है। हमारे धर्मनिरपेक्ष देश की आज यही मांग है। आवश्यकता इस बात की है कि इस मसले पर पूरी तरह से विचार-विमर्श किया जाए, और इसके लिए कारगर उपाय किए जाएं। सरकार इस वारे में दिए गए सुझावों का स्वागत करेगी।

जम्मू और कश्मीर में हम आतंकवाद के विरुद्ध ठोस कार्रवाई करने की नीति पर चल रहे हैं। इस वर्ष पुलिस तथा सुरक्षा सेनाओ को अपनी आतंक-विरोधी कार्रवाइयों में पर्याप्त सफलता मिली है। उनकी कार्य-दक्षता को और वढ़ाने के लिए उपाय किए गए हैं। इस बात के पूरे प्रयास किए जा रहे हैं कि वल प्रयोग करने मे अधिक से अधिक संयम बरता जाए। हज़रतबल दरगाह में जो भारी सकट उत्पन्न हो गया था, उसे प्रशासन और सुरक्षा सेनाओं ने जनता के सहयोग से सराहनीय ढग से हल किया। इस संकट के समाधान ने सरकार के संयम के दृष्टिकोण की क्षमता को प्रदर्शित किया है। जब भी कोई ऐसी घटना हुई है, जिसमें लगा हो कि वल का अधिक प्रयोग किया गया है, तो तुरन्त जांच बैठाई गई है और इस पर कार्रवाई की गई है। कानून और व्यवस्था को बहाल करने के लिए आतंकवादियों के विरुद्ध कार्रवाई जारी है, साथ ही प्रशासन को चुस्त बनाने के लिए समुचित उपाय किए जा रहे हैं। रोजगार के अवसर पैदा करने के लिए विकास और आर्थिक गतिविधियों को बढ़ाया गया है, और शिकायत निवारण तंत्र को सुदृढ़ किया गया है। हम आम जनता की परेशानियों के बारे में बहुत चिंतित हैं। हम जनता से जुड़ी समस्याओं को दूर करने के लिए उनकी प्रभावी भागीदारी का भी प्रयत्न कर रहे हैं। जम्मू-कश्मीर, भारत का अविभाज्य

अंग है, और हम इसमें सीमा पार से या अन्य किसी ओर से अस्थिरता पैदा करने के किसी भी प्रयास को निष्फल कर देंगे।

पूर्वोत्तर क्षेत्र में बोडो समझौते के अनुरूप अंतरिम बोडोलैंड स्वायत्त परिषद् की स्थापना जनजातीय लोगों की आकांक्षाओं को पूरा करने की दिशा में सकारात्मक कदम है। जब कोकराझार और बोगाईगांव जिलों में गैर-जनजातीय लोगों के खिलाफ हिसा भड़की, तो असम सरकार ने त्वरित कार्रवाई की। नागा और कुकी लोगो के बीच हिंसा भड़कने और मणिपुर मे कानून और व्यवस्था की सामान्य स्थिति बिगड़ने पर सरकार ने संविधान के अनुच्छेद 356 के अन्तर्गत कार्रवाई की। इससे यह परिलक्षित होता है कि सरकार विघटनकारी तत्वों से सख्ती से निपटेगी।

भारत के भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता में राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग का गठन किया गया। आयोग के सदस्यो में एक भूतपूर्व न्यायाधीश उच्चतम न्यायालय के और एक भूतपूर्व मुख्य न्यायाधीश उच्च न्यायालय के हैं। आयोग की स्थापना इस बात की द्योतक है कि हम मानवाधिकार के मसले पर शीघ्र और स्पष्ट कार्रवाई करने के लिए दृढ़ सकल्प हैं। आयोग ने पूरे संकल्प से अपना कार्य प्रारम्भ कर दिया है।

संसद के प्रति कार्यपालिका की जवाबदेही को सुनिश्चित करने के लिए अप्रैल, 1993 में विभागों से संबद्ध संसद की 17 स्थायी समितिया गठित की गई, ताकि संसद में प्रस्तुत किए जाने वाले विधेयकों, अनुदान मांगों, मंत्रालय की वार्षिक रिपोर्टो और राष्ट्रीय बुनियादी दीर्घकालीन नीति प्रलेखों की विस्तृत जांच की जा सके। इससे ससद के कामकाज मे भारी सुविधा होगी।

देश को प्राकृतिक आपदाओं का भी सामना करना पड़ा है। महाराष्ट्र में भूकम्प से हुई अभूतपूर्व क्षति इनमें सबसे बड़ी है। इन सभी आपदाओं मे सरकार ने सराहनीय सतर्कता का परिचय दिया है, और तेज़ी से राहत प्रदान की है। कई अन्य देशों की सरकारों, विश्व बैंक और अन्य संस्थाओ ने भी तत्परता से सहायता की है। हम उन सभी के आभारी हैं। महाराष्ट्र के भूकम्प प्रभावित क्षेत्रों में एक हजार करोड़ रुपए के परिव्यय का एक बृहद पुनर्निर्माण कार्यक्रम शुरू किया जा रहा है। इस पुनर्निर्माण कार्यक्रम में गैर-सरकारी संगठनो को भी समुचित रूप से संबद्ध किया जा रहा है।

1991 में शुरू किए गए आर्थिक सुधारों ने पिछले वर्ष गति पकड़ी और

उन्हें निरंतर आगे बढाया गया है। इसके बावजूद अभी और बहुत कुछ किए जाने की आवश्यकता है। सरकार यह जानती है कि सुधार कभी भी पीछे न मुड़ने वाली और अनवरत चलने वाली प्रक्रिया है। इसके प्रति देश की प्रतिक्रियाओं तथा परिस्थितियों को हमेशा ध्यान मे रखकर दृढ़ता और दूरदर्शिता से इसे लागू किए जाने की आवश्यकता है। इस दृष्टिकोण के परिणामस्वरूप कार्यान्वयन में निरतर और ठोस प्रगति हुई है, जो आम सहमति पर आधारित है। हम सावधानी से इस गति को और आगे बढ़ाएगे।

सरकारी तथा गैर-सरकारी क्षेत्रों के कार्यनिष्पादन तथा उनकी भावी सम्भावनाओं को ध्यान में रखते हुए, सरकारी उपक्रमों के लिए आरक्षित क्षेत्रों में कमी की गयी है, तथा कुछ और उद्योगों को लाइसेंस से मुक्त कर दिया गया है। 31 मार्च 1993 को घोपित नई आयात-निर्यात नीति में कृपि और सेवाओं के क्षेत्र मे, जिनमें देश तुलनात्मक दृष्टि से बेहतर स्थिति मे है, निर्यात की प्रक्रियाओं को कारगर और उदार बनाने के प्रयास किए गए। वर्ष 1993-94 के बजट में अधिक बल दिए जाने की आवश्यकता वाले क्षेत्रों में निवेश के लिए वित्तीय प्रोत्साहनो की सुविधा प्रदान की गई।

सुधार कार्यक्रम तैयार करते समय सरकार द्वारा वित्तीय क्षेत्र में सुधारो पर विशेप बल दिया गया है। वित्तीय संस्थाओ को अनिवार्यत: नया स्वरूप देना, और उन्हें मजबूत बनाना होगा, ताकि वे निजी क्षेत्र में बढ़ी हुई गतिविधियों के कारण आए नए उत्तरदायित्वों का निर्वाह कर सकें। मार्च 1993 मे एक महत्वपूर्ण नीतिगत परिवर्तन विनिमय दर का एकीकरण और रुपए को खुले बाज़ार में प्रवाह की छूट प्रदान करना था। यह तथ्य कि रुपए को खुले बाजार में लाने के बाद उसका मूल्य स्थिर रहा है, इस विपय मे सरकार के उचित निर्णय का प्रमाण है।

मूल आर्थिक सूचकों से यह पता चलता है कि हालांकि यह वर्प कठिन परिस्थितियों मे प्रारम्भ हुआ था, किन्तु वर्ष 1993-94 के दौरान अर्थव्यवस्था का कार्य निष्पादन संतोपप्रद रहा है। वर्प 1992-93 में सकल घरेलू उत्पाद में अनुमानत: 4 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। सरकार को यह आशा है कि वर्ष 1993-94 में भी विकास की दर लगभग इसी स्तर पर बनी रहेगी। इस वर्प कुछ समय के लिए मुद्रास्फीति की दर गिर कर 6 प्रतिशत से भी कम हो गई, जबकि इसकी उच्चतम दर 8.4 प्रतिशत रही।

अन्तर्राष्ट्रीय निवेशकों का भारतीय बाजार में विश्वास बढ़ा है। नई औद्योगिक

नीति के प्रारम्भ से 1993 के अंत तक अनुमोदित प्रत्यक्ष विदेशी पूंजी निवेश इक्विटी के रूप में अब लगभग 13,000 करोड रुपए है। इन परियोजनाओं में 65,000 करोड़ रुपए का कुल निवेश होने का अनुमान है। इस पूंजी निवेश की महत्वपूर्ण बात यह है कि इसका अधिकांश भाग बिजली, तेल शोधन, खाद्य प्रसंस्करण, धातुकर्मीय उद्योग, विद्युत उपस्कर, रसायन और इलैक्ट्रानिक तथा अन्य प्राथमिकता वाले क्षेत्रों में लगाए जाने का प्रस्ताव है। प्रस्तावित पूंजी निवेश का लगभग 7 प्रतिशत ही ऐसे उत्पादों के लिए होगा, जिन्हें उपभोक्ता वस्तुओं की श्रेणी में रखा जा सकता है। निवेश की इस राशि को 3-4 वर्ष की अवधि में खर्च किया जाएगा,, जो कि वृहत् परियोजनाओ के प्रारम्भ होने से उत्पादन शुरू होने तक की अवधि है।

सरकार निर्यात को बढ़ावा देने पर बराबर भारी जोर दे रही है। व्यापार नीति में किए गए परिवर्तनों एवं विनिमय दर को मुक्त किए जाने तथा अर्थव्यवस्था का सामान्य उदारीकरण किए जाने के सुपरिणाम निकले हैं, और निर्यात में खासी वृद्धि हुई है। अप्रैल-दिसम्बर, 1993 की अवधि में यह वृद्धि डालर के रूप में 20 प्रतिशत के करीब थी, जबकि 1992 की इसी अवधि में यह वृद्धि 3 प्रतिशत से कुछ अधिक थी।

सरकार कृषि के विकास को सर्वोच्च प्राथमिकता देती है। पर्याप्त और तर्कसंगत मूल्यों वाले निवेशो का समय पर प्रावधान करना, तथा एक ऐसी व्यवस्था स्थापित करना, जिससे समय पर मूल्य की घोषणा हो सके, और जिससे अधि[illegible] उत्पादन हो, तथा देश की घरेलू जरूरतों के साथ-साथ निर्यात की जरूरतों [illegible] पूरा किया जा सके, सरकार के प्रमुख उद्देश्य हैं। समग्र कार्यनीति के अनु[illegible] कृषि एवं सहकारिता विभाग के लिए योजना परिव्यय में 26 6 प्रतिशत की [illegible] कर दी गई है। 1992-93 मे जहां यह 1,050 करोड़ रुपए था, वहां [illegible] 94 में बढ़ाकर इसे 1,330 करोड़ रुपए कर दिया गया है। 1992-93 [illegible] का उत्पादन अठारह करोड़ मीट्रिक टन रहा, जो 1991-92 में हुए [illegible] 7.1 प्रतिशत से भी अधिक था। 1993-94 मे खरीफ फसल मे खाद्या[illegible] 9 करोड़ 90 लाख मीट्रिक टन होने की आशा है। रबी की फसल [illegible] अच्छी होने की सम्भावनाएं हैं।

सरकार उद्यान-कृषि, जल-जीव संवर्धन, तिलहनो, दालो तथा निर्यात की सम्भावना वाली अन्य वस्तुओं को महत्व देकर कृषि क्षेत्र के विविधीकरण को

प्रोत्साहित कर रही हैं। किन्तु ऐसा करते समय इस बात का ध्यान रखा जाएगा कि हमारे अपने उपभोक्ताओं के हितों को कोई नुकसान न पहुंचे। ग्रामीण सहकारिता ऋण प्रणाली तथा विशेष रूप से दूर-दराज के क्षेत्रो में किसानों के लिए विपणन, संसाधन एवं अन्य अनिवार्य सेवाओं को पुन. सक्रिय बनाने के प्रयास किए जा रहे हैं। कृषि क्षेत्र की नई प्राथमिकताओं को ध्यान में रखते हुए विस्तार सेवाओ को व्यापक आधार दिया जाएगा और इसमें स्वैच्छिक संगठनो का भी और अधिक सहयोग लिया जाएगा।

निर्धनता स्तर को घटाने के उपाय के रूप में हमारी कृषि नीति का लक्ष्य भू और जल सरक्षण की समन्वित नीति तथा कार्बनिक और जैव-उर्वरको तथा उन्नत प्रौद्योगिकी जैसे कृषि निवेशों का प्रयोग बढ़ाकर वर्षा-सिंचित क्षेत्रों के लिए पुनर्गठित राष्ट्रीय जल-विभाजक विकास परियोजना के लिए 1,100 करोड़ रुपए आवंटित किए गए हैं। शुष्क भूमि कृषि प्रौद्योगिकी द्वारा लगभग 30 लाख हेक्टेयर भूमि को अनाज, चारा, ईधन और रेशे के सतत उत्पादन के लिए तैयार किया जा[illegible]। इसके परिणामस्वरूप घरेलू उत्पादन प्रणाली में विविधता आएगी तथा अंततः जल विभाजक क्षेत्रों में रहने वाले लोगों की आय के स्तर और रोजगार के अवसरो में [illegible] होगी। इस परियोजना से भूमिगत जल की उपलब्धता बढ़ेगी, जिससे परि[illegible] [illegible]त्र में सूखे से बचा जा सकेगा। वर्षा सिंचित क्षेत्रों में विकसित किए जाने [illegible] 2,500 छोटे जल-विभाजक क्षेत्रों की पहचान की गई हैं, और इन पर काम [illegible] कर दिया गया है।

नाइट्रोजन उर्वरको की विनिर्माण क्षमता को भी बढ़ाया गया है, और इससे भी अधिक बढ़ान की योजना बनाई जा रही है। चूंकि देश में उर्वरकों के उत्पादन के लिए अपेक्षित कच्चे माल की उपलब्धता सीमित है अतः विदेशो में विशेषकर, खाड़ी देशों और पश्चिम एशिया के देशों में संयुक्त उपक्रम स्थापित किए जाने के प्रयास किए जा रहे हैं। सरकार भू पोषकों का संतुलित प्रयोग करने के लिए सभी आवश्यक उपाय करती रहेगी, जिससे उत्पादन का स्तर बनाए रखा जा सके।

कृषि नीति के अंग के रूप में, राज्यो को सलाह दी गई है कि वे खाद्यान्नो को राज्यों में लाने-ले जाने के संबंध में सभी प्रतिबंधो को हटा दें।

उपभोक्ताओं के हितो को संरक्षित करने में सरकार की प्रतिबद्धता हमेशा ही प्रबल रही है। गरीबों की खर्च-सामर्थ्य को बढ़ाने की दृष्टि से नवीकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली क्षेत्रों के लिए केन्द्रीय निर्गम मूल्य को सामान्य

सार्वजनिक वितरण प्रणाली के मूल्यों की तुलना मे 500 रुपए प्रति मीट्रिक टन तक कम रखा गया है। वर्ष 1992 मे योजना के शुरू होने के समय वितरण व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने के लिए सार्वजनिक वितरण प्रणाली क्षेत्र के अन्तर्गत 10 हजार, 580 नई उचित दर की दुकानें खोली जानी सम्भावित थीं। इसमें से इन क्षेत्रों में निर्धारित लक्ष्य की सीमा को पार करते हुए 11,681 नई उचित दर दुकाने खोली जा चुकी हैं। इस योजना के लागू होने समय से 1,81,296 टन भंडारण क्षमता वाला स्थान उपलब्ध कराया गया है, या किराए पर लिया गया है। नवीकृत सार्वजनिक वितरण प्रणाली की मध्यावधि समीक्षा करने पर यह ज्ञात हुआ है कि योजना के लागू होने से पूर्व की तुलना में, करीव 15 लाख मीट्रिक टन अधिक खाद्यान्न ग्रामीण क्षेत्रों को उपलब्ध करा दिया गया है। इस प्रकार सार्वजनिक वितरण प्रणाली में एक नया ग्रामीण आयाम जुड़ा है। खरीद प्रयासों मे तेजी लाए जाने से 1 जनवरी, 1994 को केन्द्रीय पूल मे स्टाक 2 करोड़ 20 लाख टन तक पहुंच गया, जो अब तक का रिकार्ड स्टाक है। आवश्यक हुआ तो सरकार इन क्षेत्रों में और अधिक प्रोत्साहन आसानी से देने की स्थिति में है।

सरकार का यह दृढ़ संकल्प है कि समाज का कोई भी वर्ग, चाहे महिलाएं हों या वच्चे, अल्पसंख्यक हों या अनुसूचित जाति, अनुसूचित जनजाति या पिछड़े वर्ग के लोग, विकास की मुख्य धारा से अलग नहीं रहना चाहिए। 1993-94 में गरीवों के विकास के हर क्षेत्र मे पिछले वर्ष की तुलना में अधिक ससाधन जुटाए गए। ग्रामीण विकास मंत्रालय के लिए संशोधित परिव्यय 56 प्रतिशत वढ़ गया, जबकि कल्याण मत्रालय का योजना परिव्यय 820 करोड़ रुपए से वढ़ाकर 980 करोड़ रुपये कर दिया गया। सर्वाधिक पिछड़े 120 जिलो में जवाहर रोजगार योजना को सुदृढ़ बना दिया गया है। एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत सब्सिडी को प्रति परिवार 1,000 रुपए तक बढ़ा दिया गया। 1992-93 मे शुरू किए गए ग्रामीण कारीगरो के लिए उन्नत औजार किट कार्यक्रम को 1993-94 में 100 और जिलो में शुरू कर दिया गया है। इस प्रकार देश के कुल 162 जिलों में 2 लाख , 30 हजार ग्रामीण कारीगरो को लाभ पहुचाया गया है। बुनकरों के कल्याण एवं विकास के लिए कार्यक्रम बनाए गए। इसके अन्तर्गत आवास, कार्यस्थल, हथकरघा विकास केन्द्र, क्वालिटी डाइंग इकाई, दक्षता विकास के लिए प्रशिक्षण तथा कार्यशील पूंजी शामिल है। वर्ष के दौरान 1,372 करोड़ रुपए लगाए गए। हथकरघा विकास केन्द्र एवं क्वालिटी डाइंग इकाइयों के लिए सन् 1993

के अत में कार्यक्रम शुरू किए गए, ताकि वर्तमान इकाइयो का विलय और विस्तार करके नई इकाइया स्थापित की जा सके। सन् 1993 के लिए 120 केन्द्र तथा 20 इकाइयो के लक्ष्य के स्थान पर 213 केन्द्र एव 94 इकाइयो को स्वीकृति दी गई। 25 केन्द्र एव 25 इकाइयो ने काम करना आरम्भ भी कर दिया है।

सरकार ने निर्धनो, विशेपकर ग्रामीण महिलाओं एव शहरी युवाओं को लाभ पहुंचाने की दृष्टि से तीन नई योजनाए बनाई हैं।

देश के 1,752 सर्वाधिक पिछड़े एव दूरवर्ती इलाको में जहां देश के 17 करोड गरीब लोग रहते है, ग्रामीण मजदूरो के लिए रोजगार आश्वासन योजना लागू की गई है, ताकि उन्हे कृपि के खाली समय मे 100 दिन के लिए सुनिश्चित मजदूरी रोजगार मुहैय्या कराया जा सके। इस प्रकार यह योजना और ऊचे स्तर तक ग्रामीण रोजगार उपलब्ध कराती रहेगी।

'महिला समृद्धि योजना' ग्रामीण महिलाओ को अपनी कमाई और घरेलू ससाधनो पर नियंत्रण प्राप्त करने और बरतने में समर्थ बनाएगी। 4 लाख से अधिक महिलाए पहले ही इस योजना के तहत ग्रामीण डाकघरों मे अपने खाते खोल चुकी हे। इस योजना और राष्ट्रीय महिला कोप से ग्रामीण महिलाओं के लिए स्वरोजगार के अवसरो में भारी वृद्धि होगी।

शिक्षित शहरी युवको को लघु उद्यमो मे सतत् रोजगार प्रदान करने की दृष्टि से एक रोजगार योजना शुरू की गई है। अब तक विभिन्न राज्यो से युवाओ से लगभग एक लाख 95 हजार आवेदन प्राप्त हो चुके है। इनमें से 41,275 आवेदन पत्रो पर विचार किया गया है और उन्हें सिफारिश करके बैंकों को भेज दिया गया है। उनमें से लगभग 2,000 आवेदन पत्र मंजूर भी कर लिए गए हैं। चालू वर्प के दौरान इस योजना मे 40,000 लाभभोगियों को शामिल किया जाएगा, और वर्प 1994-95 से प्रति वर्प 2 लाख, 20 हजार लाभभोगियों को इसमें शामिल करने का विचार है। इस प्रकार आठवीं पचवर्पीय योजना की शेप अवधि में कुल 7 लाख लाभभोगियो को इस योजना में शामिल कर लिया जाएगा। भारतीय रिजर्व बैंक को निर्देश दिए गए हैं कि वह इस कार्यक्रम में पूर्ण सहयोग प्रदान करें। इस योजना में अनुसूचित जातियों और अनुसूचित जनजातियो के लिए 22 5 प्रतिशत और अन्य पिछड़े वर्गो के लिए 29 प्रतिशत के आरक्षण का प्रावधान किया गया है, जिसमें महिलाओं को प्राथमिकता दी जाएगी।

इन सभी कार्यक्रमों में जागरूकता पैदा करने, और इनके प्रभावकारी

कार्यान्वयन के लिए गैर-सरकारी सगठनों की महत्वपूर्ण भूमिका की परिकल्पना की गई है।

कमजोर वर्गो के कार्यक्रमों के कार्यान्वयन की प्रगति पर नजर रखने और उनके सम्बन्ध में अपेक्षित निदेश और बल देने के उद्देश्य से प्रधानमन्त्री ने प्रधानमंत्री कार्यालय में एक विशेष कक्ष स्थापित किया है। यह विशेष कक्ष कार्यान्वयन विभागों और क्षेत्रीय भ्रमण तथा स्वतंत्र मूल्यांकनों पर आधारित सूचना से फीड-बैक प्राप्त करेगा, ताकि कार्यक्रमों की सभी सम्भावित रुकावटो को दूर किया जा सके। सम्बन्धित क्षेत्र में इन कार्यक्रमों के समन्वित कार्यान्वयन का पर्यवेक्षण करने के लिए सचिवों की एक विशेष समिति का भी गठन किया गया है, जो इन तीनों कार्यक्रमों के कार्यान्वयन के लिए जिम्मेदार है।

संचार सुविधाओं का ग्रामीण क्षेत्रो मे और विस्तार किया जाएगा। वर्ष 1993-94 में, 46,800 पंचायतों को टेलीफोन से जोड़ा जाएगा। 1994-95 के दौरान 72,000 गांवों को सार्वजनिक टेलीफोन उपलब्ध कराने का प्रस्ताव है।

अनुसूचित जातियों के कल्याण की योजनाओ में विशेष घटक योजना के लिए विशेष केन्द्रीय सहायता के अन्तर्गत आबटन में सन् 1993 में वृद्धि की गई और इसके कार्यक्षेत्र को बढ़ाया गया, ताकि जिन क्षेत्रो में अनुसूचित जाति की जनसंख्या 50 प्रतिशत या इससे अधिक हे, उन क्षेत्रो मे आधारित रचना के विकास की योजनाओं को इसमे शामिल किया जा सके।

राष्ट्रीय सफाई कर्मचारी आयोग अधिनियम का पारित होना इस वर्ष की एक अत्यंत महत्वपूर्ण घटना थी, जिससे सफाई कर्मचारियों की मुक्ति और पुनर्वास के त्वरित कार्यान्वयन में मदद मिलेगी। राष्ट्रीय आयोग का गठन किया जा रहा है।

सरकार देश के कुछ भागों में अनुसूचित जातियों पर होने वाले अत्याचारो से उत्पन्न स्थिति के प्रति पूरी तरह से जागरूक है। कानून के अन्तर्गत अनुसूचित जातियों की रक्षा, तथा उनके लिए बने सामाजिक-आर्थिक विकास कार्यक्रमों का कारगर कार्यान्वयन सुनिश्चित किया जाएगा। 1992-93 के दौरान लगभग 21 लाख अनुसूचित जाति के परिवारों और 8 लाख अनुसूचित जनजाति के परिवारो को 20 सूत्रीय कार्यक्रम के अन्तर्गत गरीबी रेखा से ऊपर आने मे सहायता दी गई। 1993-94 के दौरान सहायता प्राप्त अनुसूचित जाति एव जनजाति के इन परिवारों की संख्या बढ़कर क्रमश: 27 लाख और 9 लाख हो जाने की सम्भावना है।

जिन क्षेत्रो में जनजातीय महिला साक्षरता बहुत कम है, उनमें इस वर्ष शिक्षा परिसर बनाने की योजना शुरू की गई। अब तक ऐसे 13 परिसरो को मजूरी दी गई है। भारतीय जनजातीय सहकारी विपणन विकास महासंघ का कारोबार, जो 1991-92 मे 22 करोड़ रुपए था, 1992-93 मे बढ़कर 86 करोड़ रुपए हो गया है। चालू वर्ष में इसके काफी अधिक बढ़ जाने की सम्भावना है।

राष्ट्रीय पिछड़ी जाति वित्त और विकास निगम ने चालू वर्ष के दौरान उल्लेखनीय प्रगति की। 1993 के दौरान इसने 80 करोड़ रुपए के ऋण मंजूर किए, और आगामी वर्ष में इसका प्रस्ताव अपने काम का दुगना कर देना है।

भारत सरकार की सेवाओं में अन्य पिछडे वर्गो के लिए रिक्तियो का चिर [illegible]क्षित आरक्षर 8 सितम्बर, 1993 को तब साकार हुआ, जब मौजूदा सरकार [illegible] अन्य पिछड़े वर्गो के लिए 27 प्रतिशत आरक्षण के आदेश जारी किए। इसके [illegible] देश के अन्य पिछड़े वर्गो की एक सर्वाधिक महत्वपूर्ण आकाक्षा पूरी हुई।

[illegible]बा साहेब अम्बेडकर की रचनाओं के क्षेत्रीय भाषाओं में प्रकाशन से [illegible] कार्य को आगे बढ़ाया गया और हिन्दी, तमिल, गुजराती प्रत्येक में दो-[illegible] प्रक[illegible]त किए गए। अन्य भाषाओं में भी कार्य की बहुत अच्छी प्रगति [illegible] बाब[illegible] साहेब के दर्शन मे अनुसंधान करने के लिए विभिन्न विश्वविद्यालयों [illegible] की मजूरी दी गई है।

मौजूदा वक्फ [illegible]धिनियम-1954 और वक्फ (संशोधन) अधिनियम-1984 के स्थान पर अग[illegible]93 में ससद मे एक नया वक्फ विधेयक पेश किया गया है। इस विधेयक [illegible]य बातों के साथ-साथ वक्फ बोर्ड का और अधिक लोकतांत्रिक [illegible] का प्रावधान किया गया है, जिसमें वक्फ मामलो से सम्बन्धित [illegible] का निर्णय करने और वक्फ की सम्पत्ति की बेहतर रक्षा और प्रबंध के लि[illegible]क्फ अधिकरण की व्यवस्था की गई है। अल्पसंख्यकों के आर्थिक विकास के स[illegible]न के लिए राष्ट्रीय अल्पसंख्यक वित्त और विकास निगम इस वर्ष काम शुरू कर देगा, जिसकी प्राधिकृत शेयर पूंजी 500 करोड़ रुपए होगी। इसका स्वरूप तैयार किया जा रहा है।

अपने पिछले अभिभाषण में मैने राष्ट्रीय शिक्षा नीति-1986 की सन् 1992 में की गई समीक्षा और उसमें किए गए संशोधनों का उल्लेख किया था। सरकार साक्षरता और पश्च साक्षरता अभियानों और प्राथमिक शिक्षा के प्रति एक नए जिला-विशेष और समुदाय अभिमुख दृष्टिकोण द्वारा समर्पित पूर्ण साक्षरता अभियानों की

अभिनव कार्य नीतियों पर आधारित प्राथमिक शिक्षा को उच्च प्राथमिकता देती हैं। केरल और पांडिचेरी के सभी 18 जिलो ने पूर्ण साक्षरता प्राप्त कर ली है। 32 जिलो में, जिन्होने पूर्ण साक्षरता अभियान सफलतापूर्वक सम्पन्न किए है, यह सुनिश्चित करने के लिए कि नव-साक्षर लिखना-पढ़ना भूल न जाए, पश्च साक्षरता अभियान शुरू किया गया है। इस समय 258 जिलो मे 238 पूर्ण साक्षरता अभियान चल रहे हैं।

नए जिला प्राथमिक शिक्षा कार्यक्रम में भागीदारी योजना एव एबध पर जोर दिया गया है, और लड़कियों की शिक्षा पर विशेष रूप से ध्यान केन्द्रित किया गया है। शिक्षकों को प्रशिक्षण देकर और विकेन्द्रीकृत प्रबध के माध्यम से स्कूलो की प्रभावशीलता बढ़ाने का प्रयास किया गया है। हाल ही मे भारत ने विश्व के नौ सर्वाधिक जनसख्या वाले देशो की 'सबके लिए शिक्षा' शिखर सम्मेलन की मेजबानी की। इसमे भारत ने तथा अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय ने इस सदी के अत तक सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करने की प्रतिबद्धता को दोहराया। इस अवसर पर प्रधानमंत्री ने इस सदी के अंत तक सकल राष्ट्रीय उत्पाद का 6 प्रतिशत तक शिक्षा परिव्यय बढ़ाने के सरकार के निर्णय की घोषणा की। नौवी पचवर्षीय योजना बनाते समय इस निर्णय को ध्यान में रखा जाएगा। इसके अलावा सरकार पृथक-पृथक स्तर पर लक्ष्य निर्धारित करके और विकेन्द्रीकृत प्रबध द्वारा सबके लिए शिक्षा का लक्ष्य प्राप्त करना चाहती है।

राष्ट्रीय परिवार नियोजन कार्यक्रम के क्रियान्वयन के क्षेत्र मे भारत सरकार और राज्य सरकारों के सतत् प्रयासो के परिणामस्वरूप जनसख्या वृद्धि की वार्षिक दर में कमी हो रही है। 1981-91 के दशक मे वार्षिक औसत चरघाताकी वृद्धि दर 2 14 प्रतिशत थी, जो वर्ष 1992 मे घटकर 1 9 प्रतिशत रह गई। अशोधित जन्म दर, जो 1951-61 मे 41 7 प्रति हजार थी, 1992 मे घटकर 29 प्रतिशत हजार रह गई। अशोधित मृत्यु दर, जो 1951-61 में 22 ε थी, वह 1992 मे घटकर 10 रह गई है। कुल प्रजनन-दर, जो 1961 में 5 97 थी, 1991 मे घटकर 3 6 रह गई। पूरे देश मे शिशु मृत्यु दर 1961 मे 146 पति हजार जीवित शिशु थी। यह 1992 मे घटकर 79 रह गई। यद्यपि ये महत्वपूर्ण उपलब्धियां है, परन्तु जनसंख्या में वृद्धि अभी भी विचलित करने वाली है। सरकार जनसंख्या वृद्धि की दर में कमी लाने के कार्य को सर्वोच्च प्राथमिकता देती है। परिवार कल्याण को बढ़ावा देने के लिए समूचा राष्ट्र एकमत है। इसके लिए राज्य सरकारों, अग्रणी

नेताओं, गैर-सरकारी संस्थाओं और समाज के सभी वर्गों की ओर से बहु-आयामी एव बहु-क्षेत्रीय प्रयास किए जाने की आवश्यकता है। सभी राजनैतिक दलों को इस संबध मे एकमत होकर लोगों को छोटे परिवार के मानदंड अपनाने के लिए प्रेरित करना चाहिए, और परिवार नियोजन कार्यक्रम को एक जन आदोलन का रूप देना चाहिए। राष्ट्रीय विकास परिपद् ने हाल ही में गठित की गई जनसंख्या समिति की सिफारिशों का समर्थन किया है। राष्ट्रीय विकास परिषद् ने यह भी निर्णय लिया है कि राष्ट्रीय विकास परिपद् की समिति की सिफारिशों के कार्यान्वयन क लिए आवश्यक भावी कार्रवाई के बारे में मुख्य मंत्रियों और विचारकों के साथ व्यापक परामर्श किया जाए। यह कार्य शीघ्र ही किया जाएगा।

विकास प्रक्रिया और पर्यावरण सरक्षर के परस्पर संबंध के प्रति हम पूरी तरह से सजग हैं। हमारी वन और वन्य-जीवन नीतियों के अनुसार प्राकृतिक ससाधनों के सरक्षण और उसके बुद्धिमत्तापूर्ण प्रयोग की आवश्यकता, हमारी प्रमुख नदियों की सफाई और प्रदूपण निवारण कार्यक्रमों में परिलक्षित होती है। जैव-विविधता, जलवायु परिवर्तन और बढ़ते हुए मरुस्थल के बारे में अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर चल रही बहस में भाग लेते समय हमने 1992 के रियो शिखर सम्मेलन मे ससाधनो और प्रौद्योगिकी से लाभ उठाने के सबंध में उठाए गए मूलभूत मसलो [illegible] ध्यान केन्द्रित किया। सरकार विकास से सबधित हमारे प्रयासो में हमारी [illegible]र्यावरण सबधी [illegible]ओं पर पूरा ध्यान देगी।

अतरिक्ष का [illegible] मे निरतर प्रगति हुई है। यद्यपि हम पोलर सैटेलाइट लाचिग व्हीकल की उडा[illegible] [illegible]सफल रहे है, परन्तु इस अनुभव से काफी लाभ मिला है। संग्रह किए गए आ[illegible]डो का विश्लेपण किया गया है, और इससे जटिल प्रणालियों की प्रभावशीलता सिद्ध हुई है। पोलर सैटेलाइट लांचिग व्हीकल की अगली उड़ान अगस्त-सितम्बर, 1994 में किए जाने की योजना बनाई गई है। भारतीय पोलर सैटेलाइट लाचिग व्हीकल के विकास में भी प्रगति हुई है, जिससे आज से कुछ वर्पो के बाद इनसैट श्रेणी के उपग्रह छोड़े जा सकेगे। इनसैट-2ए को चालू करने के एक वर्प के भीतर पिछले वर्प हमने इनसैट-2बी को सफलतापूर्वक छोड़कर और चालू कर अपनी क्षमताओ का प्रदर्शन किया है। इनसैट-2बी से दूरदर्शन को अपने पाच उपग्रह चैनल शुरू करके अपनी सेवाओं में वृद्धि करने में मदद मिली है। इससे दूरदर्शन द्वारा क्षेत्रीय भापाओं में कार्यक्रमों का प्रसारण सशक्त बना है।

भारत की एक सशक्त और व्यापक वैज्ञानिक एवं औद्योगिक आचार-संरचना है। भारत ने विभिन्न उच्च-प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों मे भी अपनी क्षमता का प्रदर्शन किया है। प्रौद्योगिकी परिवर्तनों की गति और पर्यावरण के अनुरूप प्रौद्योगिकी के प्रयोग की आवश्यकता के कारण हमसे अपेक्षाएं काफी वढ़ गई हैं। प्रौद्योगिकी अंतरण पर लगाए गए प्रतिबंधों के परिणामस्वरूप हमे अपनी क्षमताओ पर और अधिक निर्भर रहना होगा। सरकार इसके लिए देश में उपलव्ध प्रतिभा की महान क्षमताओं के उपयोग के लिए हर प्रकार का प्रोत्साहन देने के लिए दृढ़-सकल्प है। उभरते हुए आर्थिक परिप्रेक्ष्य के संदर्भ में अनुसधान परिणामो से हमारे उद्योग लाभ उठा सकेगे। उच्च प्रौद्योगिकी उत्पादो के निर्यात को वढावा दिया जाएगा। सूचना प्रौद्योगिकी और आनुवंशिक इंजीनियरी और जैव-प्रौद्योगिकी पर वल दिया जाएगा। सौर एवं अन्य गैर-पारम्परिक ऊर्जा स्रोतो के प्रयोग के लिए उन्नत सामग्री और साधनों को भी प्राथमिकता दी जाएगी।

हमारी सशस्त्र सेनाएं देश की भूभागीय अखडता की रक्षा के लिए सीमा पर निरंतर चौकसी रखती है। राष्ट्र को इन सेनाओ पर और उन रक्षा वैज्ञानिकों तथा इंजीनियरों पर गर्व है, जिन्होंने हमारी रक्षा तैयारियो मे सराहनीय योगदान दिया है। गोला-बारूदों के स्वदेशी विकास और रक्षा उत्पादन यूनिटों के विविधीकरण में भी तेज़ी से प्रगति हुई है।

अपने सामान्य कर्त्तव्य के अतिरिक्त सशस्त्र सेनाए आवश्यकता पड़ने पर कानून आर व्यवस्था बनाए रखने और विद्रोही गतिविधियो से निपटने में सिविल प्राधिकारियों को सहयोग देती रही है। वे प्राकृतिक आपदाओं के समय बचाव और राहत कार्यो में भी सहायता करती रही है। इन क्षेत्रो में इनका कार्य अनुकरणीय रहा है। सरकार सेवारत और सेवानिवृत्त सशस्त्र सेना कार्मिको को वेहतर सुविधाएं और स्थितियां प्रदान करने के लिए प्रतिबद्ध रही है। फील्ड एरिया में तैनात कार्मिकों को हाल ही में अपेक्षाकृत अधिक भत्ते प्रदान किए गए हैं। यह निर्णय लिया गया है कि पेंशन में एक वार वृद्धि स्कीम का लाभ दो लाख अतिरिक्त पेंशनरों को भी दिया जाएगा।

सतत् अन्तर्राष्ट्रीय विपणन के परिणामस्वरूप सरकार अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में यह विश्वास उत्पन्न करने में सफल रही है कि भारत विश्व के सर्वाधिक सुरक्षित पर्यटन स्थलों में से है। इसके परिणामस्वरूप दिसम्बर, 1993 और जनवरी, 1994 के महीनों में पर्यटकों के आगमन में अब तक की रिकार्ड वृद्धि हुई है।

यह 1992 और 1993 की इसी अवधि के दौरान आए पर्यटकों की तुलना में क्रमश· 23 8 प्रतिशत और 28 4 प्रतिशत अधिक है।

पिछले एक वर्ष में सरकार की विदेश नीति हमारे अपने राजनीतिक एवं सुरक्षा हितों के सवर्धन को जारी रखते हुए विदेशो के साथ हमारे आर्थिक संबंधों में हमारे आर्थिक हितों की रक्षा पर केन्द्रित रही। हमारे आर्थिक सुधारों की सार्थकता से विदेशों को प्रभावपूर्ण ढंग से अवगत करा दिया गया है।

पड़ोसी देशो के साथ हमारे संवध सौहार्दपूर्ण रहे हैं, और इस वर्ष वंगलादेश, भूटान, मालदीव, नेपाल और श्रीलका के साथ विभिन्न क्षेत्रो में हमारे पारस्परिक कार्यकलापो मे भी अच्छी प्रगति हुई है। केवल पाकिस्तान के मामले में उसके द्वारा जम्मू और कश्मीर मे उग्रवाद और विद्रोह का समर्थन किए जाने तथा विश्व भर मे भारत-विरोधी कार्य किए जाने के कारण संवंधों को सामान्य वनाने के हमारे प्रयासो को गहरा धक्का लगा है। प्रधानमत्री ने पाकिस्तान के समक्ष शिमला समझौते के अनुरूप एक अच्छे पड़ोसी जेसे संवध स्थापित करने के लिए वातचीत करने का प्रस्ताव रखा। इस सवध में द्विपक्षीय वार्ता की गई, किन्तु पाकिस्तान के भारत-विरोधी वयानो की भरमार से द्विपक्षीय संवंधो में सुधार करने के प्रयासों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा है। हमारे और पाकिस्तान की जनता के वीच कोई झगड़ा नहीं ह। हम चाहते हैं कि हमारे देशो के वीच अच्छे मवध वनाने के लिए पाकिस्तान मरकार अपने नकारात्मक दृष्टिकोण को छोड़कर शिमला समझौते के अनुरूप भारत-पाकिस्तान सवधो को मामान्य वनाने की हमारी कामना मे वरावर का सहयोग दे।

चीन के साथ हमारे मवधों मे उल्लेखनीय सुधार हुआ हैं। सितम्वर, 1993 में प्रधानमत्री की चीन यात्रा से और वास्तविक नियत्रण रेखा के पास शाति वनाए रखने के करार पर हस्ताक्षर करने से इन सवधो में नए आयाम विकसित हुए हैं। इस करार के अधीन गठित विशेपज्ञ दल ने हाल ही में अपनी पहली वैठक की, और उसमें इस पेचीदा मुद्दे पर परस्पर सवंध स्थापित करने और उन्हे वनाए रखने की दोनों पक्षों की इच्छा को अभिव्यक्त किया।

भारत दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग सगठन को इसके चार्टर के उद्देश्यो के अनुरूप क्षेत्रीय सहयोग का माध्यम मानता हैं। प्रधानमत्री ने पिछले वर्ष ढाका में हुए दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन शिखर सम्मेलन में भाग लिया। दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन ने आम हित के कुछ महत्वपूर्ण मुद्दों,

राष्ट्रपति पद की शपथ ग्रहण करते हुए, नई दिल्ली, 25 जुलाई, 1992
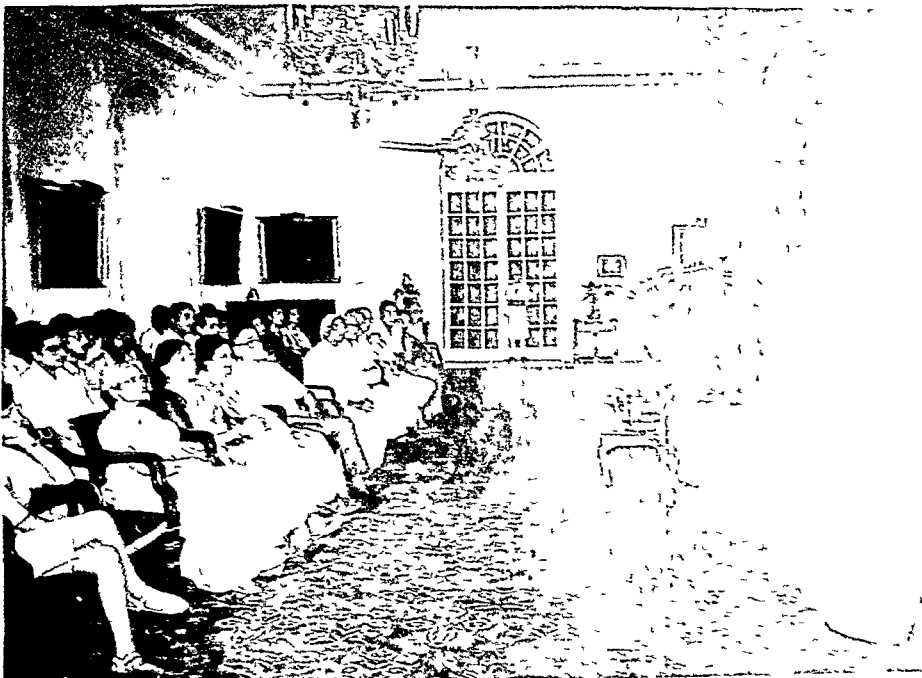
पंडित रविशंकर शुक्ल के 115वें जयंती समारोह मे भाषण देते हुए, नई दिल्ली, 2 [illegible] 992

भारत रत्न धोंडो केशव कर्वे की प्रतिमा के अनावरण के अवसर पर, पुणे, 4 सितंबर, 1992

पुणे महोत्सव का उद्घाटन करते हुए, पुणे, 4 सितंबर, 1992

सरदार वल्लभ भाई पटेल जयती समारोह मे, नई दिल्ली, 30 अक्तूबर, 1992
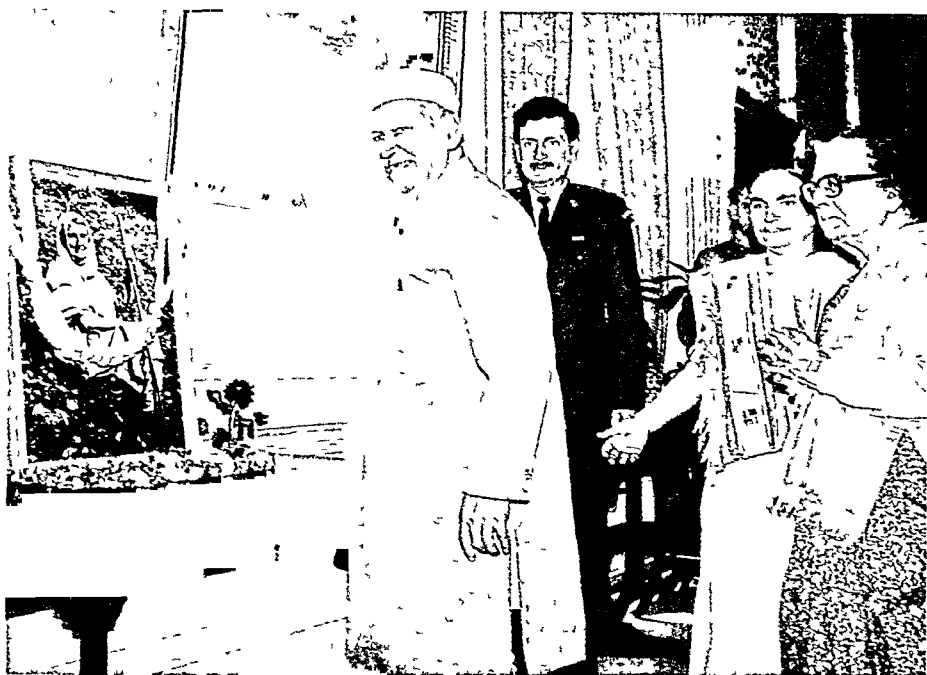
मीरा बेन जन्म शताब्दी के अवसर पर, नई दिल्ली, 26 नवंबर, 1992

८९वें अंतर्संसदीय सम्मेलन के अवसर पर पुस्तक का विमोचन करते हुए, नई दिल्ली, 12 अप्रैल, 1993

लोकमान्य तिलक पुरस्कार ग्रहण के पश्चात भाषण देते हुए, पुणे, 1 अगस्त, 1993

स्वामी विवेकानन्द की प्रतिमा का अनावरण करते हुए, पुणे, 1 अगस्त, 1993

संसद के केन्द्रीय कक्ष में पूर्व प्रधानमंत्री श्री राजीव गांधी के चित्र का अनावरण करते हुए, नई दिल्ली, 20 अगस्त, 1993

सावरमती आश्रम मे, अहमदाबाद, 17 अक्तूबर, 1993

लोकसभा अध्यक्ष श्री शिवराज पाटिल को "अणुव्रत पुरस्कार" प्रदान करते हुए,
नई दिल्ली, 29 दिसंबर, 1993

डॉ० सम्पूर्णानंद पर डाक टिकट जारी करने के पश्चात भाषण करते हुए,
नई दिल्ली, 10 जनवरी, 1994

स्वामी दयानद सरस्वती के
जयती समारोह के अवसर पर,
नई दिल्ली, 8 मार्च, 1994

श्री रफी अहमद किदवई के जन्म शताब्दी समारोह में पुष्पांजलि अर्पित करते हुए,
नई दिल्ली, 24 अक्तूबर, 1994
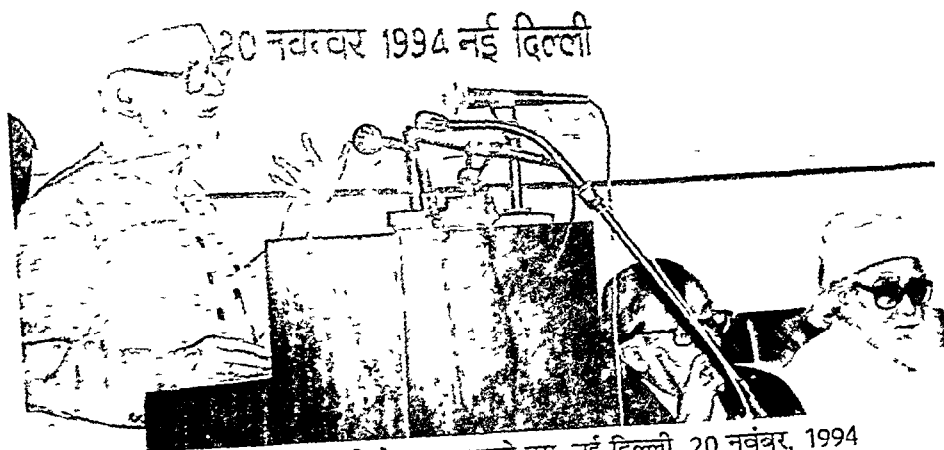
सर्वधर्म समागम संगोष्ठी मे भाषण करते हुए, नई दिल्ली, 20 नवंबर, 1994

जैसे कि–गरीबी, आतंकवाद, जनसंख्या वृद्धि, महिलाओं, बालकों और युवाओं की स्थिति तथा मादक पदार्थो से संबंधित समस्याओं पर विचार किया। हम दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन चार्टर के अनुरूप उसके सामाजिक–आर्थिक और अन्य उद्देश्यों का संवर्धन करने के लिए दक्षिण एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन में अपनी सक्रिय भूमिका निभा रहे हैं।

शिक्षा तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्र से लेकर संस्कृति और खेलकूद के अनेक क्षेत्रों में हम संयुक्त राज्य अमरीका के साथ आपस में पारम्परिक रूप से जुड़े हुए हैं। हम संयुक्त राज्य अमेरिका के साथ आपसी समझबूझ की दिशा में, और ऐसे मुद्दों पर, जिनके संबंध में समझबूझ बढ़ाने की आवश्यकता है, मिलकर काम करना चाहते हैं। हमने संयुक्त राष्ट्र के साथ व्यापक परीक्षण रोक संधि जैसे निरस्त्रीकरण से संबंधित मसलों पर भी सहयोग किया है। हमारी आर्थिक उदारीकरण की नीतियों के प्रति संयुक्त राज्य ने सकारात्मक प्रतिक्रिया व्यक्त की है, और पिछले दो वर्षो में संयुक्त राज्य ने भारत में काफी निवेश किया। इससे हमारे दोनों देशों के बीच जीवंत लोकतांत्रिक एवं धर्मनिरपेक्ष आदर्श परिलक्षित होते हैं।

विगत दिनों में हमारी मैत्री की समृद्ध परम्परा के आधार पर रूसी संघ के साथ हमारे संबंधों में आपसी समझबूझ और सहयोग बना रहा। दोनों देशों के समक्ष आई कुछ कठिनाइयो के बावजूद राजनीतिक, आर्थिक, वाणिज्यिक और अन्य क्षेत्रों में सहयोग का दोनों पक्षों द्वारा समर्थन करने का प्रयास किया गया। हमारे सबंधों को सुदृढ़ बनाने वाली हमारी सद्भावना और समझबूझ से आज के बदलते हुए परिप्रेक्ष्य में विभिन्न क्षेत्रों में आगे सहयोग करने की सम्भावनाओं का पता लगाने के हमारे प्रयासों को बढ़ावा मिला है।

मध्य एशियाई क्षेत्र के साथ संबंधो को सुदृढ़ बनाने पर विशेष ध्यान दिया गया। 1993 में प्रधानमंत्री की उजबेकिस्तान और कजाकिस्तान की यात्राएं बहुत सफल रहीं। पिछले वर्ष उजबेकिस्तान के राष्ट्रपति और कजाकिस्तान के राष्ट्रपति ने भी भारत की यात्रा की। भारत और इन दोनों देशों के बीच राजनीतिक और विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के क्षेत्रों में सहयोग तथा व्यापार, नागर विमानन और संस्कृति के क्षेत्रों में भी सहयोग के कई करारों पर हस्ताक्षर किए गए।

दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्रों के संघ और पूर्वी एशियाई देशों के साथ घनिष्ठ सहयोग के एक नए युग के सूत्रपात के लिए संगठित रूप से प्रयास किया गया।

नए आर्थिक संवंध स्थापित किए गए, और व्यापार बढ़ाया गया। भारत और दक्षिण पूर्व एशियाई राष्ट्रों के संघ के देशों के वीच क्षेत्रीय वातचीत का शुरू होना एक महत्वपूर्ण घटना थी। अप्रैल, 1993 में प्रधानमंत्री की थाईलैंड यात्रा से भारत-थाई सबधों को नया बल मिला। भारत-सिंगापुर संवंधों में गुणात्मक सुधार हुआ है, और सिगापुर के प्रधानमत्री गोह चोक टोंग ने इस वर्ष जनवरी में हमारे गणतत्र दिवस समारोह के अवसर पर मुख्य अतिथि के रूप में भारत की यात्रा की। मलेशिया के प्रधानमंत्री महातिर मोहम्मद और इंडोनेशिया के राष्ट्रपति सुहार्तो ने भी दिसम्बर, 1993 म भारत की यात्रा की। सितम्बर, 1993 में उप-राष्ट्रपति की वियतनाम यात्रा म वियतनाम के साथ हमारे संवंध सुदृढ़ हुए। सरकार जापान के साथ आर्थिक और अन्य सवंधो को और अधिक प्रगाढ़ वनाने के लिए सतत् प्रयास करती रही। कोरिया गणराज्य के साथ द्विपक्षीय आर्थिक सबंधों को और गति प्रदान करने के लिए प्रधानमत्री ने सितम्वर, 1993 मे कोरिया गणराज्य की यात्रा की, जिसकी प्रतिक्रिया सकारात्मक रही।

खाडी देशो के साथ हमारे सवंध पारम्परिक रूप से सौहार्दपूर्ण रहे हैं, और अव आर्थिक सवधो में भी सहयोग वढ़ रहा है। सितम्बर, 1993 में प्रधानमंत्री की ओमान और ईरान की यात्राओं ने पारस्परिक आर्थिक लाभ के बढ़ते हुए संबधों की नींव डाली।

हम पश्चिमी एशिया में शाति और स्थिरता स्थापित करने तथा फिलिस्तीनी लोगों के जायज अधिकारों को वापस दिलाने की दिशा में एक उल्लेखनीय कदम के रूप मे इजरायल और फिलिस्तीनी मुक्ति संगठन के वीच सितम्बर, 1993 में सम्पन्न अंतरिम स्वाशासी व्यवस्थाओं के सिद्धांतों की घोषणा पर हस्ताक्षर किए जाने का स्वागत करते हैं।

भारत और यूरोपीय संघ ने विविध क्षेत्रों में आपसी लाभदायक संबंधों को और अधिक विकसित करने को जो महत्व दिया है, उसका परिचय 20 दिसम्बर, 1993 को सम्पन्न साझेदारी और विकास पर सहयोग समझौते तथा राजनैतिक बातचीत पर भारत-यूरोपीय संघ संयुक्त वक्तव्य से मिलता है। पिछले वर्ष के दौरान यूरोप से जिन उच्च स्तर के गणमान्य व्यक्तियो ने भारत की यात्रा की, उनमें आयरलैंड के राष्ट्रपति, स्वीडन के नरेश और नीदरलैंड के प्रधानमत्री सम्मिलित हैं। हाल ही मे प्रधानमंत्री ने स्विट्जरलैंड मे डावोस और जर्मनी की सफल यात्राए कीं। डावोस में प्रधानमंत्री ने विश्वभर से आए उद्योगपतियो, राजनीतिक नेताओं

और प्रबुद्ध लोगों को सम्बोधित किया। इसके परिणामस्वरूप भारत की नीतियो और क्षमताओं के प्रति समझबूझ बढ़ी है। जर्मनी की यात्रा से द्विपक्षीय सबंधो को और बल मिला है, तथा आर्थिक सहयोग और मजबूत हुआ है।

जुलाई, 1993 में मैने तुर्की, उक्रेन और हंगरी की राजकीय यात्राएं कीं, जो इन देशों के साथ हमारे सहयोगपूर्ण संबंधों को और सुदृढ़ करने की हमारी इच्छा का परिचायक है।

इस वर्ष के दौरान हमने उप-सहारा अफ्रीकी देशो के साथ व्यापक पारस्परिक बातचीत की, जिसमें बुरकिनो फासो, मारीशस, तजानिया, जाम्बिया और जिम्बाब्वे के राष्ट्रपति और प्रधानमत्री स्तर की यात्राए शामिल है। दक्षिण अफ्रीका में हो रही विकास की सकारात्मक गतिविधिया हमारे ध्यान में हैं, और वहां पर बहुमत वाली सरकार शीघ्र स्थापित हो, इसकी हम उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे है।

भारत राजनीतिक और सुरक्षा सबंधी मामलों, आर्थिक एवं सामाजिक विकास, मानवाधिकार, पर्यावरण और जनसंख्या से सम्बन्धित विपयों पर विश्व कार्यसूची को एक स्वरूप प्रदान करने में सक्रिय भूमिका निभाता रहा है। संयुक्त राष्ट्र संघ, गुट-निरपेक्ष आंदोलन अथवा इन विषयों से सबंधित अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संस्थाओं की विभिन्न बैठकों में विश्व सहमति को बढ़ावा देने के लिए हमने विकासशील देशो की विशिष्ट चिताओं को उजागर करने में बढ़-चढ़ कर भाग लिया है।

वर्ष 1993 आर्थिक सुधारों के लाभों और सरकार द्वारा की गई राजनीतिक पहल को सुदृढ़ करने का वर्ष रहा। हमने सन् 1994 में इस आशावाद के साथ प्रवेश किया है कि हम अपने आर्थिक विकास की गति को और अधिक बढ़ाएंगे। लोगों ने सुधारों के पक्ष में और साम्प्रदायिकता के विरुद्ध जो समर्थन दिया है, उससे हमारा यह आशावाद सुदृढ़ हुआ है।

मुझे विश्वास है कि इस सत्र के दौरान तथा उससे आगे भी आपकी बहस तथा विचार-विमर्श लोगों की आकाक्षाओं को पूरा करने मे राष्ट्र को और आगे ले जाएगी।

प्रजापिता ब्रह्मा का संदेश

हमने पूरे विश्व को अपना एक कुटुम्ब माना है — वसुधैव कुटुम्बकम्। मानव मात्र को हमने भाई और वहन माना है। लेकिन आज हम इससे दूर होते चले जा रहे हैं। उस समय, जब हम इस भावना से हट रहे थे, तब श्री लेखराज जी ने, जिनको प्रजापिता ब्रह्मा के नाम से जाना जाता है, इसको उठाया। उन्होंने अपना जवाहरात का व्यापार छोड़ा, अपने धन को त्यागा और मानव सेवा में लग गए। उन्होने लोगों को संदेश दिया कि मानव-मानव भाई-बहन हैं। जब एक ईश्वर हम सबका पिता है, तो फिर द्वेप कैसा, लड़ाई कैसी, झगड़े कैसे।

इस सिद्धान्त के साथ-साथ उन्होंने यह खास बात भी की कि इसके प्रचार के लिए उन्होने इसमें लोगों को लगाया। उन्होंने वे नियम बनाए, जिनका हमें पालन करना चाहिए। उन्होने हमारी वहनों की ओर विशप ध्यान दिया और स्त्री-शक्ति को जागृत करने की वात कही। वे इस बात को लेकर आगे वढ़े, और माउंट आवू में विश्वविद्यालय स्थापित किया। आज विश्व के अलग-अलग भागों में उसकी शाखाए हैं।

प्रजापिता का मानना था कि सव धर्मों में एकता है। वे चाहते थे कि भ्रातृभाव सब जगह हो, करुणा की भावना सव जगह हो। यह माना गया है कि मानव अच्छे कामो से ऊँचा उठ सकता है। उसमे यह सम्भावना है। लेकिन इन सबके लिए एक रास्ता होना चाहिए। यह रास्ता है करुणा का। क्योंकि करुणा धर्म का मूल मंत्र है। इस्लाम धर्म मे वताया गया है कि सबसे बड़ी खिदमत वन्दों की खिदमत में है। हमारे स्वामी विवेकानन्द ने शिकागो में सबको 'ब्रदर्स एंड सिस्टर्स' से सम्बोधित करके उपस्थित लोगो को चकित कर दिया था।

वस्तुतः आज जरूरत है आदमी को सही दिशा में ले जाने की, उसकी शक्ति को चेनेलाइज करने की। यह मामूली काम नहीं है। बहुत वड़ा काम है यह और यही उन्होंने किया। यह डाक टिकट उसी काम की याद दिलायेगा। यह डाक टिकट याद दिलाएगा कि हमें नैतिक मूल्यों पर चलना है। नैतिक मूल्य

प्रजापिता ब्रह्मा पर डाक टिकट जारी करते हुए, नई दिल्ली, 7 मार्च, 1994

केवल हमारे समाज के लिए ही नहीं हैं, बल्कि हमारे अपने उत्थान के लिए हैं। यह याद दिलाएगा कि हमें अपने आप पर काबू रखना है, अपने पर काबू पाना है।

प्रजापति ब्रह्मा ने जीवन-यापन का ढंग सिखाया। उन्होंने बताया कि हमें क्या करना है, किस प्रकार रहना है और किस तरह से उठना-बैठना है। इन बातों से आदमी का चरित्र बनता है। उन्होने बताया कि हम सबको बनाने वाले परमपिता परमात्मा तक पहुंचने का रास्ता है सच्चे चरित्र का होना। इस अच्छे चरित्र से स्वयं का उत्थान होता है। साथ में समाज का भी उत्थान होता है। क्योंकि मानव और समाज दोनो मिलकर चलते हैं। जब लोग आपस मे मिलते हैं, तो समाज बनता है। स्वाभाविक है कि जब लोग अच्छे होंगे, तो समाज भी अच्छा होगा और यदि समाज अच्छा होगा, तो बाकी लोगों को भी अच्छा बनने का मौका मिलेगा। इसलिए यह काम ऐसा है, जो हरेक को करना चाहिए। लेकिन ज़रूरी है कि सबसे पहले हम अपने आपको उठाएं। अपने आपको सद्‌चरित्र बनाएं। ऐसा नहीं है कि हम यह देखें कि दूसरे क्या कर रहे हैं। यदि दूसरे गलत जा रहे हैं, तो हमें गलत नहीं जाना है। बल्कि धैर्य के साथ सच्चे ढग से, अपना काम करना है।

"पूरा विश्व हमारा परिवार है। विश्व में जितने भी लोग हैं और जिस किसी भी रूप में ईश्वर में विश्वास करते हैं, वे सब हमारे भाई है। ईश्वर हमारा पिता है।" यह मूल भावना सभी धर्मो मे रही है। लेकिन लोग भूल जाते हैं, इसलिए बार-बार याद दिलाने की जरूरत पड़ती है। प्रजापिता ब्रह्मा ने लोगों को इस बात की याद दिलाई थी। 25 वर्ष हुए, जब वे हमारे बीच से चले गए। लेकिन उनका काम बराबर चल रहा है। इनकी शाखाएं जगह-जगह फैली हुई हैं, जो उनका संदेश लगन के साथ लोगों तक पहुंचा रही हैं।

मैं ईश्वर से प्रार्थना करता हूँ कि विश्व में भ्रातृत्व का भाव फैले। उसमें एकता आए। हम सब दृष्टिकोण के आधार पर बंटें नहीं। यह मेरा है, या यह मेरा नहीं है, यह संकीर्ण मनोवृत्ति है। यह उदार चेतना वाले लोगों की बात नहीं है। हमको अपनी चेतना को उदार बनाना है। इसी से दूसरों की चेतना उदार बनेगी। यही प्रजापिता ब्रह्मा का संदेश भी था।

पुनर्जागरण के अग्रदूत स्वामी दयानंद सरस्वती

दयानंद सरस्वती जी ने जव सार्वजनिक जीवन में प्रवेश किया था, तव देश में विदेशी हुकूमत थी। अंग्रेजी सत्ता ने भारतीय सभ्यता और संस्कृति की आलोचना करके भारतीयो के मन में हीन भावना पैदा कर दी थी। वैसे भी चूंकि वे सत्ता में थे, और हम गुलाम थे, इसलिए हममें आत्मविश्वास की कमी आ गई थी। महर्षि दयानद सरस्वती का सवसे वड़ा योगदान मैं यह मानता हूँ कि उन्होंने उस समय भारतीयों के खोए हुए आत्मविश्वास को फिर से जागृत किया, और उनकी सोयी हुई शक्ति को झकझोरा। उन्होंने 'वेदों की ओर लौट चले' का नारा देकर यह वताया कि भारत की प्राचीन संस्कृति और चिंतन विश्व की सर्वश्रेष्ठ संस्कृति और चितन मे से एक है।

मुझे यह वात भी महत्वपूर्ण लगती है कि उन्होंने अपनी वात उपदेश–पद्धति के द्वारा ही नहीं, वल्कि वाद–विवाद और तर्क–वितर्क के द्वारा कही। इस वारे में उनकी शक्ति अद्‌भुत थी। उन्होंने लोगों को केवल आस्थावान नहीं वनाया, वल्कि अपनी वात सप्रमाण कहकर ज्ञानवान वनाया। लोग प्रश्न पूछते थे, और वे उनका सप्रमाण उत्तर देते थे। चूँकि उनके उत्तर तर्क पर आधरित होते थे, इसलिए लोगो पर उनका प्रभाव पड़ता था।

तर्क को वे ज्ञान का मुख्य आधार मानते थे। दिनांक 24 जुलाई, 1877 को वंवई मे आर्य समाज के जो 10 मूल सिद्धांत वनाए गए थे, उनमें चौथा और पॉचवॉ सिद्धांत तर्क की प्रधानता वाले हैं। चौथे सिद्धात के अंतर्गत कहा गया है :

"हमें हमेशा सत्य को स्वीकार करने, तथा असत्य को अस्वीकार करने के लिए तैयार रहना चाहिए।"

अगले नियम में कहा गया है—

"हमारे प्रत्येक कार्य, सही एवं गलत का निर्णय करने के वाद धर्म के अनुकूल होने चाहिए।"

महर्षि दयानद सरस्वती के जन्म-दिवस-समारोह के अवसर पर, नई दिल्ली, 8 मार्च, 1994

यहाँ तक कि उन्होंने ईश्वर पर भी विश्वास करने की बात नहीं कही, बल्कि ज्ञान के आधार पर उसे जानने की बात कही। आर्य समाज के पहले नियम में उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा ·

"ईश्वर उन सभी सच्चे ज्ञान और सभी वस्तुओं का आदि स्रोत है, जिन्हें ज्ञान द्वारा जाना जा सकता है।"

दयानंद सरस्वती जी ने उस समय समाज की कुरीतियो, अंधविश्वासों और जड़ताओं के विरोध का जो बीड़ा उठाया, उसका भी मूल आधार तर्क ही था। स्वाभाविक है कि इसलिए उन्होंने शिक्षा पर बहुत अधिक जोर दिया। वे शिक्षा को व्यक्ति और राष्ट्र की उन्नति का आधार मानते थे। 'सत्यार्थ प्रकाश' के तृतीय समुल्लास में हमें शिक्षा के बारे में उनके विचार जानने को मिलते है। उन्होंने तृतीय समुल्लास के आरंभ मे ही लिखा है :

"सतानों को उत्तम विद्या, शिक्षा, गुण, कर्म और स्वभावरूप आभूषणों का धारण कराना माता, पिता, आचार्य और सम्बन्धियों का मुख्य कर्म है।"

उन्होंने यहां तक लिखा है—

"राजनियम और जातिनियम होना चाहिए कि पॉचवे-आठवें वर्ष के आगे अपने लड़कों और लड़कियों को घर में न रखें। पाठशाला में अवश्य भेज देवें। जो न भेजे, वह दंडनीय हो।"

दयानंद सरस्वती ने जिस 'आर्य समाज' की स्थापना की थी, उसका हमारे देश में शिक्षा के विकास में अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। मुझे इससे भी अधिक महत्वपूर्ण बात यह लगती है कि दयानंद सरस्वती ने लड़कियों के लिए शिक्षा की बात कहकर अपने समय के समाज में एक हलचल पैदा की थी। अभी मैंने जो उदाहरण दिया, उसमें उन्होंने लड़कियों के लिए भी शिक्षा की बात कही है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि उन्होंने नारी-विकास के लिए अन्य अनेक महत्वपूर्ण बातें कही। इनका उल्लेख 'सत्यार्थ प्रकाश' में मिलता है। उन्होंने वेदों का उदाहरण देते हुए कहा—

—लड़कियो को भी लड़कों के समान पढ़ाना चाहिए।

—प्रत्येक कन्या का अपने भाई के समान यज्ञोपवीत संस्कार होना चाहिए।

—लड़कियों का विवाह न तो बाल्यावस्था में हो, न ही उसकी इच्छा के विपरीत हो।

—पुत्री भी अपने भाई के समान दायभाग में अधिकारिणी हो।

—विधवा को भी विधुर के समान विवाह का अधिकार है।

—उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा—

"विवाह लड़के और लड़की की पसंद के विना नहीं होना चाहिए, क्योंकि एक-दूसरे की पसंद से विवाह होने से विरोध वहुत कम होता है, और संतान उत्तम होती है।"

निश्चित रूप से आर्य समाज ने इस दिशा में महत्वपूर्ण काम किया। दयानन्द जी के इन प्रगतिशील विचारों का प्रभाव समाज पर पड़ने से धीरे-धीरे नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण वदला। यह वात अत्यंत महत्व की है कि दयानंद सरस्वती के निधन से पचास वर्ष से भी पहले वाल-विवाह को रोकने के लिए 'शारदा विवाह कानून' पारित हुआ। इसी प्रकार अंतर्जातीय विवाहों को वैध घोषित करने के लिए 'आर्य विवाह कानून' भी पारित किया गया।

यदि वेदों का आश्रय लिया जाए, और तर्क के आधार पर सोचा जाए, तो मानव-मानव में कोई भेद मालूम नहीं पड़ता। वेदों में कहा गया है—"एकैव मानुपि जाति"। स्वामी दयानन्द सरस्वती ने भी संपूर्ण मानव-जाति को एक मानते हुए, उसके आचरण को प्रधानता दी है। 'सत्यार्थ प्रकाश' में उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा—

"जो दुष्टकर्मकारी-द्विज को श्रेष्ठ और श्रेष्ठकर्मकारी-शूद्र को नीच माने, तो इससे परे पक्षपात, अन्याय, अधर्म दूसरा अधिक क्या होगा।"

स्पष्ट हे कि उनके लिए आचरण महत्वपूर्ण था, जन्म नहीं। वे धर्म को भी सीधे-सीधे आचरण से जोड़ते थे। उन्होंने धर्म से जुड़े सभी आडंवरों, पाखंडों और अंधविश्वासों का अपने तर्क के बल पर खण्डन किया, और धर्म को सीधे-सीधे जीवन-व्यवहार का अंग बनाया। उन्होंने "स्वमन्तव्यामन्तव्यप्रकाश" के अनुच्छेद 3 में लिखा है :

"जो पक्षपातरहित न्यायाचरण, सत्यभापणदियुक्त ईश्वराज्ञा वेदों से अविरुद्ध हैं, उसको धर्म . . मानता हूँ।"

इसी प्रकार "ऋग्वेदादिभाष्य" के पृष्ठ 395 पर धर्म के लक्षण की चर्चा करते हुए वे लिखते हैं—

"सत्यभापणात् सत्याचरणाच्च पर— धर्म लक्षणं किञ्चित्रास्त्येव"।

अर्थात्, सत्यभाषण और सत्याचरण के अतिरिक्त धर्म का कोई दूसरा लक्षण नहीं है।

मैंने ये उद्धरण यहां इसलिए दिये हैं, ताकि इस बात को अच्छी तरह से समझा जा सके कि महर्षि दयानंद सरस्वती का धर्म न तो किसी जाति, क्षेत्र और लोगों तक सीमित था, और न ही उसका सबध किसी प्रकार की सकीर्णता और अव्यवहारिकता से था। उनके लिए धर्म व्यक्ति के आचरण का निर्माण करने वाला तत्व था। इसके साथ ही वह समाज का विधान करने वाली व्यवस्था थी। मैं समझता हूं कि दयानंद सरस्वती के विचारों को इसी संदर्भ मे समझा जाना चाहिए। विशेपकर एक ऐसे समय में, जबकि निहित स्वार्थ धर्म की अपनी-अपनी दृष्टि से व्याख्या कर रहे हो, यह ज़रूरी हो जाता है कि दयानद सरस्वती जैसे महापुरुपों के विचार लोगों के सामने रखे जाएं, ताकि लोग धर्म के सच्चे स्वरूप को समझ सकें, और उसके अनुकूल आचरण कर सकें।

यदि दयानंद सरस्वती जी को स्वराज्य का प्रवक्ता कहा जाए, तो गलत नही होगा। श्रीमती एनी बेसेट ने 'इडिया ए नेशन' में बिल्कुल सही लिखा है—

''स्वामी दयानद जी ने सर्वप्रथम घोपणा की कि भारत भारतीयों के लिए है।''

ठीक इसी प्रकार लोकमान्य तिलक ने उन्हें ''स्वराज्य का प्रथम सदेशवाहक तथा मानवता का उपासक'' कहा।

मातृभापा, मातृसस्कृति, मातृभूमि और मातृशक्ति के प्रति दयानंद जी के मन मे अगाध और गहरा लगाव था। वे स्वदेशी के समर्थक थे। उन्होने विदेशी कपड़ो के बहिप्कार की बात कही थी। सस्कृत के प्रकाड विद्वान और गुजराती भाषी होने के बावजूद उन्होने लोगों की सुविधा की दृष्टि से अपनी बात हिन्दी मे कहीं, और 'सत्यार्थ प्रकाश' हिन्दी मे लिखी। निश्चित रूप से इससे उस समय के भारतीयों की आत्मशक्ति जाग्रत हुई, और उनका आत्मविश्वास बढा। हमारे देश की सोई हुई शक्ति को उन्होंने सक्रिय करके राष्ट्रीय आंदोलन तथा सामाजिक एवं सांस्कृतिक क्रांति की दिशा में प्रेरित किया।

पंडित नेहरू ने अपनी पुस्तक 'भारत एक खोज' में उन्हें बिल्कुल सही ''विचारो की नयी प्रक्रिया शुरू करने वाले चिंतको मे से एक'' माना है। डॉ0 राधाकृष्णन् ने उनके कार्यो को 'मूक क्रांति' का नाम दिया। मुझे इसमे कोई दो मत नहीं मालूम पड़ते कि उन्होंने अपने चिंतन में जिस दूरदृष्टि का परिचय दिया,

और जिन कार्यो को शुरुआत की, उसका हमारे देश पर सकारात्मक प्रभाव पड़ा। आज हम अपने सामने उन कार्यो की उपयुक्तता देख सकते हैं।

मुझे ऐसा लगता है कि एक ऐसे समय में, जबकि एक नयी विश्व-व्यवस्था उभर रही है, स्वदेशी की भावना की अनदेखी नहीं की जानी चाहिए। हम विश्व-व्यवस्था से अलग नही रह सकते। लेकिन हमें इस बात का भी संकल्प लेना होगा कि हम अपनी संस्कृति, अपनी जड़ों से भी अलग नहीं रह सकते। मैं समझता हूं कि दयानद सरस्वती जी के दर्शन का यह एक महत्वपूर्ण संदेश था। और आज हमारे देश को इसे पूरे मनोयोग के साथ अपनाना चाहिए। मुझे विश्वास है कि इस तरह के समारोह दयानंद सरस्वती जी के जीवन-दर्शन को देश के लोगों तक पहुँचाने में सहायक होंगे।

बापू ने 'हरिजन' के 5 मई, 1932 के अक में लिखा था :

"दयानद जी की आत्मा आज भी हमारे बीच काम कर रही है। वे आज उस समय से भी अधिक प्रभावशाली हैं, जबकि वे हमारे बीच सदेह थे।"

मै आशा करता हूँ कि देश के लोग भी इसी तरह का अनुभव कर रहे होंगे। हमारे लोगो को ऐसे प्रगतिशील दृष्टिकोण वाले समाज की स्थापना के लिए काम करना हे, जिसमें कोई अशिक्षित नहीं होगा, कोई अस्पृश्य और छोटा-बड़ा नहीं होगा तथा जिसमें नारी के प्रति पूर्णसम्मान का भाव होगा। और यही इस महापुरुष के प्रति सच्ची श्रद्धाजलि होगी।

सकारात्मक परिवर्तन

15 अगस्त, 1947 को बीते 47 वर्ष हो रहे हैं। उस दिन हमने हर्ष, उत्साह और गर्व के साथ एक आजाद देश के प्रतीक के रूप में अपना राष्ट्रीय तिरंगा फहराया था। आजादी की लड़ाई के वर्ष संघर्ष और त्याग, कष्ट और निराशा तथा साहस और आशा से भरे वर्ष थे। वर्षों की प्रतीक्षा तथा हमारी उत्कंठा का वह फल था, जब हमने तिरंगा फहराया था।

भारत की आजादी की लड़ाई लड़ने का, और आजादी हासिल करने का सौभाग्य और सम्मान हमारी पीढ़ी का रहा है। मुझे उस समय का माहौल अच्छी तरह याद है। आज मुझे उस बहादुर देशभक्त नौजवान की याद आ रही है, जो "भारत छोड़ो आन्दोलन" के दौरान लखनऊ में पुलिस की गोलीबारी मे मुझसे कुछ ही कदम की दूरी पर शहीद हो गया था। तब से आज तक मुझे ऐसा लगता रहा है कि काश, नियति ने मेरे स्थान पर उसे अपने देश की सेवा करने का मौका दिया होता।

आईए, आज हम सब अपने उन शहीदों और स्वतंत्रता सेनानियों के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करें, जिनके त्याग और वलिदान से देश को आजादी मिल सकी।

इस साल हमने जलियांवाला बाग नरसंहार के 75वें वर्ष को याद किया। कुछ महीने बाद 2 अक्तूबर से सारा देश राष्ट्रपिता महात्मा गांधी की 125वीं जयन्ती मनाने जा रहा है।

बापू हमारे नैतिक और चारित्रिक उद्देश्यो के प्रतीक थे, जिन्होंने हमारे स्वतंत्रता संघर्ष में नई जान फूंकी, और उसे एक दिशा दी।

भारत के स्वतंत्रता आन्दोलन, तथा इस आन्दोलन का विश्व पर जो प्रभाव पड़ा, उसके मूल में नैतिक और चारित्रिक आदर्शों की ताकत थी। जब भी हम अपने स्वतंत्रता आंदोलन की मुख्य घटनाओ की वर्षगांठ मनाते हैं, तब हमें इस बात को याद रखना चाहिए, और इसे पूरी तरह समझना चाहिए। हमारे महान

स्वतंत्रता दिवस (1994) की पूर्व संध्या पर राष्ट्र के नाम संदेश, नई दिल्ली, 14 अगस्त, 1994

राष्ट्रीय नेता स्वतंत्रता और मानवीय गरिमा के आदर्शो के प्रति समर्पित रहे। उनके नेतृत्व के द्वारा ये नैतिक और चारित्रिक मूल्य हमारे राष्ट्रीय जीवन मे प्रकट होते रहे। इन नैतिक मूल्यो का प्रभाव ही हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन की सफलता का कारण है।

मित्रो, आजादी के 47 वर्ष वाद आज हर भारतीय के सामने एक राष्ट्र के रूप में जरूरी काम यह है कि इस आज़ादी की रक्षा की जाए, और आजादी से मिलने वाले लाभ सभी लोगों तक पहुचाए जाएं। मेरी समझ से यह काम उतना ही कठिन, जटिल और चुनौतियों से भरा हुआ है, जितना कि आजादी प्राप्त करना हम सभी को अपने देश में सकारात्मक परिवर्तन लाने के लिए अपना-अपना योगदान करना होगा, ताकि राष्ट्रीय लक्ष्य को पाया जा सके। हमें इसे पूरी तरह समझना होगा कि अपने मूल्यों एव चारित्रिक आदर्शों से हमें जुड़े रहना है, और इनसे दिशा निर्देश प्राप्त करते रहना है, क्योकि ये ही हमें सच्ची ताकत देने वाले है।

ढाई हजार वर्ष से भी पहले भगवान गौतम बुद्ध ने सद्गुणों के महत्व पर जोर दिया था। उन्होने अपनी वात उस समय के आम लोगों की भाषा पाली मे कही थी। गौतम बुद्ध ने कहा था—

> "चंदन तगारं वापि
> उप्पलं अथ वास्सिकी
> एतेसाम गधजातानाम
> सीलगधो अनुत्तरो"

(चन्दन, कमल और जूही में सुगन्ध होती है। लेकिन सदगुणों की जो सुगन्ध है, वह लाजवाव है।)

'धम्मपद' का यह बहुत ही सुन्दर दोहा आज भी हमारे लिए स्थाई महत्व का है। लोगों में सद्गुणों का संचार करने तथा नैतिक और चारित्रिक आदर्शो में उनकी आस्था मजवूत करने के लिए हमारे बुजुर्गो, नौजवानों और सभी लोगों को इस ओर ध्यान देना होगा, और अपना हाथ बटाना होगा। केवल इससे ही आजादी की उपलब्धियो की रक्षा और उसके विस्तार का काम सही ढंग से किया जा सकता है।

अपने आदर्शो के द्वारा दिखाए गए रास्ते पर चलते हुए हमारे राष्ट्रीय कार्य

ऐसे होने चाहिए कि हम अपनी परम्परा की मूल बातों को बनाए रखें, और कुछ में परिवर्तन लाते रहें। हमारी विरासत, हमारे चिन्तन और हमारी संस्कृति के सर्वोत्तम और कल्याणकारी तत्वों को हमें बनाए रखना है, और उनकी सुरक्षा करनी है। हमारे समाज में सभी धर्मो, रीति-रिवाजों और विभिन्न आध्यात्मिक पंथों के प्रति आदर की जो स्वाभाविक भावना है, हमें उसे ठेस नहीं लगने देना है। हमें समझना है कि सभी धर्मो का सार और संदेश एक ही है। इस तरह की समझ से ही समाज में सद्‌भावना आती है, एकता बढ़ती है, आपसी सामंजस्य बनता है, तथा मित्रता और सहयोग की भावना सुदृढ़ होती है।

हमें सत्य और अहिंसा के महत्व को समझना है, अपने बड़ों और शिक्षकों का आदर करना है, तथा लोगों में सेवा और नि:स्वार्थ कर्म की भावना को बढ़ाना है। हमें सभी दिशाओं से आने वाले अच्छे और हितकारी प्रभावों का स्वागत करना है। लेकिन इसके साथ ही हमें अपने आपको बुरे सांस्कृतिक प्रभावों से बचाना भी है। इसी प्रकार हमें अपनी अनोखी जैव-विविधता, वनस्पति, जीव-जन्तु तथा पर्यावरण का पोषण करना है, और उन्हे हानि से बचाना है।

दूसरी ओर, हमे अपने देश मे तेजी से परिवर्तन लाना है, ताकि गरीबी, अज्ञान और बीमारी से छुटकारा पाया जा सके, आर्थिक विकास को तेजी किया जा सके, तथा लोगों की आमदनी बढ़ाकर उनके जीवन-स्तर को सुधारा जा सके। इसके लिए यह जरूरी है कि हम अपने लोकतांत्रिक भावों और विचारों को अपनी ठोस उपलब्धियों द्वारा प्रमाणित करें। हमें एक शक्तिशाली और आत्म-निर्भर भारत बनाना है; एक ऐसा भारत बनाना है, जिसके प्रति विश्व में आदर की भावना पैदा हो सके, और जो विश्व के लोगों के हित में अपना समुचित योगदान कर सके। ऐसा करते समय हमें पं0 जवाहर लाल नेहरू के उन विचारों को याद रखना चाहिए, जो उन्होंने अपने महान जीवन के अंतिम दिनों में व्यक्त किए थे। उन्होंने कहा था, ''केवल भौतिक कामयाबी ही आदमी की जिन्दगी को खुशहाल और अर्थपूर्ण नहीं बना सकती। आर्थिक तरक्की के साथ-साथ एखलाकी और रूहानी मूल्यों को बढ़ाना होगा। इससे ही मानव संसाधन और चरित्र का पूरी तरह विकास हो सकेगा। . हमें यह नहीं भूलना चाहिए कि जीवन के नैतिक और आध्यात्मिक पहलू ही अन्ततः संस्कृति और सभ्यता के आधार हैं, और इन्होंने ही जिन्दगी को कुछ मायने दिए हैं।''

हमारे राष्ट्रीय जीवन का एक अन्य सबसे महत्वपूर्ण अंग हमारी संसदीय

लोकतांत्रिक प्रणाली है। इस प्रणाली को आगे बढ़ाने की, और इसकी पूरी सावधानी के साथ रक्षा करने की आवश्यकता है। लोकतंत्र के विधान एवं कला का जन्म हमारे राष्ट्रीय मूल्यों में गहरे रूप से निहित तत्वों से हुआ है। प्रत्येक व्यक्ति की गरिमा, उसकी आवश्यकताएं, अधिकार और कर्तव्य, समानता और सामाजिक न्याय तथा इन्हें प्राप्त करने की लालसा हमारे लोकतंत्र के मूल उद्देश्य हैं। ऐसा प्राचीन काल से आज तक हमारे चिंतन का विषय रहा है। इसकी चर्चा हमारे संत-महात्माओं ने की थी, और इसे बाद में हमारे शहीदों, स्वतंत्रता सेनानियों और महान राष्ट्रीय नेताओं ने दोहराया। पंचायती राज की स्थापना में हमारा यही लोकतांत्रिक चरित्र और उद्देश्य झलकता है। हम लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति में विश्वास करते हैं, तथा दुनिया भर में हो रहे लोकतंत्र के विकास का स्वागत करते हैं। इसलिए हम लोगों के लिए यह और भी अधिक जरूरी है कि हम अपनी संस्थाओं में इस तरह से काम करें, ताकि दुनिया में भारत का सम्मान बढ़े, जो उसे आज संसदीय लोकतंत्र की सफलता के लिए मिलता है।

संसदीय लोकतंत्र के मूल आधार हैं —सही रूप से चुने गए प्रतिनिधि, व्यवस्थित तरीके से पूरी तरह किए गए विचार-विमर्श और बहस, पूरी जानकारी पर आधारित उत्तरदायित्वपूर्ण निर्णयों का लिया जाना, तथा विधायिका के प्रति शासन की और मतदाताओं के प्रति चुने हुए प्रतिनिधियों की जिम्मेदारी। लोकतांत्रिक प्रणाली के चलने के लिए ये सब आवश्यक हैं। बल्कि सच तो यह है कि ये सभी अपरिहार्य और अनिवार्य हैं। इतना ही सब कुछ नहीं है, बल्कि इसके अतिरिक्त एक स्वतंत्र न्यायपालिका, दक्ष प्रशासन, सतर्क प्रेस, और इन सबसे अधिक प्रबुद्ध सामाजिक एकता तथा एक जागरूक और सशक्त चेतना की जरूरत है।

इस बात की हमेशा आवश्यकता है कि लोकतांत्रिक तत्वों की क्षमता को बढ़ाने के लिए हम हर तरह से अधिक-से-अधिक प्रयास करें, तथा लोकतंत्र के आवश्यक मापदण्डों का उल्लंघन न होने दें।

मुझे इस समय बापू के द्वारा 15 अगस्त, 1945 को कहा गया एक सारगर्भित कथन याद आ रहा है। उन्होंने कहा था — "हम रचनात्मक कामों को अहिंसा मानते हैं, और यही अहिंसा परम धर्म है।"

मित्रो, दुनिया की निगाहें हमारी ओर लगी हुई हैं। अपने पड़ोसियों के लिए तथा पूरी दुनिया के लिए भारत का संदेश शांति, मित्रता और सहयोग का रहा है, और भविष्य में भी यही संदेश रहेगा। हम मानते हैं कि परस्पर लाभदायक

क्षेत्रीय सहयोग के लिए मिला-जुला प्रयास, जैसे कि सार्क संगठन के सदस्य देश तथा तथा हिन्द महासागर क्षेत्र और आशियान के देश करें, तो उससे तेज़ी से विकास हो सकेगा तथा लोग समृद्ध और खुशहाल हो सकेंगे। हम विश्व के मामलों में लगातार सतर्क और रचनात्मक भूमिका निभाते रहेंगे।

रचनात्मक समाज का निर्माण

आप लोगो का यह सम्मेलन इस समय एक विशेप और ऐतिहासिक महत्व रखता है। आज से ठीक एक महीने बाद महात्मा गांधी जी की जन्म-तिथि है। उस दिन सारा देश उनकी 125वीं जयंती पर उन्हें श्रद्धांजलि देगा। इसी के साथ ही इस वर्प बापू के सच्चे शिष्य और बापू के द्वारा नामाकित प्रथम व्यक्तिगत सत्याग्रही विनोबा भावे जी की जन्म-शताब्दी भी है। इसलिए मै समझता हू कि ऐसे ऐतिहासिक सयोग के अवसर पर हम सबका दायित्व है कि हम सब बापू के स्वतत्रता के लक्ष्य को पूरा करने में अपनी सारी शक्ति लगा दें, ताकि आजादी की रोशनी हर व्यक्ति तक पहुंच सके, और उनका जीवन बेहतर बन सके।

देश के अलग-अलग भागों से आए हुए आप सबको यहा देखकर मुझे सचमुच बहुत प्रसन्नता हो रही है। बापू के आदर्शो के प्रति आप लोगों में जो श्रद्धा है, उनके द्वारा दिखाए रास्ते पर चलकर आप सब देश के लिए जो कर रहे हैं, उसके लिए मैं आप सबको बधाई देता हूं, और अपनी शुभकामनाएं व्यक्त करता हू कि आप सब अपने प्रयासों में सफल हों।

आप सब बापू के विचारो और बापू के रचनात्मक कार्यो से अच्छी तरह परिचित हैं। आप लोगो में से कुछ ऐसे भी होंगे, जिन्होने बापू को देखा भी होगा और उन्हे सुनने का मौका भी पाया होगा। मैं अपने को उन सौभाग्यशाली लोगों मे से मानता हूं। मैं अपने अनुभवों के आधार पर आप लोगों से कह सकता हू कि मैने अपनी जिन्दगी में पहला और आखिरी ऐसा आदमी देखा है, जो सचमुच देखने में इतना साधारण था, लेकिन जिसमें जबर्दस्त आकर्पण था, सम्मोहन की सीमा तक आकर्पण था और जिसका प्रभाव दुर्निवार था। कभी-कभी सोचता हूं कि आखिर ऐसा क्यों था? लेकिन मुझे इसका उत्तर पाने में कोई कठिनाई नहीं होती। उनका यह आकर्पण, और उनका यह प्रभाव मूलत उनके आंतरिक व्यक्तित्व के कारण था। उनमें जो आत्मविश्वास था, अपने उद्देश्य के प्रति एकनिष्ठता थी, मानवता के लिए त्याग और समर्पण का जो जबर्दस्त आवेग था, उसने उनके

अखिल भारतीय रचनात्मक समाज के वार्पिक सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए, तिरुपति, 2 सितम्वर, 1994

व्यक्तित्व के चारों ओर एक प्रभामंडल तैयार कर दिया था। मैंने देखा है कि उस प्रभामंडल के आकर्षण से हमारे देश के लोग तो क्या, विदेशी तक नहीं बच पाए। सचमुच, जब भी ऐसे व्यक्तित्व की याद आती है, तब मन श्रद्धा से भर उठता है।

गांधी जी बहुत सरल थे। बहुत सहज थे, लेकिन साथ ही एक समग्र क्रान्ति भी थे। वे सम्पूर्ण क्रांति थे, और एक आधारभूत क्रांति थे। हो सकता है कि यह बात आप लोगों का अटपटी-सी लगे कि सरल और क्रान्ति, दोनों विरोधी बातें एक साथ कैसे हो सकती हैं। लेकिन मैं मानता हूं कि इन दोनों विरोधी तत्वों का समन्वय ही बापू की विलक्षणता थी। उनकी क्रांति बाहर की क्रांति नहीं थी, अन्दर की क्रांति थी। उनकी क्राति थोपी हुई क्राति नहीं थी, बल्कि खुद में पैदा की हुई क्रांति थी। वे क्रांति अंदर से लाना चाहते थे-एक ऐसी क्रांति, जिसके प्रभाव से जीवन का कोई कोना अछूता न रह जाए। वे एक ऐसी क्रांति लाना चाहते थे, जो व्यक्ति की सोच को बदले, उसके आचरण को बदले और देश मे सच्चे समाजवाद की स्थापना हो सके। उनकी क्राति मन की क्रांति थी, अपनी मिट्टी की क्रांति थी।

मैंने यह बात मुख्य रूप से उनके रचनात्मक कार्यो के बारे में ही कही है। आप सब सोचकर देखिए कि उनके रचनात्मक कार्य क्या थे? उन रचनात्मक कार्यो का उद्देश्य क्या था? क्या क्रांति लाना चाहते थे वे सचमुच इन रचनात्मक कामो से? इसके लिए मैं आप लोगों को उनके वे शब्द याद दिलाना चाहूंगा, जो उन्होने 10 सितम्बर, 1930 को 'यंग इंडिया' मे लिखे थे। उन्होंने लिखा था·

"मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा, जिसमें गरीब-से-गरीब लोग भी यह महसूस करेंगे कि यह उनका देश है-जिसके निर्माण में उनकी आवाज का महत्व है। मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा, जिसमें ऊंचे और नीचे वर्ग का भेद नहीं होगा, और जिसमें विभिन्न समुदायों में पूरा मेल-जोल होगा। ऐसे भारत में अस्पृश्यता या शराब, या दूसरी नशीली चीजो के अभिशाप के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। उसमें स्त्रियो को वही अधिकार होंगे, जो पुरुषों को।"

आप बापू के सारे रचनात्मक कामों की एक-एक कर जाच कर लीजिए, आप पाएंगे कि बापू ने अपनी सारी शक्ति अपने इन्हीं सपनों को साकार करने में लगा दी, लेकिन ध्यान रखने की बात यह भी है कि उन्होंने अपने रचनात्मक कामों को कभी राजनीतिक कामों से अलग नहीं माना। वे लोगों को हर तरह

से आजाद करना चाहते थे-राजनीति दृष्टि से, आर्थिक दृष्टि से, तथा सामाजिक और सांस्कृतिक दृष्टि से। और इसी सम्पूर्ण आजादी के लिए उन्होंने रचनात्मक कामों का तरीका निकाला।

उदाहरण के लिए हम खादी की ही वात को लें। मैं खादी को हाथ से बुना हुआ कपड़ा भर नहीं मानता। मैं इसे केवल स्वतंत्रता सेनानियों की पोशाक भी नहीं मानता। वल्कि मैं इसे गांधी जी की आध्यात्मिकता और आर्थिक आजादी की प्रतीकात्मक अभिव्यक्ति मानता हूं। खादी के लिए चरखा चलाना एक आत्मिक साधना थी। यह एक एकाग्रता थी, रचनात्मकता थी, और इसके साथ थी-किसी वस्तु के अंदर अपने स्नेह को उड़ेल देना। इसके वाद कहीं जाकर सूत वनता था, तव उससे खादी वुनी जाती थी। और जब वह तैयार हो जाती थी, तव वह प्रतीक वन जाती थी-स्वदेशी भावना की, वह प्रतीक वन जाती थी-हमारे कुटीर और दस्तकारी उद्योगों की। वे इसके माध्यम से अंग्रेजों द्वारा नष्ट की गई हमारी ग्रामीण अर्थव्यवस्था को पुनरुज्जीवित करना चाहते थे। वे इस व्यवस्था में आवश्यक परिवर्तन लाना चाहते थे।

आप उनकी इस मान्यता से तो परिचित ही हैं कि भारत गांवों में वसा है। इसलिए यह स्वाभाविक है कि जव तक गांवों में आधारभूत परिवर्तन नहीं लाए जाएंगे, तव तक सम्पूर्ण आजादी नहीं आ सकती। इसलिए उन्होंने खादी की वात की, कुटीर उद्योग की वात की, गो-सेवा की वात की।

वापू की महानता इस वात में भी है कि उन्होने अतीत के झरोखे से भारत को देखा, और उनकी निगाह टिकी-भविष्य पर। उन्होंने गांवों के विकास के लिए उस समय जितनी भी वातें कहीं थीं, उन सवका वैज्ञानिक आधार था और उनकी ज़रूरत आज हम थोड़े से वदले हुए रूप में वड़ी तेजी से महसूस कर रहे हैं। उन्होंने उस समय वॉयो-गैस की वात कही थी। आज पर्यावरण की रक्षा के लिए यह वात जरूरी लग रही है। आज सौर ऊर्जा की वात कही जा रही है। वापू कागज़ तक नष्ट नहीं करते थे। इसके पीछे उनकी मूल धारणा थी कि कागज़ को नष्ट करने का मतलव है-जंगलो को नष्ट करना। आज पर्यावरण के संरक्षण की वात कही जा रही है। आज जव हम अपने विदेशी व्यापार की वात करते हैं, तव हम कुटीर उद्योगों और दस्तकारों द्वारा तैयार किए गए माल के निर्यात की वात करते हैं। वापू को कुटीर उद्योगों की धारणा सीधे-सीधे गांवों के रोजगार से जुड़ी हुई थी। आज यह कोशिश की जा रही है कि किस प्रकार गांवों के

लोगों को अधिक से अधिक रोजगार उपलब्ध कराया जा सके। मेरी दृष्टि से बापू ने अपने रचनात्मक कामों द्वारा इन समस्याओं को जड़ से समाप्त करने की बात कही थी।

इसके साथ ही बापू गांवों की कुरीतियों से भी परिचित थे। उन्होंने देखा ही नहीं, बल्कि अनुभव भी किया था कि किस प्रकार समाज छूआछूत के नाम पर बंटा हुआ था। इसलिए उन्होंने अस्पृश्यता निवारण को उच्च प्राथमिकता दी। जिन्हें अछूत कहा जाता था, उन्हें सवर्णो से ऊपर दर्जा देने के लिए ब्राह्मणों से भी ऊपर 'हरिजन' नाम दिया। उन्होंने दलित उद्धार की बात कही। केवल कही ही नहीं, बल्कि खुद उनकी बस्तियों में जाकर रहे। यह सब उन्होंने इसलिए किया, ताकि लोग उनके आचरण से शिक्षा ले सकें। उन्होंने अपने समाचारपत्र को, जो देश में राजनैतिक आज़ादी और सामाजिक क्रांति लाने के लिए समर्पित था, 'हरिजन' नाम दिया।

उन्होंने गांवों में सफाई का अभियान चलाया। लोगों को स्वास्थ्य की शिक्षा दी। बुनियादी शिक्षा की बात कही, ताकि लोग अपनी मातृभाषा में शिक्षा पा सकें। वे देख रहे थे कि गांवों की आत्मिक और शारीरिक शक्ति शराब जैसे नशों में नष्ट हो रही है। इसके लिए उन्होने नशाबंदी अभियान में महिलाओं को लगाया, और उनके इस प्रयास का प्रभावकारी असर भी हुआ।

यह बात ध्यान देने की है कि एक ऐसे समय में; जबकि सारा देश राजनीतिक आजादी की लड़ाई में लगा हुआ था, उस समय बापू इसके साथ-ही-साथ रचनात्मक कामों में भी लगे हुए थे। केवल खुद ही नहीं लगे हुए थे, बल्कि और भी बहुत-से राष्ट्रीय नेता उसमें बराबर का हाथ बंटाते थे। विनोबा जी ने तो अपना सारा जीवन बापू के रचनात्मक कामों का आगे बढ़ाने में लगा दिया, जिसका सर्वोत्तम रूप हमें उनके 'भूदान' आंदोलन मे देखने को मिलता है।

मैं यहां यह भी कहना चाहूंगा कि उनके रचनात्मक कार्यक्रम का आधार केवल भौतिक नहीं था। इसका उद्देश्य गांवों के लिए केवल भौतिक सुख-सुविधाएं जुटा देना ही नहीं था, बल्कि यह एक संस्कृति भी थी। एक साधना भी थी। बापू ने अपने रचनात्मक कामों की शुरुआत दक्षिण अफ्रीका से की थी। वहां उन्होने अपना एक आश्रम बनाया था, जिसे नाम दिया था 'टॉलस्टाय फार्म'। टॉलस्टाय श्रम-जीवन में विश्वास करते थे, और बापू ने उनके इसी आदर्श का सम्मान करते हुए अपने आश्रम को 'टॉलस्टाय फार्म' कहा था। जिस समय बापू

ने यह शुरुआत की थी, उस समय वे 40 वर्ष के नौजवान थे। उनमें शक्ति थी, क्षमता थी और उत्साह था। और यही उत्साह उनकी हत्या के समय तक बना रहा। यह फार्म स्वावलबन की शिक्षा देता था। यदि स्वावलबन की इस वात को देश तक फैला दिया जाए, तो वही स्वराज हो जाता है। बापू ने अपने रचनात्मक कामो के द्वारा व्यक्ति को स्वावलंबी होने का संदेश दिया, गांवों को स्वावलंवी होना का संदेश दिया और देश को स्वावलंवी होना का संदेश दिया।

वापू अपने रचनात्मक कार्यो के द्वारा व्यकित को नैतिक रूप से उठाना चाहे थे। श्रम और सेवा की भावना से वे उनमें सत्य और अहिसा की भावना पैदा करना चाहते थे। वे भाई-चारे की भावना पैदा करना चाहते थे, क्योंकि श्रम ऊंच-नीच की झूठी भावना को समाप्त करता है। इसके लिए मैं आपके सामने वापू द्वारा 3 मार्च, 1936 को सावली की एक सभा में कहे गए शव्द रखना चाहूंगा

"किसी भी आदमी को यह नहीं सोचना चाहिए कि वह सत्य और अहिसा मे तो विश्वास करता है, लेकिन दस्ताकारी या खादी और गांवो के लोगों की सेवा करने में विश्वास नहीं करता। इसी प्रकार किसी को यह नहीं कहना चाहिए कि वह सत्य और अहिसा में तो विश्वास करता है, लेकिन यह हिन्दू-मुस्लिम एकता और अस्पृश्यता निवारण में विश्वास नहीं करता।"

इस प्रकार वापू ने अपने रचनात्मक कार्यो को सीधे सत्य और अहिसा से जोड़ा था। उसे मानव और मानव की एकता से जोड़ा था। उनका यह मानना था कि रचनात्मक कार्यो से ही सत्य और अहिसा की भावना आ सकती है, और वह मजबूत बन सकती है।

मैंने यहा पर इन बातों का उल्लेख विशेपकर इसलिए किया है, ताकि आप रचनात्मक कामों के केवल एक ही स्वरूप को न देखे। उसे खंड-खंड में भी न देखें, वल्कि उसके पूरे रूप को देखें और सभी को एक-दूसरे से जोड़कर देखे। और यह सोचें कि क्या आज तक वापू का वह सपना पूरा हो सकता है?

वापू ने अपनी कुर्बानी से केवल एक दिन पहले जो वात कही थी, मैं समझता हूं कि यहां हमें उसे याद करना चाहिए। उन्होने 29 जनवरी, 1984 को कहा था:

"शहरों और कस्वों से अलग उसके सात लाख गांवों की दृष्टि से हिन्दुस्तान की सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आजादी हासिल करना वाकी है।"

सच है कि हमने राजनीतिक आजादी हासिल कर ली है। आज हम खुद अपने भाग्य-विधाता हैं, लेकिन अभी दूसरे क्षेत्रों में बहुत कुछ करना है।

आजादी के बाद से हमने सविधान मे समाजवादी समाज की स्थापना का संकल्प व्यक्त किया गया। लेकिन यह संकल्प तभी पूरा हो सकेगा, जबकि हमारे लोग गांवों के विकास की ओर ध्यान दें। इस काम को पूरी तरह केवल सरकार पर ही नहीं छोड़ा जाना चाहिए। लोकतंत्र का मतलब ही है लोक-शक्ति। हमें अपने यहां की लोक-शक्ति को जागृत करना है और उसे सामाजिक, नैतिक और आर्थिक आज़ादी प्राप्त करने मे लगाना है। जब तक हमारे अपने गांवो के लोग आगे नहीं आएगे, तब तक बात बनेगी नहीं। सरकार का मुख्य काम तो इसके लिए आपको आधारभूत ढांचा उपलब्ध करा देना है। वह कर रही है-पंचायती राज के माध्यम से, विकास योजनाओं के माध्यम से, तथा समय-समय पर तरह-तरह के नियमों व कानूनों के माध्यम से। लेकिन ये सब बातें तब तक पूरी तरह असरदार नहीं बन पातीं, जब तक कि हमारे लोग आगे आकर उन्हें अमल में न लाए। मैं समझता हू कि इसके लिए अखिल भारतीय रचनात्मक समाज के कार्यकर्ता बहुत बड़ी भूमिका निभा सकते हैं। वे अपने आचरण से अपने लोगों को प्रेरित कर सकते हैं।

यहां मै एक बात और भी कहना चाहूगा कि आज नगरों और गावो में केन्द्र तथा राज्य सरकारों के अनेक तत्र और अनेक स्वयंसेवी संस्थाएं काम कर रही हैं। लेकिन मुझे लगता है कि यदि इन सभी मे समुचित तालमेल हो सके, तो उससे काम तेजी से पूरा हो सकेगा। तालमेल का यह काम कैसे किया जा सकता, इसके बारे में आप लोगों को सोचना चाहिए। यदि गांवो के विकास से जुड़ी सारी एजेसियां एक साथ मिलकर काम करें, और उसमें लोक-शक्ति की सहभागिता को महत्व दें, तो उससे हमारे गांवो में क्रांतिकारी बदलाव आ सकता है। मैं समझता हूं कि ऐसे वर्ष में, जबकि हम सब बापू की 125वीं जयती मनाते जा रहे हैं, तब तो गावों के सम्पूर्ण विकास का सकल्प लिया ही जाना चाहिए।

विनोबा के भूदान का अर्थ

मैं अपने को उन सौभाग्यशाली लोगों में मानता हूं, जिन्हे पं. नेहरू और विनोबा जी जैसे राजनेता और सत पुरुषों के साथ काम करने का मौका मिला। जब मैं भोपाल राज्य का मुख्यमंत्री था, तथा बाद में मध्य प्रदेश में मत्री था, तब विनोबा जी के साथ मैंने पद यात्राएं की थीं। मैने स्वयं देखा है कि गांव के लोग विनोबा जी पर कितना अधिक विश्वास करते थे, और अपनी जमीन दान करने में जरा भी नहीं झिझकते थे। गांव-गांव में जाकर, लोगों से बातचीत करके उनके दिमाग में एक सकारात्मक सोच पैदा कर देने की जबरदस्त ताकत मुझे विनोबा जी में दिखाई पड़ी। गांव के विकास के लिए श्रमदान का मंत्र मैंने विनोबा जी से ही ग्रहण किया था। मैं जब शिक्षा मंत्री था, तब मैंने कोशिश की थी कि गांव के लोग श्रमदान करके स्कूल की बिल्डिंग बनाएं। बाकी खर्चा सरकार उठाएगी। इस बात का प्रभाव पड़ा था, और पूरे राज्य मे पाठशालाएं खुल गई थीं। इसी प्रकार मैंने लोगों से श्रमदान कराकर सड़कें बनवाई तथा अन्य कई काम कराए।

गांधी जी और विनोबा जी, दोनों ने समाज में मूलभूत परिवर्तन लाने की बात कही थी। यह परिवर्तन वे न तो शक्ति से लाना चाहते थे, और न ही किसी दबाव से। मैं समझता हू कि इस बात पर खासतौर से गौर किया जाना चाहिए कि जब गांधी जी और विनोबा जी प्रेम और अहिसा के द्वारा समाज में बदलाव लाने की कोशिश कर रहे थे, वह युग कैसा युग था। यह वह समय था, जब दुनिया ने दो-दो महायुद्ध देखे थे। यह वह समय था, जब पूर्वी यूरोप में शक्ति पर आधारित एक नई राजनैतिक व्यवस्था उभर रही थी। निश्चित रूप से उस समय दुनिया जबरदस्त परिवर्तन के दौर से गुजर रही थी। इसके बावजूद बापू और विनोबा ने परिवर्तन का एक अलग ही रास्ता अपनाया। यह रास्ता प्रेम का रास्ता था। यह रास्ता एक-दूसरे को जोड़ कर एक दूसरे के साथ सहयोग करते हुए, एक दूसरे के लिए जीने का रास्ता था। यह रास्ता छीनने का नहीं, बल्कि अपने आप देने का रास्ता था। इस रास्ते को विनोबा जी ने 'तीसरी शक्ति' कहा। विनोबा जी ने सर्वोदय सम्मेलन में 7 मार्च, 1953 को कहा था:

आचार्य विनोबा के जन्म शताब्दी समारोह का उद्घाटन करते हुए, नई दिल्ली, 11 सितबर, 1994

''मेरी तीसरी शक्ति की परिभाषा यह होगी · जो शक्ति हिसा की विरोधी है, अर्थात् जो हिसा की शक्ति नहीं है। और जो दड शक्ति से भी भिन्न है, अर्थात् जो दंड शक्ति नहीं है–ऐसी शक्ति। एक हिसा शक्ति, दूसरी दंड शक्ति और तीसरी हमारी शक्ति। हम इसी शक्ति को व्यापक बनना चाहते हैं। हमें आम लोगो में घुल–मिल जाना चाहिए, और केवल मानव मात्र बनकर ही काम करना होगा''

विनोबा जी समाज को बदलना चाहते थे, लेकिन प्रेम से। वे इसे एक महाशक्ति मानते थे, और इस पर बहुत भरोसा भी करते थे। अपनी पुस्तक 'तीसरी शक्ति' में उन्होंने लिखा है.

''मनुष्य के हृदय में ऐसी एक शक्ति है, जिससे उसका जीवन समृद्ध हुआ है। मनुष्य प्रेम पर भरेसा रखता है। हम दड शक्ति से भिन्न जन–शक्ति का निर्माण करना चाहते हैं, और उसका निर्माण करना ही होगा।''

विनोबा जी की ये बातें केवल सैद्धांतिक ही नही थीं, बल्कि उन्होंने इसे व्यवहार रूप मे करके दिखाया भी। इसके लिए उन्होने आजादी के बाद 'भूदान आंदोलन' की शुरुआत की। वे गाव–गांव गए। उन्होंने करीब 40 हजार मील की यात्रा की, और हजारों एकड जमीन दान में प्राप्त की। मैं इस अवसर पर याद दिलाना चाहूंगा कि स्वय प्रधानमत्री पं नेहरू ने राज्य के मुख्यमत्रियों को चिट्ठी लिखकर विनोबा जी के इस आदोलन की प्रशंसा की थी। प नेहरू ने 25 सितम्बर, 1957 को मुख्यमंत्रियों को अपने पत्र में लिखा था :

''मुझे इस बात का पूरा यकीन हो गया है कि दूसरे क्षेत्रों में भी प्रत्यक्ष और परोक्ष रूप से विनोबा जी के इस आंदोलन मे लोगों के हित के लिए बहुत बड़ी ताकत है। हमे यह बात याद रखनी चाहिए कि यह आदोलन जमीन तथा अन्य समस्याओ के समाधान के लिए शातिपूर्ण और अहिसात्मक नजरिया रखता है।''

विनोबा जी के इस भूदान आंदोलन का असर उन क्षेत्रो में भी हुआ था, जहां लोग जमीन के मालिको के विरुद्ध आंदोलन चला रहे थे। खुद पं नेहरू ने अपनी तेलंगाना यात्रा के बारे में लिखा था ·

''मेरे इस दौरे से हम लोगों के सामने यह बात जाहिर हो गई कि ताकत के इस्तेमाल की बजाय मनोवैज्ञानिक और दोस्ताने दृष्टिकोण का अच्छा नतीजा निकलता है।''

मै तो यह मानता हूं कि विनोबा जी का यह आंदोलन हर तरह की समस्या के समाधान के लिए एक क्रांतिकारी कदम था। केवल कृषि क्षेत्र के लिए ही नहीं, वल्कि गांव की अनेक समस्याओं के समाधान के लिए एक मंत्र था। वे इस आंदोलन के द्वारा लोगों के दिमाग में क्रातिकारी परिवर्तन लाना चाहते थे। वे लोगों के दिमाग की सीमा-रेखा को मिटा कर उसे 'विश्व मानव' वनाना चाहते थे। इसीलिए उन्होने नारा दिया था 'जय जगत'। उनके विचार और कार्य हमारी सास्कृतिक परम्परा "वसुधैव कुटुम्वकम्" के अनुकूल थे। उन्होंने कभी भी, किसी भी स्तर पर मानव-मानव में भेद नहीं माना, चाहे वह जाति का स्तर हो, धन का स्तर हो, अथवा धर्म का स्तर हो। सन् 1924 में वे केरल के गुरुवयुर मंदिर में हरिजनों के प्रवेश संवंधी सत्याग्रह में भाग लेने के लिए गए थे। चूंकि हरिजनो में अधिकतर लोग भूमिहीन थे, इसलिए उन्होंने भूदान में प्राप्त कुल भूमि का एक तिहाई भाग हरिजनों को देने का फैसला किया। पिछड़े वर्ग के लोगों की आर्थिक स्थिति में सुधार करके वे समाज में आर्थिक न्याय स्थापित करना चाहते थे। वे नारियो को भी समाज में सम्मानजनक स्थान दिए जाने के प्रवल पक्षधर थे। उनके लिए देश में सामाजिक न्याय और आर्थिक न्याय की स्थापना ही सच्चा सर्वोदय था। उन्होंने सर्वोदय के कार्यकर्ताओं को सम्वोधित करते हुए विल्कुल सही कहा था:

"ध्यान रहे कि हम केवल मानव हैं, मानव से भिन्न कुछ नहीं।"

विनोवा जी ने सामाजिक परिवर्तन का जो शांतिपूर्ण रास्ता हम लोगों को और विश्व को दिखाया, उसके कारण वे सच्चे अर्थो में आचार्य कहलाने के अधिकारी हैं। मुझे याद है कि उस समय विश्व के प्रसिद्ध विचारकों ने विनोवा जी की कार्य-प्रणाली की प्रशंसा की थी। इन लोगों को यह देखकर आश्चर्य होता था कि लूटने के इस युग में भला विनोवा जी लोगो में लुटाने की भावना कैसे पैदा कर पा रहे हैं? लेकिन हम भारतीयों को यह वात इसलिए स्वाभाविक लगती थी, क्योंकि यह सदियों से हमारे चितन में और हमारी संस्कृति में रही है। एक वार विनोवा जी ने प्रवृत्ति, कुप्रवृत्ति और संस्कृति में अंतर वताते हुए मुझसे कहा था :

"मान लो मेरे पास एक रोटी है, और उसी समय कोई एक और आदमी आ जाता है। तो यदि मैं वह रोटी स्वय खाता हूं, तो यह प्रवृत्ति हुई। यदि उस आए हुए आदमी के पास की रोटी भी छीनकर खा जाता हूं, तो यह कुप्रवृत्ति

हुई। और यदि मैं अपनी एक रोटी में से आधी रोटी उस आने वाले को दे देता हूं, तो यह संस्कृति हुई।''

विनोबा जी ने अपने भूदान आंदोलन के द्वारा त्याग और सहयोग की इसी संस्कृति को मजबूत और व्यापक बनाने की कोशिश की थी।

विनोबा जी को मैं हमारे देश की संत परम्परा का आधुनिक प्रतिनिधि मानता हूं। बापू के सम्पर्क मे आने से उनके मन में सोई हुई उदात्त चेतना को एक सहारा मिल गया, और देखते-ही-देखते वे बापू के प्रिय बन गए। बापू का प्रिय बनना कोई आसान काम नहीं था। उनका प्रिय बनने के लिए जरूरत थी-संयम की, सेवा की, अनुशासन की, सत्य और अहिसा की। जब बापू को लगा कि विनोबा में ये सारे तत्व हैं, तभी उन्होंने एक प्रकार से उन्हे अपना आध्यात्मिक वारिस बनाया। जब 1940 मे व्यक्तिगत सत्याग्रही बनने की बात आई, तो उन्होंने विनोबा जी को प्रथम सत्याग्रही चुना। वे देश के प्रथम व्यक्तिगत सत्याग्रही बने। बापू ने विनोबा जी के बारे में कहा था .

''वह आश्रम के दुर्लभ मोतियों में से एक है। वह उनमें से है, जो आशीर्वाद लेने के लिए नहीं, बल्कि आशीर्वाद देने के लिए आया है।''

ऐसा नहीं था कि स्वतत्रता आदोलन के समय विनोबा जी केवल रचनात्मक कामों में ही लगे रहे। निश्चित रूप से वह उनका प्रमुख क्षेत्र था, लेकिन वे स्वतंत्रता आंदोलन से भी जुड़े रहे। नागपुर के झंडा सत्याग्रह का उन्होंने नेतृत्व किया, और जेल गए। सन् 1930 के नमक सत्याग्रह में भी उन्होंने भाग लिया, और जेल गए। सन् 1940 में प्रथम सत्याग्रही के रूप में भी जेल गए। इस प्रकार बचपन में उनके मन में क्रांतिकारी बनने की जो चिगारी थी, वह कभी-कभी इन रूपों में लपट का रूप धारण कर लेती थी। इससे उन्हे एक प्रकार का सुख भी मिलता था। फिर भी वे जानते थे कि उनका मुख्य क्षेत्र राजनीति नहीं, बल्कि समाज है।

विनोबा जी ने बापू के रचनात्मक कार्यो को आगे बढ़ाने के लिए सर्वोदय समाज का नेतृत्व सम्भाला। उन्होंने गांव की सेवा में लगे लोगों के सामने पंचविद् कार्यक्रम रखा था। ये पंचविद् कार्यक्रम थे-अन्त:शुद्धि, बहिर्शुद्धि, श्रम, शांति और समर्पण। उनका कहना था कि इन पांचों गुणों को अपनाकर हमारे देश के लोगों को गांव की सेवा में लग जाना चाहिए।

उनका मानना था कि श्रम से जीवन शुद्ध होता है। देश के प्रत्येक व्यक्ति को श्रम करना चाहिए, और धन के स्थान पर श्रम की प्रतिष्ठा होनी चाहिए। इसलिए उन्होंने भूदान के साथ-साथ श्रमदान की भी वात पूरे जोर-शोर के साथ कही थी। वे खुद श्रम करते थे, तथा औरों को श्रम में लगाते थे। इसलिए मुझे लगता है कि विनोवा जी के लिए "कर्मयोगी" की बजाय "श्रमयोगी" शब्द अधिक सटीक होगा।

कर्मयोगी तो वे थे ही। मैं उन्हें उन महान पुरुषों में मानता हूं, जिन्होने सच्चे अर्थों में गीता को जीया। अपनी पुस्तक "गीता प्रवचन" की प्रस्तावना मे विनोवा जी ने स्वीकार किया है :

"मेरे जीवन में गीता ने जो स्थान पाया है, उसका मैं शब्दो में वर्णन नहीं कर सकता। गीता का मुझ पर अनंत उपकार है। रोज मैं उसका आधार लेता हूं, और रोज मुझे उससे मदद मिलती है।"

सचमुच, उन्होंने बिना किसी फल की कामना किए अपना धर्म निभाया। करीव बारह वर्ष पहले ही उनका निधन हुआ है। जितनी शाति के साथ उनका देहावसान हुआ, और जीवन के अतिम क्षणों मे उनके चेहरे पर संतोष की जो चमक थी, वह सचमुच किसी निष्काम कर्मयोगी के चेहरे की शांति हो सकती है। उनकी वह शांति श्रम के बाद मिलने वाले विश्राम की शांति थी। उनकी वह शांति जीवन मे दूसरो के साथ कुछ कर पाने के आत्म-संतोष से पैदा हुई शांति थी।

समन्वय हमारी सस्कृति की मुख्य और अनोखी विशेषता है। विनोबा जी इस समन्वय के सुन्दर प्रतिनिधि थे। उनमें क्रांति और शांति का समन्वय था। उनमें अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय था। उनमें समाज और राजनीति का समन्वय था। वे स्वभाव से ही समन्वयवादी थे। उन्होने सर्वधर्मसमभाव के लिए बहुत काम किया। उन्होने 'बाइवल' का अध्ययन कर ख्रिस्त धर्म का सार तैयार किया। 'कुरान शरीफ' का अध्ययन कर 'कुरान सार' लिखा तथा 'गुरु ग्रंथ साहिब' का अध्ययन कर सिख धर्म समझा और समझाया।

उनकी समन्वय की यह भावना भाषा के क्षेत्र में भी दिखाई पड़ती है। उनमें कई भाषाओं का समन्वय था। हिन्दी, उर्दू, मराठी, तमिल, अरबी, फारसी, अग्रेजी तथा फ्रेंच भाषा के वे अच्छे जानकार थे। फिर भी वे अधिकाशत: राष्ट्रभाषा हिन्दी में ही बातचीत करते थे। वे इसे सारे देश को जोड़ने वाली सम्पर्क भाषा के रूप

में देखते थे। मुख्य बात यह है कि वे टकराव के नहीं, स्वीकार्य के प्रवक्ता थे। वे विखंडन के नहीं मंडन के प्रवक्ता थे। उनकी आस्था तोड़ने मे नहीं, बल्कि जोड़ने में थी।

इस वर्ष हम विनोबा जी की 100वीं जयंती मना रहे हैं। कुछ ही दिनों बाद बापू की भी 125वीं जयंती की शुरुआत होगी। ऐसे सुखद संयोग के वर्ष में हमारे देश को निश्चित रूप से एक नया संकल्प लेना चाहिए। मेरी समझ से एक महत्वपूर्ण संकल्प हो सकता है-ग्राम्य स्वराज्य का संकल्प। विनोबा जी का मानना था कि राज्य और स्वराज्य अलग-अलग हैं। हिसा के प्रयोग से राज्य तो पाया जा सकता है, किन्तु स्वराज्य बिना अहिसा के प्राप्त नहीं किया जा सकता। उनके अनुसार स्वराज्य का अर्थ था-सबका राज्य, हर एक का अपना राज्य, ऐसा राज्य; जिसमें प्रत्येक को ऐसा लगने लगे कि उसका अपना शासन है। यही सच्चा लोकतंत्र है। हमें इसी सच्चे लोकतंत्र की प्राण-प्रतिष्ठा करनी है। ग्रामोद्योग और कुटीर उद्योगों के द्वारा गांवों का आर्थिक विकास करना है। हमारे गांवों को स्वावलम्बी बनाना है। हमारे राष्ट्रीय विकास की इमारत ग्राम-विकास की नींव पर खड़ी की जानी है। हमारे नीति निर्माताओं और स्वयंसेवी सगठनों को इस बात को पूरी तरह स्वीकार करना होगा कि ग्राम्य विकास में ही देश का विकास है। यहां तक कि नगर और महानगरों में आज हमें जो समस्याएं दिखाई पड़ती है, मैं समझता हू कि उनका स्थाई निदान भी गांव के विकास से जुड़ा हुआ है। चाहे वस्तुओं की आपूर्ति की समस्या हो, चाहे शहरों में बढ़ती हुई भीड़ और प्रदूषण की समस्या हो, अथवा जीवन की अन्य समस्याएं हों। यदि गाव का सम्पूर्ण रूप से समुचित विकास किया जाए, तो शहरों की ये समस्याएं भी अपने-आप सुलझ जाएंगी। इस मूलभूत बात की ओर ध्यान देना ही होगा।

विनोबा जी का एक महत्वपूर्ण संदेश मैं संस्कृति के क्षेत्र में भी मानता हूं। बापू और विनोबा जी ने उस समय भारतीय संस्कृति की शक्ति को समाज में स्थापित किया, जब हमारा देश संस्कृति के संक्रमण काल से गुजर रहा था। अपने कार्यो और विचारों के द्वारा विनोबा जी ने समाज में संत परम्परा के महत्व को रेखांकित किया। हमारी संत परम्परा की एक मुख्य विशेषता थी कि उसमें सभी जाति के संत थे। उन सभी संतों ने सेवा, त्याग, सदाचार तथा समानता का सदेश दिया। इसी संदेश की विनोबा जी ने हमें फिर से याद दिलाई। वे खुद संतों की तरह रहे और अपना संदेश फैलाते रहे। वे सबके उत्थान के लिए प्रयत्न करते रहे।

विनोवा जी ने विज्ञान के बढ़ते हुए प्रभाव के युग में आध्यात्मिकता का महत्व बताया। और इन दोनों के समन्वय में ही समाज का स्वस्थ और संतुलित विकास देखा। हमें इस वात को याद रखना होगा कि अकेला विज्ञान कभी भी मानव जीवन को न तो सुखी वना सकता हैं, और न ही शांतिपूर्ण। जव तक हम अपनी सस्कृति की जड़ों से जुड़कर अपने समाज से नहीं जुड़ेगे, तव तक पूर्ण विकास की स्थिति प्राप्त नहीं कर सकते। इसलिए मुझे यह बात विशेप रूप से जरूरी लगती है कि जव भी हम अपने आर्थिक विकास की वात करें, तो हमे यह भी ध्यान में रखना चाहिए कि उसमें हमारी संस्कृति के तत्व भी शामिल हो। आर्थिक विकास के नाम पर सांस्कृतिक विकास की उपेक्षा कदापि नहीं की जानी चाहिए।

मैं विनोवा जी के शताव्दी समारोह के अवसर पर अपने देशवासियों से अपील करना चाहूंगा कि देश का प्रत्येक नागरिक समाज के विकास में, विशेपकर गांव के विकास में यथाशक्ति अपना-अपना योगदान करे। वे इस बात को समझें कि इसके विना देश का विकास अधूरा है।

बापू की प्रासंगिकता

जब भी मुझे बापू की याद आती है, खासकर इस मौके पर, जबकि हम उनकी 125वीं जयती मनाने के लिए यहां इकट्ठे हुए हैं, मैं स्वाभाविक रूप से भावुक हो उठता हूं। बापू को पहली बार मैंने ग्यारह साल की उम्र में तब देखा था, जब वे भोपाल में एक खादी-भंडार का उद्‌घाटन करने आए थे। तभी से उनके प्रति मेरे मन मे एक विचित्र प्रकार का आकर्षण, एक विचित्र किस्म की अनुभूति समा गई है। किसी व्यक्ति के देखने मात्र का कितना जबर्दस्त असर किसी के मन पर पड़ सकता है, यह मैने बापू के दर्शन से अनुभव किया है। मैं इस बात को अच्छी तरह से समझ सकता हूं कि आखिर क्यों हमारे देश के लोग बापू के पीछे चल पड़े थे। लोग उनके पीछे चले, क्योकि उन्हें बापू में अपने जीवन-मूल्यो की झलक मिली, उन्हें उनमें वर्तमान समस्याओ का समाधान दिखा तथा भविष्य का सकेत मिला। अपने समय में अतीत, वर्तमान और भविष्य, इन तीनों को अपने विचार, कार्य और व्यवहार द्वारा पूरी तरह अभिव्यक्त कर पाना किसी असाधारण व्यक्ति की ही क्षमता हो सकती है। बापू ऐसे ही असाधारण व्यक्ति थे।

बापू ने व्यक्ति को, देश को और यहा तक कि विश्व को न तो टुकड़ों में देखा, और न ही कभी बांटकर देखा। उनके पास एक व्यापक और समग्र दृष्टि थी-एक ऐसी दृष्टि, जिसमे सम्पूर्ण मानवता समाहित हो जाती है। उनकी यह समग्र दृष्टि केवल दर्शन की सम्पूर्णता नही थी, बल्कि राजनीति की भी सम्पूर्णता थी, आर्थिक और सामाजिक सम्पूर्णता थी, और इसी के साथ थी-नैतिक और सांस्कृतिक सम्पूर्णता भी। इसीलिए मुझे यह बात बहुत ज़रूरी लगती है कि बापू को न तो उनके शब्दों को व्याख्या के द्वारा समझा जा सकता है, और न ही अपने शब्दों के द्वारा उनकी व्याख्या की जा सकती है। बापू को समझने के लिए शब्दों पर नहीं, बल्कि शब्दो के भावों पर जाना होगा। बापू की व्याख्या करने के लिए केवल तर्क-शास्त्र ही नहीं, बल्कि भावों की गहराई में भी उतरना होगा। बापू

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी की 125वीं जयती पर आयोजित श्रद्धाजलि सभा मे, नई दिल्ली, 2 अक्तूबर 1994

के इन शब्दों और भावों को बांटकर नहीं, बल्कि सम्पूर्णता में देखना होगा। हमे उस संदर्भ में भी देखना होगा, जिस संदर्भ में बापू ने अपनी बात कही थी।

यदि हम संदर्भ की ही बात लें, तो हमें यह जानना चाहिए कि बापू का चिंतन अपने देश की तथा विश्व की किन परिस्थितियों में किया गया चिंतन है। यह वह समय था, जब हमारा देश राजनैतिक स्वतंत्रता के लिए जूझ रहा था। निश्चित रूप से उस समय लोगों में राष्ट्रीयता का जबर्दस्त उबाल था। उसी के आस-पास राष्ट्रीयता का यह उबाल हमें जर्मनी और इटली में एक दूसरे रूप में दिखाई पड़ता है। लेकिन क्या हम कह सकते हैं कि बापू की राष्ट्रीयता "नस्ल की श्रेष्ठता" की राष्ट्रीयता थी? कभी नहीं। बापू की राष्ट्रीयता भावों के उबाल की राष्ट्रीयता नहीं थी। वे चाहते तो ऐसा कर सकते थे, लेकिन वे जानते थे कि यह पद्धति स्थायी नहीं थी। इसलिए उन्होंने हमेशा अपनी राष्ट्रीयता को आम लोगों के जन-जीवन के सवालों से जोड़े रखा। उनका लक्ष्य था-राजनीतिक आज़ादी, गांव का स्वावलम्बन, सफाई, स्वास्थ्य, पीने का पानी, बुनियादी शिक्षा, लघु और कुटीर उद्योग, मानव जाति की एकता, समानता और नैतिक उत्थान। उनकी राष्ट्रीयता की इमारत लोगो की इन्हीं छोटी-छोटी, किन्तु अत्यंत महत्वपूर्ण एवं अनिवार्य जरूरतों की नींव पर खड़ी थी। इसलिए देश का छोटे-से-छोटा व्यक्ति तक उनसे इतने घनिष्ठ रूप से सीधे-सीधे जुड़ गया था। मुझे तो यही लगता है कि बापू इसीलिए बड़े नहीं हैं, क्योंकि उन्होने बड़ी-बड़ी बातें कीं, और बड़े-बड़े काम किए। बल्कि वे बड़े इसलिए भी हैं, क्योंकि उन्होंने छोटी-छोटी बातों को भी बड़ा समझा, और उन्हें अपने स्पर्श से बड़ा बनाया।

यदि हम विश्व के संदर्भ में देखें, तो उस समय दुनिया ने दो बड़े-बड़े महायुद्ध देखे थे। लोगों मे हिसा और प्रतिहिसा की जबर्दस्त भावना थी। जो थोड़े से चितनशील लोग थे, वे अनास्था के दौर से गुजर रहे थे। यहां तक कि उनमें अपने अस्तित्व तक के प्रति अनास्था पैदा हो गई थी। उस समय इस तरह का चिंतन काफी तेजी से उभरा। यूरोपीय साहित्य पर भी उसका जबर्दस्त प्रभाव पड़ा। अनास्था के ऐसे उदासीनता के क्षणों में बापू ने आस्था का जयघोष किया। उन्होंने अपने देश के लोगों में, साथ ही विश्व के लोगो में अपने अस्तित्व, अपने कर्म तथा अपनी संस्कृति के प्रति विश्वास पैदा किया। उनमें आत्म-गौरव का भाव पैदा किया। मुझे तो यह लगता है कि जब-जब विश्व की सभ्यता और संस्कृति निराशा और अनास्था के दौर से गुजरेगी, तब-तब बापू का चिंतन उनमें एक नई

आस्था पैदा करेगा, ठीक उसी तरह जिस तरह का जोश श्रीमद्‌भगवद्‌गीता पैदा करती है। हालांकि हमारी आज की पीढ़ी बापू को राजनैतिक स्वतंत्रता दिलाने वाले एक महान नेता के रूप में ही जानती-समझती है। लेकिन मैं उन्हें इससे कहीं अधिक मानता हूं। मैं उन्हें मानव जाति की चेतना को क्षुद्र एवं संकीर्ण चिंतन से मुक्त कराकर उसे उदात्त बनाने वाला एक महान कर्मयोगी मानता हूं, गीता का वह अनासक्त कर्मयोगी, जो राजनीति में भी रह कर राजनीति से ऊपर रहा। जो भौतिक जगत में भी जन्म लेकर उसकी माया से परे रहा। जो शरीर होने के बावजूद हमेशा एक पवित्र आत्मा ही बना रहा। जिसका दर्शन और स्पर्श मात्र लोगों के अन्दर एक महान चेतना का संचार करने की ताकत रखता था। रोमां रोलां ने बापू के बारे में बिल्कुल सही लिखा है :

''उनके स्पर्श तक में पवित्रता थी। यह कल्पना करके कि जब वे मुझसे आकर मिले, और उनका शरीर मेरे शरीर से लगा, तब मुझे ऐसा लगा कि वह संत डोमिनीक और संत फ्रांसिस का स्पर्श था।''

बापू की दृष्टि संत की तरह समानता की दृष्टि थी। उन्होंने जीवन भर मानव जाति की समानता और एकता के लिए संघर्ष किया, और अंत में इसी के लिए अपना जीवन उत्सर्ग कर दिया। मैं तो मानता हूं कि उनकी राजनैतिक आजादी की लड़ाई मुख्य रूप से इसी समानता की लड़ाई थी। सन् 1931 के कराची अधिवेशन में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के सामने उन्होंने मौलिक अधिकार सबधी जो प्रस्ताव रखा था, वह इस बात का प्रमाण है। उसमें उन्होंने स्त्रियों के अधिकार की बात कही, मजदूरों एव बाल मजदूरों के अधिकारों की बात कही, नागरिक समानता की बात कही। अस्पृश्यता को तो वे मानव जाति का कलक मानते थे। 'हरिजन' के 11 फरवरी, 1993 के अंक में उन्होंने स्पष्ट रूप से लिखा था

''मेरी राय में हिन्दू धर्म में दिखाई पड़ने वाला अस्पृश्यता का वर्तमान रूप ईश्वर और मनुष्य के खिलाफ किया गया भयंकर अपराध है। इसने अस्पृश्यों तथा स्पृश्यों, दोनों को नीचे गिराया है। ..इसलिए इस बुराई को जितनी जल्दी निर्मूल कर दिया जाए, उतना ही हिन्दू-धर्म और समग्र मानव जाति के लिए कल्याणकारी सिद्ध होगा।''

मैं यहां यह बात विशेष रूप से कहना चाहूंगा कि बापू के लिए अस्पृश्यता निवारण की यह बात केवल दर्शन भर नहीं थी, केवल विचार ही नहीं था। बल्कि

यह उनके व्यवहार का अविभाज्य एवं स्वाभाविक अंग था। यह उनकी जीवन-पद्धति थी। स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान बापू एक ऐसे उज्ज्वल व्यक्ति थे, जो हरिजनों की बस्तियों में जाकर रहे, उनके लिए काम किया और श्रम को एक गरिमा प्रदान की।

इसी प्रकार उन्होने हमारे देश की नारी-शक्ति को स्वतंत्रता आंदोलन की शक्ति बनाया। उन्होने हमारे देश की नारी-शक्ति को सामाजिक विकास और सामाजिक सुधार का अग बनाया। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा :

"स्त्रियों के अधिकारों के सवाल पर मैं किसी तरह का समझौता स्वीकार नहीं कर सकता। मेरी राय में उन पर ऐसा कोई कानूनी प्रतिवंध नहीं लगाया जाना चाहिए, जो पुरुषो पर न लगाया गया हो। पुत्रों और पुत्रियो में किसी तरह का भेद नहीं होना चाहिए। उनके साथ पूरी समानता का व्यवहार होना चाहिए।"

('यंग इंडिया'-17 अगस्त, 1929)

वर्तमान में हम बापू के इन प्रयासों को मानव अधिकार से सीधे-सीधे जोड़ कर देख सकते हैं। आज मानव अधिकार की बात किसी एक देश विशेष तक नहीं, बल्कि पूरे विश्व के स्तर पर देखी जा सकती है।

यहीं पर बात आती है-विश्व शाति की। उनकी अहिसा का सिद्धांत अपने सकारात्मक रूप मे विश्व शांति का ही सिद्धात था। उनका स्पष्ट रूप से मानना था कि हिसा से प्राप्त राजनीतिक स्वतंत्रता या कि कोई भी अन्य उपलब्धि न तो स्थायी हो सकती है, और न ही सही। हिसा हिसा को जन्म देकर अंततः उसको बढ़ाती ही है। विश्व का आधुनिक इतिहास इस बात का प्रमाण है कि हिसा पर आधारित राजनीतिक व्यवस्थाएं; चाहे वह दबाव हो या आतंक, अन्ततः उन्हें पराजित होना ही पड़ता है। और इस पराजय की परिणति लोकतंत्र के रूप में दिखाई पड़ रही है। बापू के लिए लोकतंत्र एक राजनीतिक व्यवस्था मात्र न होकर जीवन जीने का एक तरीका भी था। वे भारत के लिए एक ऐसी लोकतांत्रिक व्यवस्था चाहते थे ·

"जिसमें गरीब से गरीब लोग भी यह महसूस करेंगे कि वह उनका देश है-जिसके निर्माण में उनकी आवाज़ का महत्व है। मैं ऐसे भारत के लिए कोशिश करूंगा कि जिसमें ऊंचे और नीचे वर्गो का भेद नहीं होगा; और जिसमे विविध सम्प्रदायों में मेल-जोल होगा। ऐसे भारत में अस्पृश्यता या शराब और दूसरी नशीली

चीजो के अभिशाप के लिए कोई स्थान नहीं हो सकता। उसमे स्त्रियो को वही अधिकार होंगे, जो पुरुषों को।"

('यग इंडिया'-10 सितम्बर, 1931)

बापू ने अपने निधन के एक दिन पूर्व 29 जनवरी 1948 को पचायत की बात फिर से कही थी। उन्होंने एक ऐसे राजनैतिक नेतृत्व की बात दुहराई थी, जिसका विकास जड़ से शिखर की ओर होगा। हम इसे आज नए रूप में फलता-फूलता देखने का प्रयास कर रहे हैं।

बापू स्वतंत्रता की जगह 'स्वराज्य' शब्द अधिक पसंद करते थे। क्योकि स्वराज्य शब्द में आत्म-संयम और आत्म-अनुशासन का महत्व था। निश्चित रूप से यदि लोकतंत्र में आत्म-अनुशासन न हो, तो उसके उच्छृंखल तंत्र में और कभी-कभी तानाशाही तंत्र तक में बदलने का खतरा पैदा हो जाता है।

आज दुनिया के सामने मादक पदार्थो के सेवन और उसकी तस्करी ने एक चुनौती खड़ी कर दी है। यह चुनौती विश्व की अर्थव्यवस्था को ही नहीं बल्कि उसकी राजनीतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक व्यवस्था को भी है। बापू ने समय में इसकी बात कही थी। नशाखोरी को वे कितना बुरा समझते थे, यह के लिए हमें 'यंग इंडिया' के 25 जून, 1931 के उनके वक्तव्य को याद चाहिए। उसमें उन्होंने घोषणा की थी :

"यदि मुझे एक घंटे के लिए भारत का डिक्टेटर बना दिया जाए पहला काम यह होगा कि शराब की दुकानो को बिना मुआवजा दिए दिया जाए।"

चूंकि उस समय शराब, तम्बाकू तथा बीड़ी-सिगरेट जैसी के रूप में अधिक प्रचलित थीं, इसलिए उन्होने इनके विरुद्ध था। उन्होंने साफ-साफ कहा था :

"शराब की आदत मनुष्य की आत्मा का नाश कर देती धीरे-धीरे पशु बना डालती है।"

('यंग इंडि 1927)

आज विश्व स्तर पर साक्षरता के लिए प्रयास किए जा रहे है। बापू ने अपने रचनात्मक कार्यक्रमों में बुनियादी शिक्षा को शामिल किया था, ताकि लोगो को अज्ञानता के अंधकार से बाहर निकाला जा सके। हमारे देश के अनेक महान राजनेता उस समय इस अभियान में लगे थे। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था :

"जन साधारण में फैली हुई व्यापक निरक्षरता भारत का कलंक है। वह मिटनी ही चाहिए। बेशक साक्षरता की मुहिम का आरम्भ और अंत वर्णमाला के ज्ञान के साथ ही नहीं हो जाना चाहिए। वह उपयोगी ज्ञान के प्रचार के साथ-साथ चलनी चाहिए।"

('हरिजन'-22 जून, 1940)

आज उपभोक्तावाद ने विश्व की संस्कृति के सामने नई समस्याएं पैदा की हैं। आर्थिक प्रतिस्पर्द्धा बढ़ती जा रही है, जिसके फलस्वरूप लोगों में असंतोष बढ़ रहा है। समाज मे अव्यवस्था फैल रही है। भ्रष्टाचार भी इसी उपभोक्तावाद की देन है। इसी के कारण शोषण के नए-नऐ रूप उभर कर आ रहे हैं। बापू ने अपने समय में इस उपभोक्तावाद के प्रति चेतावनी दी थी। उन्होने सग्रह के स्थान पर त्याग को महत्व दिया था। वे भारत को भोग-भूमि नहीं, बल्कि कर्म-भूमि, त्याग-भूमि मानते थे। वे यह मानते थे कि यह उपभोक्तावाद सस्कृति को कुत्सित कर देगा। उन्होंने कहा था :

"सच्ची सफलता का लक्षण परिग्रह बढ़ाना नहीं है, बल्कि सोच-समझकर और अपनी इच्छा से उसे कम करना है। ज्यों-ज्यों हम परिग्रह घटाते जाते हैं, त्यो-त्यों सच्चा सुख और सच्चा संतोष बढ़ता जाता है। सेवा-शक्ति बढ़ती जाती है। अभ्यास से, आदत डालने से आदमी अपनी जरूरतें घटा सकता है, और ज्यों-ज्यों उन्हें घटाया जाता है, त्यों-त्यां वह सुखी, शांत और सब तरह से तन्दुरुस्त होता जाता है।"

मुझे इस समय प जवाहर लाल नेहरू द्वारा वताई गई एक छोटी-सी घटना याद आ रही है। उस घटना का मर्म यह है कि एक बार बापू पं नेहरू के साथ वात करने में इतने खो गए थे कि उन्हें अपने हाथ-मुंह धोने के लिए एक लोटे की जगह दो लोटे पानी लेना पड़ा था। बापू ने इसे अपने प्रमाद का लक्षण समझा था। इसे उन्होंने 'प्रकृति की चोरी' कहा था। ऐसी आस्था थी उनमें प्राकृतिक वस्तुओं के संरक्षण के प्रति। वे सादे कागज के एक-एक इंच का इस्तेमाल यह सोचकर करते थे कि कागज खराव करने का मतलब है-जंगलों को नष्ट करना। इसीलिए वे उस समय 'गोबर गैस' की वात किया करते थे। गोबर गैस से गांव की ऊर्जा की माग तो पूरी होती ही है। इसके साथ ही यह वहा की सफाई तथा स्वास्थ्य से भी जुड़ जाता है। इस गोवर का उपयोग वाद में खाद के रूप में किया जा सकता है। इस प्रकार हम वापू की इन बातों को आज के समय में ऊर्जा के

अनोखा व्यक्तित्व रफी अहमद किदवई

रफी साहब के शताब्दी समारोह मे उपस्थित होकर मुझे प्रसन्नता हो रही है। चालीस साल पहले आज ही की तारीख को वे हम सब के बीच से सदा-सदा के लिए चले गए थे। सबसे पहले मैं उनकी पुण्य-स्मृति को अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करता हू।

आज इस मौके पर मुझे रफी साहब से जुड़ी अनेक बातें अपने-आप याद आ रही हैं। मैं उनसे पहली बार सन् 1937 में मिला था। इसके बाद से मैं उनके करीब आता चला गया। जब तक वे रहे, तब तक मुझे हमेशा अपने राजनैतिक कामों के लिए उनसे निर्देश मिलते रहे, और उनका स्नेह भी मिलता रहा। मैंने उनमें अपने लिए बड़े भाई की-सी सद्भावना देखी, तथा एक पथ-प्रदर्शक की-सी शुभ इच्छा का अनुभव किया।

रफी साहब एक अत्यत ही सहज, सरल, किन्तु स्वाभिमानी किस्म के जिन्दादिल इसान थे। सरलता तो उनमें इतनी अधिक थी कि कोई कह ही नहीं सकता था कि ये देश के इतने बड़े और लोकप्रिय नेता होंगे। मुझे अच्छी तरह याद है कि पं नेहरू के बार-बार अनुरोध करने पर उन्होने अपने यहां इस शर्त पर सुरक्षा कर्मचारी रखना स्वीकार किया था कि वे कर्मचारी किसी को भी आने से नहीं रोकेंगे। उनके निवास 6, मौलाना आजाद रोड पर लोहे का गेट था, लेकिन अवरोध नही था। उनका निवास स्थान एक आश्रम की तरह था, जहां लोग बिना रोक-टोक के, बिना जान-पहचान के, यहां तक कि बिना काम-काज के भी किसी भी समय चले आते थे। और ताज्जुब की बात यह है कि रफी साहब उन सबसे एक जैसा व्यवहार करते थे। पता नहीं ऐसा वे कैसे कर पाते थे। लेकिन इतना तो जरूर है कि जब तक किसी आदमी में एक फकीर की-सी जिन्दगी का एहसास न हो, तब तक वह इस तरह का एक-सा व्यवहार नहीं कर सकता। आप लोगों में से कई लोगो को मालूम ही होगा कि जब उनका निधन हुआ, तब उनके यहां दिल्ली में आने वालों की भी और उनके गांव में

श्री रफी अहमद किदवई के शताब्दी समारोह के अवसर पर, नई दिल्ली, 24 अक्टूबर 1994

उन्हे श्रद्धांजलि देने वालो की कितनी बड़ी भीड़ थी। इस देखकर आसानी से अंदाजा किया जा सकता था कि उनकी मौत किसी फकीर की-सी मौत थी। उनका देहावसान एक पुण्य आत्मा का हमारे बीच से जाना था। उनके निधन पर पं. नेहरू ने जो शब्द कहे थे, उसमें पूरे राष्ट्र की भावना व्यक्त हुई थी। उन्होंने कहा था-

''मैं रफी अहमद किदवई साहब के बारे में इतना ही कह सकता हूं कि उनका इंतकाल मेरे लिए सार्वजनिक और व्यक्तिगत रूप से एक ऐसी क्षति है, जिसे मैं शायद ही बर्दाश्त कर सकूं। पिछले 35 वर्षो में आजादी की लड़ाई के उतार-चढ़ाव में तथा सरकार के सदस्य के रूप मे हम लोगो ने अतरंग दोस्ती के साथ मिलकर काम किया। किसी भी पुराने दोस्त का बिछुड़ना हमेशा दु:ख और तन्हाई का एहसास देने वाला होता है, लेकिन श्री रफी अहमद किदवई का इंतकाल मेरे लिए इससे भी अधिक गहरा दु:ख है।''

आज से करीब सात साल पहले उपराष्ट्रपति के रूप में जब मैं पहली बार 6, मौलाना आजाद रोड के मकान में रहने के लिए गया, तो अनायास ही मेरी ऑखे इस महान आत्मा की स्मृति में डबडबा आई थीं। उस मकान में रहते हुए मुझे हमेशा एक विशेप किस्म के दायित्व का एहसास होता रहा। यह दायित्व इस बात का था कि मैं आज उस मकान में रह रहा हूं, जिसमें कभी रफी साहब जैसी महान आत्मा रही थी। रफी साहब की स्मृति में मध्य प्रदेश के अपने संसदीय क्षेत्र में मैंने एक कृपि महाविद्यालय का नाम रफी साहब के नाम पर रखा था। यह मै उनके देहावसान के बाद ही कर सका, क्योंकि वे अपने जीवन में किसी भी संस्था पर अपना नाम रखने के खिलाफ थे।

रफी साहब की जिन्दगी एकनिष्ठता, समर्पण और सेवा की जिन्दगी रही है। वे जहा भी रहे, जिस रूप मे भी रहे, उन्होंने एकनिष्ठता के साथ काम किया, पूरे समर्पण के साथ काम किया, और सेवा-भाव के साथ काम किया। इसीलिए हर जगह से सफल रहे। उनके सार्वजनिक जीवन की शुरुआत खिलाफत आन्दोलन में भाग लेने के साथ हुई थी। उस समय उन्होने बापू के आह्वान पर अपनी पढाई छोड़ कर उसमें भाग लिया, और जेल गए। वे मोतीलाल जी के निजी सचिव रहे, और राष्ट्रीय आन्दोलन में भाग लेते रहे। वे किसान आन्दोलन से भी जुड़े रहे। सन् 1937 मे जब उत्तर प्रदेश में काग्रेस की सरकार बनी, तब किदवई साहब राजस्व एवं जेल मंत्री बनाए गए। उस समय उन्होने यू पी टेनेन्सी ऐक्ट

पारित कराया था। वह कानून जमींदारी व्यवस्था के उन्मूलन की दिशा मे एक क्रांतिकारी कानून सिद्ध हुआ। वाद में जव वे देश के खाद्य मत्री बनाए गए, तब तो वे देखते-ही-देखते सारे देश मे और भी अधिक लोकप्रिय हो गए। सन् 1952 में वे कृपि और खाद्य मंत्री बनाए गए थे। उस समय देश में अकाल की सी स्थिति थी। अनाज का गम्भीर सकट था। किदवई जी ने अपनी सूझ-बूझ और प्रशासनिक क्षमता के द्वारा देश को इस गम्भीर संकट से मुक्ति दिलाई थी। मैं समझता हूं कि ऐसा वे इसलिए कर सके थे, क्योंकि उन्होंने किसानो के बीच काम किया था, उन्हें अपने देश के लोगों की अच्छी समझ थी, और उनके पास एक वहुत सी व्यावहारिक सूझ-बूझ थी। खाद्य मंत्री के रूप मे किए गए उनके कामों को आज भी सारा देश पूरी श्रद्धा के साथ याद करता है।

मै जब संचार मत्री बना, तब मुझे किदवई जी की कुछ फाइलें देखने का अवसर मिला। मैंने देखा कि वे फाइलों पर बहुत कम लिखते थे। लेकिन जो कुछ लिखते थे, वह इतना सटीक और सम्पूर्ण हुआ करता था कि अधिक कुछ लिखने की जरूरत ही नहीं रहती थी। हालाकि मैं उनके करीब 20 वर्प बाद उस मंत्रालय मे गया था, फिर भी मैंने पाया कि लोगों की आंखे उनके बारे में बात करते-करते नम हो आती थीं। सचार मंत्री के रूप मे भी उन्होंने जनहित के अनेक काम किए। उनका लक्ष्य काम था, कानून नहीं।

अपने देश की महान सूफी परम्परा के आधार पर मैं रफी साहब को एक राजनेता की अपेक्षा एक सत राजनेता कहना अधिक पसंद करूंगा। वे नेता थे, लेकिन संतों की तरह। राजनेता की तरह उनकी दृष्टि यथार्थवादी थी, और संतो की तरह उनका मन भाववादी था। उनकी निगाह सबको समान रूप से देखती थी। इसीलिए वे किसी की भी पात्रता की परवाह किए बिना ही उसे अपना कुछ भी दे देते थे। मै कह सकता हूँ कि वे एक विलक्षण दानी किस्म के व्यक्ति थे। उनमें भेद-दृष्टि थी ही नहीं। उनमें खण्ड-दृप्टि थी ही नहीं। उनकी दृष्टि अखण्ड थी, और सम्पूर्ण थी। इसीलिए उन्होंने न तो कभी धर्म के आधार पर, और न ही कभी जाति, भापा या क्षेत्र के आधार पर किसी से कोई भेदभाव किया। और न ही कभी इस दिशा में कुछ सोचा। इस तरह की संकीर्णता की काली छाया उनके पास फटकती तक नहीं थी। उन्होंने अपने कार्यो और विचारों द्वारा अपने देश की सदियो से चली आ रही सर्वधर्मसमभाव के चिन्तन और समन्वयवादी सस्कृति को अभिव्यक्त किया। वे सच्चे मुस्लिम थे, इसलिए सच्चे भारतीय थे।

वे एक सच्चे और शानदार इंसान थे। बापू ने रफी साहब के बारे में बहुत ही सुन्दर कहा था :

"रफी सच्चा आदमी है। जो उसके दिल में आता है, कह देता है। वह हॉ-में-हॉ नहीं मिलाता। लेकिन जो फैसला हो जाता है, उस पर ईमानदारी से अमल करता है।"

रफी साहब के लिए हर वह व्यक्ति उनका अपना था, जो इस देश का था। पं जवाहर लाल नेहरू ने रफी साहब के व्यक्तित्व के इस सार का उल्लेख करते हुए नवम्बर, 1954 में संसद में बिलकुल सही कहा था :

"निश्चित रूप से वे एक मुस्लिम थे। और मैं उनके सिवाय शायद ही किसी दूसरे और को जानता होऊँ, जो अपने विचार और कामों से पूरी तरह हिन्दुस्तानी हो, और किसी एक समुदाय तक महदूद न हो।"

राज्य सभा के तत्कालीन सभापति डा0 राधाकृष्णन ने संसद में उन्हें श्रद्धांजलि देते हुए कहा था :

"उन्होंने हम लोगों के लिए भारतीयता का एक ऐसा उदाहरण छोड़ा है; जो जाति, समुदाय और प्रान्त जैसे भेदों से ऊपर है। यह एक उदाहरण है, जिसका हम सबको अपने राष्ट्रीय कार्यो के लिए अनुसरण करना चाहिए। वे राष्ट्र के कल्याण और एकनिष्ठ समर्पण के प्रतीक थे।"

रफी साहब का यह मानना था कि देश के लोग एकजुट होकर किसी भी काम में लग जाएं, तो वह पूरा होकर रहेगा। हमने एकजुट होकर आजादी प्राप्त की। अब हमें एकजुट होकर अपने देश को आगे ले जाना है। यही उनका जीवन संदेश था। और मैं समझता हूँ कि इसी रास्ते पर चलकर राष्ट्र रफी साहब को अपनी सच्ची श्रद्धांजलि दे सकेगा।

इस वर्ष, जबकि रफी साहब की शताब्दी मनाई जा रही है, मैं अपने देशवासियों से अपील करना चाहूँगा कि वे एकजुट होकर समर्पण भाव के साथ अपने राष्ट्र के विकास के कामों में लग जाएं। आज यह बात हमारे लिए पहले से भी अधिक जरुरी हो गई है, क्योंकि आज हमारा विकास केवल अपने ही विकास से जुड़ा हुआ नहीं है, बल्कि वह विश्व के विकास से जुड़ गया है। एक ऐसे समय में; जबकि पूरी दुनिया में प्रतियोगिता का माहौल बन रहा है, यदि हमने एकजुट होकर एकनिष्ठता के साथ काम नहीं किया, तो हम इस दौड़

में बहुत पिछड़ जाएंगे। रफी साहब अपने देश को आगे देखना चाहते थे। यदि हम उनकी यह इच्छा पूरी कर सकें, तो निश्चित रूप से उनकी आत्मा की शांति के लिए इससे बड़ी बात और कोई नहीं हो सकती। मेरा विश्वास है कि हमारे देश के लोग इसी भावना के अनुकूल काम करके उन्हें अपनी सच्ची श्रद्धांजलि देंगे।

सर्वधर्म समभाव

यह समागम एक ऐसे महान नेता को समर्पित है, जिनके व्यक्तित्व में हमारे राष्ट्र की मिली-जुली संस्कृति साकार हो उठी थी। इंदिरा जी को आज अपनी ऐसी श्रद्धांजलि द्वारा हम प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्षता और न्याय पर आधारित भारत के उनके आदर्श के प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त कर रहे हैं।

हमारा देश एक ऐसी पच्चीकारी के समान है, जिसमें विभिन्न संस्कृतियां पूरे समन्वय के साथ समाहित हैं। भाषा, धर्म और जाति समूहों की भरपूर विविधताओं को समेटे हुए हमारा यह भारत इतिहास के शैशव काल से ही अपनी एकता की भावना को संजोए रखा है। वास्तव में हमारा इतिहास लोगों के बीच समानता के सूत्रों की तलाश करते हुए एकता की शक्तियों तथा अलगाववाद और संकीर्णता के बीच संघर्ष का इतिहास रहा है। भारत केवल सहिष्णुता के बल पर ही भारत नहीं है, बल्कि यह भारत इसलिए है, क्योंकि उसने विविधताओं को स्वीकार करते हुए उन्हें फलने-फूलने का मौका भी दिया। और ऐसा करते हुए उसने एक अनूठी चेतना पैदा की।

विभिन्न विचारधाराओं के समन्वय से उत्पन्न हुई हमारी संस्कृति को पंडित जी ने इन शब्दों में व्यक्त किया है "मुझे हिन्दुस्तान पर नाज है। केवल इसलिए नहीं कि इसकी एक प्राचीन और शानदार विरासत है, बल्कि इसलिए भी क्योंकि इसमें इस विरासत को और समृद्धिशाली बनाने की अद्भुत क्षमता है, क्योंकि इसने अपने दिमाग और अपनी रूह के दरवाजे और खिड़कियों को दूर-दराज के मुल्कों से आने वाली ताजी हवा को आत्मसात करने के लिए हमेशा खुला रखा है। . . भारत इतना मजबूत है कि उसे बाहर से आने वाली धाराओं में डूब जाने का कोई खतरा नहीं है, और उसने हमेशा ही ऐसी धाराओं से अलग न रहने की बुद्धिमत्ता दिखाई है।"

हमारे समाज में व्याप्त विविधताओं ने विभिन्न धर्मों के सहअस्तित्व मे अपनी नैसर्गिक अभिव्यक्ति पाई है। स्वयं भारत ने अनेक मतो को जन्म दिया है। यह कहना

सर्वधर्म समागम संगोष्ठी का उद्‌घाटन करते हुए, नई दिल्ली, 20 नवम्बर, 1994

गलत न होगा कि आज विश्व मे जितने भी धर्म, हैं, वे किसी-न-किसी रूप में कमोवेश हमारे देश में अपनी जड़ें जमा चुके हैं। यदि हम इस बात पर विचार करें कि किस प्रकार दूसरे राष्ट्र हमारी एकता की दिशा में आकर्षित हुए हैं, तो हमारे यहा विभिन्न धर्मो का सहअस्तित्व और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाता है। भारत के प्राचीन धर्मो की सहिष्णुता ने अन्य सस्कृतियों को यहाँ आने के लिए प्रोत्साहित किया।

'धर्म' का अर्थ है धारण करने योग्य — ''धारयति इति धर्म.''। इसका सार है — सत्य ही धर्म है, और सत्य अनन्त तथा बहुमुखी है। सर्वधर्मसमभाव का आदर्श हमारे इतिहास में गहरे रूप से रमा हुआ है। मानव की बौद्धिकता को प्रमाणित करने वाले प्राचीनतम् ग्रन्थ ऋग्वेद ने एक ही ईश्वर की बात की है—

यच्चिद्धि शश्वताम् असीन्द्र साधारणस्त्वम्।

तं त्वा वयं हवामहे॥

(हे ईश्वर! क्योंकि तुम सभी जनों के स्वामी हो, इसलिए हम तुम्हारा आह्वान करते हैं।) इसी वेद में कहा गया है :

एकं सद् विप्रा· बहुधा वदन्ति

— सत्य एक ही है, लेकिन विद्वान उसे अपने-अपने ढंग से बताते है।

अथर्ववेद में भी विभिन्न लोगों और उनके धर्मो के बीच समन्वय स्थापित करने के प्रमाण हैं। जैसा कि उसमें कहा गया है ·

य: सदेश्यो वरुणो यो विदेश्य :

(वरुण देवता हमारी अपनी भूमि के हैं। साथ ही वे विदेशियों के भी हैं।)

श्रीमद्भगवद्गीता में भी ऐसी ही विविधता दिखाई देती है ·

ये यथा मां प्रपद्यन्ते तांस्तथैव भजाम्यहम्।
मम वर्त्मानुवर्तन्ते मनुष्या. पार्थ सर्वश: ॥

(जिस रूप में भी व्यक्ति मुझे चाहे, मैं उसी रूप में उसकी इच्छाएं पूरी करता हूं। हे पार्थ! व्यक्तियो के रास्ते चाहे कोई भी हों, वे मेरे ही मार्ग पर चलते हैं।)

खुलापन हमारी धर्मनिरपेक्ष सस्कृति की विशिष्टता है। इस श्लोक से यह स्पष्ट है :

आकाशात पतितं तोय यथा गच्छति सागरं।
सर्वदेव नमस्कार केशवं प्रतिगच्छति॥

(जिस प्रकार आकाश से बरसा हुआ जल अंतत· समुद्र में ही एकत्रित होता है, उसी प्रकार हर तरह की ईश्वर आराधना केशव तक पहुंच जाती है।)

बौद्ध और जैन धर्म भी; जिनका हमारे देश के बड़े भाग पर प्रभाव है, मानवता, सहिष्णुता और अहिंसा के इसी सार्वभौमिक सदेश पर जोर देते हैं। उदाहरण के लिए सामयिक पंथ सभी जीवों के प्रति प्रेम और विरोध को सहन करने का संदेश देता है। फलस्वरूप इन दोनों ही धर्मो ने भारत मे व्याप्त धर्मनिरपेक्षता को और मजबूती प्रदान करने में अहम् भूमिका निभाई है। इस संदर्भ में यह जानना महत्वपूर्ण है कि भारत में यहूदी, ईसाई, इस्लाम और पारसी सभी धर्मो का उदय शान्तिपूर्ण ढंग से हुआ। शरली आइजनवर्ग ने अपनी पुस्तक 'इण्डियाज बेन इस्राईल' में इस बात का उल्लेख किया है कि ये सारे धर्म भारत मे इसलिए आ सके, क्योकि यह देश इन सबके प्रति सहृदयपूर्ण रहा। इसी प्रकार इस पुस्तक की यह बात भी उल्लेखनीय है कि "विश्व के अन्य बहुत-से देशों से अलग भारत में यहूदी धर्म को कई सदियों तक शान्ति और सद्भाव के साथ रहने की अनुमति दी गई। . .   " इसके कारण ही यह समुदाय दो हजार वर्षो से भी अधिक समय से अपने धर्म के सार को बनाए रख सका है।

ईसाई धर्म के आगमन का हमारे यहा स्वागत किया गया, और इसके प्रति सद्भाव रखा गया। यह कहा जाता है कि सेन्ट थामस समुद्री मार्ग से भारत आए थे, और उन्होंने सिन्धु घाटी के गुदनाफर के राजा को ईसाई धर्म में दीक्षित किया था। ऐसा विश्वास किया जाता है कि सेन्ट थामस 52 ईस्वी मे कोडंगलूर पहुंचे थे, और केरल मे सात चर्चो की स्थापना की थी। बाद में अरब व्यापारियों के द्वारा दक्षिण भारत में इस्लाम धर्म आया।

विभिन्न धर्मो का उदय तथा उनकी आपस मे सहृदयता के साथ सामंजस्य की स्थिति ने सदियो से भारत की धर्मनिरपेक्ष संस्कृति को विकसित किया है। इसी प्रारम्भिक सहनशीलता ने सभी धर्मो मे अविभाज्यता और समानता का गुण पैदा किया। श्रीमद्भगवद्गीता में बाहर से विभिन्न दिखाई देने वाले तत्वों की एकरूपता पर बल देते हुए कहा गया है :

येऽपन्यदेवता भक्ता यजन्ते श्रद्धयान्विता:।
तेऽपि मामेव कौन्तेय यजन्त्यविधिपूर्वकम्॥

अर्थात् "हे कुन्ती पुत्र! जो अन्य देवों की आराधना करते हैं, और उनकी श्रद्धापूर्वक पूजा करते हैं, वे वास्तव में मेरी ही पूजा करते हैं। हालांकि वे यह सब त्रुटिपूर्ण ढंग से करते हैं।"

पवित्र कुरान भी इसी बात को दोहराता है। कुरान मे कहा गया है, ''इंसान ने खुद को टुकड़ों-टुकड़ों में बांट लिया है। लेकिन वे सब मेरे पास ही आएंगे। जो अपने धर्म के अनुसार पूरी तरह अच्छे काम करता है, उसे यश प्राप्त होता है। हम सब पर निगरानी रखते है (अल-अंबिया)''। यही संदेश अन्य धर्मो में भी है।

यही बात सुधार आन्दोलन के समय सभी धर्मो ने कही। उस समय कर्मकाण्ड को कम किया गया, तथा समतावादी विचारों को आगे बढ़ाया गया। विभिन्न धर्मो मे आपसी मेल-जोल तथा एक-दूसरे की परम्परा और सिद्धांतों को अपनाने से भक्ति और सूफीवाद का जन्म हुआ। संस्कृति के समन्वय का एक महत्वपूर्ण उदाहरण है, सिख धर्म। गुरु गोविन्द सिह जी की इस रचना में सर्वधर्मसमभाव का बड़ा सुदृढ़ संदेश मिलता है—

देहुरा मसीत सोई, पूजा ओ नमाज ओई,
मानस सभै ऐक पै अनेक को प्रभाव है।
अलह अभेख सोई, पुरान और कुरान ओई,
ए ऐक ही सरूप सभै, एक ही बनाव है।

अर्थात् ''मदिर या मस्जिद, पूजा या नमाज, पुराण या कुरान में कोई फर्क नहीं है। समस्त मानव जाति एक है।''

इस सर्वधर्मसमभाव की चेतना का हमारे देश के साहित्य, भाषा, कला, संगीत और यहा तक कि वास्तुकला पर भी बड़ा समृद्धकारी प्रभाव पड़ा। इसके प्रभाव को कुरल में भी देखा जा सकता है, जिसकी रचना तीसरी शताब्दी के आस-पास महान कवि तिरुवल्लुवर ने की थी। उसमें कहा गया है, ''हृदय से पवित्र बनो। सभी धार्मिकता इसी एक उपदेश में समाहित है। शेष सभी मात्र दिखावा है।''

इतिहास में भी उन शासकों को श्रद्धा के साथ देखा जाता है, जो अपनी जनता के प्रति निष्पक्ष एव न्यायपूर्ण रहे हैं। सम्राट अशोक के शाहबाजगढ़ी वाले शिलालेख ने उन्हें अमर बना दिया। उसमे लिखा है—

''यो हि कचि अतप्रषडं पुजेति परप्रषडं,
गरहति सर्वे अतप्रषडभतिय व किसि अतप्रषंडं
दिपयमि ति सो न पुन तथ करंतं,
सो च पुन तथ करतं बढतरं उपहंति अतप्रषडं।''

अर्थात् ''जो अपने धर्म की प्रशंसा करता है, और दूसरे के धर्म की निन्दा

करता है, जो अपने धर्म में श्रद्धा होने के कारण अपने धर्म को दूसरे धर्म से बड़ा बताता है, वह निश्चित ही अपने ही धर्म का नुकसान करता है।''

अकबर की जो विस्तार से प्रशंसा की गई है, वह उसकी विजय के कारण नहीं, बल्कि उसकी सर्वधर्मसमभाव की नीति के कारण की गई है। दारा शिकोह कभी सत्ता नशीन नहीं हुआ। इसके बावजूद उन्होंने हमारे समाज पर अमिट छाप छोड़ी। सर्वधर्मसमभाव की यह परम्परा समय-समय पर छत्रपति शिवाजी महाराज, महाराजा रणजीत सिंह तथा अन्य शासकों के माध्यम से व्यक्त होती रही। वर्तमान शताब्दी में सर्वधर्मसमभाव की यह आत्मा बापू के व्यक्तित्व में व्यक्त हुई। उनकी यह दृढ़ धारणा थी कि सभी धार्मिक विचार अन्त. एक ही सत्य तक पहुंचते हैं। उन्होंने कहा था, 'मैं 'सर्मन ऑन दि माउंट' और भगवद्गीता में कोई भी अन्तर नहीं समझता। यदि आज मुझसे गीता खो जाए, और मैं इसकी सभी बातों को भूल जाऊं, लेकिन यदि मेरे पास सर्मन की प्रति हो, तब भी मैं उससे वही आनन्द प्राप्त करुँगा, जो मै गीता से प्राप्त करता।''

इंदिरा जी ने अपने जीवन मे सर्वधर्मसमभाव की इसी परम्परा को पाला-पोसा और उसे आगे बढ़ाया। उन्होंने अपनी पीढ़ी को यह समझाया कि हमारे देश के विकास में सर्वधर्मसमभाव का कितना अधिक महत्व है। वे जानती थीं कि यदि राष्ट्रीयता को हमारी समन्वयात्मक संस्कृति के अतिरिक्त किसी भी अन्य संकीर्ण तरीके से परिभाषित किया गया, तो वह बहुत खतरनाक होगा। इन्दिरा जी ने यह पहचाना था कि प्रत्येक समाज में धर्म का एक स्थान होता है। इसके साथ ही वे इससे भी सहमत थीं कि वह स्थान राजनीति में नहीं होता। सर्वधर्मसमभाव न तो नीति है, और न ही यह कोई राजनीतिक चतुरता है। यह एक अत्यन्त गहरा विश्वास है, एक गूढ़ जीवन् दृष्टि है, एक प्रकार से यह जीवन प्रणाली ही है। यह बहुसंख्यक के द्वारा अल्पसंख्यक को दी गई कोई छूट नहीं है, बल्कि यह एक साझी संस्कृति की स्वीकृति है।

बापू और पंडित जी की तरह ही इन्दिरा जी राष्ट्रीय एकता के लिए अथक लड़ती रहीं। उन्होंने बिना कोई समझौता किए साम्प्रदायिकता का विरोध किया।

नागरी प्रचारिणी सभा का योगदान

मुझे 'साहित्य वाचस्पति' का सम्मान प्रदान करने के लिए मैं नागरी प्रचारिणी सभा के प्रति अपना आभार व्यक्त करता हूँ।

गत वर्ष जुलाई में इस सभा ने अपने सौ वर्ष पूरे किए हैं। इस दौरान समाज के विभिन्न क्षेत्रों के लोगो ने इस सभा से जुडकर अपना-अपना योगदान किया। इसके लोकमान्य तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, बापू, लाला लाजपत राय तथा मदन मोहन मालवीय जैसे स्वतत्रता सेनानी जुड़े रहे। अपने समय का हिन्दी का शायद ही कोई ऐसा प्रख्यात साहित्यकार होगा, जो नागरी प्रचारिणी सभा से जुड़ा न हो। जॉर्ज ग्रियर्सन तथा सुनीति कुमार चैटर्जी जैसे भाषाविद्, देवकीनन्दन खत्री, बाबू श्यामसुन्दर दास, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल, जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त तथा निराला जैसे साहित्यकार; डॉ सी वी रमण जैसे वैज्ञानिक, डॉ राजेन्द्र प्रसाद, पं० जवाहरलाल नेहरू, राजगोपालाचारी, लालबहादुर शास्त्री जैसे राजनेता तथा आचार्य नरेन्द्र देव, डॉ० सम्पूर्णानन्द एवं डॉ० वारान्निकोव जैसे अनेक भारतीय एवं पश्चिमी विद्वान इससे जुड़े रहे हैं। इसके राष्ट्रीय महत्व को पहचानते हुए भाषाओं की सीमाओं से निकलकर अनेक अहिन्दीभाषी भी इससे जुड़े। इनमें गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, सुभाषचन्द्र बोस, सुब्रह्मण्य भारती, कन्हैयालाल माणिकलाल मुंशी, हरेकृष्ण महताब, बाबूराव विष्णु पराड़कर, विनोबा भावे तथा शकर कुरुप जैसे अनेक सम्माननीय नाम शामिल हैं। इससे यह पता चलता है कि इस सभा की कितनी सशक्त परम्परा रही है। मेरा विश्वास है कि यह सभा अपने कार्यों के द्वारा अपनी इस परम्परा को निरन्तर आगे बढ़ाती रहेगी।

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना के 9 वर्ष बाद नागरी प्रचारिणी सभा की स्थापना हुई थी। वस्तुत: मैं इसकी स्थापना को हमारे देश के राष्ट्रीय आन्दोलन में सहायता करने वाली एक संस्था के रूप मे मानता हूं। राष्ट्रभाषा और देवनागरी लिपि की बात कहकर सभा ने राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाने का महत्वपूर्ण काम किया। सन् 1905 में बनारस में नागरी प्रचारिणी सभा का सम्मेलन हुआ था। इसमें लोकमान्य तिलक ने सभा के इस उद्देश्य की पुष्टि करते हुए कहा था :

नागरी प्रचारिणी सभा के शती समारोह का शुभारम्भ करते हुए, नई दिल्ली, 25 नवम्बर,1994

अभी इसके लिए और भी काम किया जाना है। लेकिन मुझे लगता है कि, विशेपकर इस सभा के महत्वपूर्ण दायित्वों मे से एक दायित्व, हिन्दी साहित्य के एक महत्वपूर्ण शोध-केन्द्र की भूमिका निभाने का होना चाहिए। हमें यह कभी नहीं भूलना चाहिए कि किसी भी भापा के प्रचार-प्रसार के पीछे मूल शक्ति उसके साहित्य की होती है। जिस भापा का साहित्य जितना अधिक समृद्ध होगा, जिस भाषा के साहित्य की परम्परा की जड़े जितनी अधिक गहरी और मजबूत होंगी, उस साहित्य की भापा उतनी अधिक फलेगी और फैलेगी।

मुझे ऐसा लगता है कि हिन्दी भापा और साहित्य पर गम्भीर शोध करने की प्रवृत्ति पहले से कम हुई है। सच तो यह है कि साहित्य की रचना तो अकेले मे रहकर की जा सकती है, लेकिन शोध अकेले में किया जाने वाला काम नहीं है। उसके लिए आवश्यकता सुविधाओ, जरूरी सामग्री तथा मूलभूत आर्थिक संरक्षण की जरूरत होती है। जब तक शोधकर्ता के लिए ये चीजे सुनिश्चित नहीं हो सकेंगी, तब तक वह एक अच्छे और व्यापक शोध की ओर उत्साहित नहीं हो सकेगा। हमारे विश्वविद्यालयों में साहित्य से संबंधित जो शोध कार्य हो रहे हैं, वे मुख्यत· उपाधि प्राप्त करने पर केन्द्रित होते जा रहे हैं। इसलिए मुझे लगता है कि यदि कुछ संस्थाएं स्नातकोत्तर शोध के इस दायित्व को उठाएं, और उसे अपना मुख्य उद्देश्य बनाएं, तो इससे हिन्दी भापा और साहित्य के क्षेत्र मे एक नई ऊर्जा आ सकेगी।

सभा ने अतीत मे शोध के कार्य को प्रोत्साहित किया है। उसके पास मूल ग्रन्थों का एक समृद्ध भण्डार है, अच्छा पुस्तकालय है। उपयुक्त होगा कि सभा अपने आपको शोध संबधी नई तकनीकियों से सुसज्जित करें, और हिन्दी साहित्य के शोध की दिशा मे अग्रणी भूमिका निभाए।

यहीं पर बात आती है स्तरीय साहित्यिक पत्रिकाओं की कमी की। यह कमी बहुत खटकती है। पत्रिकाए बौद्धिकता का मंच होती हैं। इससे केवल जानकारी ही नहीं मिलती, बल्कि तर्क-विर्तक का आधार भी बनता है। बौद्धिक लोगों के बीच एक बहस की स्थिति बनती है, और उसी से कोई नई बात उभर कर आती है। हिन्दी साहित्य जगत को चाहिए कि वह इस कमी को जल्दी-से-जल्दी दूर करे। इस कमी के लिए पाठक को दोपी ठहराकर अपने दायित्व से मुक्त नहीं हो जाना चाहिए। यदि पाठकों को सुरुचिपूर्ण अच्छी रचनाऐं उपलब्ध कराई जायें, तो वे निश्चित रूप से पढ़ना चाहेंगे। इस पत्रिका में विवेचनात्मक चिंतन होना चाहिए, और साहित्य

भी होना चाहिए। मैं समझता हूं कि इस दिशा मे नागरी प्रचारिणी सभा महत्वपूर्ण केन्द्र की भूमिका निभा सकती है। इसके पास 'सरस्वती' जैसी साहित्यिक पत्रिका की शुरूआत करने की परम्परा रही है।

दूसरी वात है अन्य भापाओ के साहित्य का हिन्दी मे अनुवाद करने की। मै इस वारे मे आप लोगो के सामने वापू द्वारा नागरी प्रचारिणी सभा, काशी मे 5 फरवरी 1916 को कहे गए शव्द रखना चाहूगा। उन्होंने कहा था :

"जव कोई अच्छी किताव जर्मन मे प्रकाशित होती हे, तो एक सप्ताह के अन्दर ही उसका अनुवाद अंग्रेजी मे हो जाता है। इसी कारण वह भापा इतनी प्रौढ़ है। ऐसा ही हिन्दी में भी होना चाहिए।"

वापू ने उस अवसर पर एक अन्य महत्वपूर्ण वात भी कही थी। मै आप लोगों का ध्यान उस ओर भी आकर्पित करना चाहूँगा। उन्होंने वहां उपस्थित समुदाय से कहा था :

"लोग अपना अधिक-से-अधिक काम हिन्दी मे करे।"

उनके कहने का अर्थ यही था कि जव तक किसी भापा का प्रयोग व्यवहारिक जीवन मे मौलिक रूप से नहीं होता, तव तक वात वनती नहीं है। इसलिए हिन्दी के प्रयोग को सभी विपयों मे वढाना है। और उसे इस तरह वढाना हे, ताकि वह सभी लोगों के दिल में वैठ सके। दूसरे क्षेत्रों की तो वात दूर हे, स्वयं हिन्दी क्षेत्रो मे ही अभी भी अंग्रेजी का वर्चस्व हे। इसी के साथ यह भी याद रखा जाना चाहिए कि हिन्दी का किसी भी भापा के साथ कोई टकराव नहीं है, कोई विरोध नहीं है। लेकिन जव एक ऐसी भापा की जरूरत की वात आती है, ताकि देश के लोग आपस मे वातचीत कर सके, तो नि:संदेह रूप से राष्ट्रभापा हिन्दी की वात प्रत्येक देशवासी के सामने आती है। इसलिए मुझे हिन्दी का काम राष्ट्रभापा का ही काम नहीं, वल्कि राष्ट्रीयता का काम, राष्ट्रीय एकता का काम लगने लगता है। स्वतंत्रता आंदोलन के समय यह काम पूरे उत्साह से किया जाता था। मुझे याद है कि जब मैं आगरा में पढ़ता था, तव इसी सभा की आगरा शाखा वहॉ विशारद की कक्षाएं चलाती थी, और उनमें काफ़ी लोग जाते थे। लेकिन आजादी के बाद भापा की सेवा करने की यह भावना थोड़ी शिथिल हुई है। जबकि यह काम बहुत जरूरी है। इसलिए यह काम प्रत्येक भारतवासी को करना है। साथ ही इसे इस तरह करना है, ताकि उसमें अन्य भापाएं अपनी-अपनी झलक पा सकें। हमारे यहां कहा गया है :

आ नो भद्रा कृतवो यन्तु विश्वत

अर्थात् 'उत्तम विचार सभी ओर से आने दो।' हिन्दी भापा के विकास, और उसके विस्तार के काम को इसी उदार भावना के अनुकूल करना है। हमारे सविधान ने भी हिन्दी पर जिस समन्वयात्मक सस्कृति को विकसित करने का दायित्व डाला है, मैं समझता हू कि उसे इसी खुले मन और नीति के द्वारा पूरा किया जा सकता है।

नागरी प्रचारिणी सभा के साथ हमारे देश के महान लोगों के नाम जुडे हुए हैं। मुझे विश्वास है कि सभा अपने कार्यो के द्वारा अपनी इस परम्परा को और उज्ज्वल बनाएगी, तथा हमारे देश में भापा और साहित्य के विकास के माध्यम से भावात्मक एकता को मजबूत करेगी।

नारी शिक्षा का महत्व

जब भी मुझे राजस्थान आने का मौका मिलता है, मैं आने की कोशिश करता हूँ। यहाँ आते ही मुझे इसके इतिहास की गाथाएं याद आने लगती हैं, उसकी संस्कृति से मन गूजने लगता है। शौर्य और प्रेम की यह धरती ऐतिहासिक काल से लेकर आज तक देश के आकर्पण का केन्द्र रही है। आज राजस्थान की संस्कृति अपनी राष्ट्रीय सीमाओं को लाघकर अन्तरराष्ट्रीय प्रशंसा प्राप्त कर रही है। इसका श्रेय इस राज्य के लोगो को ही है। इस हेतु मैं इस राज्य के लोगो को अपनी बधाई देता हूँ।

वर्तमान भीलवाडा जिले का कोई-न-कोई स्थान शुरू से हमारे इतिहास के केन्द्र मे रहा है। यहा अनेक प्राचीन अभिलेख और अवशेप मिले हैं, जो पापाणकाल की सभ्यता की जानकारी देते हैं। बागौर पापाणकाल की सभ्यता के सबसे सम्पूर्ण स्थानों मे से एक रहा है। नान्दशा मे प्राप्त स्तम्भ से ज्ञात होता है कि यह क्षेत्र वैदिक काल मे अनेक धार्मिक कार्यो का केन्द्र रहा है। इस जिले में 9वीं से 12वीं शताव्दी के अनेक प्राचीन मदिर मौजूद है। बीजोलिया, तिलस्वां और माण्डलगढ़ के मध्यकालीन मन्दिर हमारे देश की स्थापत्य कला के अनूठे उदाहरण हैं।

भीलवाडा जिले ने इतिहास के उतार-चढाव देखे हैं। यदि 1818 के पडारी युद्ध में यह स्थान निर्जन वन गया था, तो चार साल के बाद ही इस स्थान पर ढाई हजार से भी अधिक घर बस गए थे। इसका प्रमाण इतिहास मे है। यहां के लोगो की जो जीवन-शक्ति रही है, जो आत्म-विश्वास और कार्य-क्षमता रही है, उसकी प्रशसा टॉड जैसे इतिहासकारो ने भी की है। टॉड ने अपनी पुस्तक 'अनाल्स एड एन्टीक्वीटीज ऑफ राजस्थान' के भाग तीन के पृष्ठ 1737 पर इस क्षेत्र के लोगो की प्रशसा में जो शव्द लिखे है, उन्हें मै यहा आप लोगों के सामने रखना चाहूँगा। टॉड ने लिखा है

''शायद भीलवाडा पूरे भारत का ऐसा सबसे उत्कृष्ट उदाहरण है, जो हम लोगो के द्वारा चार साल के थोडे से समय मे लाए गए परिवर्तन से प्रभावित हुआ है।

महिला आश्रम के स्वर्ण-जयन्ती समारोह का उद्घाटन तथा स्व0 माणिक्य लाल वर्मा एव श्रीमती नारायणी देवी वर्मा की प्रतिमा का अनावरण करते हुए भापण, भीलवाडा (राजस्थान) 15 दिसम्बर, 1994

. . . यदि यहां ठीक तरह से व्यवस्था की जाए, तो यहां के स्थानीय लोग इतने उद्यमी हैं कि यहां दस हजार घर तुरंत वनाकर लोगों को वसाया जा सकता है, और यह राजपूताने का प्रमुख केन्द्र वन सकता है।''

टॉड की यह वात सही निकली, और देखते-ही-देखते यह क्षेत्र देश का एक प्रमुख व्यापारिक केन्द्र वन गया। इसका श्रेय निश्चित रूप से यहां के लोगों को ही जाता है।

हमारे स्वतंत्रता आन्दोलन के दौरान इस क्षेत्र ने एक वार फिर से अपने शौर्य और अपने आत्म-सम्मान का परिचय दिया। मैं इस अवसर पर सन् 1903 में वीजोलिया के किसानों द्वारा किए गए प्रथम आन्दोलन का उल्लेख करना चाहूंगा। जव इन किसानों पर 'चांदवारी' नाम का नया कर लगाया था, तव यहां के किसानों ने उसके विरोध में यह घोषणा की थी कि वे अपनी जमीन छोड़कर ग्वालियर चले जाएंगे। पहले तो उनकी वात नहीं मानी गई। लेकिन जव वीजोलिया के राव ने यह देखा कि सचमुच किसान अपनी गाड़ियो में सामान भरकर जाने की तैयारी कर रहे हैं, तो वे खुद किसानों के पास गए, और उन्होंने नए कर का प्रस्ताव वापिस लिया। इसे मैं इस क्षेत्र के लोगों द्वारा शुरू किए, गए अहिंसक आन्दोलन की शुरुआत का एक प्रतीक मानता हूँ।

वाद में भी वीजोलिया के किसानों ने अपने आन्दोलन के द्वारा पूरे देश का ध्यान आकर्पित किया। इस आन्दोलन को वापू और सरदार पटेल का आशीर्वाद प्राप्त था। माणिक्य लाल वर्मा जी के जुड़ने से इस आन्दोलन को एक नई गति और दिशा मिली। जहां तक मुझे याद है, वाद के वीजोलिया किसान आन्दोलन की चर्चा कानपुर से निकलने वाले 'प्रताप' जैसे प्रमुख अखवार में भी हुई थी।

माणिक्य लाल वर्मा जी स्वतंत्रता सेनानी, समाजसेवी और अद्‌भुत राष्ट्र प्रेमी थे। वचपन से ही उनके मन में अपने देश के प्रति प्रेम की भावना थी। उनका जीवन निरंतर संघर्प का जीवन रहा। यह वह समय था, जव हमारे देश में स्वतंत्रता आन्दोलन शुरू हो चुका था। ऐसे माहोल में वर्मा जी ने भी देश की आज़ादी का व्रत लिया। इसके लिए वे अपने ही जन्म-स्थान के किसानो में राजनीतिक चेतना जागृत करने के लिए वीजोलिया के किसान आन्दोलन से जुड़े। उन्होंने एक गांव में पाठशाला की स्थापना की। वे दिन भर स्कूल में पढ़ाते, तथा रात में किसानों को अखवार पढ़कर सुनाते। यह सव वे इसलिए करते, ताकि उस क्षेत्र के लोगों में राजनीतिक चेतना पैदा हो सके।

भीलो मे चेतना जागृत करने के लिए उन्होने 'राजस्थान सेवक मण्डल' की स्थापना की। सन् 1934 में उन्होंने नारेली गांव मे एक आश्रम बनाया, ताकि लोगों को रचनात्मक कार्यो का प्रशिक्षण दिया जा सके। बाद में उन्होंने भीलों को पढ़ाने के लिए खडलाई गाव मे एक आश्रम की स्थापना की। हालांकि जैसा स्वाभाविक तौर पर होता है, पहले तो उनके काम को शंका की दृष्टि से देखा गया। बाद में वही आश्रम एक महत्वपूर्ण केन्द्र बन गया वहां उन्होने भीलो में व्याप्त शराब की लत तथा कन्याओं की बिक्री जैसी कुप्रथाओं के विरुद्ध आन्दोलन छेड़ा, जिसमें वे सफल भी रहे। भीलो को उनकी अज्ञानता, अध-विश्वास तथा सामाजिक बुराइयों से भी मुक्ति दिलाई। उन्हे महाजनों के शोषण से भी छुटकारा दिलाया।

बाद में वर्मा जी को यह लगने लगा कि केवल रचनात्मक काम ही पर्याप्त नहीं है। बल्कि देश के पीडित लोगो के उत्थान के लिए जरूरी है कि राजनीतिक सत्ता भी उन्हीं के हाथ मे हो। इस उद्देश्य से उन्होने 24 अप्रेल, 1938 को उदयपुर मे 'मेवाड प्रजा मण्डल' की स्थापना की। स्वाभाविक था कि इस सस्था को अग्रेजी सरकार के कोप का भाजन बनना पडा। इसके लिए माणिक्य लाल वर्मा जी को अनेक यातनाए सहनी पड़ी, और जेल भी जाना पडा। 14 दिसम्बर, 1938 को इसके कार्यकर्ताओ पर पुलिस का जो हमला हुआ था, उसकी खबर 'हरिजन' में छपी थी। इस घटना की खबर देते हुए सवाददाता ने 'हरिजन' में अपनी रिपोर्ट भेजते हुए लिखा था ·

"श्री माणिक्य लाल जी बीजोलिया से हैं। वे पिछले 20 साल से किसानों की सेवा मे लगे हुए है। एक साल पहले ही उन्होंने प्रजा मण्डल की स्थापना की। लेकिन कुछ ही दिनों के बाद उसे अवैधानिक करार दिया गया। इसलिए कुछ महीने पहले ही उन्होंने सविनय अवज्ञा आन्दोलन शुरू किया है।"

माणिक्य लाल वर्मा जी ने 'भारत छोड़ो आन्दोलन' में भाग भी लिया, और जेल गए। अपने जीवन के लगभग 6 वर्प उन्होने जेल मे बिताए। यह इस बात का प्रमाण है कि देश की आजादी के प्रति उनके मन मे कितनी गहरी चाह थी।

उनकी आजादी की यह चाह स्वतत्रता के बाद देश के लोगो की सेवा की चाह मे बदल गई। सविधान सभा मे 24 नवम्बर, 1949 को उन्होने पचायती व्यवस्था की स्थापना, वयस्क मताधिकार तथा हरिजनो के विकास के लिए किए गए प्रावधानों के प्रति अपना समर्थन और सतोप व्यक्त करते हुए उसमे यह जोडा था कि

"राजस्थान मे भरतपुर, अलवर, बीकानेर, उदयपुर डूगरपुर, बासवाडा जैसे अनेक

बड़े शहर हैं, जो प्रशासन के मुख्यालय थे, तथा जहां अनेक कवि, विद्वान, साहित्यकार और कलाकार राजदरबारों के संरक्षण में रहते थे। इनमें से अनेक बेरोजगार हो गए है, जिसके कारण राज्य का व्यापार थम-सा गया है।''

माणिक्य लाल वर्मा जी ने इन कलाकारों के लिए राजकीय सहयोग की माग की थी। उनकी उस माग के महत्व को आज हम तब और अच्छी तरह समझ सकते हैं, जबकि इस राज्य की हस्तकला विश्व स्तर पर सराही जा रही है।

आजादी के बाद वर्मा जी प्रथम सयुक्त राजस्थान के प्रधानमंत्री बने। बाद में वे लोकसभा सदस्य रहे। वे सविधान सभा के सदस्य भी रहे। उनकी देश सेवा के लिए सन् 1965 में राष्ट्र ने उन्हे पद्मभूषण से सम्मानित कर उनके प्रति अपना सम्मान व्यक्त किया। ऐसे ही देशभक्त नेता की यहां प्रतिमा स्थापित की गई है। मुझे विश्वास है कि यह प्रतिमा हमारे लोगो को स्वतत्रता के मूल्यों की याद दिलाती रहेगी।

स्वतत्रता आन्दोलन मे हमारे देश की महिलाओं ने जिस साहस, धैर्य और संघर्ष क्षमता का परिचय दिया था, उससे आप सब लोग परिचित ही है। माणिक्य लाल वर्मा जी की धर्मपत्नी श्रीमती नारायणी देवी ने स्वतत्रता आन्दोलन में अपने पति का साथ देकर अपनी भूमिका निभाई। बीजोलिया किसान आन्दोलन के समय उन्होंने खेतो में मजदूरी की, तथा महिलाओं को संगठित किया। 'मेवाड़ प्रजा मण्डल' के आन्दोलन मे जब वर्मा जी जेल गए, तो प्रजा मण्डल का सचालन नारायणी देवी जी ने ही किया था। भील के उत्थान के लिए वे कर्मठ कार्यकर्ता की तरह लगी रहती थी। आज जिस महिला आश्रम के पचास वर्ष का समारोह मनाया जा रहा है, उसकी सचालिका के रूप मे नारायणी देवी ने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व का परिचय दिया था। श्रीमती नारायणी देवी ने वर्मा जी के कन्धे-से-कन्धा मिलाकर उन्हे और अधिक शक्तिशाली बनाया। यही हमारे देश की सशक्त पारिवारिक परम्परा भी रही है।

पचास साल पूर्व इसी दम्पति ने इस महिला आश्रम की स्थापना की थी। मुझे बताया गया कि यह विद्यालय उस समय इस क्षेत्र मे लड़कियों के लिए एकमात्र विद्यालय था। सचमुच, इस बात के लिए माणिक्य लाल वर्मा जी और श्रीमती नारायणी देवी की प्रशसा की जानी चाहिए कि आजादी से पहले ही उन्होंने नारी शिक्षा के महत्व को समझ लिया था, और उसके लिए कार्य करना शुरू कर दिया था। हमारे राष्ट्रीय नेताओं की इस दूरदृष्टि का ही परिणाम है कि आज हमारे देश की लड़कियाँ जीवन के विभिन्न क्षेत्रो मे हैं, और सफलतापूर्वक अपने दायित्वों का निर्वाह कर रही है।

वैसे मैं यह बताना चाहूंगा कि हमारे यहां ऐसा हमारी संस्कृति मे प्रारम्भ से ही रहा है। ऋग्वेद में लोपा, घोपा तथा मुद्रा जैसी विदुषियाँ हुई हैं, जो वैदिक मंत्रों की दृष्टा थीं। ऐतरेय ब्राह्मण तथा कौपितकी ब्राह्मण में अनेक स्त्रियों के विदुषी होने के प्रमाण मिलते हैं। उनमें यहां तक उल्लेख मिलता है कि अनेक वीरांगनाओं ने अपने पतियों के साथ युद्ध-क्षेत्र में काम किया था।

बापू नारी की इस शक्ति से परिचित थे। उन्होने स्वतंत्रता आन्दोलन में नारी की इस क्षमता को देश की आज़ादी की लड़ाई में लगाया। स्वदेशी आन्दोलन के समय विदेशी वस्तुओं का वहिष्कार, नशाबन्दी, बुनियादी शिक्षा तथा चरखा कातने जैसे रचनात्मक कामों मे महिलाए वहुत सफल रहीं। बापू का यह सही मानना था कि आत्म-वलिदान और साहस के मामले में नारी पुरुषों से अधिक योग्य होती हैं।

यह खुशी की वात है कि आजादी के वाद हमारे देश ने शिक्षा के माध्यम से नारियों की शक्ति और क्षमता को पहचान कर उसे आगे लाने के लिए अनेक उपाय किए हैं। लेकिन फिर भी अभी इतना नहीं हो पाया है, जिससे कि हम संतुष्ट हो सकें। नारी शिक्षा का प्रतिशत अभी भी पुरुषों से काफी कम है। यदि अभी 100 में 64 पुरुप शिक्षित हैं, तो महिलाएं केवल 39 ही शिक्षित हैं। राजस्थान में तो यह प्रतिशत और भी कम है। हमारे देश में करीव 51 प्रतिशत लोग शिक्षित हैं। जवकि राजस्थान में कुल करीव 39 प्रतिशत लोग ही शिक्षित हैं। भीलवाड़ा में तो यह प्रतिशत और भी कम है। यहां के केवल एक चौथाई लोग ही अभी तक शिक्षा पा सके हैं। जहां तक महिलाओं की शिक्षा का सवाल है, वह राजस्थान में 20 प्रतिशत है। ग्रामीण क्षेत्रों में तो इससे भी आधी महिलाएं शिक्षित हैं। मैं समझता हूँ कि जिस क्षेत्र में श्री माणिक्य लाल वर्मा और श्रीमती नारायणी देवी जैसे जुझारू व्यक्तित्वों ने महिला शिक्षा के क्षेत्र में इतना वड़ा कदम उठाया था, उस क्षेत्र को तो एक आदर्श क्षेत्र होना चाहिए। मेरा विश्वास है कि अव, जवकि महिला आश्रम अपनी स्थापना के पचास वर्ष मना रहा है, निश्चित रूप से यह संकल्प लेगा कि वह वहुत जल्दी इस पूरे क्षेत्र को शत-प्रतिशत साक्षर क्षेत्र वना देगा।

हमें यह मानकर चलना होगा कि यदि सचमुच हमें अपने देश को विकास के रास्ते पर आगे ले जाना है, उसे अपना पुराना गौरव वापस दिलाना है, तो नारी शिक्षा पर विशेप रूप से ध्यान दिया जाना चाहिए। नारी शिक्षा से उनमें न केवल आत्म-विश्वास आएगा, वे न केवल आर्थिक रूप से अपने पैरों पर खड़ी होने लायक वनेंगी, वल्कि उनसे जुड़ी अनेक सामाजिक वुराईयां भी दूर हो सकेंगी। इससे दहेज

तथा बाल विवाह जैसी कुरीतियॉ मिट सकेगी। केवल इतना ही नहीं, बल्कि नारी शिक्षा के द्वारा जनसंख्या की समस्या, गरीवी की समस्या, स्वास्थ्य की समस्या तथा अशिक्षा जैसी समस्याओं से बहुत जल्दी छुटकारा पाया जा सकेगा।

हमे नारी शिक्षा को केवल अक्षर ज्ञान से ही जोड़कर नहीं देखना है, बल्कि उसे एक 'सम्पूर्ण ज्ञान' के रूप में देखना है। इसे इस रूप में देखना है कि इससे समाज की अनेक अन्य समस्याओं के समाधान मे मदद मिलेगी। कहा जाता है कि जब एक पुरुष शिक्षित होता है, तो केवल एक ही व्यक्ति शिक्षित होता है। लेकिन जब एक महिला शिक्षित होती है, तो पूरा परिवार शिक्षित होता है। इस वर्ष को 'विश्व परिवार वर्ष' घोषित किया गया है। हमे अपने यहा परिवार में शिक्षा को सबसे अधिक महत्त्व देना चाहिए। प0 जवाहर लाल नेहरू ने 22 जनवरी, 1955 को मद्रास में एक महिला महाविद्यालय की आधारशिला रखते हुए कहा था .

''मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि एक बार पुरुष शिक्षा की उपेक्षा की जा सकती है, लेकिन स्त्री शिक्षा की उपेक्षा करना न तो सम्भव है, और न ही मुनासिव।''

हमारी पूर्व प्रधानमत्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने वर्तमान में देश के सामने ही नहीं, वल्कि दुनिया के सामने नारी की शक्ति और क्षमता का अनुपम उदाहरण रखा है। अखिल-भारतीय मुस्लिम शिक्षा सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए 30 मार्च, 1984 को उन्होने 'सम्पूर्ण विकास' की बात करते हुए कहा था .

''शिक्षा समाज के सभी वर्ग के लोगों के लिए आवश्यक है। हम केवल तभी एकरूप विकास कर सकते हैं, जब वे लोग, जो किसी भी कारण से शिक्षा से वंचित है, अन्य लोगों के बराबर आ जाए।''

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि महिला आश्रम में दो हजार लड़कियॉ शिक्षा पा रही हैं। इस शिक्षा मे कम्प्यूटर का प्रशिक्षण भी शामिल है। इसके साथ ही यह आगनवाडी कार्यकर्ता प्रशिक्षण तथा कपड़ा सिलाई प्रशिक्षण केन्द्र का भी संचालन कर रही है। मैं समझता हूॅ कि इससे निश्चित रूप से महिलाओं को आर्थिक स्वावलम्बन मे मदद मिल सकेगी। मैं कामना करता हूॅ कि यह संस्था अपने उद्देश्य में दिनों-दिन अधिक सफल हो, तथा नारी शिक्षा के क्षेत्र में हमारे देश का एक आदर्श बने।

महान व्यक्तित्व फ़खरुद्दीन अली अहमद

मुझे खुशी है कि गालिब इस्टीट्यूट ने मरहूम जनाब फखरुद्दीन अली अहमद साहब की याद में ये दो किताबें निकालने का फैसला किया। उर्दू और अंग्रेजी की दो जिल्दो मे उनके अलग-अलग मुजामीनों पर लोगों द्वारा लिखे गए लेखों को इकट्ठा किया गया है। इन्हें जिस तरह इकट्ठा किया गया है, और जिस तरह ये किताब की शक्ल मे छपकर आये हैं, उसके लिए मै बधाई देना चाहूँगा।

जहॉ तक फखरुद्दीन अली साहब से मेरे ताल्लुक की बात है, मुझे भी उनके करीब रहने का मौका मिला है। सन् 1969 मे जब मैं काग्रेस का जनरल सेक्रेटरी था, उस समय मैं उनके और भी करीब आया, और उन्हें पूरी तरह समझने का मौका पाया। मुझे उस समय पुराने वक्त की एक बात याद आ रही है। यह बात उस समय की है, जब असम में चुनाव हो रहे थे। मो0 अली जिन्ना साहब नहीं चाहते थे कि फखरुद्दीन अली साहब कांग्रेस पार्टी की ओर से खड़े हों। यदि चुनाव में खड़ा होना ही चाहते है, तो फिर स्वतत्र उम्मीदवार के रूप में खड़े हो जाएं। लेकिन फ़खरुद्दीन अली साहब नही माने। हालाकि जिन्ना साहब काफी दिनों तक वहॉ रहे भी, लेकिन फ़खरुद्दीन अली साहब ने उसे कबूल नहीं किया। फ़खरुद्दीन साहब की जीत होनी थी, वह हुई।

उसके बाद जब देश का राष्ट्रपति चुनने का सवाल आया, तब सभी की नजर फ़खरुद्दीन साहब की तरफ गई। उस समय मै कांग्रेस का अध्यक्ष था। मैंने उस समय मेम्बरान-पार्लियामेट को इस बाबत ख़तूत लिखे। यह हम लोगों के लिए अच्छी बात थी कि वे हमारे मुल्क के राष्ट्रपति चुने गए।

अक्सर होता यह है कि हम सब लोग बात तो बहुत करते है, लेकिन उसे अमल मे नहीं लाते। लेकिन मैंने पाया कि फखरुद्दीन अली अहमद साहब की यह खुसूसियत थी कि वे जो कहते थे, उसे करते भी थे। उनकी कथनी-करनी मे कोई अंतर नही था।

'गालिब इस्टीट्यूट द्वारा प्रकाशित फखरूद्दीन अली अहमद स्मृति ग्रन्थ की प्रथम प्रति स्वीकार करते हुए, नई दिल्ली, 21 दिसम्बर 1994

यहाॅ मैं जिन लोगो को देख रहा हूॅ, उनमें बहुत से लोग ऐसे हैं, जिनका फखरुद्दीन अली अहमद साहब से 40-50 वर्ष का साथ तो रहा ही होगा। और आप लोगो मे से बहुत से लोग तो काफी करीब भी रहे होगे। मैं समझता हूॅ कि आप लोगो को फखरुद्दीन अली साहब के बारे मे अपने सस्मरण लिखने चाहिए। अगर ये लिखे जा सके, तो बहुत अच्छा होगा। किताबो मे यह बात तो अक्सर छपी रहती है कि वे कब पैदा हुए ? कहाॅ पढ़े ? और कितनी बार जेल गए ? लेकिन उससे इस बात का पता नहीं चलता कि उनकी शख्सियत कैसी थी ? इसका पता तो तभी चल सकता है, जबकि उनको समझे और देखे हुए लोग उनके बारे में अपनी कलम चलाए। कुछ ऐसे वाकयातें को उजागर करे, जिनसे उनकी शख्सियत का अहसास हो। आप लोगो को अपनी जिदगी के देखे हुए लम्हो से नयी पौध को वाकिफ कराना है। आम बातो मे नयी पीढी को लगाव नहीं होता। लेकिन यदि आप सब अपनी देखी हुई बाते लिखेंगे, तो उससे नयी जनरेशन के मन मे उनके प्रति उत्सुकता पैदा होगी। यह बात आप लोगो के लिए न सही, लेकिन आने वाली जनरेशन के लिए बहुत अहमियत रखती है।

गालिब इस्टीट्यूट जो काम कर रहा है, उसकी मै तारीफ करना चाहूॅगा। इस समय एक बात और मेरे मन मे आ रही है। गालिब के जो फारसी के अशआर है, उन्हें हमारे यहाॅ के लोग काफी जानते हैं, और अफगानिस्तान के लोग भी। अफगानिस्तान के लोग जानते है, यह मुझे मालूम है। मैं यह नहीं जानता कि गालिब के उर्दू अशारो का फारसी मे तर्जुमा हुआ है या नही। लेकिन मुझे लगता है कि यदि ऐसा हो सके, तो वह बहुत अच्छी बात होगी। जहाॅ तक हिदी मे होने की बात है, मध्य प्रदेश मे पडित द्वारिका प्रसाद मिश्र जी जब मुख्य मंत्री बने, तब उन्होने गालिब के कुछ अशारो का हिदी के दोहो मे तर्जुमा किया था। एक ओर देवनागरी लिपि मे शेर और दोहा छपा था, और दूसरी ओर वहीं उर्दू लिपि (रस्म-उल-खत) मे छपे थे। मुझे लगता है कि हिदी और उर्दू मे फर्क पैदा करने की जो गलत कोशिश की जा रही है, उसे ऐसा करके दूर किया जा सकता है। इससे गालिब देश के आम लोगो तक पहुॅच सकेंगे। यह काम इस्टीट्यूट कर सकता है।

भाग 2

आर्थिक विकास

कम लागत पर गुणवत्ता

मुझे इस बात की भी बड़ी प्रसन्नता है कि भारत में बने इस सबसे बड़े जहाज का नाम हमारे राष्ट्र के महान नेता, आधुनिक भारत के निर्माता और इस शताब्दी के महानतम राजनेता पडित जवाहरलाल नेहरू के नाम पर रखा गया है। पडित जी एक ऐसे स्वप्नद्रष्टा थे जिनके नेतृत्व में भारत ने अपनी औद्योगिक क्षमता का विकास किया और तकनीकी श्रम-शक्ति सुदृढ़ की। विज्ञान और टेक्नोलॉजी के विकास से भारत में विकास, शाति और समृद्धि का मार्ग प्रशस्त हुआ। नेहरू जी ने प्रत्येक व्यक्ति और प्रत्येक राष्ट्र के बीच सहयोग, मित्रता और शांति तथा सभी लोगो के बेहतर भविष्य के निर्माण के भारत के संदेश को वाणी दी। उन्होंने आजादी मिलने के कुछ समय बाद 14 मार्च, 1948 को विशाखापत्तनम मे भारत के पहले समुद्री जहाज एस एस जलउपा का जलावतरण करते समय कहा था — "आज हमने इस जहाज का जलावतरण किया है। भगवान करे इससे ऐसे ही छोटे-बड़े कई जहाजों की समुद्र यात्रा की शुरुआत हो और वे भारत का सदेश दुनिया के हर कोने तक पहुँचाए।

आइए, हम इस जहाज को पूरे विश्वास से समुद्र में उतारें ताकि इससे न सिर्फ भारत का विकास हो बल्कि उसे अन्य देशों से सहयोग मे भी मदद मिले।

इस भव्य जहाज के निर्माण के लिए मैं कोचीन शिपयार्ड के इजीनियरो और कर्मचारियो को शुभकामनाएं देता हूँ।

पुराने जमाने में एशिया-प्रशात क्षेत्र में भारत के व्यापार, वाणिज्य और सस्कृति का प्रचार-प्रसार भारतीय जहाजों के जरिए ही हुआ था। हमारे जहाज दक्षिण-पूर्व एशिया के समुद्र तटवर्ती इलाकों तथा उनसे भी आगे उत्तर में चीन और जापान की यात्राएं करते थे। अगकोरवाट और अन्य स्थानों के स्मारको में आज भी इन समुद्री यात्राओं के स्थायी प्रमाण उपलब्ध हैं। इन देशों की भाषा, वहां के साहित्य, संगीत, ललित कलाओं और रीति-रिवाजों में भी भारतीय सस्कृति की झलक दिखायी देती है। पुराने जमाने के सिक्कों और मुद्राओ के अध्ययन से पूर्व और

एम टी जवाहरलाल नेहरू तेल टैंकर के जलावतरण के अवसर पर, कोचीन, 29 अक्तूबर, 1992

पश्चिम के साथ भारत के व्यापार के स्तर का पता चलता है। यह व्यापार समुद्री मार्गो से और भारत मे ही वने जहाजो से किया जाता था।

उन्नीसवीं शताव्दी में जाने माने ब्रिटिश जहाज निर्माता जॉन हिलमैन ने कहा था - "भारत में बना सागौन की लकड़ी का जहाज छह समुद्री यात्राएं करने के वाद भी उतना ही मजबूत बना रहता है जितना तीन यात्राएं करने के बाद हमारा जहाज"। उन्होने साफ तौर पर यह बात स्वीकार की थी कि भारत की गोदियॉ जहाज बनाने वाले ब्रिटेन के अपने प्रतिद्वन्द्वी प्रतिष्ठानों की तुलना में दुगुनी बहतर थीं।

कोचीन शिपयार्ड को इसी गौरवशाली इतिहास को ध्यान में रखकर आगे वढ़ना है। आज जबरदस्त अन्तर्राष्ट्रीय स्पर्धा के युग मे हमें कम लागत पर गुणवत्ता का लक्ष्य प्राप्त करना है। हमें अपने सामान, धन और विशेषज्ञता का बेहतरीन इस्तेमाल करने के साथ-साथ पूरी कर्तव्यपरायणता से काम करना है। अपने सचालनात्मक दायित्वों को पूरा करने के लिए हमें और अधिक मेहनत करनी होगी और भारत के जहाज निर्माण उद्योग की साख बनानी होगी। आशा है एम टी जवाहरलाल नेहरू सद्भाव, भाईचारे और आपसी सहयोग का भारत का संदेश दूर-दूर के देशों तक पहुचाएगा। मुझे यह भी भरोसा है कि इससे भारत की अर्थव्यवस्था को मजबूत बनाने और दुनिया के तमाम देशों से व्यापार और वाणिज्य के क्षेत्र में हमारे आपसी सबधो को सुदृढ़ करने में मदद मिलेगी। इस जहाज के साथ जवाहरलाल नेहरू का नाम जुड़ा है। ऐसे में जहाज से संबद्ध हर एक व्यक्ति का, चाहे वह चालक दल का सदस्य हो या गोदी का, यह दायित्व बनता है कि वह उन मूल्यों की रक्षा करें जिन्हें पंडित जी समूची मानवता की भलाई के लिए, हमारे देश की भलाई के लिए और दुनिया के तमाम देशों व लोगों की भलाई के लिए तथा उनकी खुशी और खुशहाली के लिए आवश्यक मानते थे।

विश्व में सुख-समृद्धि

आज 14 नवम्बर, 1992 के दिन हमारे स्वप्नद्रष्टा नेता जवाहरलाल नेहरू की जयंती भी है। वे एक ऐसे राजनेता और विचारक थे जिसने अपने आप को मानवता की भलाई के लिए समर्पित कर दिया था। उन्होंने दुनिया के राष्ट्रो और लोगों की कई दशकों तथा कई पीढ़ियों बाद की आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर कार्य किया।

पंडित जवाहरलाल नेहरू ने विकास की प्रक्रिया को बढ़ावा देने मे जोरदार योगदान किया। उन्होंने अंतर्राष्ट्रीय सद्भाव, सहयोग और मैत्री के स्तर और क्षेत्र में लगातार विस्तार के प्रयास किए।

हर साल 14 नवम्बर को प्रगति मैदान मे अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार मेला शुरू होता है। इसमे विभिन्न देशो से बड़ी संख्या मे औद्योगिक, वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक उपक्रम भाग लेते हैं और अपने नवीनतम उत्पादों का प्रदर्शन करते हैं। मेरे ख्याल से यह काफी महत्वपूर्ण बात है। मुझे यह जान कर बड़ी प्रसन्नता हुई है कि इस साल के मेले में एशिया, अफ्रीका, उत्तर और दक्षिण अमरीका तथा यूरोप के करीब तीस देश भाग ले रहे हैं।

मैं भारत की ओर से इस मेले मे भाग लेने वाले सभी देशों को हार्दिक शुभकामनाएं देते हुए उनका स्वागत करता हूँ। मुझे आशा है कि उनके व्यक्तिगत और सामूहिक प्रयासों के अच्छे परिणाम वैज्ञानिक, प्रौद्योगिक और आर्थिक गतिविधियों के क्षेत्र मे शानदार आर्थिक सहयोग के रूप में सामने आएगे। इससे विभिन्न राष्ट्रों, विभिन्न संस्कृतियों और विभिन्न लोगों के बीच आपसी समझ बढ़ेगी।

इस मेले में इंसानी सरोकार के कुछ ऐसे महत्वपूर्ण पहलुओं को शामिल किया गया है जो विश्व अर्थव्यवस्था के भविष्य के स्वरूप के निर्धारण के लिए बड़े प्रासंगिक हैं। इस मेले में ऊर्जा के सरक्षण और प्रबंध, भवन निर्माण टेक्नोलॉजी और लघु उद्योग के साथ-साथ बच्चो के खिलौनों तथा उपभोक्ता वस्तुओ के प्रदर्शन पर जो विशेप जोर दिया गया है उसे देखकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। ये सभी

भारतीय अतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले के उद्घाटन के अवसर पर, नई दिल्ली, 14 नवम्बर, 1992

क्षेत्र तीसरी दुनिया के विकासशील देशों के लिए उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने विकसित देशो के लिए।

पूँजीनिवेश सबधी फैसलो के लिए उपयुक्त माहौल का निर्माण टेक्नोलॉजी का आदान-प्रदान, औद्योगिक तथा वाणिज्यिक विनिमय, सख्या तथा मात्रा की दृष्टि से उत्पादन मे वृद्धि और द्विपक्षीय एव बहुपक्षीय सहयोग कुछ ऐसी गतिविधियां है जो विश्व स्तर पर दूरगामी महत्व की हैं। मेरा विचार है कि विश्व अर्थव्यवस्था के अन्तर्गत हमारे लिए उत्तर और दक्षिण के बीच परस्पर निर्भरता को महत्व देना बहुत जरूरी है। उत्तर और दक्षिण के बीच स्थिर आर्थिक सबंधो के विकास के लिए पारस्परिक निर्भरता वाले विश्व की धारणा को स्वीकार करना सबसे बुनियादी बात है। इसी तरह स्थिर उत्तर-दक्षिण आर्थिक सबध एक-दूसरे के लिए परस्पर लाभप्रद ओर प्रगतिशील विश्व व्यवस्था के विकास के लिए बुनियादी बातें है। दुनिया के तमाम देशो की एक दूसरे पर निर्भरता से उनकी सोच में एक ऐसा बुनियादी बदलाव आया है जो काबिले तारीफ है। अब यह माना जाने लगा है कि गरीब देशो के उत्पादन के आधार और उत्पादित वस्तुओं को बढ़ाने से धनी देश और प्रगति करेगे। इससे दुनिया के बाजारो का विस्तार होगा, अंतर्राष्ट्रीय स्तर पर बेहतर श्रम विभाजन हो सकेगा और परिणामस्वरूप उत्तर तथा दक्षिण के देशो की आय बढ़ेगी।

शायद यह बात अभी ठीक तरह से ज्ञात नहीं है कि विकसित देशो के निर्यात का काफी बडा हिस्सा तीसरी दुनिया मे खप जाता है। तीसरी दुनिया के देश अपने निर्यात से होने वाली आमदनी से इसके लिए पैसा जुटाते हैं। अगर सरक्षणवादी नीतियो के चलते तीसरी दुनिया के निर्यात पर प्रतिबध लगाए जाते हैं तो इसके जो बुरे नतीजे सामने आएगे उनमे से एक यह भी होगा कि तीसरी दुनिया के देश विकसित देशो से सामान नहीं खरीद पाएगे। विकसित देशो की संरक्षणवादी नीतियो से स्वय विकसित देशों को भी उतना ही नुकसान होगा जितना तीसरी दुनिया के देशों को। तीसरी दुनिया के देशो की अर्थव्यवस्था पर बुरा असर डालने वाली प्रवृत्तियों से विकसित देशों की अर्थव्यवस्था पर खराब असर पडना निश्चित है क्योंकि उनका तीसरी दुनिया से बड़ा गहरा नाता है। इस तरह यह बात बिल्कुल साफ नजर आती है कि विश्व के तमाम देशों की परस्पर निर्भरता को ध्यान में रखकर बनायी गयी नीतिया दुनिया के स्वस्थ आर्थिक प्रबध के लिए अनिवार्य है।

विश्व के आर्थिक इतिहास मे परस्पर निर्भरता के तौर तरीको को एक बड़े अच्छे उदाहरण से समझाया जा सकता है। यूरोप को मार्शल प्लान सहायता से अमरीकी अर्थव्यवस्था को जो फायदा हुआ था वह हम जानते ही हैं। इससे जहाँ एक और यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओ के विश्व युद्धोत्तर पुनर्निर्माण में मदद मिली वहीं अमरीका में भी रोजगार और उत्पादन बढ़ा। उस समय जब रक्षा उत्पादन कम किया जा रहा था और रक्षा कर्मी असैनिक नौकरियों की तलाश कर रहे थे, मार्शल प्लान से अमरीका को ऊंची विकास दर कायम रखने में मदद मिली।

जिस समय दुनिया विश्व युद्धोत्तर यूरोप पुनर्निर्माण की समस्या का सामना कर रही थी दूरदर्शी लोगों की समझ मे यह बात आ गयी थी कि युद्ध से तहस-नहस यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं का तुरंत पुनरुद्धार करना अमरीकी अर्थव्यवस्था के भी हित मे रहेगा। वे यह जानते थे कि इससे पारस्परिक हित पर आधारित सबध कायम किए जा सकेगे। उस समय यूरोपीय अर्थव्यवस्थाओं को संभावित आर्थिक प्रतिद्वंदी नहीं माना जाता था और उनके साथ स्पर्धा की बात भी नहीं थी।

आजकल अक्सर यह गलत निष्कर्ष लगाया जाता है कि तीसरी दुनिया के देश विश्व की सम्पत्ति का फिर से बंटवारा कराना चाहते है। इससे पलडा भारी हो जाएगा और इसका सीधा मतलव होगा विकसित देशो पर बुरा असर। लेकिन इस तरह का दृष्टिकोण न सिर्फ दुर्भाग्यपूर्ण है, बल्कि गलत भी है। इसमें विश्व अर्थव्यवस्था में अंतर्निहित पारस्परिक निर्भरता की अनदेखी कर दी गई है। जिस महत्वपूर्ण वात को भुला दिया जाता है वह यह है कि तीसरी दुनिया के देशो की क्षमता बढ़ने से दुनिया की कुल सम्पत्ति बढ़ेगी और विकसित देशों की अर्थव्यवस्थाओं मे नई स्फूर्ति आएगी।

हालांकि मुझे इस वात का पूरा अहसास है कि दृष्टिकोण मे बदलाव के लिए जोर डालने के वजाय मौजूदा नजरिए की ही पुष्टि करना कहीं अधिक आसान है। फिर भी खुशी की वात है कि दुनिया के विभिन्न देशों मे आर्थिक परिदृश्य में वदलाव को ध्यान में रखकर तालमेल वनाने के जो प्रयास हो रहे हैं, उनकी झलक आर्थिक विचारधारा के विकास में दिखाई देने लगी है।

पिछली शताब्दियो मे अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था के सचालन में विभिन्न देशों ने अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाए हैं। विश्व अर्थव्यवस्था इस आर्थिक विचारधारा से काफी हद तक प्रभावित रही है कि प्रतिस्पर्धा आर्थिक जीवन की सवसे अच्छी नियायक हो सकती है। हम एडम स्मिथ के इस विचार से भी

भलीभांति परिचित हैं कि "एक अदृश्य हाथ" मानवीय कार्य व्यापारों को सही दिशा देता है और अगर "आर्थिक मानव" को स्वतत्र छोड़ दिया जाए तो वह न सिर्फ अपने हितों का संरक्षण करेगा, बल्कि समाज की भी सेवा कर सकेगा।

कुल मिलाकर देखे तो कहा जा सकता है कि अहस्तक्षेप की विचारधारा ने मानवीय सम्पत्ति को जबरदस्त बढ़ावा दिया हे। मगर इस तरह वनाई गई सम्पत्ति के वटवारे मे इसने असंतोप को वढ़ावा दिया है। इन नतीजों का विस्तृत और गहरा आर्थिक विश्लेपण किया गया है। एक दिलचस्प बात यह भी हुई है कि विभिन्न देशों ने इस बारे में अलग-अलग दृष्टिकोण अपनाया है। मोटे तौर पर कहे तो जिन देशों ने कार्ल मार्क्स द्वारा प्रतिपादित विचारधारा स्वीकार की थी, उनमें राज्य खुद ही उत्पादन के साधनो का मालिक वन वैठा और उसने सभी आर्थिक गतिविधियों को पूरी तरह अपने नियंत्रण मे ले लिया, लेकिन जो लोग बुनियादी तौर पर एडम स्मिथ की विचारधारा का ही अनुसरण करते आ रहे थे, उन्होंने भी व्यापक सामाजिक कारणों से इस विचारधारा से भटकना शुरू कर दिया। इस तरह एकाधिकार के प्रसार को रोकने के लिए कानून वने तथा श्रमिको को ट्रेड यूनियने वनाने का अधिकार मिला। जव वेरोजगारी की समस्या राजनीतिक दृष्टि से असहाय होने लगी तो कीन्स की विचारधारा का अनुसरण करते हुए ऐसी नीतियां अपनाई गई जिनका उद्देश्य कुल मांग वढ़ाना था। इस तरह वढ़ी हुई माग को पूरा करने के लिए जिन्सो का उत्पादन वढ़ा और वेरोजगारों को रोजी मिली। वे देश जो पहले समाजवादी माडल पर चल रहे थे, वहां भी निजी पूजी निवेश वाले उद्यमों और अतिरिक्त लागत जुटाने की काफी गुजाइश पैदा हो गई। कहने का मतलव यह है कि ये कदम भूल सुधार की कोशिश के रूप में उठाए गए और इन्हें सामाजिक-आर्थिक असंतुलन तथा विकृतियो को दूर करने और उनसे बचाने के लिए आतरिक रूप से लागू किया गया।

लेकिन जहा तक अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक प्रणाली के स्तर पर भूल सुधार का सवाल है, इस तरह का कोई कदम नहीं उठाया गया। न तो ऐसा अन्तर्राष्ट्रीय समाजवाद आया, जिसमे विभिन्न राष्ट्र उत्पादन के कुछ साधनो का पूरा स्वामित्व अपने हाथो में लेने के लिए सहयोग करते और न ही कमजोर देशों को नुकसान से बचाने के लिए कदम उठाए गए।

इस समय जो अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक व्यवस्था है और कुछ समय से जिस विचारधारा पर अमल किया जा रहा है उसकी उत्पत्ति इस तरह से हुई है। अगर

वर्तमान प्रवृत्ति को व्यापक संदर्भ में रखकर विचार करें तो कहा जा सकता है कि जब तक विश्व अर्थव्यवस्था की दिशा निर्धारित करने वाली आर्थिक विचारधारा में बुनियादी परिवर्तन नहीं आता दुनिया मे गरीबी की समस्या का इसी तरह और गम्भीर होते जाना निश्चित है। इससे जो अकथनीय मानवीय पीड़ाएं उत्पन्न होंगी उनसे बच पाना बडा मुश्किल होगा। इसका सबसे बुरा असर स्वयं विकसित देशो पर पड़ेगा।

अगर गरीबी, बेरोजगारी, मुद्रास्फीति, प्रदूषण, फिर से उपयोग में न लाए जा सकने वाले स्रोतो का समाप्त होना और खाद्यान्न की कमी जैसी समस्याओ का कोई कारगर हल खोजना है तो आर्थिक गतिविधियों के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग आवश्यक है। इस तरह के सहयोग को विश्व स्तर पर बढ़ाना तो जरूरी है ही, अन्तर क्षेत्रीय और अत:क्षेत्रीय स्तर पर भी इसे बढ़ावा देना होगा। अपेक्षाकृत गरीब देशों के हितो की रक्षा के साथ-साथ इस दृष्टिकोण का एक ओर फायदा भी होग। इससे स्वयं धनी देशो को असतुलित आर्थिक गतिविधियों और सम्पत्ति के असमान प्रवाह से उत्पन्न समस्याओं से बचने में मदद मिलेगी।

आज मानव जाति के सामने सबसे बड़ा मुद्दा विज्ञान और टेक्नोलॉजी के विकास तथा लोगों की भलाई व खुशहाली के लिए इनके उपयोग का है। सिर्फ धन-दौलत से खुशहाली नहीं लाई जा सकती। मुझे पंडित जवाहरलाल नेहरू के 1964 के उस प्रस्ताव का स्मरण हो रहा है जो मेरे ख्याल से आज भी उतना ही प्रासंगिक है। उन्होंने इसमे कहा था-"सिर्फ भौतिक समृद्धि से मानव जीवन समृद्ध और सार्थक नहीं होगा। इसलिए आर्थिक विकास के साथ-साथ हमें नैतिक और आध्यात्मिक मूल्यों का भी विकास करना होगा। इसी से मानवीय संसाधनो और चरित्र का पूर्ण विकास होगा। इसी के आधार पर सब कुछ खुद हड़पने की कोशिश करने वाली आज की व्यवस्था को धीरे-धीरे एक ऐसे समाज में बदला जा सकेगा जिसमें व्यक्ति और समुदाय के पूर्ण विकास के लिए पर्याप्त प्रोत्साहन उपलब्ध होगे। यह एक ऐसे समाज का चित्र है जिसमे गरीबी, बीमारी और अज्ञानता नहीं होगी।

जिसमे हर नागरिक को समान अवसर प्राप्त होंगे और जिसमे नैतिक तथा आध्यात्मिक मूल्य व्यक्तिगत तथा सामाजिक जीवन को समृद्ध बनाने में सहायक होगे।

इसीलिए मैं इस मेले को एक ऐसा अवसर मानता हूं जिससे विश्व आर्थिक

प्रणाली में गुणात्मक सुधार की जबरदस्त संभावना है। ये गुणात्मक सुधार उत्पादन, उत्पादकता, ऊर्जा की किफायत और पर्यावरण को नुकसान न पहुंचाने वाली औद्योगिक गतिविधियों के रूप में तो होंगे ही, मानवजाति की खुशहाली बढ़ाने में सक्षम बेहतर तथा व्यवस्थित अन्तर्राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था के निर्माण के लिए भी होंगे।

भारत के शाश्वत अतीत में, शायद 50 शताब्दी पहले एक महान ऋषि ने इस धरती पर मानव जाति की एकता के बारे में चिंतन-मनन किया था। उन्होने मनुष्य के भौतिक, बौद्धिक तथा आध्यात्मिक उत्थान के मूल्यों और आदर्शो को भी निर्धारित किया था। मैं उन्हीं अथर्वन ऋषि के 'पृथ्वी सूक्त' के दो श्लोक यहा उद्धृत करुंगा :

नगरों और ग्रामो वाली यह पृथ्वी जो

तरह-तरह की वस्तुओं का उत्पादन करती है

इसमें चारों दिशाओ में सुख और समृद्धि हो।

एक अन्य श्लोक मे पृथ्वी के पर्यावरण के सरक्षण की बात कही गई है

हे पवित्र पृथ्वी!

तुम्हारे ससाधनो का उपयोग हम ठीक तरह से करें

ऐसा करते समय तुझे कोई हानि न हो, और तुम्हारे महत्वपूर्ण तत्वो मे भी विकार उत्पन्न न हो।

यह भावना कई हजार साल पुरानी हो सकती है, मगर यह भारत की जातीय चेतना का अक्षुण्ण तत्व रही है। इसी चेतना के कारण हमारे महान नेताओ और हमारी सस्कृति में विश्व दृष्टि स्पष्ट रूप से देखी जा सकती है।

विश्व कल्याण की यही भावना पंडित जवाहरलाल नेहरू के मन में भी सर्वोपरि थी। स्वतंत्र भारत के जन्म की घड़ी मे पंडित नेहरू ने कहा था :

"शांति एक ऐसी चीज है जो अविभाज्य मानी जाती है। इसी तरह स्वतंत्रता भी है। समृद्धि और विपत्ति भी अविभाज्य हैं क्योंकि आज की दुनिया को अलग-अलग टुकड़ों में नहीं बांटा जा सकता।"

मित्रो, मेरा विचार है कि आज विश्व जनमत का रुझान एक ऐसे दृष्टिकोण की तरफ हो रहा है जो न केवल आदर्श नीति की व्यावहारिक आवश्यकताओं

के अनुरूप है बल्कि मानवीय प्रयासों के चरम लक्ष्य को भी इसमें समाहित किया गया है। हमें अपने नीति-निर्माताओं और आर्थिक गतिविधियों के स्वरूप तथा दिशा का निर्धारण करने वालों के दृष्टिकोण को और व्यापक बनाने तथा इसे सुदृढ़ करने के प्रयास करने चाहिए ताकि वे अपने कार्य को इसी परिप्रेक्ष्य में देख सकें।

बेहतर कृषि के लिए सहकारिता

भारत मे सामाजिक–आर्थिक परिवर्तन लाने, विशेप रूप से देश के विस्तृत ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले जन सामान्य के जीवन में बदलाव लाने के लिए हम जो प्रयास कर रहे हैं, उन्हें सफल वनाने में सहकारी क्षेत्र का विशेप महत्व है।

सहकारिता आंदोलन से स्थानीय मानवीय संसाधनों, सामग्री और शक्ति को एक स्थान पर जुटाने में मदद मिल सकती है। भारत के कोने–कोने में फैले हमारे कस्बों और गावों में प्रगति की जो जर्बदस्त सम्भावना है उसे एक निश्चित दिशा देकर उसके विकास और विस्तार में भी सहकारिता आदोलन सहायक हो सकता है।

हमारे महान राष्ट्रीय नेताओं ने आजादी से पहले ही सहकारिता के जरिए काम करने की क्षमता का अनुमान लगा लिया था। कई वर्पो तक सावधानी से सोच–विचार और बातचीत के वाद उस परिप्रेक्ष्य की पहचान की गई जिसे सहकारिता के जरिए प्राप्त किया जा सकता है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने कहा था–"सहकारिता आंदोलन भारत के लिए वरदान साबित होगा।" उन्होंने तभी संकेत दे दिया था कि "कुछ समय वाद सहकारी संस्थाओं का अपना ऐसा अलग स्वरूप और अलग सरचना होगी जिसके बारे मे अभी से अटकले लगाने की जरूरत नहीं है।"

देश के विभिन्न भागों में बनाए गए चरखा केन्द्रों का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा था कि ये केन्द्र "दुनिया की सवसे बड़ी सहकारी समिति" के अंग हैं।

सहकारिता की रचनात्मक क्षमताओं के वारे में यह अंतर्दृष्टि लोकतांत्रिक विकेन्द्रीकरण, पंचायतीराज के महत्व तथा देश के लिए इसकी अनिवार्यता के वारे में उनकी गहरी समझ से पेदा हुई थी। ऐसी बातें हैं जो भारत की अपनी प्रतिभा और समय की कसौटी पर खरी उतरी ग्रामीण–परम्पराओं से स्वाभाविक रूप से मेल खाती हैं। ये ग्रामीण तथा अन्य इलाकों में स्थित भारतीय उद्यमों की विशेपताओं के समान हैं।

वारहवे सहकारिता सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर, नई दिल्ली, 18 मार्च, 1993

इसीलिए भारतीय संविधान के चौथे खंड मे राज्य के नीति निर्देशक तत्वो से सबंधित प्रावधानो के अन्तर्गत आर्थिक विकास को ''सहकारिता के आधार पर बढावा देने की बात कही गई है। हमारे राष्ट्र निर्माताओं ने राज्य की ओर से ऐसी पहल करने की बात कही है जिससे कृषि, उद्योग और इससे भी आगे के चरण मे सहकारिता आदोलन की पूर्ण क्षमता का विकास हो सके। प जवाहर लाल नेहरू ने आधुनिक भारत के निर्माण के लिए औद्योगिक आधार के विकास को निर्णायक तरीके से बढ़ावा दिया। वे राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था और राजनीतिक व्यवस्था में सहकारिता क्षेत्र के महत्व को ध्यान मे रखते हुए पचायती राज के साथ-साथ सहकारिता आदोलन को भी समान रूप से बढ़ावा देना चाहते थे। जवाहर लाल नेहरू ने कहा था ''जहा पचायत ग्राम्य जीवन के प्रशासनिक पहलू का प्रतिनिधित्व करेगी वहीं सहकारिता उसके आर्थिक पक्ष को प्रस्तुत करेगी। अगर सहकारिताए ठीक तरह से कार्य करें तो इससे उद्योगो और उनसे सम्बन्धित सहायक गतिविधियो को शुरू करने मे मदद मिलेगी। सहकारिता न सिर्फ बेहत्तर खेती मे सहायक और अनिवार्य हैं, बल्कि वे लोगो के काम-धधे और उनके अस्तित्व के बेहतर स्तर को भी प्रतिबिबित करती है।''

हम आज भारत में सहकारी क्षेत्र की प्रगति और उसकी भावी सभावनाओं पर सही मायने में गर्व कर सकते है। जैसा कि पहले ही मैंने बताया था हमारा सहकारी क्षेत्र दुनिया में सबसे बड़ा है। इसके अन्तर्गत साढे तीन लाख सहकारिताए है जिससे एक करोड 60 लाख लोग जुडे हुए है। ये सहकारिताए कृषि, कृषि पर आधारित उद्योग और इससे भी अगले चरण की गतिविधियो में सलग्न है।

सहकारिता मे लोगो की स्वैच्छिक लोकतात्रिक भागीदारी और राज्य के सक्रिय सहयोग की वजह से ही इस आदोलन ने यह प्रतिष्ठित स्थान प्राप्त किया है। राज्य का सहयोग नीतियो के निर्धारण और प्रबधकीय तथा वित्तीय सहायता के रूप मे प्राप्त हो रहा है। हमारी विकासशील आर्थिक व्यवस्था मे विविध अवसरो और अब तक के प्रयासो को देखते हुए यह जरूरी हो जाता है कि हम अपनी सहकारी सस्थाओ में आत्मनिर्भरता, सक्षमता तथा स्वायत्तता लाने और उनमे तालमेल कायम करने की प्रक्रिया को बढावा देने के लिए प्रयास तेज करे।

हम लोकतान्त्रिक विकेन्द्रीकरण का दायरा बढाने तथा इसे और सुदृढ करने को वचनबद्ध हैं। सहकारिता आदोलन के विकास के लिए भी हमारी वचनबद्धता कम नही है। गरीबी दूर करने और सबके साझा प्रयासो से खुशहाली और खुशियो

की राह पर तेजी से आगे बढने की हमने जो नीति अपनाई है ये उसके अनिवार्य पहलू है। सभी आर्थिक गतिविधियों, खासतौर से वाणिज्य और उद्योग के क्षेत्र में निजी उद्यमों पर लगी बदिशें कम से कम करने के लिए हाल मे नीतियो में जो परिवर्तन किए गए हैं उनसे चुनौतियों के साथ-साथ नए अवसर भी उत्पन्न हुए है। सहकारी क्षेत्र को लागत की दृष्टि से अधिक किफायती बनाने के साथ ही ऐसे प्रयास भी करने होंगे जिनसे इस क्षेत्र में विज्ञान तथा टेक्नोलॉजी का उपयोग बढे। सहकारी क्षेत्र को उत्पादन तथा प्रक्रिया की दृष्टि से और भी सुसंगठित बनाना जरूरी है ताकि वह न सिर्फ देश मे बल्कि विदेशी बाजारो की प्रतिस्पर्धा मे भी टिका रह सके। ऐसी स्पर्धा से सभी क्षेत्रों में कार्यकुशलता बढ़ेगी और लोग अधिक लगन से अपना काम करेगे। इससे सहकारिता का लक्ष्य पूरा हो जाएगा क्योंकि सहकारिता का रास्ता अपनाने का मूल उद्देश्य ही यही है कि कार्यकुशलता बढे। अगर सहकारिता आदोलन से जुड़े सभी लोग इसी भावना से प्रेरित होकर कार्य करे तो लक्ष्यों को निश्चित रूप से प्राप्त कर लिया जाएगा।

मै यह भी बताना चाहता हू कि भारत की अर्थव्यवस्था इस समय ऐसे चरण मे पहुच गई है जहा सहकारिता आदोलन के सामने विकास तथा उपलब्धिया प्राप्त करने की बड़ी सभावनाए हैं। हमारे ग्रामीण इलाको में कृपि पर आधारित औद्योगिक क्राति की जबरदस्त सभावना है। अगर कृपि पर आधारित उद्योगो की स्थापना भलीभाति सोच-विचार के बाद व्यवस्थित रूप से और बडे पैमाने पर की जाए तो हमारे कृपि मजदूर, काश्तकार, किसान और समूचा कृपक समुदाय मूल्य-सवर्द्धित उत्पादन से अधिक लाभ प्राप्त कर सकता है। इस क्षेत्र की पूरी क्षमता के उपयोग के लिए आवश्यक है कि हम राष्ट्रीय और अन्तर्राष्ट्रीय बाजारो की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए स्थानीय ससाधनों का सावधानी से इस्तेमाल करे और आधारभूत ढाचे की विभिन्न प्रणालियो का विकास करें। कृपि-उद्योगों के क्षेत्र मे क्राति लाने का कार्य एक ऐसा काम है जिसमे सहकारिता आदोलन के माध्यम से काफी कुछ हासिल किया जा सकता है।

ऐसा करके सहकारिता आदोलन लोगो के आर्थिक कल्याण में गुणात्मक और सख्यात्मक बदलाव की प्रक्रिया को तो तेज करेगा ही, साथ ही यह देश मे एकीकरण लाने वाली शक्ति भी सिद्ध होगा। यह आदोलन लोगो और समाज दोनो के सहयोग से सामाजिक सद्भाव, एकता और प्रगति के नए मानदंड कायम करेगा। लेकिन इसके लिए सभी को पूरी निष्ठा से कार्य करना होगा और एक-

दूसरे के प्रयासों को समान महत्व देना होगा। ''बापू के आशीर्वाद'' में 10 जून, 1945 को महात्मा गांधी ने कहा था-''पानी की बूदों से समुद्र वनता है क्योंकि बूंदें आपस में मिलकर पूरी तरह एक हो जाती हैं और एक-दूसरे से अलग नहीं होती। आदमियों पर भी यही बात लागू होती है।''

हमारे प्राचीन ज्ञान को व्यावहारिक, आधुनिक और आज के संदर्भ में अभिव्यक्त करने की बापू में अद्भुत क्षमता थी।

आज इस सम्मेलन के अवसर पर इसमें शामिल सभी प्रतिनिधियों को चाहिए कि वे कार्यसूची के विभिन्न मुद्दों पर विचार करें। सहकारिता आंदोलन और सक्षम, आत्मनिर्भर एव लोकतात्रिक संस्था के रूप में इसके विकास से सबधित सभी पक्षो पर गहराई से विचार करना बहुत जरूरी है।

हस्तशिल्प भारतीय संस्कृति की विशेषता

आप सब सिद्ध हस्त शिल्पी हैं और आपने हमारी सभ्यता की रचनात्मक प्रतिभा को बड़े यत्नपूर्वक जिलाये रखा है। इसलिए आप आदर और सम्मान के पात्र हैं। समय और परिवर्तन के दबावों के बावजूद आप लोगों ने हमारी उन प्राचीन कलाओं और शिल्पों की शुद्धता बनाए रखी है जो हमारी साक्षी विरासत का ही एक अग है।

यह उम्मीद की जा सकती है कि पुरस्कार प्राप्त करने वाले ये 41 लोग भारत के समूचे हस्तकौशल का प्रतिनिधित्व करते हैं जिसके किस्से दुनिया भर में मशहूर रहे हैं। इन शिल्पियों को पुरस्कृत करके हम न सिर्फ व्यक्ति के रूप में उन्हें सम्मानित कर रहे हैं, बल्कि उस महान परम्परा के प्रति अपना आदर प्रदर्शित कर रहे हैं। दुनिया के बहुत कम देश हस्तशिल्प की सुन्दर वस्तुओं के निर्माण मे भारत की विशेपता की बराबरी का दावा कर सकते है। हस्तशिल्पों में विविधता में एकता की जो झलक दिखाई पड़ती है वह भारत की एक अनोखी विशेपता है। देश के प्रत्येक क्षेत्र, प्रत्येक जिले और शायद प्रत्येक गांव ने हस्तशिल्प की अपनी परम्परा को जीवित रखा है। चाहे शहरी हों, ग्रामीण हों, या जनजातीय लोग हों, हमारे समाज के सभी वर्ग अपनी अलग संस्कृति की विशिष्टताओं को अपने हाथों से अभिव्यक्त करते हैं। क्षेत्रीय विविधता के साथ-साथ भारत में हस्तशिल्प वस्तुओं की एक अन्य विशेपता यह है कि इस तरह की उत्कृष्ट वस्तुओं को बनाने में पत्थर, धातुओं, लकड़ी, हाथी दात, मिट्टी से लेकर घास तक मन व कल्पना में आने वाले सभी माध्यमो का उपयोग किया गया है। माध्यम का चुनाव अपने आसपास की वस्तुओं से ही करने की हमारी जो परम्परा रही है, वह भारतीय हस्तशिल्प की अनोखी विशेपता है। माध्यम की इस सादगी से अपने चारों ओर के वातावरण से मनुष्य के तादात्मय का पता चलता है। इन्हीं सब कारणों से भारत में हथकरघा और हस्तशिल्प की परम्पराओं ने गहरी जड़ें जमा ली हैं।

हमारी हस्तशिल्प वस्तुओ और हथकरघा वस्त्रों को उनके आंतरिक मूल्य

सिद्ध हस्त बुनकरो और शिल्पियो को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 5 मार्च, 1994

और सुन्दरता के लिए बड़ा सराहा जाता है। ये हमारे देशवासियों की रचनात्मक क्षमता और अंतरतम से उठी प्रेरणा का साकार रूप हैं। राष्ट्रपिता बापू ने राष्ट्रीय आंदोलन को नई दिशा और नई गति देने के लिए प्रतीक के रूप में हाथ से बनी खादी का जो चुनाव किया, वह कोई सयोगवश नहीं किया गया है। उन्होने ऐसा सोच-समझकर किया क्योंकि वे जानते थे कि खादी हमारे राष्ट्रीय चरित्र को अभिव्यक्त करती है। उन्हीं के शब्दों में : "खादी स्वराज की तरह हमारे राष्ट्रीय जीवन की प्राण है।" गांधी जी ने हमें इस बात का विश्वास दिलाया है कि खादी भारत की आत्मा है और इसको त्यागना देश के करोड़ों आम लोगों के साथ विश्वासघात के समान सिद्ध होगा। उन्होने इस बात को इस तरह से कहा कि यह सभी प्रकार की हथकरघा और हस्तशिल्प वस्तुओ पर लागू होती है। "मशीन में बनी वस्तुओं की तरह की निर्जीव एकरूपता का न होना किसी वस्तु की कुरूपता नहीं है बल्कि यह जीवन का लक्षण है। वे यह भी कहते थे : "दरअसल किसी पेड़ की तरह-तरह की पत्तियां ही उसे जीवंत सुन्दरता प्रदान करतीं हैं।"

दुर्भाग्य से आधुनिकता की ओर हमारे बढ़ते कदमों से हस्तशिल्प और हथकरघा की हमारी बहुमूल्य परम्परा के संरक्षण के कार्य पर बुरा असर पड़ा है। अपने हस्तशिल्प के महत्व और मूल्य को समझने के लिए हमें अन्य देशों से सबक लेना होगा। अपनी परम्पराओं और शिल्प को खो चुके ये देश आज इन्हें फिर से प्राप्त करने के प्रयास कर रहे है। अगर प्रगति के नाम पर कश्मीरी कालीन कला, उड़ीसा की जरदोजी, तिरुलेलवेली की चटाइया और कच्छ की शीशे के टुकड़ो से कपड़ों को सजाने जैसी भारत की अनेक कलाएं समाप्त होकर इतिहास का हिस्सा बन जाती है तो यह देश के लिए बहुत बड़ा नुकसान होगा। कमला देवी चट्टोपाध्याय ने देश के दस्तकारो के कल्याण के लिए बहुत काम किया। उनका यह विचार बिल्कुल सही है कि "विकास संबंधी प्रयासो से जिन लोगों के जीवन में बदलाव लाया जाना था, दरअसल वे ही आज परम्परागत संस्कृति को बनाए और जिलाए हुए है। हम तो उन्हें आधुनिक बनाने के अपने प्रयास मे बची-खुची दस्तकारी को समाप्त करते जा रहे हैं। लेकिन कमला देवी जी और उनकी प्रेरणा से सक्रिय हुए लोगों के प्रयासों से समाप्त होते जा रहे इन अवशेपों को नया जीवन मिला है। इसलिए यह उचित ही होगा कि हम इस अवसर पर इस महान व्यक्तित्व का स्मरण करें और जिस लक्ष्य के प्रति वे इतनी समर्पित थीं उसे प्राप्त करने में अपना सहयोग दें।

हमारे देश के विकास और प्रगति की प्रक्रिया ऐसी होनी चाहिए जिससे सभी ओर की और सभी समुदायों की संस्कृति के सर्वोत्कृष्ट-तत्वों का इसमें समावेश हो सके। हमेशा की तरह आज भी हमें सकारात्मक विचारों को मुक्त भाव से ग्रहण करना चाहिए। चाहे ऐसे विचार कहीं से भी प्राप्त हों। ऋग्वेद में कहा गया है:

"हम सभी ओर से आने वाले महान और अच्छे विचारों को ग्रहण करें।"

अन्य संस्कृतियों और समाजों के साथ सम्पर्क के समय अगर हम सूझबूझ और विवेकपूर्ण तरीके से उनकी अच्छी बातों को ग्रहण करें तो इससे हमें काफी फायदा हो सकता है। हमें अपने समाज की अच्छाइयों को तो जानना ही चाहिए, इसकी कमियों को भी भलीभांति समझना चाहिए। प्रगति का सही अर्थ यही है कि हम बेहतर को पाने का प्रयास करते समय अपनी अच्छी बातों को भी बनाए रखें। हथकरघा और हस्तशिल्प के संदर्भ में यहां तक कह सकता हूं कि ये हमारी जड़ों, हमारी पहचान और यहां तक की हमारी भावना और अंतरात्मा का प्रतिनिधित्व करते हैं। इस बारे में और अधिक जोर देने की मैं आवश्यकता नहीं समझता। हम सबके लिए यह बड़े संतोष की बात है कि यह भावना आज भी जीवित है।

हमारे जीवन में रंग भरने वाले लाखों हस्तशिल्पियों और बुनकरों के हम बड़े आभारी हैं। हम पर उनका बहुत बड़ा नैतिक और भौतिक ऋण है। उनके सम्मान की रक्षा तभी सुनिश्चित की जा सकती है जब हम उन्हें शोषण से मुक्ति का आश्वासन दें। वे निश्चय ही सम्मान के पात्र हैं लेकिन सम्मान के साथ-साथ उनके कल्याण और विकास के ठोस उपाय करने भी जरूरी हैं। इसलिए यह देखना हम सबकी जिम्मेदारी है कि भौतिक आवश्यकताओं के शिकंजे में हमारे दस्तकारों की उभरती प्रतिभा दम न तोड़ दे। इस संदर्भ में केन्द्र और राज्य सरकारों की एजेंसियों, वित्तीय संस्थाओं, सहकारिताओं और स्वयंसेवी संगठनों को भूमिका निभानी है। उन्हें यह कार्य व्यक्तिगत रूप से और एक दूसरे के साथ तालमेल बनाकर दोनों ही तरह से करना है। उन्हें गुणवत्ता का स्तर बनाये रखते हुए उत्पादकता में सुधार के प्रयास जारी रखना चाहिए। इसके लिए ऐसी व्यवस्था करनी होगी जिसमें दस्तकारों को बेहतर यंत्र और उपकरण आसानी से उपलब्ध हों। घरेलू तथा विदेशी, दोनों ही बाजारों में हस्तशिल्प वस्तुओं की बिक्री की व्यवस्था में भी सुधार जरूरी है।

हमारे देश के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों की संस्कृति की मूल विशेपता उनके हथकरघा वस्त्र और हस्तशिल्प वस्तुएं ही हैं। एक क्षेत्र की वस्तुएं दूसरे क्षेत्र में बड़ी सराही जाने लगी हैं। इस तरह जब दस्तकारी और उनकी परम्पराओ का मिलन होता है तो इससे एकीकरण प्रक्रिया की ताकत का पता चलता है। अन्य संस्कृतियों की विशेपताओं के प्रति सम्मान और आदर भारत की सामासिक सांस्कृतिक परम्परा के मूल में है।

भारत की महानता-हम सबका गौरव

यह प्रबंधन विद्यालय भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, खड़गपुर के ही एक पूर्व छात्र श्री विनोद गुप्ता से दान में मिली 20 लाख डालर की राशि से स्थापित किया जा रहा है। संस्थान द्वारा विनोद गुप्ता के मन में पैदा की गई वफादारी और राष्ट्र की प्रगति में हाथ बढ़ाने की उनकी इच्छा का यह एक प्रमाण है।

शैक्षिक संस्था और उसके पूर्व छात्रों के बीच बड़ा खास रिश्ता होता है। जिस स्रोत से ज्ञान प्राप्त किया हो उसे कोई भुला नहीं सकता। ऐसे में किसी भी संस्थान को उसके पूर्व छात्रो के अनुभव और ज्ञान के आदान-प्रदान का स्थान बनना चाहिए। इससे वर्तमान छात्रो और भूतपूर्व छात्रो दोनो को फायदा होगा। मुझे पक्का यकीन है कि इस तरह की स्थायी परम्परा बनेगी। धर्मादा न्यास छात्रों और उनकी शैक्षिक सस्थाओं के बीच जीवंत सम्पर्क का दूसरा पहलू है। मुझे आशा है कि श्री गुप्ता ने उदारतापूर्वक जो दान दिया है, भारत में और देश से बाहर रहने वाले विद्यार्थी, दोनों ही इसका अनुकरण करेगे। इस तरह की उदारता भारत की महानतम परम्परा के अनुरूप है। ऋग्वेद में कहा गया है :

"उदार लोग अमरत्व प्राप्त करते हैं। वे दीर्घायु प्राप्त करते हैं।"

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान ज्ञान प्राप्त करने और अनुसधान की अग्रणी संस्थाएं है। इनमें अध्ययन के लिए अपनायी जाने वाली अन्तर्विपयक पद्धति ने नि:संदेह उत्कृष्ट इजीनियर और प्रौद्योगिकीविद् उत्पन्न किए हैं। इससे भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान के स्नातक अपने व्यवसाय से मिलते-जुलते पेशे में भी अपनी उत्कृष्टता सिद्ध करने मे सफल हुए हैं। प्रबंधन एक ऐसा क्षेत्र है जिसमें इस संस्थान के विद्यार्थियों ने अपनी श्रेष्ठता विशेप रूप से सिद्ध की है। इसका कारण यह है कि प्रबंधन की अवधारणाएं तकनीकी शिक्षा के क्षेत्र में स्वाभाविक रूप से लागू होती हैं। यही नहीं, इंजीनियरी और व्यवसाय की पारम्परिक निर्भरता लगातार बढ़ती जा रही है। इसलिए संस्थान के परिसर में उसके अपने प्रवधन विद्यालय

भारतीय प्रौद्योगिकी सस्थान, खडगपुर के शिलान्यास ममारोह के अवसर पर, खडगपुर, 16 जुलाई, 1994

का खुलना बहुत ही उपयुक्त है। मुझे पूरा भरोसा है कि संस्थान से भौतिक तथा बौद्धिक निकटता से प्रबंधन विद्यालय की अपनी विशिष्ट पहचान बनेगी।

पिछले कुछ वर्षो में हमारी राष्ट्रीय कार्यसूची मे भारी बदलाव आए हैं। अपने आर्थिक और प्रौद्योगिक आधार को सुदृढ़ करने के बाद हमने सुधार और उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू की है। इससे हमारी जनता को भारत और भारत से बाहर की टेक्नोलॉजी का पूरा फायदा मिलेगा। अधिक खुली अर्थव्यवस्था, व्यापक अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार और प्रतिस्पर्धा मे सफलता के लिए जरूरी है कि हम अपनी प्रबंध-क्षमता मे सुधार करे। इससे अर्थव्यवस्था मे निजी क्षेत्र को और महत्त्वपूर्ण भूमिका सौंपने के लक्ष्य को भी बढ़ावा मिलता है। प्रबधन विद्यालय हमारी विकास प्रक्रिया के महत्वपूर्ण चरण में एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है।

एक समय था जब सिर्फ देश में रहने वालों को राष्ट्र निर्माण की प्रक्रिया में भागीदार माना जाता था। लेकिन बदले हुए माहौल मे हमें अपने सोच के दायरे को बढ़ाना होगा। हमें यह बात स्वीकार करनी ही होगी कि विदेशों मे रहने वाले अपने ही देश के अनेक लोग भी सामाजिक विकास में योगदान के लिए कम उत्सुक नहीं हें। अन्य राष्ट्रो के साथ सम्पर्क बढ़ाने में ये महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकते है। हमारे ही देश के बहुत से लोगों ने विदेशों मे अपने विशिष्ट क्षेत्रो में धाक जमा ली है। उन्हे अपने इस ज्ञान और अनुभव का फायदा देश के भविष्य को संवारने में लगाने को प्रेरित किया जाना चाहिए क्योंकि इसके प्रति उनके मन में प्रेम है और इसमे उनका हित भी है।

उदारीकरण से आर्थिक सुधार

यह अवसर इसलिए विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि यह वर्ष हमारे महत्वपूर्ण निर्यातकों को सम्मान देने के लिए बनाई गई योजना का रजत जयंती वर्ष है। मैं पुरस्कार पाने वाले सभी लोगों को अपनी बधाई देता हूं।

ये पुरस्कार हमारे निर्यात की विविधता को व्यक्त करते हैं। इसके अन्तर्गत उन लोगों को पुरस्कृत किया जाता है, जिन्होंने निर्यात बढ़ाया हो, नई वस्तुएं बनाई हो, नए बाजार तैयार किए हों, सेवा के क्षेत्र मे निर्यात किया हो, विदेशों में कोई परियोजना पूरी की हो, अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की गुणवत्ता प्राप्त की हो तथा भारतीय वस्तुओं को विदेशों में स्थान दिलाया हो। इसके अन्तर्गत लघु एवं घरेलू उद्योगों द्वारा तैयार की गई वस्तुओं को शामिल किया जाता है। ये सभी मापदंड उस उच्च स्तर को व्यक्त करते हैं, जिसके लिए सभी भारतीय निर्यातक इच्छुक रहते हैं। और यदि उन्हें यह दिखाना है कि हमारी अर्थव्यवस्था मजबूत हो गई है, तो इन मापदंडे से जुड़े रहना चाहिए।

आज जिन लोगों को पुरस्कार दिए गए हैं, वे सभी निर्यात के हमारे व्यापक रूप को व्यक्त करते हैं। इसके अन्तर्गत हीरों की कटाई और पालिश, जवाहरात, चमड़े के परिधान, सूती वस्त्र, सिले-सिलाए कपड़े, साइकिल, ग्रेनाइट, इलैक्ट्रानिक्स के सामान, रसायन, मोटर-गाड़ियां, कृषि-उत्पाद, कम्प्यूटर साफ्टवेयर, स्टील के पाइप, ट्यूब्स एवं वायर,समुद्री उत्पाद तथा तैयार खाद्य पदार्थ शामिल हैं। और इनका बाजार भी उत्तरी अमरीका व यूरोप से लेकर पश्चिम एशिया, अफ्रीका और पूर्वी एशिया तक काफी फैला हुआ है। यह संतोषजनक बात है कि हमारा निर्यात विभिन्न रूपों में बढ़ रहा है। इससे हमारे प्रयासों को प्रोत्साहन मिलेगा, ताकि विदेशी व्यापार में हम अपना समुचित हिस्सा पा सकें।

अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार भारत के लिए नया नहीं है। दूसरे देशों के साथ हमारे संबंध इतिहास के आरम्भ काल से ही थे। उस समय गुजरात, मालाबार, कोंकण, तमिलनाडु और बंगाल जैसे समुद्री तट के बंदरगाहों पर विदेशों के जहाजों की

राष्ट्रीय निर्यात पुरस्कार (1991-92) प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 17 अक्तूबर, 1994

आवाजाही होती रहती थी। विदेशी व्यापार संबंधी प्रमाण तमिल के 'शीलपद्दीकारम' जैसे हमारे शास्त्रीय साहित्य में भी मिलता है। यहां तक कि अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार का प्रभाव पाटलीपुत्र, विजयनगर, आगरा और मथुरा जैसे हमारे नगरों पर भी दिखाई पड़ता है। अन्य समाज के लोगो के साथ संबंध स्थापित करने में व्यापार की महत्वपूर्ण भागीदारी रही है। इससे हमारा ज्ञान बढ़ा और संस्कृति समृद्ध हुई। भारत यहूदियों और आर्मेनियाई मूल के विदेशी व्यापारियों का निवास स्थान रहा है। हमारा देश यूनान, चीन और अरब के खोजी-यात्रियों का पड़ाव रहा है। हमारे अपने व्यापारी और यात्री भी अन्य देशों की संस्कृतियों और बाजारों की खोज में बाहर गए तथा इंडोनेशिया और पर्शिया जैसे देशों से परिचित हुए। ये ऐतिहासिक तथ्य विदेशी व्यापार की हमारी लम्बी परम्परा के प्रमाण हैं, जिसे हम आज फिर से जीवित करना चाहते हैं। विश्व-व्यापार के क्षेत्र में पूरे उत्साह के साथ प्रवेश करते हुए हम कोई नया रास्ता नहीं बना रहे हैं, बल्कि हम अपने इतिहास के ही उन सूत्रों को पकड़ रहे हैं, जो हमारे ही विरोध में खड़े हो गए थे।

अब हम उस स्थिति मे आ गए हैं कि हम अपने विदेशी व्यापार, सेवा और तकनीकी के हस्तांतरण से लाभ प्राप्त कर सकते हैं। यह हमारे स्वतंत्रता संघर्ष के नेताओं; विशेपकर पंडित जी की दूरदृष्टि का परिणाम है कि हम में आजादी के साथ ही यह आत्मविश्वास आया कि शोपण पर आधारित उपनिवेशवादी संबंधों के युग को समाप्त किया जाना चाहिए। भारत को अब ज्यादा समय तक कच्चे माल या कि करार के आधार पर काम करने वाले मजदूरों के स्रोत के रूप में नहीं रखा जा सकता। असमानता की इस स्थिति को समाप्त करने के लिए हमने बड़े उद्योगों पर जोर दिया, और एक आधुनिक ढाचा तैयार किया। इसके नतीजे में लघु और मध्यम श्रेणी के उद्योग काफी सख्या में लगे, जिससे हमारी अर्थव्यवस्था मजबूत हुई। राष्ट्रीय वैज्ञानिक और तकनीकी आधार तैयार किया गया। तकनीकी और प्रबंधन संबंधी संस्थाएं स्थापित की गई। सावधानी के साथ तैयार की गई योजनाओं द्वारा हमने अपने सीमित संसाधनों से अधिकतम लाभ प्राप्त किया। कृपि के क्षेत्र में भी तकनीक के इस्तेमाल तथा दूरदर्शी सामाजिक-आर्थिक नीतियों के द्वारा हम न केवल आजादी के समय से ढाई गुनी अधिक अपनी आबादी को भोजन उपलब्ध करा सके, बल्कि अब कृपि उत्पादों के निर्यात के बारे में भी सोच रहे हैं। हमारे वर्तमान आर्थिक सुधार अपने अतीत की ही स्वीकृति हैं, उसकी अस्वीकृति नहीं। हम अब अपनी उसी आर्थिक नींव पर मजबूती से खड़ा होना चाहते हैं, ताकि हम अपनी आर्थिक और राजनीतिक प्रणाली के

स्थायित्व से प्राप्त पूरे विश्वास के साथ अपने समय की चुनौतियों का सामना कर सके।

आज की अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक स्थिति हमारी व्यापक भागीदारी के लिए अनेक उल्लेखनीय संभावनाएं प्रस्तुत कर रहा है। इसके साथ ही इसने अनेक चुनौतियां भी दी हैं। इस वर्ष अप्रैल में 123 देशों ने गैट समझौते पर जो हस्ताक्षर किए हैं, उसने विदेशी व्यापार के स्वरूप को पूरी तरह बदल दिया है। अब अप्रतिबंधित व्यापार पर जोर दिया जा रहा है, जिसका फायदा भारत जैसा देश उठा सकता है। क्षेत्रीय व्यापार संगठनो का उभरना भी एक ध्यान देने लायक वात है। इससे निश्चित रूप से इन क्षेत्रों के बीच आपस में व्यापार बढ़ेगा, लेकिन वाहर के व्यापार को प्रतिबंधित नहीं किया जाना चाहिए। कृषि उत्पादों पर अनुदानों मे कमी तथा निर्यात की मात्रा पर लगाए गए प्रतिबंधों में दी जाने वाली क्रमश· ढील निर्यात के लिए आशाजनक कदम है। आपसी लाभ की दृष्टि से विश्व-व्यापार सवंधी विचारों में जो बदलाव आ रहे हैं, वे उत्साहपूर्ण हैं।

हमें यह बात स्वीकार करनी चाहिए कि लाभ अपने आप नहीं मिलता। हमारे निर्माताओं और व्यापारियों को कड़ी मेहनत करके अपनी पहचान बनानी होगी। आर्थिक कार्यकलापों के सामाजिक पक्ष पर अधिक जोर देकर हमारे लाभों को रोकने की कोशिश की जाएगी। हमें यह निश्चित करना होगा कि पेटेंट के सिद्धांत से हमें अनावश्यक नुकसान न हो। हमें उंचे स्तर की गुणवत्ता, प्रतियोगात्मक मूल्य, सही समय पर वस्तुएं उपलब्ध कराना, विक्रय के वाद दी जाने वाली सेवा, विक्रय संवर्धन तथा बाजार संबंधी चुनौतियों को पूरा करना होगा। यदि भारत को अन्तर्राष्ट्रीय व्यापार में अपना नाम स्थापित करना है, तो हमें यह देखना होगा कि यहां से जो भी निर्यात हो, वह तैयार माल हो, तथा बहुत अच्छा हो।

आज, विशेपकर एशिया की विकासशील अर्थव्यवस्था पुनर्जीवित होने लगी है। 1990-93 के बीच में विकासशील देशों ने अपने निर्यात में 37 प्रतिशत वृद्धि की है, जो कि पूरे विश्व निर्यात में हुई कुल वृद्धि से अधिक है। इसी समय निर्यात 22 प्रतिशत बढ़ा है। आज वह विश्व अर्थव्यवस्था के विकास की एक प्रमुख शक्ति है। यह कहा जा रहा है कि अगले दशक में दक्षिण एशिया की विकास दर औद्योगिक राष्ट्रों की विकास दर से दुगुनी होगी। हम भारत के लोगों के पास व्यापार का इतिहास है, व्यवसाय की परम्परा है, प्रतिभावान वैज्ञानिक हैं और कुशल श्रम-शक्ति है। इन सब का निर्यात वृद्धि के लिए उपयोग किया

जाना है, ताकि व्यापार बढ सके, जो गरीबी से छुटकारा पाने का एक महत्वपूर्ण तरीका है।

पिछले दो सालो मे हमारी आर्थिक स्थिति तुलनात्मक दृष्टि से अच्छी हो रही है। 1993-94 में हमारा निर्यात डालर की दृष्टि से 20 प्रतिशत बढ़ा है। चालू वित्तीय वर्प के पिछले 5 महीनो मे हमारा निर्यात 10 6 प्रतिशत बढ़ा है, जो कि 9 6 अरब डालर से अधिक है। अगर यही स्थिति रही तो हम इस साल 17 प्रतिशत की वृद्धि को पा लेगे। इससे यह लगता है कि हमारे आर्थिक सुधारो और उदारीकरण के लाभ मिलने शुरू हो गए है। हमारे निर्यातकों को वित्तीय ढाचे और प्रशासनिक सहारे की अभी भी जरूरत है। नियमों को सरल तथा प्रक्रिया को सहज बनाने की जो शुरुआत हुई है, वह जारी रहनी चाहिए। निर्यात के लिए दिए जाने वाले ऋण बढाए जाने चाहिएं। अन्य देशों के साथ हमारे संबंधों में, तथा हमारी राजनयिक नीतियो मे आर्थिक मामलो की झलक मिलनी 'चाहिए।

कोई भी अर्थव्यवस्था शून्य मे विकसित नहीं होती। उसे निरंतर शिक्षा, विज्ञान, तकनीकी, स्वास्थ्य, सचार तथा आधारभूत ढाचे का सहारा मिलते रहना चाहिए। जबकि हम आर्थिक सुधार के रास्ते पर चल रहे है, और हमने प्रतियोगिता के माहौल को बढ़ाया है, ऐसी स्थिति मे इन संबधित क्षेत्रो मे भी पर्याप्त निवेश किया जाना जरूरी है। हमें यह स्वीकार करना चाहिए कि विकास एक सम्पूर्ण और व्यापक प्रक्रिया है। जिस सीमा तक हम अपने सचार साधनों का विकास कर सकेंगे, उसी सीमा तक हम बाहर की दुनिया के लोगों से सबंध कायम कर सकेंगे। जिस सीमा तक हम लोगो को अच्छी शिक्षा दे सकेंगे, उसी सीमा तक हमारे कार्यकर्ता कुशल बन सकेगे। हम जितना अधिक तकनीकी विकास करेगे, हमारे उत्पाद उतने ही अच्छे होगे। यदि आज हमने इनमे से किसी की भी उपेक्षा की, तो उनकी किसी-न-किसी रूप में कीमत चुकानी ही होगी।

भाग 3

शिक्षा, कला और संस्कृति

शिक्षा का महत्व

मैं सबसे पहले निबंध तथा चित्रकारी प्रतियोगिता में पुरस्कृत व्यक्तियो और बच्चों को अपनी बधाई देता हूँ। ऐसे प्रयासों से निश्चित रूप से साक्षरता के प्रति जन-चेतना जागृत करने में मदद मिलती है। अभी जिन पुस्तकों का विमोचन हुआ है, उनके लेखकों को भी मैं बधाई देना चाहूँगा। मुझे लगता है कि ऐसे साहित्य से सम्पूर्ण देश एक-दूसरे के अनुभवों का लाभ उठाकर अपने कार्यक्रमों को और भी अधिक व्यावहारिक तथा उपयोगी बना सकेगा।

हमारी संस्कृति आरंभ से ही शिक्षा के प्रति अत्यंत सजग रही है। हमारे चिंतन का संग्रह वेदों में है। यह 'वेद' शब्द 'विद्' से बना है, जिसका अर्थ होता है — 'ज्ञान'। और इसी ज्ञान के माध्यम से मोक्ष की प्राप्ति होती है। भारतीय संस्कृति से जुड़े 'उपनयन संस्कार' में 'उपनयन' का संबंध ज्ञान की 'आँख' से है। हजारों साल पहले तमिल के महान कवि तिरुवल्लुवर ने शिक्षा को सर्वश्रेष्ठ धन बताते हुए कहा था कि —

शिक्षा धन है मनुज हित, अक्षय और यथेष्ट।
अन्य सभी संपत्तियाँ, होती हैं नहीं श्रेष्ठ॥

एक ऐसा समय भी था, जब अपने चिंतन के कारण हमारा देश विश्व का 'गुरु' माना जाता था। नालंदा, तक्षशिला और विक्रमशिला जैसे शिक्षा के महान केंद्रों का स्मरण करके आज भी हमारा मन गर्व से भर उठता है और हम रोमांचित हो उठते हैं।

शिक्षा की यह प्रधानता निरंतर हमारे यहाँ बनी रही। स्वतंत्रता संघर्ष के दौरान जहां एक ओर हमारे राष्ट्रीय नेताओं ने जन-जागृति के लिए विभिन्न सांस्कृतिक कार्यक्रमों का आश्रय लिया; वहीं शिक्षा के प्रति भी वे सतर्क रहे।

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने इस महत्व को ध्यान में रखते हुए बुनियादी तालीम की विस्तृत रूपरेखा तैयार की थी, जिसे बाद में डॉ0 जाकिर हुसैन जैसे शिक्षाविदों ने आगे बढ़ाया था। गुरुदेव रवींद्रनाथ टैगोर ने 'शांति निकेतन' के माध्यम से हमारी

26वे अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस के अवसर पर, नई दिल्ली, 8 सितंबर, 1992

शिक्षा की प्राचीन आत्मा को फिर से हमारे सामने रखा था। वाद में हमारे दूरदर्शी नेताओं द्वारा वनाए गए सविधान के अंतर्गत शिक्षा को जहां एक ओर मौलिक अधिकार माना गया, वहीं दूसरी ओर नीति निर्देशक तत्वो के अनुच्छेद 45 के अंतर्गत राज्यो से यह अपेक्षा की गयी कि वे 14 वर्ष तक के बच्चों को निःशुल्क एवं अनिवार्य शिक्षा देने की व्यवस्था करेंगे।

मैंने इन वातो का यहां पर उल्लेख इसलिए किया है, ताकि आप सब यह समझ सकें कि साक्षरता की अवधारणा आज की अवधारणा नहीं है, बल्कि यह हमारे चिंतन का अनिवार्य और प्रमुख अंग रही है।

लेकिन हम अपनी इस सास्कृतिक धरोहर पर गर्व करते हुए इस सच्चाई से भी नहीं वच सकते कि आज भी हमारे देश में वड़ी मात्रा में आवादी अशिक्षित है। हालांकि पिछले 10 वर्षो में शिक्षित लोगों में उल्लेखनीय बढ़ोत्तरी हुई है, लेकिन निरक्षरों की कुल संख्या में भी वृद्धि हुई है अर्थात् कुल मिलाकर निरक्षरो की संख्या बढ़ती गई है। हमें इस सच्चाई को भी स्वीकार करना चाहिए कि हमारे यहां शिक्षा का प्रतिशत कई विकासशील देशों के कुल प्रतिशत से भी कुछ कम ही है। कुछ विकासशील देशों में तो शिक्षा का प्रतिशत विकसित देशों के बराबर पहुॅच गया है। हमारी संस्कृति में अंक, अक्षर, शिक्षा और ज्ञानार्जन के महत्व एवं हमारे पास संसाधनों की प्रचुरता की दृष्टि से तथा राष्ट्र-विकास का उद्देश्य प्राप्त करने के लिए शिक्षा के क्षेत्र में अभी बहुत कुछ किए जाने की जरूरत है।

हमारे राष्ट्रीय शिक्षा मिशन ने 1997 तक के लिए साक्षरता का लक्ष्य निर्धारित किया है। मैं अपील करता हूँ कि इस शताब्दी के समाप्त होने के पहले केरल और पांडिचेरी की तरह संपूर्ण देश को पूर्ण साक्षर किए जाने का पूरा प्रयास किया जाना चाहिए। मुझे यह लगता है कि यदि हमारे देश का हर शिक्षित इस लक्ष्य को पूरा करने में अपना थोड़ा भी योगदान करने लगे, तो यह काम कुछ मुश्किल नहीं होगा। यह काम मुश्किल तव लगता है, जव इसे पूरा करने का दायित्व एकमात्र सरकार पर ही डाल दिया जाता है। इसमें संदेह नहीं है कि सरकार का भी अपना दायित्व है, किंतु यह भी समझा जाना चाहिए कि इससे अधिक दायित्व लोगों का है। यदि हमारे देश के लोग, शिक्षा-संस्थान तथा शिक्षा से प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष रूप से जुड़े संगठन एक साथ मिलकर इसे पूरा करने में जुट जाएंगे, तो इस लक्ष्य को पाने में अधिक समय नहीं लगेगा।

इस संवंध में मैं आप लोगों के सामने हमारे देश के प्रथम शिक्षा मंत्री तथा

महान नेता मौलाना अबुल कलाम आजाद के उन शब्दों को रखना चाहूँगा, जो उन्होंने आजादी के बाद 16 जनवरी, 1948 को 'अखिल भारतीय शिक्षा सम्मेलन' का उद्‌घाटन करते हुए कहे थे। उन्होंने हमारे देश के लोगों से कहा था कि—

> मैं हमारे देश के सभी शिक्षित पुरुप और महिलाओं से प्रार्थना करता हूँ कि वे इसे (शिक्षा को) एक पवित्र राष्ट्रीय सेवा समझें तथा सामने आकर कम-से-कम 2 वर्ष के लिए शिक्षक के रूप में सेवा करें। वे इसे राष्ट्रीय कार्य के लिए किया गया एक त्याग मानें।

मुझे लगता है कि मौलाना आज़ाद की इस भावना को यदि हमारे देश का प्रत्येक व्यक्ति ग्रहण कर ले, तो साक्षरता-अभियान के क्षेत्र मे नयी काति आ जाएगी।

शिक्षा से मेरा लंबा संबंध रहा है। पिछले वर्प जब पश्चिमी बगाल के बर्दवान जिले तथा पांडिचेरी को 'पूर्ण साक्षर राज्य' घोपित किया गया था, तब मुझे वहाँ जाने का अवसर मिला था। मैंने वहां के लोगों से बातचीत की और यह पाया कि साक्षरता के प्रति उन लोगों मे उत्साह भरा हुआ है। मुझे यह बताया गया कि उन्हे उनकी भापा में साक्षर किया गया, और जो क्षेत्र साक्षर हुए वहा अन्य समस्याओं का समाधान भी अपने-आप मिल गया। वहां लोगों ने छोटे परिवार के महत्व को समझा, उनमें स्वास्थ्य और सफाई के प्रति सजगता आने लगी, नशाखोरी कम हुई, लोकतांत्रिक व्यवस्था और विधि के प्रति उनके मन में सम्मान की भावना पैदा हुई तथा आर्थिक क्षेत्र में वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग किए जाने के कारण उनके जीवन-स्तर में भी बदलाव आया। इससे मुझे यह बात जरूरी लगी कि साक्षरता अभियान को स्थानीय लोगों की भापा, उनकी संस्कृति से जोड़ा जाए। उन्हें यह लगे कि इस साक्षरता का संबंध उनकी अपनी बेहतरी से है।

हमारा देश मानव-संसाधन की दृष्टि से चीन के बाद सबसे बड़ा देश है। हमारे यहा आज भी 7 वर्प की ऊपर की आयु - वर्ग में करोड़ों लोग अशिक्षित हैं। महत्वपूर्ण बात यह है कि 15 से 35 वर्प की आयु वर्ग के करीब 10 करोड़ लोग अशिक्षित हैं। यह उम्र ऐसी होती है, जब व्यक्ति की क्षमता सबसे अधिक होती है। लेकिन यदि उसकी इस क्षमता को परिष्कृत और प्रशिक्षित करके सुनियोजित ढंग से रचनात्मक कार्यो में नहीं लगाया जाएगा, तो न केवल यह क्षमता नष्ट हो जाएगी, बल्कि इस बात का भी भय बना रहता है कि कहीं इसका गलत तरीके से इस्तेमाल न हो। इसलिए साक्षरता का महत्व बहुत अधिक बढ़

जाता है। प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने शिक्षा मंत्रियों के सम्मेलन में बोलते हुए 10 नवंबर, 1963 को कहा था कि, "हर वस्तु चाहे वह उद्योग हो, कृषि हो अथवा अन्य कोई भी, जो हमारे लिए महत्वपूर्ण है, तभी समुचित रूप से विकसित हो सकती है, जबकि उसके पीछे शिक्षा की पृष्ठभूमि हो।" इसके करीब 21 वर्ष बाद अपने जीवन के अंतिम वर्ष में 30 मार्च, 1984 को 7 वें 'अखिल भारतीय मुस्लिम शिक्षा सम्मेलन' का उद्‌घाटन करते हुए प्रधानमंत्री श्रीमती इंदिरा गांधी ने देश को याद दिलाया था कि, "शिक्षा समाज के सभी वर्ग के लोगों के लिए आवश्यक है। हम केवल तभी एकरूप विकास कर सकते हैं, जब वे लोग, जो किसी भी कारण से शिक्षा से वंचित हैं, अन्य लोगों के बराबर आ जाएं।"

इसमें दो मत नहीं कि अनेक पंचवर्षीय योजनाओं तथा अनेक महत्वपूर्ण कार्यक्रमों का पूर्ण लाभ हमारे देश के आम लोग इसलिए नहीं उठा पाते, इन योजनाओं को लागू करने में इसलिए अपनी पूर्ण भूमिका नहीं निभा पाते; क्योंकि उनके पास समुचित ज्ञान का अभाव होता है। निश्चित रूप से शिक्षा उनके इस अज्ञान को दूर करके, उन्हें अधिक दक्ष और पूर्ण नागरिक बनाकर उनकी संपूर्ण योग्यता और क्षमता को उनके अपने समाज, राष्ट्र तथा अंततः विश्व के हित में नियोजित करती है। महर्षि अरविंद ने कहा था कि, "हर व्यक्ति में दिव्यता का अंश है, कुछ विशेषता है और शिक्षा का यही कार्य है कि इसे खोज निकाला जाए, विकसित किया जाए और प्रयोग में लाया जाए।" राजीव गांधी जी के समय में जो शिक्षा-नीति तैयार हुई थी, उसका केंद्रीय उद्‌देश्य "देश को इक्कीसवीं सदी में ले जाने के लिये एक प्रभावशाली उपकरण" के रूप में काम करना था। इक्कीसवीं सदी विज्ञान का युग होगा, और यदि हमने शिक्षा के क्षेत्र में स्वयं को दुरुस्त नहीं किया, तो हम तेज़ी से पिछड़ते जाएंगे।

मैं यहां उपस्थित नीति-निर्माताओं, शिक्षकों, कार्यकर्ताओं से एक बात और विशेष रूप से कहना चाहूँगा कि वे अपने साक्षरता अभियान को स्थानीय आवश्यकताओं से जोड़ने की ज्यादा-से-ज्यादा कोशिश करें, और साक्षरता के लिए स्थानीय मुहावरों और लोक-जीवन, लोक-तत्वों का सहारा लें। शिक्षा के पाठ्यक्रम इस तरह से तैयार हों कि वे बातें वहां के लोगों को अपनी ही बातें जान पड़ें। इसके साथ-ही-साथ लोगों में साक्षरता के प्रति आकर्षण पैदा करने तथा इसके लिए एक स्वस्थ एवं व्यापक माहौल बनाने के लिए लोक-गीत, लोक-मंच तथा

लोककथाओं आदि का सहारा लेना भी उपयोगी और व्यावहारिक हो सकता है। मुझे इसकी आवश्यकता इसलिए भी लगती है क्योंकि साक्षरता की जितनी अधिक जरूरत ग्रामीण तथा पिछड़े क्षेत्रों में है, उतनी नगरों में नहीं। अनुसूचित जाति और जन-जाति के तथा महिलाओं के बीच साक्षरता अभियान की सबसे अधिक आवश्यकता है, और इसके लिए लोक-सस्कृति के विभिन्न रूप कामयाब सिद्ध हो सकते हैं।

इसके साथ-साथ हमारे कार्यकर्त्ताओ को चाहिए कि वे देश के लोगों को अधिक स्वस्थ चेतना वाला जिम्मेदार नागरिक बनाने का भी काम करें। अपने साक्षरता अभियान के द्वारा वे हमारी संस्कृति, हमारे देश और हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के उन मूल्यों की भी जानकारी दे, जिसके चलते आज हम यहां तक पहुँचे और जिन पर चलकर ही हम आगे बढ़ सकते हैं। लोकतंत्र, सर्वधर्मसमभाव, सेवा, त्याग आदि हमारे परखे हुए वे मूल्य हैं, जिन्होंने भारत को विश्व मे एक विशिष्ट स्थान दिया है।

मेरी यह मान्यता रही है कि शिक्षा व्यक्ति को सकीर्णताओ से मुक्त करती है। ये संकीर्णताएं भापा, जाति, धर्म, क्षेत्र, ईर्ष्या जैसी बातो से जुडी हुई हैं। हमारे यहां कहा भी गया है कि — 'सा विद्या या विमुक्ते'। अर्थात विद्या वह है, जो व्यक्ति को मुक्त करती है। मेरा विश्वास है कि साक्षरता अभियान से जुड़े हुए हर स्तर के लोग शिक्षा के इस उद्देश्य को सामने रखकर अधिक पवित्र सेवाभाव से अपने कार्य में जुटे रहेगे और हम शीघ्र ही अपने को एक पूर्ण साक्षर राष्ट्र घोपित करने का गौरव पा सकेगे।

शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांति : खुला विश्वविद्यालय

मध्य प्रदेश की इस सुदर राजधानी भोपाल में भोज विश्वविद्यालय की आधारशिला रखते हुए मुझे स्वाभाविक रूप से वहुत प्रसन्नत्ता हो रही है। यह प्रसन्नता इसलिए अधिक है, क्योंकि मध्य प्रदेश मेरी जन्मभूमि है और शिक्षा से मेरा लगाव रहा है। भोपाल मेरी जन्म नगरी है और जव अपने जन्म स्थान पर सर्वाधिक प्रिय कार्य के क्षेत्र में कुछ अच्छा शुरू करने का मौका मिलता है, तो प्रसन्नता होती ही है। मुझे आज यह जो सुअवसर दिया गया है, इसके लिए मैं आप सवका आभारी हूँ।

मध्य प्रदेश में वनने जा रहे इस विश्वविद्यालय का नाम 11वीं शताव्दी के महान शासक राजा भोज के नाम पर रखा गया है। मैं इसे बहुत ही सही मानता हूँ। ऐसा इसलिए नहीं कि वे शासक थे, वल्कि इसलिये कि वे शिक्षा, संस्कृति, कला तथा विज्ञान के महान प्रेमी एवं प्रोत्साहक थे। एक लोकप्रिय और सफल शासक होने के साथ-साथ वे स्वय अच्छे कवि, ज्योतिप-शास्त्र ज्ञाता और वास्तुशिल्पकार भी थे। उदयपुर प्रशस्ति में उन्हें 'कविराज' कहा गया है। उनके लिखे ग्रंथ तथा बनवाए गए मंदिर और तालाव आज भी उनकी गाथा कहते हैं।

काव्य के क्षेत्र में उन्होंने 'सरस्वती-कंठाभरण' की रचना की है; 'शव्दानुशासन' मे उन्होंने व्याकरण की चर्चा की है। पातंजलि योगशास्त्र की व्याख्या के लिए उन्होंने 'राजमार्तण्ड' ग्रथ लिखा। वास्तुकला पर उन्होंने 'समरांगण-सूत्रधार' ग्रंथ की रचना की, जो उनकी वैज्ञानिक दृप्टि और कला-वोध का मूर्त उदाहरण है। इस ग्रंथ में भवन और नगर नियोजन, उसके लिए उपयुक्त भूमि तथा विभिन्न वर्गो के अनुकूल घरों की विस्तृत और सूक्ष्म चर्चा की गई है। स्थापत्य के तीन प्रमुख गुणों की चर्चा करते हुए भोज लिखते हैं—'शाश्वंत सुंदरं वास्तु उपयुक्तं च तद् भवेत।' उन्होंने धर्मशास्त्र पर 'व्यवहार मंजरी' एवं 'धर्मदिप्ति' तथा ज्योतिप शास्त्र पर 'राजमृगांक' ग्रंथ की रचना की। उनके द्वारा वनवाया गया धार का सरस्वती मंदिर तथा यहां से थोड़ी ही दूरी पर स्थित भोज शिव मंदिर वास्तुकला के उत्कृष्ट उदाहरण माने जाते हैं। राजा भोज के काल में 'भोजशाला' में कवि, वेद-ज्ञाता

मध्य प्रदेश भोज विश्वविद्यालय की आधारशिला रखते हुए, भोपाल, 19 अक्टूबर, 1992

तथा विभिन्न विपयों के विद्वान एकत्रित होते थे, और ज्ञान के कोप को समृद्ध करने में अपना योगदान करते थे। वहां वास्तुविज्ञान, नगर-शास्त्र, शिल्प, चित्रकला, संगीत और नृत्य विद्या आदि का अध्ययन होता था। धार में सरस्वती की एक प्रतिमा भी मिली थी, जो अंग्रेज हमारे यहां से ले गये। राजा भोज ने भोजपुर के निकट एक बहुत बड़ा तालाब बनवाया था, जो 'बड़े सरोवर' के नाम से प्रसिद्ध था। इसका क्षेत्रफल 250 वर्ग मील था। इस सरोवर की विशेपता यह थी कि इसका निर्माण अत्यंत वैज्ञानिक तरीके से किया गया था। बाद में इसको तोड़ा गया, जिस पर ताल परगना बसा हुआ है। इसकी मिट्टी बहुत उपजाऊ है।

अपनी दानशीलता, सेवाभाव, कर्तव्यपरायणता और वीरता के कारण राजा भोज न केवल अपने समय के लोगों के दिलो-दिमाग पर शासन करने वाले शासक बने, बल्कि उसके बाद भी आज तक हमारे देश की स्मृति में बने हुए हैं। यहां तक कि अनेक लेखकों ने उन्हें अपने काव्य का आधार बनाया। उत्तर भारत में रहने वाले कश्मीर के इतिहासकार कल्हण ने अपनी प्रसिद्ध पुस्तक 'राजतरगणी' के 7वें तरंग में राजा भोज की प्रशंसा करते हुए जो श्लोक लिखा है, उसे मैं आपके सामने रखना चाहूँगा। इस श्लोक में राजा भोज के साथ-साथ कश्मीर के राजा क्षितिपति की प्रशंसा करते हुए कवि कल्हण लिखते हैं—

स (क्षितिपति·) च भोजनरेन्द्रश्च दानोत्कर्पेण विश्रुतौ।

शूरौ तस्मिन् क्षणे आस्तां द्वावेतौ कविवान्धवो॥

इस श्लोक में राजा भोज की दानशीलता, वीरता और विद्वत्ता के गुणों की प्रशंसा की गई है। मध्य प्रदेश सरकार ने हमारे इतिहास के ऐसे महान विद्वान और शिक्षा प्रेमी के नाम को अपने मुक्त विश्वविद्यालय के लिए चुना, इसके लिए मैं उन्हें बधाई देता हूँ।

हमारे देश में शिक्षा के प्रति प्राचीनकाल से ही वहुत अधिक ध्यान दिया गया है। हमारे वैदिक ऋपियों ने प्रार्थना की है — 'तमसो मा ज्योतिर्गमय।' प्रकाश की ओर जाने की यह चाहत सही अर्थो में ज्ञान की चाहत का ही दूसरा रूप है। मध्य प्रदेश ने भी आरंभ से ही साहित्य, शिक्षा और संस्कृति के क्षेत्र में हमारे इतिहास के ख़जाने में बहुत कुछ दिया है। सम्राट अशोक की धर्मनिरपेक्षता का सिद्धांत, कालिदास का महान साहित्य, महाकालेश्वर का मंदिर, सांची के स्तूप जैसी न जाने ऐसी कितनी अमूल्य और सुहावनी स्मृतियाँ इतिहास में दर्ज हैं, जिन्हे याद करके आज मन गर्व से भर उठता है। जिस प्रदेश ने भारत को और समूचे

विश्व को कालिदास जैसा महान कवि दिया हो, उसके लिए शिक्षा के बारे में अधिक-से-अधिक सोचना विशेष रूप से आवश्यक हो जाता है। यहाँ मैं 'भोजप्रबध' के उन शब्दों का उल्लेख करना चाहूँगा, जिससे यह प्रमाणित होता है कि हमारी सस्कृति शिक्षा के प्रति कितनी सचेत रही है, विशेपकर यह कि राजा भोज शिक्षा के कितने अनुरागी थे। 'भोजप्रबंध' के श्लोक 74 में राजा भोज अपने मुख्य मंत्री से कहते हैं—

'विप्रोऽपि यो भवेन्मूर्खः स पुराद्वहिरस्तु मे।
कुम्भकारोऽपि यो विद्वान्स तिष्टतु पुरे मम॥

इसका अर्थ है कि — "मेरे नगर में मूर्ख होने पर चाहे वह ब्राह्मण ही क्यों न हो, न रहे। यदि कुम्हार भी है, पर ज्ञानी है, तो वह रहे।" इस घोपणा का प्रभाव यह हुआ कि भोज की नगरी धार में कोई भी व्यक्ति अशिक्षित और मूर्ख नहीं था। मै समझता हूँ कि इस विश्वविद्यालय ने अपना नाम भोज के नाम पर रखकर पूरे प्रदेश को पूर्ण रूप से शिक्षित बनाने का दायित्व अपने-आप ही ले लिया है।

इसी 'भोजप्रबंध' मे एक अत्यंत रोचक वृतांत है, मैं उसे भी बताना चाहूँगा। जब कालिदास राजा भोज से नाराज होकर चले गये, तो भोज योगी का वेप धारण कर उन्हें ढूंढ़ने निकले। मिलने पर कालिदास ने उस योगी से पूछा कि राजा भोज कैसे हैं? योगी ने बताया कि भोज का निधन हो गया। यह सुनते ही कालिदास ने निम्न श्लोक कहा—

अद्य धारा निराधारा निरालम्वा सरस्वती।
पण्डिताः खण्डिताः सर्वे भोजराजे दिवं गते॥

भोजप्रबंध — 326

अर्थात "राजा भोज के देहावसान के कारण धार नगरी निराधार हो गई, विद्या की अधिष्ठात्री देवी आश्रयहीन हो गई, और सभी विद्वान टूट से गये।" बाद में जब कालिदास को मालूम हुआ कि यह योगी स्वयं राजा भोज है, तब उन्होंने इसी की तर्ज पर दूसरा श्लोक पढ़ा, जिसका भाव यह था कि — "भोज राजा के आज पृथ्वी पर रहने के कारण धार नगरी आधारमयी, सरस्वती आश्रययुक्त एवं विद्वान महिमा मडित हो रहे हैं।"

मैं आशा करता हूँ कि ऐसे राजा भोज के नाम पर शुरू किया जा रहा यह

विश्वविद्यालय पूरे प्रदेश को ज्ञान के प्रकाश से आलोकित करके हमारे मुल्क के सामने शिक्षा के क्षेत्र में एक प्रतिमान स्थापित करने में सफल हो सकेगा।

पिछले करीब एक दशक से पूरे विश्व मे शिक्षा के क्षेत्र में एक क्रांति-सी शुरू हुई है। मैं इस खुले विश्वविद्यालय को उस क्रांति का विस्फोट मानता हूँ। आज करीब 70 देशों में खुले विश्वविद्यालय अपना काम कर रहे हैं। ये विश्वविद्यालय केवल भारत जैसे विकासशील देशों मे ही नहीं, बल्कि विकसित देशों में भी हैं। जब मैं शिक्षा मंत्री था, तब मैंने यह देखा था कि तालीम हासिल करने के क्षेत्र में अनेक ऐसी रुकावटें आती हैं, जिनके कारण कोई भी बालक या व्यक्ति शिक्षा जैसी महत्वपूर्ण बात से वंचित रह जाता है। कभी उनके सामने स्कूल की फीस देने, अपने काम करने तथा घर की गरीबी की परेशानी आ जाती है, तो कभी उसे शिक्षण संस्थाओं में दाखिला नहीं मिल पाता। ये सब ऐसी रुकावटें हैं, जिनके लिए व्यक्ति इतना जिम्मेदार नहीं होता, जितनी परिस्थितियाँ होती हैं। मेरा यह मानना है कि शिक्षा एक ऐसी सतत् प्रक्रिया है, जो लगातार चलनी चाहिए और यदि कभी टूट भी गई, तो फिर से कभी भी शुरू हो जानी चाहिए। हमारे देश के खुले विश्वविद्यालय इस दृष्टि से बहुत बड़ा काम कर रहे हैं। इनमे दाखिले, अध्ययन, परीक्षा, विषय का चयन तथा आयु के बारे में जितना खुलापन रखा गया है, मैं समझता हूँ कि उससे शिक्षा के क्षेत्र मे एक नयी रोशनी फैलेगी।

हमारा देश बहुत बड़ा देश है। जनसंख्या अधिक है और हमारे पास वित्तीय साधन सीमित हैं। यह मूलतः गांवों का देश है, जहां दूरदराज के क्षेत्रों में भी लोग रहते हैं, जो काफी हद तक आवागमन की सुविधाओ से महरूम हैं। ऐसी स्थिति में खुला विश्वविद्यालय का जो विचार सामने आया है, वह निश्चित रूप से प्रशंसनीय है। सन् 1986 की राष्ट्रीय शिक्षा नीति में इस बात का स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि — "युवाओं, घरेलू महिलाओं, खेतिहरों और औद्योगिक मजदूरों तथा कामकाजी व्यक्तियों को अपने चयन के अनुसार शिक्षा उनके अनुकूल ज़ारी रखने का अवसर प्रदान किया जाना चाहिए। भविष्य में खुले और दूरस्थ ज्ञान की दिशा पर जोर दिया जाएगा।" आपका यह नया विश्वविद्यालय इसी दिशा में उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम है।

मेरे लिए यह व्यक्तिगत रूप से भी खुशी की बात है कि राज्य में खुला विश्वविद्यालय शुरू किया जा रहा है। मैं चाहूँगा कि यह विश्वविद्यालय अपनी स्थापना के समय से ही राज्य की पूरी स्थिति का विस्तृत जायजा लेकर उसके

अनुकूल इसके भविष्य की रूपरेखा तैयार करे। मध्य प्रदेश हमारा सबसे बड़ा राज्य है, जिसका क्षेत्रफल भौगोलिक-सास्कृतिक दृष्टि से विभिन्नता लिए हुए है। यह प्रदेश खनिज तथा वन-ससाधनों से भरपूर है। यहॉ की मिट्‌टी उपजाऊ है, और यहां के किसान भी मेहनती हैं। इस बड़े भू-भाग मे लगभग साढे छ. करोड लोग रह रहे हैं, जो राज्य के करीब सत्तर हजार गावो मे फैले हुए है। आपको यह भी ध्यान मे रखना है कि राज्य की पूरी आबादी में करीब 37 प्रतिशत अनुसूचित जाति और जनजाति के लोग है, जो सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से अपेक्षाकृत पीछे है। मध्य प्रदेश की साक्षरता का प्रतिशत भी राष्ट्रीय शिक्षा के औसत से करीब 9 प्रतिशत कम है।

इन बातों का उल्लेख करना मैने इसलिये आवश्यक समझा, क्योकि मै मानता हूॅ कि ये बातें आपके राज्य के सपूर्ण परिदृश्य का वे सार हैं, जिसके आधार पर इस विश्वविद्यालय को अपनी शिक्षा की नीति का निर्माण करना होगा। भोज विश्वविद्यालय को यह देखना होगा कि वह किस प्रकार से राज्य के दूरदराज के पिछडे क्षेत्र के लोगो तक पहुच सकेगा।

मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि इस विश्वविद्यालय ने अपने तीन उद्‌देश्यो में इस बात को भी शामिल किया है, और इसका एक प्रमुख उद्‌देश्य है — ''जनसंख्या के बड़े भाग के लिये उच्च शिक्षा के अवसर प्रदान करना और साधारणतया समुदाय के शैक्षिक ज्ञान का उन्नयन करना।'' यह एक सुखद सयोग है कि भोपाल मे कल से दूरदर्शन केंद्र प्रारभ होने जा रहा है। मैं समझता हूॅ कि विश्वविद्यालय अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए इस अवसर का समुचित उपयोग कर सकता है। आजकल शिक्षा के क्षेत्र में नये-नये प्रयोग किए जा रहे है, तथा दृश्य-श्रव्य माध्यमो का भी उपयोग किया जा रहा है। विश्वविद्यालय को चाहिए कि वह इस क्षेत्र मे पीछे न रहे।

आप सबको विदित ही है कि गरीब लोगो की शिक्षा तथा महिलाओ को शिक्षित करने की ओर विशेप ध्यान दिया जाना जरूरी है। जब तक शिक्षा का प्रकाश आप इन वर्गो तक नही पहुॅचाएगे, तब तक समुचित, संतुलित और सपूर्ण विकास की आशा हम नहीं कर सकते। अत यह उपयुक्त होगा कि मुक्त विश्वविद्यालय इनके लिए कुछ ऐसे विशेप पाठ्‌यक्रम शुरू करने के बारे मे सोचे, जिन्हे वे अपने अनुकूल पाए। विश्वविद्यालय को अपने पाठ्‌यक्रमो मे इस बात का विशेप ध्यान रखना चाहिए कि वह लोगों के जीवन में सीधे काम आए। मेरे

कहने का तात्पर्य यह है कि ग्रामीण तथा अन्य लोगो को दी जाने वाली शिक्षा रोजगार देने वाली होनी चाहिए, या फिर जो काम वे कर रहे है उसी काम को अधिक दक्षता के साथ करने के गुण उससे पैदा होने चाहिए। ऐसी रोजगारमूलक शिक्षा निश्चित रूप से प्रदेश के हर व्यक्ति को अपनी ओर आकर्पित कर सकेगी, क्योंकि इससे उनकी उन्नति की सभावना बढेगी, और इसका लाभ समाज को भी होगा। महात्मा गाधी ने 'यंग इडिया' के दिनाक— एक सितंबर, 1921 के अक में लिखा था कि -

> भारत जैसे देश मे, जहा कि अस्सी प्रतिशत से अधिक आबादी खेतिहर है और दस प्रतिशत आबादी उद्योगों से जुड़ी है, लडके और लडकियो को ऐसी शिक्षा देना अपराध है, जिससे कि वे बाद में अपने जीवन मे श्रमप्रधान काम करने लायक ही न रहे। हमारे बच्चो को शुरू से ही श्रम की गरिमा की शिक्षा दी जानी चाहिए।

मुझे लगता है कि शिक्षा को रोजगार से जोड़कर ऐसा किया जा सकता है।

पत्राचार पाठ्यक्रम तथा मुक्त विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रम में फर्क होता है, और इस फ़र्क को ध्यान मे रखना जरूरी है। इसलिए ऐसे विश्वविद्यालय के लिए मुझे यह बात जरूरी लगती है कि वह राज्य में अपने शिक्षण केंद्र स्थापित करे, जहां लोगों को सामग्री मिल सके तथा उन्हें प्राध्यापकों का व्यक्तिगत निर्देशन भी मिल सके। विश्वविद्यालय स्वय को राज्य में फैले महाविद्यालयों से जोडकर अपनी क्षमता को और अधिक व्यापक, प्रभावशाली तथा व्यावहारिक बना सकता है। इस दृष्टि से वह महाविद्यालयो के प्राध्यापको की सेवाएं ले सकता है, तथा उनके पुस्तकालयो को अपने यहा पंजीकृत विद्यार्थियो के लिये सुलभ करा सकता है। मुझे इस विश्वविद्यालय का राज्य के अन्य महाविद्यालयो तथा शैक्षणिक सस्थाओ से इस प्रकार के अतर्सबध का होना आवश्यक लगता है।

इसके साथ-साथ भविष्य की आवश्यकताओ को ध्यान मे रखते हुए विश्वविद्यालय को चाहिए कि वह पुस्तकालयो की व्यवस्था कराये। विश्वविद्यालय के पास उसका एक विस्तृत प्रशिक्षण केद्र भी हो, ताकि शिक्षकों को शिक्षा की नयी तकनीक तथा दृश्य-श्रव्य प्रचार माध्यमो द्वारा शिक्षा दिए जाने का प्रशिक्षण दिया जा सके। मै ऐसा समझता हूँ कि तकनीक के क्षेत्र मे समय के साथ कदम मिलाकर चलना जरूरी है, और इसके लिए प्रशिक्षण की समुचित व्यवस्था होनी

चाहिए। विश्वविद्यालय को कम्प्यूटर कार्यक्रमों के महत्व को भी ध्यान में रखना चाहिए। इससे ज़रूरी आंकड़ों को इकट्ठा रखने और उनके वर्गीकरण मे सुविधा होगी। इसके साथ-ही-साथ पाठ्यक्रमों को भी अद्यतन करते रहने की व्यवस्था होनी चाहिए। विश्वविद्यालय को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि वह लोगों को विषयों के बारे में नये-से-नया ज्ञान उपलब्ध करायेगा। मेरे कहने का अर्थ यह है कि विश्वविद्यालय प्रारंभ से ही एक ऐसा व्यापक और विस्तृत दृष्टिकोण लेकर चले, जिससे वर्तमान में उपलब्ध सभी वैज्ञानिक सुविधाओं से वह अपने आपको सुसज्जित कर सके ताकि वह भविष्य में प्रभारी तरीके से कार्य कर सके।

आज विश्व का कोई भी देश विज्ञान और टेकनोलॉजी के महत्व को कम करके नहीं देख सकता। हमारे इस विश्वविद्यालय को चाहिए कि वह अपने यहाँ आधुनिक विज्ञान और टेकनोलॉजी के अध्ययन, अध्यापन को पर्याप्त महत्त्व दे, जिससे कि हमारे लोग समय के साथ कदम मिलाकर चल सकें। इस दृष्टि से कृषि-विज्ञान, भू-विज्ञान तथा पर्यावरण विज्ञान की शिक्षा का हमारे किसानों को सीधा लाभ मिल सकता है। कृषि-आधारित उद्योगों की शिक्षा 'बी.एड.' तथा 'बिज़नेस एडमिनिस्ट्रेशन' जैसे व्यावहारिक विषयों के बारे में भी सोचा जाना चाहिए। मैं आप लोगों को याद दिलाना चाहूंगा कि राजा भोज की निर्माण दृष्टि अत्यंत वैज्ञानिक थी। इसका प्रमाण उनकी वास्तुकला पर लिखी पुस्तक तथा 'भोज सरोवर' का निर्माण है। इस सरोवर के अंदर की ओर किनारों पर बड़े-बड़े पत्थरों का उपयोग करके उन्हें चूने से जोड़ा गया था। इन्हें जोड़ते समय बीच-वीच में मुरम और छोटे पत्थरो का इस्तेमाल किया गया था। इसके बाहरी हिस्से में बड़े पत्थरों की परतें थीं, जो संरक्षक बनकर पूरे बाँध को मज़बूत बनाती थीं। मैं समझता हूँ कि वैज्ञानिक दृष्टिकोण से संपन्न ऐसे ऐतिहासिक पुरुप के नाम पर स्थापित किए जा रहे इस विश्वविद्यालय को आधुनिक एवं टेकनोलॉजी की शिक्षा को पूरी-पूरी प्रधानता देनी चाहिए। विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति के रूप में भौतिक शास्त्र के विद्वान प्रोफेसर शरद चन्द्र भान आए हैं। मेरा विश्वास है कि वे इस ओर विशेप रूप से रुचि लेकर इसे आगे बढ़ायेंगे।

आधुनिक शिक्षा की व्यवस्था के साथ-ही-साथ यह भी जरूरी है कि यह विश्वविद्यालय अपनी कार्य-पद्धति द्वारा हमारी राष्ट्रीय एकता को मजबूत करने का आधार बने। विश्वविद्यालय अपनी शिक्षा की प्रकृति द्वारा यह कार्य कर सकता है। विश्वविद्यालय वह स्थान होता है, जहां विभिन्न भापा, धर्म, जाति और क्षेत्र

के लोग एक जैसा उद्देश्य लेकर इकट्ठे होते हैं, तथा उनके विचारों का निर्माण होता है। राष्ट्रीय हित के इस कार्य पर भी ध्यान दिया जाना है।

आज के दिन को मैं इस प्रदेश के शिक्षा के इतिहास में एक अत्यंत महत्वपूर्ण दिन मानता हूँ और प्रार्थना करता हूँ कि यह नवीन विश्वविद्यालय मध्य प्रदेश के लोगो मे हमारी ऐतिहासिक तथा सास्कृतिक धरोहर के प्रति लगाव पैदा करे। उनके अज्ञान को दूर कर उनके अंदर छिपे दिव्यता के अंश को सामने लाये तथा उनकी क्षमता को राष्ट्रीय हित में लगाने मे अपना योगदान दे। ज्ञान का एक मुख्य उद्देश्य होता है, ''व्यक्ति को संकीर्णताओं से मुक्त कराना।'' हमारे यहां कहा भी गया है, ''सा विद्या या विमुक्तये।'' मैं मानता हूँ कि ज्ञान व्यक्ति को उदार बनाता है, उसके अंदर सेवा, त्याग, सहयोग, समझदारी जैसे महान मानवीय मूल्यों का संचार करके उसकी सर्जनात्मक प्रतिभा को वढ़ाती है। ये मूल्य सदियों से हमारे राष्ट्रीय मूल्य रहे है। स्वय राजा भोज ने उदारता का परिचय देते हुए सर्वधर्मसमभाव को अपनाया था। मेरूतुंग ने 'प्रवध चितामणि' में इस वात का उल्लेख किया है कि राजा भोज ने मोक्ष के सही मार्ग पर विचार करने के लिए 'सर्वधर्म सभा' का आयोजन किया था। हमें इसे याद रखना है तथा शिक्षा के उद्देश्य में इस वात का पूरा-पूरा ख्याल रखा जाना चाहिए।

नारी शक्ति और शिक्षा

शासकीय गीतांजलि कन्या महाविद्यालय के सभागृह का शिलान्यास करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। आपको स्मरण होगा कि कुछ महीने पहले आदरणीय श्री वेंकटरमण जी ने महाविद्यालय का उद्घाटन किया था। उस समय मुझे यहाँ आने का मौका मिला था। आज फिर से मुझे यह अवसर दिया गया, इसके लिए मैं आप सबका आभारी हूँ।

यहाँ पर आकर पूर्व के समय की अनेक स्मृतियाँ ताज़ा होती हैं। भोपाल के निवासी तथा सभी समुदाय के भाई-बहन मेरे बहुत जाने-पहचाने लोगों में से हैं। मेरे जीवन का एक लंबा अरसा यहाँ गुजरा है। इसलिए भोपाल पहुँचने पर और इस महाविद्यालय के प्रांगण में उपस्थित होकर मन का भर आना स्वाभाविक-सा ही है।

इस विद्यालय का संबंध चूंकि महिला शिक्षा से है, इसलिए मैं समझता हूँ कि इसी विषय पर कुछ बातें करना अधिक उपयुक्त होगा।

हमें एक बात ध्यान में रखनी चाहिए कि नारी शिक्षा, नारी अधिकार और नारी विकास की बात केवल आज की ही आवाज नहीं है, बल्कि यह शुरू से ही हमारी संस्कृति मे रही है। ऋग्वेद की अनेक ऋचाओं की रचना महिलाओं ने की है। ऐतरेय ब्राह्मण तथा कौषतीकी ब्राह्मण में अनेक स्त्रियों के विदुषी होने के प्रमाण मिलते हैं। यहाँ तक उल्लेख मिलता है कि अनेक वीरांगनाओं ने अपने पतियों के साथ युद्ध क्षेत्र तक में काम किया था।

मध्यकाल में भारतीय नारी की स्थिति कुछ कमज़ोर अवश्य हुई थी, किंतु 19वीं सदी के पुनर्जागरण आंदोलन ने नारियों के अंदर एक नया विश्वास पैदा किया था। इस तरह का आत्मविश्वास पैदा करने वालों में गांधी जी सर्वोच्च रहे। बापू ने नारी की आंतरिक शक्ति और उसकी क्षमता को बहुत अच्छी तरह से पहचाना था और आज़ादी की लड़ाई के दौरान उन्होंने इस शक्ति को समाज के

शासकीय गीतांजलि कन्या महाविद्यालय की आधारशिला रखते हुए, भोपाल, 20 अक्टूबर, 1992

सामने रखा। मुझे याद है कि उस समय, जब पुरुप जेलों मे चले जाया करते थे, तब नारियाँ स्वाधीनता के संघर्प की ज्वाला को जलाए रखती थीं। जेल जाने में, डंडे खाने में तथा कुर्बानियाँ देने में वे किसी से पीछे नहीं रहीं। स्वदेशी आंदोलन के दौरान विदेशी वस्तुओं का वहिष्कार तथा नशावंदी जैसे रचनात्मक कार्यो में सबसे अधिक सफलता महिलाओं को ही मिली थी। महिलाओं की इस शक्ति का उल्लेख करते हुए बापू ने 'हरिजन' के 5 नवंबर, 1938 के अंक मे लिखा था कि—

> आत्मबलिदान और साहस के मामले में नारी पुरुप से अधिक उत्तम है।

मैं यहाँ वापू द्वारा राजकुमारी अमृतकौर को 21 अक्तूबर, 1936 को भेजे एक पत्र का उल्लेख भी करना चाहूँगा, जिसमें उन्होंने नारी के प्रति अपने महान दृष्टिकोण का परिचय दिया था। वापू ने लिखा था—

> अगर तुम औरतें अपनी गरिमा और सम्मान को पहचानोगी, तो मानवता पहले से अधिक अच्छी हो सकेगी। . . बचपन से ही मेरा यह विशेप काम रहा है कि मै उन्हें उनकी गरिमा का एहसास करा सकूं।

मेरा मानना है कि शिक्षा ही वह सबसे बड़ा माध्यम है, जिसके जरिये महिलाओं को उनकी गरिमा का आभास दिलाया जा सकता है तथा उनकी क्षमता को पूरी तरह से सामाजिक कार्यो में लगाया जा सकता है, उन्हें आर्थिक रूप से मजवूत बनाकर उनमे आत्मश्विास पैदा किया जा सकता है। इस दृष्टि से मैं समझता हूँ कि शासकीय गीताजलि महाविद्यालय पर एक वड़ा दायित्व आता है।

हमारे यहाँ महिला-शिक्षा की स्थिति विशेप अच्छी नहीं है। पूरे देश में जहाँ 64 प्रतिशत पुरुप साक्षर हैं, वही महिलाओ की शिक्षा का प्रतिशत 40 के आसपास है। मध्य प्रदेश में तो यह प्रतिशत करीब 28 ही है। इससे साफ मालूम होता है कि अभी महिलाओं की शिक्षा के क्षेत्र में वहुत कुछ किया जाना वाकी है। हमारे महान राष्ट्रीय एवं दूरदर्शी नेताओं ने अपनी दूरदर्शिता का परिचय देते हुए स्वतंत्र भारत के सविधान का निर्माण करते समय स्त्रियो और पुरुपों को समान अधिकार देने का प्रावधान किया। संविधान में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि उनके वीच कोई भेदभाव नहीं किया जाएगा। मैं समझता हूँ कि वैधानिक

स्तर पर तो यह बात ठीक है, किंतु सामाजिक स्तर पर इस दिशा मे काफी कार्य किया जाना शेष है।

यह खुशी की बात है कि आजादी के बाद हमारी सामाजिक मान्यताएँ बदली हैं, कुछ सांस्कृतिक परिवर्तन आए हैं और इससे नारी के प्रति समाज का दृष्टिकोण उदार भी बना है। शिक्षा के क्षेत्र में भी पहले की तुलना में प्रगति हुई है। आजादी के समय नारी-शिक्षा का प्रतिशत 8 86 था और मुझे बताया गया है कि अब यह बढ़कर 39 42 हो गया है। यद्यपि नारी शिक्षा के प्रतिशत में यह वृद्धि हमारे हौसले को बढ़ाती है, फिर भी पिछले चार दशको में उतना नही हो पाया, जितना कि होना चाहिए था। अब भी हमारे सामने करीब 60 प्रतिशत महिलाओं को शिक्षित करने का बहुत बड़ा लक्ष्य और दायित्व मौजूद है। इस जिम्मेदारी को हर हालत में पूरी तरह से निभाना होगा। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि नारी शिक्षा की उपेक्षा करके कोई समाज और राष्ट्र न तो संपूर्ण रूप से सभ्य कहला सकता है, और न ही पूर्ण रूप से विकसित हो सकता है।

आज इस सच्चाई से कतई इंकार नहीं किया जा सकता कि देश के पुनर्निर्माण और विकास के लिए नारी की क्षमता को समाज मे पूरा-पूरा स्थान देना होगा। भारत जैसे कृषि प्रधान देश में महिलाओं का पर्याप्त सहयोग होता है। इतना ही नही, बल्कि राष्ट्र-पुनर्निर्माण के अन्य कई क्षेत्रो मे महिलाओ ने अपनी क्षमता को सिद्ध किया है। उनकी इस क्षमता को और अधिक बढ़ाना है। यह काम उन्हें शिक्षा देकर, उनके लिए रोजगार उपलब्ध कराकर तथा उन्हे आवश्यक आर्थिक सहायता देकर किया जा सकता है। साथ-ही-साथ उन सामाजिक कुरीतियों को भी समाप्त किया जाना है, जो महिलाओं को मनोवैज्ञानिक रूप से कमजोर बनाती हैं। दहेज, बाल-विवाह जैसी प्रथाएं ऐसी ही प्रथाएं हैं। इन्हें खत्म करना है, ताकि भारतीय नारी अपने अस्तित्व को पहचान सके और अपने आप पर भरोसा कर सके।

आपने अक्सर यह सुना होगा कि स्त्रियों का शिक्षित होना पुरुष के शिक्षित होने से अधिक ज़रूरी है। मैं यह समझता हूँ, और मैंने देखा भी है कि यदि एक पुरुष शिक्षित होता है, तो इसका अर्थ होता है केवल एक व्यक्ति का शिक्षित होना, पर एक महिला के शिक्षित होने पर उसके पूरे परिवार को शिक्षा का लाभ मिलता है। इसलिए किसी भी स्थिति में नारी शिक्षा बहुत जरूरी है। मैं यहाँ पंडित नेहरू के वे शब्द याद दिलाना चाहूँगा, जो उन्होंने दिनांक 22 जनवरी,

1955 को मद्रास में एक महिला विद्यालय की आधारशिला रखते हुए कहे थे। उन्होंने जोर देते हुए कहा था कि—

> मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि एक बार पुरुष शिक्षा की उपेक्षा की जा सकती है, लेकिन स्त्री शिक्षा की उपेक्षा करना न तो संभव है और न ही मुनासिब।

हमें अपने महान देश के प्रथम प्रधानमंत्री की यह बात याद रखनी है और उसके अनुकूल सतत् कार्य करना है। मुझे बताया गया है कि मध्य प्रदेश में करीब 400 शासकीय महाविद्यालय हैं, जिनमें से 70 लड़कियों के लिए हैं। मैं उम्मीद करता हूँ कि इस संख्या में अवश्य तथा जल्दी-से-जल्दी उल्लेखनीय इजाफा हो सकेगा।

मध्य प्रदेश करीब सत्तर हजार गांवों का प्रदेश है। यहाँ के गांवों को मैंने निकट से देखा है और उनकी समस्याओं, परेशानियो, सीमाओं और बाधाओं को समझा है। इस समय मेरे दिमाग में एक बात आ रही है, जो मैं आपसे कहना चाहूँगा। नारी शिक्षा से जुड़ी हुई सुविधायें नगर और महानगरों में तो उपलब्ध हो रही हैं, लेकिन छोटी-छोटी जगहों पर ये सुविधाएं अभी भी पर्याप्त रूप में नहीं हैं। इन छोटी जगहों की लड़कियां वे होती हैं, जो समाज के लिए सच्चा श्रमदान करती हैं। वे घर का काम देखती हैं, खेत और खलिहान मे काम करती हैं, दस्तकारी तथा घरेलू एवं लघु उद्योगो में लगी रहती हैं। मैं समझता हूं कि यदि उनके लिए शिक्षा की कोई अलग से व्यवस्था की जा सके, तो उनकी श्रम शक्ति का सही और पूरा लाभ हमारे समाज को मिल सकेगा। हमें यह देखना होगा कि इस काम को किस प्रकार किया जा सकता है। इसके रास्ते में सबसे बड़ी रुकावट उन स्थानों की सामाजिक मान्यताएं और उनकी निजी जीवन की परेशानियां आती हैं। नारी-शिक्षा के लिए न केवल नारी वर्ग में ही वल्कि पुरुष वर्ग में भी एक चेतना पैदा की जाए, जिससे कि लोग इस ओर ज्यादा-से-ज्यादा आकर्पित हो सकें।

मैं इस अवसर पर विशेप रूप से इस महाविद्यालय की छात्राओं से कहना चाहूॅगा कि नारी शिक्षा के विकास में उन्हें भी अपना योगदान करना है। यहॉ पढ़ाई पूरी करने के वाद आप लोगों को चाहिए कि आप सव जहां कहीं भी हों, वहां लड़कियों को शिक्षा के लिये प्रोत्साहित करें तथा स्वयं भी पढ़ाने के पवित्र और महत्वपूर्ण काम में लगें। मैं समझता हूँ कि तभी शिक्षा की रोशनी

घर-घर में पहुँच सकेगी, और आप भी ऐसा करके शिक्षित होने के अपने दायित्व को पूरा कर सकेंगी।

यह सौभाग्य की बात है कि इस प्रदेश में एक मुक्त विश्वविद्यालय की स्थापना हो रही है। मुझे आशा है कि इससे भी नारी शिक्षा को वांछित बढ़ावा मिलेगा।

गीतांजलि महाविद्यालय की स्थापना गैस त्रासदी से प्रभावित क्षेत्र में की गयी है। इसे मैं राज्य सरकार की जनता के प्रति विशेष सहानुभूति का प्रतीक मानता हूँ। महाविद्यालय को इस बात की ओर विशेष ध्यान देना चाहिए कि यह शिक्षा इस क्षेत्र की लड़कियों के लिए उत्पादक सिद्ध हो।

राज्य सरकार को महाविद्यालय के अध्यापकों तथा भोपाल की आम जनता के सहयोग और आपसी तालमेल से इस संस्था के माध्यम से नारी शिक्षा के क्षेत्र में एक आदर्श स्थापित करना है। मुझे बताया गया है कि पिछले वर्ष इस महाविद्यालय में छात्राओं की संख्या 350 के करीब थी, जो अब बढ़कर दुगुनी हो गयी है। इस प्रकार की प्रगति बहुत उत्साहजनक है। मैं इस सफलता के लिए महाविद्यालय से जुड़े प्रत्येक सदस्य को अपनी बधाई देता हूँ।

यह खुशी की बात है कि गीतांजलि महाविद्यालय में विज्ञान, कला तथा वाणिज्य विषयों के अध्यापन के साथ-साथ शारीरिक शिक्षा और सांस्कृतिक गतिविधियों को प्रोत्साहन दिये जाने पर जोर दिया जा रहा है। इसी उद्देश्य से यहाँ सभागृह बनाया जा रहा है। यह एक प्रशंसनीय प्रयास है। छात्राओं के व्यक्तित्व के समुचित विकास के लिए पुस्तकीय ज्ञान के अतिरिक्त इस तरह की सांस्कृतिक गतिविधियों का होना जरूरी है। मैं आशा करता हूँ कि आगे चलकर यहां इलेक्ट्रानिक्स, कप्यूटर विज्ञान आदि तकनीकी विषयों के अध्यापन की भी व्यवस्था की जा सकेगी। स्नातकोत्तर स्तर की शिक्षा की ओर भी सोचा जाना उपयुक्त होगा। इससे छात्राओं में विशेषज्ञता आ सकेगी। 'बेचलर ऑफ एजुकेशन' तथा 'डिप्लोमा इन एजुकेशन' छात्राओं के भविष्य के लिए बहुत ही उपयोगी सिद्ध होते हैं। मैं इस बात को जरूरी मानता हूँ कि शिक्षा ऐसी होनी चाहिए, जिससे छात्राओं को बाद में रोजगार मिल सके तथा उनकी कार्यकुशलता बढ़ सके। तभी हमारे देश की महिलायें समाज के विकास में अपना समुचित योगदान कर सकेंगी और उनके कार्यों का सही लाभ देश को मिल सकेगा।

शिक्षा से लंबे समय तक जुड़े रहने के कारण मेरे कुछ व्यावहारिक अनुभव

है। उनके संदर्भ मे मै आपसे कहना चाहूँगा कि आपके प्रदेश में व्याख्याताओ के शिक्षण-प्रशिक्षण की भी समुचित व्यवस्था की जानी चाहिए। आप सब जानते ही हैं कि आजकल शिक्षा के क्षेत्र मे नई तकनीक के प्रयोग हो रहे है। मुझे लगता है कि इनका समुचित रूप से इस्तेमाल करके अध्यापन के कार्य को और अधिक व्यवस्थित, वैज्ञानिक और प्रभावशाली बनाया जा सकता है। यह महाविद्यालय अपने यहाँ एक विस्तृत पुस्तकालय भी स्थापित करे। इसके लिए संभवत: समाज के लोगों से भी सहायता ली जा सकती है। एक बात जो अत्यत महत्व की है, वह यह कि हमारे महाविद्यालयों को चाहिए कि वे अपने यहाँ के पाठ्यक्रमो को हमेशा अद्यतन करते रहे। इससे अध्यापको तथा छात्रो को विपय के बारे मे नवीनतम जानकारियाँ मिलती रहेगी। यह काम अत्यंत महत्व का है और इसे किया ही जाना चाहिए।

ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा

इस सस्थान को वापू के हाथों का पुनीत स्पर्श प्राप्त है। मुझे इस संस्थान में वापू के चिंतन और कार्य-प्रणाली की झलक दिखाई पड़ती है। बापू गाव के विकास के प्रति अत्यंत चिंतित रहते थे। उनके चिंतन और रचनात्मक कार्यक्रमों के केन्द्र मे गाव का विकास प्रमुख था। 'यंग इंडिया' के दिनांक 26 दिसम्बर 1929 के अक मे तो उन्होंने यहां तक लिखा था कि-

''अपने गांव की सेवा करना स्वराज्य की स्थापना करना है।''

इस छोटे-से वाक्य में यह वात छिपी है कि हमारे देश की ऊर्जा गांवों मे निहित है और उसे जागृत करके राष्ट्र-निर्माण के काम में लगाया जाना है। में इस संस्थान को इस दृष्टि से अत्यंत महत्वपूर्ण मानता हू, क्योंकि यह गाव मे स्थित है और इसका मुख्य उद्देश्य भी ग्रामीण क्षेत्रों में चिकित्सा-सेवा उपलब्ध कराने के लिए डाक्टर तैयार करना है। मैं समझता हूं कि आप ऐसा करके बापू के सपनों को साकार करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहे हैं। मैं आपके इस कार्य की खुले मन से प्रशंसा करता हू।

अभी मैंने जब नर्सिंग कालेज का उद्घाटन किया, तो मुझे वताया गया कि यह महाविद्यालय ग्रामीण क्षेत्रों मे चिकित्सा सेवा हेतु महिलाओ को प्रशिक्षित करेगा। निश्चित रूप से इससे हमारी ग्रामीण चिकित्सा की जरूरतें पूरी हो सकेंगी। मुझे पूरा विश्वास है कि यहा से निकली नर्से ग्रामीण क्षेत्रों में जाकर अपनी सेवा-भावना के द्वारा देश के सामने एक प्रतिमान स्थापित करेंगी। मैं आप सवकी सफलता की हार्दिक कामना करता हूं।

हमारे देश की तीन चौथाई आबादी गांवो में रहती है, लेकिन दुर्भाग्यवश वे जीवन की आधुनिक-सुविधाओं और जरूरतों से वंचित है। स्वास्थ्य-सुविधा उनमें से एक है। मुझे देश के विविध क्षेत्रों के गावो में जाने का अवसर मिलता रहा है और मेंने वहा की समस्याओं और जरूरतों को गहराई के साथ देखा, समझा

महात्मा गाधी इस्टीट्यूट आफ मेडिकल साइसेम के नर्सिंग कॉलेज का उद्घाटन करते हुए, वर्धा, 15 फरवरी, 1993

और अनुभव किया है। मुझे इसमें कोई सदेह नहीं कि यदि ग्रामीण स्वास्थ्य की ओर पूरी तरह ध्यान दिया जाए, तो इससे न केवल हमारे देश की दक्ष श्रमशकि बढ़ेगी, बल्कि इससे जनसंख्या की समस्या से भी निपटने मे मदद मिलेगी। लोगो के साथ बातचीत करने के दौरान मैंने पाया था कि मृत्यु की आशंका गांव के लोगों को बड़े परिवार के लिए मजबूर करती है। मैं समझता हूं कि यदि स्वास्थ्य सुविधा उपलब्ध कराके उनके मन से अकाल मृत्यु की आशंका को दूर किया जा सके, तो वे अपने परिवार को छोटा रखने के लिए प्रेरित होगे।

मुझे यह भी लगता रहा है कि गावों के लोगों की चिकित्सा आवश्यकता शहर के लोगों की चिकित्सा आवश्यकताओ से अलग है। वायु प्रदूपण, ध्वनि प्रदूपण और तनावयुक्त आधुनिक जीवन-पद्धति के कारण शहरों की बीमारियां दूसरी तरह की हैं। जबकि अस्वच्छता, शिक्षा का अभाव तथा भोजन की कमी से पैदा हुई बीमारिया गावों मे मुख्य होती है। इसलिए यह जरूरी-सा लगता है कि गांवो में जाकर काम करने वाले डाक्टरों और नर्सो को अलग तरह से प्रशिक्षित किया जाना चाहिए। यह बात जरूरी है कि ऐसे डाक्टर और नर्स गांवो की जीवन-पद्धति से परिचित हो, उनकी कमजोरियो और कमियो की जानकारी रखते हो, तथा उस क्षेत्र के प्राकृतिक वातावरण का उन्हें ज्ञान हो। यदि उन्हे इन बातो का ज्ञान होगा तो निश्चित रूप से उन्हें उस क्षेत्र के लोगों की बीमारियो की प्रकृति तथा वहां के लोगों के मनोविज्ञान को समझने में मदद मिलेगी। इस प्रकार वे अपने चिकित्सा के दायित्व को अधिक निपुणता के साथ निभा सकेगे ।

मुझे यह भी आवश्यक लगता है कि हमारे चिकित्सा के पाठ्यक्रम को देश की आवश्यकता के अनुरूप बनाया जाना चाहिए। हमारे यहा जो बीमारिया होती हैं, वे जरूरी नहीं हैं कि अन्य देशों की बीमारियों की तरह ही हो। इसलिए पाठ्यक्रम और प्रशिक्षण मे स्थानीय आवश्यकताओं का ध्यान रखा जाना व्यावहारिक होगा। इसके साथ ही मुझे यह भी उपयुक्त लगता है कि रोग के उपचार के लिए स्थानीय रूप से उपलब्ध दवाइयो पर भी शोध-कार्य होने चाहिए। इस दृष्टि से जड़ी-बूटियो का महत्वपूर्ण स्थान है। आज भी ग्रामीण क्षेत्रो मे ऐसी अनेक जडी-बूटियां हैं और लोग उनसे अपना इलाज भी करते हैं। इनका वैज्ञानिक तरीके से अध्ययन करके उपयोग किया जाना चाहिए।

इस अवसर पर में एक बात विशेप रूप से कहना चाहूंगा कि चाहे वे डाक्टर हो या नर्स, उन्हे यह समझना चाहिए कि उनका कार्य केवल नौकरी का कार्य

नहीं है, बल्कि सीधे-सीधे मानव की सेवा से जुड़ा हुआ काम है। बल्कि मैं तो यहा तक मानता हू कि मन में मानव सेवा की चाहत के कारण ही आप सब इस क्षेत्र में आए है। यह क्षेत्र ऐसा है जहा चिकित्सा ज्ञान के साथ-साथ सेवा-भाव का होना बहुत जरूरी है। सेवा-भाव के द्वारा किया गया आपका एक हल्का-सा स्पर्श, मरीज की आधी बीमारी को दूर करने की ताकत रखता है और उनमे आत्मविश्वास तथा जीवन के प्रति आस्था पैदा करता है। इतनी बडी ताकत आपके अंदर होती है और यह काम आप तब तक नहीं कर सकते, जब तक कि आप में सेवा की भावना न हो। बापू ने 'द हैल्थ गाइड' के पृष्ठ 10 पर शिकायती लहजे में लिखा है-

> चिकित्सकों से अक्सर इस बात पर मेरी बहस हो जाती है कि वे आत्मा की उपेक्षा करते हैं और शरीर को एक नश्वर उपकरण समझकर उसकी मरम्मत करते हैं। आत्मा की उपेक्षा के कारण व्यक्ति उनकी दया पर निर्भर हो जाता है और इससे मनुष्य की गरिमा तथा आत्मसम्मान घटता है।

मै मानता हू कि जब एक चिकित्सक और नर्स शरीर के साथ-साथ आत्मा के अस्तित्व को स्वीकार करने लगता है तो उसके काम करने का दृष्टिकोण ही बदल जाता है।

जहा तक सेवा भाव का प्रश्न है, आप लोगों को मालूम ही है कि हमारे यहा इसे सर्वश्रेष्ठ धर्म माना गया है। 'श्रीमद्भगवद्गीता' मे तो प्राणियो के दु.ख दूर करने के अवसर के समक्ष मोक्ष तक की कामना को हेय ठहराया गया है। 'भागवत' (9/21/12) मे कहा गया है-

न कामयेऽह गतिमीश्वरात् पराम्
अष्टर्द्धियुक्तामपुर्भव वा।
आर्ति प्रपद्येऽखिलदेहभागाम्
अंत.स्थिता येन भवनन्त्यदु·खा ॥

इस श्लोक में रतिदेव कहते हैं मै ईश्वर से आठो ऋद्धियों से युक्त परम गति नही चाहता हूं, मोक्ष भी नही चाहता। मै चाहता हू कि सभी देहधारियों का दु ख मेरे ऊपर आ पडे। मै उनके हृदय मे स्थित हो जाऊ, जिससे वे दु ख रहित हो जाए।

तुलसीदास ने भी सेवा-धर्म को बहुत कठिन धर्म बताते हुए "रामचरितमानस"

में लिखा है-

आगम निगम प्रसिद्ध पुराना।

सेवा धरमु कठिन जगु जाना॥

मध्यकाल मे हमारे जितने भी संत हुए हैं, उन सबने सेवाभाव को श्रेष्ठ धर्म बताया है।

आधुनिक युग में मै बापू को इसी सेवाभाव का प्रतीक मानता हूं। उन्होने 'हरिजन' के 10 नवम्बर, 1946 के अंक में बहुत ही सुन्दर बात कही थी। बापू ने लिखा था-"वह व्यक्ति, जो अपना सारा समय लोगों की सेवा में लगाता है, उसका सम्पूर्ण जीवन प्रार्थना का एक अखंड व्रत है।" मैं समझता हूँ कि इस मायने में आप सभी सौभाग्यशाली है कि आप सबको व्यवसाय के रूप में भी मानव की सेवा करने का यह दुर्लभ अवसर मिला है। मेरा विश्वास है कि आप सब इस अवसर का समुचित रूप से उपयोग करेंगे तथा समाज के अन्य लोगों के सामने मानव-सेवा का अनुकरणीय उदाहरण प्रस्तुत करेंगे।

मैं यह मानता हूं कि सेवा-सुश्रुपा करने का काम इलाज करने का काम जैसा ही है। मरीज के स्वस्थ होने में नर्सो की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। उनकी ठीक तरीके देखभाल करने तथा उनके साथ अच्छा व्यवहार करने का बहुत अच्छा प्रभाव पड़ता है। यह काम महिलाए विशेप रूप से अच्छी तरह कर सकती हैं, क्योंकि उनका हृदय कोमल होता है तथा उनमें धैर्य, सहनशीलता और त्याग की भावना होती है। आपको अपने इन गुणो के द्वारा अपने इस दायित्व को समुचित तरीके से निभाना है।

मुझे बताया गया है कि नर्सिग कालेज में महिलाओं को प्रशिक्षित किया जाएगा। इसे मैं इस दृष्टि से महत्वपूर्ण मानता हू कि महिलाओं में त्याग और सेवा करने की भावना अधिक होती है। उनके मन में करुणा और प्रेम का अक्षय और अगाध भंडार होता है। उसमें सेवा की भावना और त्याग करने का साहस होता है। यह कार्य वे पुत्री, बहन, पत्नी और मा जैसे अपने सभी रूपों में पूरा करती हैं। इस संदर्भ में, मैं आप लोगों के सामने बापू के उन शब्दों का स्मरण दिलाना चाहूंगा, जो उन्होने कस्तूरबा के बारे मे कहे थे। बापू ने पूरी भावुकता और सम्मान के साथ कहा था-

> चालीस वर्ष से मैं बिना मां–बाप का हूं, और तीस वर्षो से यह मेरी मां का काम करती आ रही है। और सत्याग्रह का पाठ भी मैंने कस्तूरबा से ही सीखा है।

बापू के इस कथन मे नारी की सहनशीलता, सेवाभाव और सत्य के प्रति उसकी निष्ठा का प्रमाण मिलता है।

बापू ने नारी मे अन्तर्निहित इस शक्ति और क्षमता को अच्छी तरह से पहचाना था। इसीलिए उन्होने उन्हे स्वतंत्रता आंदोलन मे पुरुष के बराबर शामिल किया। महिलाओं ने भी आजादी की लड़ाई के दौरान अपनी शक्ति और क्षमता का परिचय देकर समाज के सामने एक उदाहरण प्रस्तुत किया था। आजादी के बाद से आज महिलाएं हमारे समाज के सभी क्षेत्रों में कार्यरत है तथा पूरी कुशलता और सफलता के साथ काम कर रही हैं। आज आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक, सांस्कृतिक, पुलिस सेवा, विमान चालन तथा सशस्त्र सेना जैसे हर क्षेत्र में महिलाएं है। यह हम लोगो के लिए गौरव की बात है। मै समझता हू कि नारी–क्षमता का समुचित उपयोग करके, नारी–शक्ति को समाज मे लगाकर ही एक प्रगतिशील सतुलित राष्ट्र का विकास किया जा सकता है। जब तक हमारे देश की नारी–चेतना सुप्त रहेगी, मैं मानता हूं कि तब तक हमारे देश की शक्ति भी सुप्त रहेगी। मै यहां आप लोगों के सामने पडित जवाहरलाल नेहरू के शब्द रखना चाहूगा। उन्होने 19 अक्तूबर, 1949 को न्यूयार्क में अन्तर्राष्ट्रीय सम्मेलन में कहा था–

> मेरा दृढ़ विश्वास है कि आज के भारत के विकास का आकलन महिलाओं के विकास से किया जा सकता है और किया जाना चाहिए।

मै इसी सदर्भ मे एक बात और कहना चाहूगा कि हमारी नर्सो को केवल रोगियो की देखभाल और सेवा करने का ही दायित्व नहीं निभाना है, बल्कि उन्हें वहां स्वास्थ्य–शिक्षिका की भूमिका भी निभानी है। उन्हें यह देखना होगा कि वे कौन से उपाय किए जाएं ताकि कम–से–कम लोग बीमार हों। अज्ञानता के कारण गांव के लोग सफाई तथा स्वच्छता जैसी मूलभूत बातों से परिचित नहीं होते। यदि उन्हें स्वास्थ्य संबंधी शिक्षा से अवगत कराया जाए तो वे बहुत–सी बीमारियों से बच सकते हैं। आप सब यहां से प्रशिक्षित होकर जब गांवों में जाएंगी, तब इसे भी अपने जीवन का उद्देश्य बनाएं और लोगो के अदर स्वास्थ्य सबंधी जागरूकता पैदा करें। मुझे विश्वास है कि इस कालेज से निकली हुई नर्से इसके लिए अधिक आदर्श का काम करेंगी।

समन्वय का सूत्र - हिन्दी

राष्ट्रीय पुरस्कार के पात्र आप सभी को मैं अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ। मैं आशा करता हूँ कि आप अपने-अपने क्षेत्र में अपनी भाषायी प्रतिभा का उपयोग करके भारत में विभिन्न महान भाषाओं को सुदृढ़, समरस तथा समाजोपयोगी बनाने का महत्वपूर्ण कार्य करते रहेगे। मुझे इस बात से विशेष प्रसन्नता है कि यह पुरस्कार ऐसे नागरिको ने प्राप्त किये हैं, जिन्होंने अपनी मातृभाषा हिंदी न होते हुए भी राष्ट्रभाषा हिदी मे प्रवीणता प्राप्त की है। मै कहना चाहूगा कि उनकी यह उपलब्धि भारत की हमारी महान परंपरा को आगे बढ़ाती है।

मुझे यह देखकर बहुत खुशी हुई कि इस बार के पुरस्कार प्राप्तकर्त्ताओ मे देश के कई भाषाओं के विद्वान है, जिनमें महिलाए भी हैं। जब भी ऐसा अवसर आता है, जहां मुझे विभिन्न भाषा, धर्म, जाति या क्षेत्र के लोगों से एक ही मंच पर बातचीत करने का मौका मिलता है, तो मेरा ह्रदय गर्व और व्यापकता की गहन अनुभूति से भर उठता है। ऐसे समय मे मुझे अनायास ही गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर की वे पक्तियॉ याद आ जाती है, जिसमे उन्होने देश की तुलना एक महासागर से करते हुए कहा है—

हे मोर चित्त, पुण्य तीर्थे जागो रे धीरे,
एई भारतेर महामानवेर सागर तीरे।
केह नाहि जाने, कार आह्वाने, कत मानुषेर धारा,
दुर्वार स्रोते एलो कोथा हते, समुद्र हलो हारा।

इसे मै हमारे देश की सबसे बडी ताकत तथा एक विलक्षण प्रवृत्ति मानता हूँ। मै विभिन्न भाषाओं को हमारे देश की भावना और चेतना की प्रतिनिधि धारा मानता हूँ, जो हमारे देश की मूल विचारधारा और राष्ट्र भाषा के महासागर मे आकर गिरती हैं और उसे समृद्ध बनाती है। वे लोग, जो अपनी मातृभाषा के अतिरिक्त देश की अन्य भाषाओं के लिए काम कर रहे हैं, उन्हें मैं रोशनी के

केन्द्रीय हिदी निदेशालय द्वारा आयोजित राष्ट्रीय पुरस्कार समारोह (1991-92) मे, नई दिल्ली, 22 मार्च, 1993

चमकीले कण समझता हूँ, जो हमारे मन में आशा का प्रकाश पैदा करते है, जिससे भारत का भविष्य आलोकित होता है।

मुझे इस बारे मे रत्तीभर भी संदेह नहीं है कि हमारा देश अनंत काल से भावना के स्तर पर गहरे रूप में एक रहा है। यह हमारी महान परम्परा रही है और यह हमारी सस्कृति का वह महान मूल्य है जिससे पूरे विश्व को सदेश मिलता है, क्योंकि समन्वय के इसी मूल्य से पूरा विश्व एक हो सकता है।

''विष्णुपुराण'' मे संपूर्ण देश का चित्र इस प्रकार उभर कर आया है—

उत्तर यत् समुद्रस्य, हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्

वर्प तद् भारतं नाम, भारती यत्र सतति.॥

भारतवासी पवित्र स्नान करते समय जब सात नदियो का स्मरण करते हैं, तब वे भारत की इसी भावनात्मक एक्य की अभिव्यक्ति करते हैं। वे कहते हैं-

गगे च यमुने चैव गोदावरी सरस्वती।

नर्मदे सिधु कावेरी जलेऽस्मिन सन्निधि कुरु॥

धर्म, साहित्य, कला और संस्कृति विपयों से मुझे विशेष लगाव रहा है। मैंने इस बात को अच्छी तरह महसूस किया है कि क्षेत्र तथा भाषा की विभिन्नता के बावजूद हमारी चेतना असामान्य रूप से एक रही है। महाकवि तिरुवल्लुवर के विचार वेदों, जैन धर्म तथा भक्तिकालीन कवियों के विचारों से स्वाभाविक रूप से मेल खाते हैं। मध्यकाल के साहित्य में तो यह समानता अद्‌भुत है। इस दृष्टि से तमिल की कवयित्री आण्डाल और हिदी की कवयित्री मीराबाई की कविताएं एक है। इसी प्रकार की समानता तमिल कवि पेरियआड़वार और कन्नड़ के कवि पुरन्दरदास तथा हिदी के कवि सूरदास की कविताओं मे पाई जाती है। पेरियआड़वार ने सूरदास की ही तरह कृष्ण की बाल कलाओं का वर्णन किया, यशोदा के लोरी गीत लिखे तथा कृष्ण द्वारा चद्र-खिलौना मागे जाने का पूरी भावुकता के साथ वर्णन किया। कश्मीर की कवयित्री ललद्यत और भक्त रविदास की कविताओं का भाव एक-सा है। इसी प्रकार उड़िया के बनमाली की कविताएं रसखान के ''पाहन हौं तो वही रसखान '' से मेल खाती है। मराठी के सत ज्ञानेश्वर, तुकाराम, नामदास तथा बहिणाबाई, पंजाबी के गुरु नानक, गुजराती के नरसी मेहता आदि की कविताओ मे एक-से भाव और विचार भिन्न-भिन्न भाषाओं के द्वारा अभिव्यक्त हुए है। मुझे लगता है कि जब तमिल का शिव भक्त कवि केदारनाथ और कैलाश

की बात करता है तथा हिदी, संस्कृत, मराठी का भक्त कवि रामेश्वरम् की बात करता है, तो इस बात मे संदेह की गुजाइश ही नहीं रह जाती कि इनमें शब्द के अतिरिक्त कुछ और भी अलग-अलग है।

हमारे स्वतंत्रता संघर्ष की भावना, उसकी प्रेरणा तथा उसकी अभिव्यक्ति इस बात का जीता-जागता प्रमाण है कि उस दौरान पूरा देश एक-सी विचारधारा से आंदोलित हो रहा था। उस काल में पूरे देश में एक-से विचार और भावों को अभिव्यक्त करने वाला राष्ट्रीय साहित्य रचा गया।

हमारे स्वतत्रता सघर्ष के राजनेताओ ने इस बात को अच्छी तरह से समझा था कि पूरे देश को एकता के सूत्र मे मज़बूती के साथ पिरोने के लिए एक भापा का होना आवश्यक है, और चूंकि हिदी भापा सबसे बड़े क्षेत्र मे बोली जाती थी, इसलिए उन्होंने हिदी को इस रूप मे स्वीकार किया। यह स्वीकृति केवल हिंदी क्षेत्र के लोगों की ही नही थी, बल्कि मैं कहना चाहूँगा कि उससे भी अधिक अहिंदीभापी हमारे राजनेताओ तथा पत्रकारो की थी। इनमें राजा राममोहन राय, केशवचन्द्र सेन, स्वामी दयानद सरस्वती, लोकमान्य तिलक, महात्मा गाधी, कृष्ण स्वामी अय्यर, लाला लाजपत राय तथा सुभापचद्र बोस जैसे महान व्यक्ति शामिल है। सुभाप चंद्र बोस ने राष्ट्रीय एकता के सदर्भ में हिदी के महत्व के बारे मे कहा था—

> प्रांतीय ईर्ष्या-द्वेप दूर करने में जितनी सहायता हिंदी प्रसार से मिलेगी, उतनी दूसरी चीज से नहीं।

यहॉ तक कि विदेशी विद्वानो ने भी हिदी की जरूरत को महसूस किया था। मैं आप लोगो को फ्रेंच विद्वान गार्सा द तासी के शब्दों का स्मरण दिलाना चाहूँगा। उन्होंने 18वी शताब्दी के मध्य मे यह बात कही थी—

> मैने तहरीर के लिए यह जबान अख्तियार की है, जो हिंदुस्तान के कई सूबों की जबान है। क्योंकि इसे आम लोग बखूबी समझते हैं और बड़े तबके के लोग भी पसद करते है।

अगर हम इसके पहले के थोड़े से राजनीतिक इतिहास पर जाएं, तो पता चलता है कि हैदराबाद के निजाम, मैसूर तथा अरकाट के सुल्तान अपने राज्यो मे दक्खिनी हिदी को विशेप प्रोत्साहन देते थे। तंजाउर के मराठा शासक भी हिंदी के समर्थक थे। मैसूर के सुल्तान टीपू और कोल्ली के राजा के बीच संधि-पत्र

की शर्तो में कोल्ली राज परिवार में हिंदुस्तानी शिक्षा पर जोर देने का उल्लेख मिलता है।

इससे लगता है कि मध्यकाल से ही राजनीतिक, सैनिक, व्यापारिक तथा सांस्कृतिक कारणों से हिंदी भाषा पूरे देश में प्रचलित हो गयी थी। यहां मैं इस बात का विशेष रूप से उल्लेख करना चाहूँगा कि हमारे सविधान निर्माताओं ने हिंदी को इसलिए राष्ट्रभाषा नहीं बनाया, क्योंकि यह एकमात्र श्रेष्ठ भाषा थी, या कि इसका साहित्य श्रेष्ठ था। मेरा मानना है कि हमारे देश की जितनी प्रमुख भाषाएँ हैं, उस सबके पीछे उनका अपना लंबा सांस्कृतिक इतिहास है, और उनका अपना महत्व है। लेकिन इन सबके बीच हिंदी को इसलिए राष्ट्रभाषा बनाया गया, क्योंकि यह देश के चारों ओर किसी–न–किसी रूप में फैली हुई थी और लोग इसे थोड़ा–बहुत समझते और बोलते थे।

मैं यहाँ विशेष रूप से इस बात का उल्लेख करना चाहूंगा कि संविधान ने हिंदी पर यह दायित्व डाला है कि वह "सामासिक संस्कृति" को अभिव्यक्त करने का माध्यम बने। मैं इस दायित्व को बहुत सही मानता हूँ। मुझे यह लगता है कि एक ऐसे देश में, जहां विचार और भावों की समानता हो, वहां किसी भी एक भाषा को सामासिक संस्कृति की अभिव्यक्ति का माध्यम बनाना आसान होता है, तो वहां विभिन्न भाषाओं के शब्दों और अर्थो में टकराव नहीं होता। खासतौर से लोकजीवन मे प्रचलित शब्दों तथा कहावतों एवं मुहावरों की व्यंजना बहुत कुछ एक जैसी होती है। इसलिए मुझे लगता है कि हिंदी भाषा विभिन्न भाषाओ के शब्दों के साथ–साथ उन भाषाओं के लोकजीवन के शब्दों को अपनाए और उन्हें अपनी प्रकृति के अनुरूप ढालकर उन्हें अपना बना ले। इससे न केवल सामासिक संस्कृति विकसित होगी, बल्कि स्वय हिंदीभाषा भी समृद्ध होगी। केवल इतना ही नहीं बल्कि इससे अन्य भाषाओ के लोग भी हिदी भाषा में अपनी पहचान स्पष्ट रूप से देख सकेंगे और यह वह बात होगी जिसके कारण लोग अनायास स्वाभाविक रूप से अपने–आपको इससे जुड़ा हुआ पाएंगे।

यहां अभी साहित्यकारों को सम्मानित किया गया है। इसलिए इस अवसर पर मैं एक बात यह भी कहना चाहूगा कि हमारे विद्वानों को एक भाषा के साहित्य को दूसरी भाषा में अनुवाद करने के काम को बढ़ाना चाहिए, और इन सबके बीच में हिंदी को एक ऐसी भाषा की भूमिका निभानी है, जिसमे देश की सभी भाषाओं का साहित्य उपलब्ध हो सके। अनुवाद को मैं एक ऐसा सेतू मानता हूँ,

जो दो साहित्यो के माध्यम से दो भापाइयों के हृदय को भी जोडता है तथा उनके भाव और विचारो मे एक्य स्थापित करता है।

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि हिन्दी के समाचारपत्रों और पत्रिकाओं में अन्य भापाओ की रचनाएँ अनूदित होकर आ रही है। साहित्य से संवंध रखने वाले कुछ संस्थान भी हिंदी अनुवाद के माध्यम से अन्य भापाओं का साहित्य पाठकों को उपलब्ध करा रहे हैं। इस काम को और भी व्यापक स्तर पर किया जाना चाहिए।

मै साहित्य का विद्यार्थी रहा हूँ। संस्कृत, हिदी और अग्रेजी मेरे विपय रहे हैं। मुझे यह लगता है कि हमारे साहित्य के पाठ्यक्रम में थोड़ा परिवर्तन किया जाना चाहिए। आज भी हिदी साहित्य का विद्यार्थी हिंदी साहित्य से भले ही परिचित हो जाए, लेकिन पाठ्यक्रम में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है कि वह भारतीय साहित्य से परिचित हो सके। स्नातक एवं स्नातकोत्तर स्तर पर कुछ ऐसे प्रश्नपत्र रखे जाने चाहिएँ, जिससे विद्यार्थी हिंदी साहित्य के अतिरिक्त अन्य भापा की मुख्य प्रवृत्तियों तथा प्रमुख रचनाकारो के बारे में जान सके। इससे विद्यार्थी का ज्ञान व्यापक तो इसके साथ-ही-साथ अन्य रचनाकारों के प्रति उसमें भावनात्मक लगाव पैदा होगा। केवल इतना ही नहीं, बल्कि भारतीय साहित्य का ज्ञान प्राप्त करने के बाद ही वह सच्चा स्नातकोत्तर कहला सकेगा। यह काम बहुत कठिन नहीं है, और बहुत महत्व का है। आधुनिक स्थितियो के संदर्भ में इसके बारे में सोचा जाना चाहिए।

मेरी शुरू से यह मान्यता रही है कि हमारे देश की जितनी भी भापाएँ हैं, वे सभी राप्ट्रीय भापाएँ हैं और हिदी को हम सबके बीच एक संपर्क भापा की भूमिका निभानी है। इसलिए मेरा यह मानना है कि अपनी मातृभापा को जानना और उसमे सृजन करना हमारा मातृधर्म है। ठीक इसी प्रकार हिंदी भापा को जानना हमारा राप्ट्र धर्म है। और हमें इन दोनों धर्मो को निभाना है। मेरा विश्वास हैं कि हमारे देश के लोग राष्ट्रीय हित के उच्च भावो से प्रेरित होकर इस दिशा मे अपना दायित्व निभायेंगे। यही देश के हित में है, हमारे हित में है, और हमारी आनेवाली पीढ़ी के हित में है।

मुझे यह जानकार प्रसन्नता हुई कि केंद्रीय हिंदी निदेशालय हिंदी सिखाने के क्षेत्र में आधुनिक दृश्य-श्रव्य तकनीक का भी उपयोग कर रहा है। अपने त्रिभापीय शव्दकोशों के प्रकाशन के माध्यम से भी विभिन्न भापाओ को एक-दूसरे के लिए

बोधगम्य बनाया जा रहा है। मैं समझता हूँ कि ऐसे त्रिभाषीय शब्दकोशों के सस्ते मूल्य पर लघु संस्करण भी प्रकाशित किये जाने चाहिए, ताकि लोग उन्हें खरीद सकें, और आसानी से उनका उपयोग भी कर सके।

कला और संस्कृति का विकास

इस केन्द्र का नाम हमारे देश के एक संवेदनशील दृष्टा, जनमानस से समरस राजनेता तथा सस्कृति एवं लोक कलाओं को राष्ट्र एवं मानवीय उन्नति में महत्वपूर्ण स्थान देने वाले पंडित जवाहरलाल नेहरू के नाम पर रखा गया है। इसे मैं बहुत सही मानता हूं। पंडित नेहरू को लोकमानस की बड़ी अच्छी समझ थी और उसी के अनुरूप उन्होने राष्ट्र विकास की कल्पना की थी। इसी दृष्टि से उन्होंने साहित्य अकादमी, ललित कला अकादमी तथा संगीत नाटक अकादमी आदि संस्थानों की स्थापना की थी। मेरा विश्वास है कि यह संस्थान पंडित नेहरू के दिखाए रास्ते पर एक आधुनिक भारत के मस्तिष्क के निर्माण में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा।

राजस्थान से मै लम्बे समय से जुड़ा हुआ हूं। यहां की लोक-कलाओं और संस्कृति से मैं अच्छी तरह परिचित हूं। इस राज्य को 'लोक-संस्कृति का खजाना' कहा जा सकता है। दीवाल, पुस्तक, कपड़ा, कागज और लकड़ी पर बने हुए यहां के चित्र आज विश्व स्तर पर सराहे जा रहे हैं। चित्रकला के क्षेत्र में मेवाड़ स्कूल, हाड़ोती स्कूल, मारवाड़ स्कूल और ढूढ़ांड़ स्कूल की बारीकियों और चटक रंगों ने लोगों का ध्यान अपनी ओर आकर्पित किया है। इन चित्रों में एक साथ भक्ति और शृगार, शौर्य और प्रेम, प्रकृति, इतिहास और लोकजीवन के चित्रण इस तरह मिलते हैं कि वे अपनी चित्रकारी में अपनी कथा कहते हुए मालूम पडते हैं।

राजस्थान की स्थापत्य कला मे भुजाओं की शक्ति तथा अंगुलियों की कारीगरी झलकती है। यहां के किले, महल तथा छतरिया राजपूत एवं परसियन स्थापत्य कला के समन्वय के सुन्दर नमूने हैं। इनमें सौंदर्य, सृजनात्मकता तथा उपयोगिता का अच्छा तालमेल देखने को मिलता है।

राजस्थान के पास लोक-नाट्य, लोक-गीत एवं संगीत की भी समृद्ध एवं गहरी परम्परा है। लोक-मंचों में ख्याल,गवरी, तमाशा, स्वांग, नौटंकी, भवाई तथा भांड आदि आज भी पहले के समान लोकप्रिय है। इनमे से अनेक लोक-नाट्य

जवाहर कला केन्द्र का उद्घाटन करते हुए, जयपुर, 8 अप्रैल, 1993

रूपों का प्रयोग हमारे वर्तमान रंगकर्मियों ने अपने नाटकों मे किया है। ऐसा किया जाना हमारे इन लोक-रूपों मे आधुनिक जीवन को अभिव्यक्त करने की क्षमता का प्रमाण है।

यहां के लोक-नृत्य ग्रासिया, तेरहताली और घूमर आदि यहां के लोक-जीवन और उत्साह को व्यक्त करते हैं। पर्वतीय क्षेत्र के पटेल्या और लालर एवं मरुस्थलीय क्षेत्र के कुरजां, पीपली तथा चूंघरी जैसे लोक-गीत लोगों के जीवन-मूल्यों को अभिव्यक्त करते हैं। सारंगी, इकतारा, चंग, पुंगी, खड़ताल की तानें यहां के लोकगीतों और लोकनाटकों में जबर्दस्त प्रभाव पैदा करते हैं।

राजस्थान मे रचे गए 'रागमाला' ग्रंथ को मैं यहा की लोक एवं नगरीय संस्कृति के समन्वय का सबसे सुन्दर प्रमाण मानता हूं। इन ग्रंथों में हमारे कवियों ने गाने और बजाने से जो भाव पैदा होता है, उनको शब्दों में बांधा है। इतना ही नहीं बल्कि चित्रकारों ने इन रागों को व्यक्ति का आकार भी दिया है। इस प्रकार इस ग्रंथ में साहित्य, चित्र, गीत और संगीत घुलमिल जाते हैं। लोक-संस्कृति से समृद्ध ऐसे राज्य में कला-केन्द्र की स्थापना न केवल उपयोगी है, बल्कि जरूरी भी है।

मैं समझता हूं कि हमारी लोक-संस्कृति के बारे में यह जानना बहुत जरूरी है कि ये चीजें केवल किसी कलाकार के दिमाग को ही व्यक्त नहीं करतीं, बल्कि आम लोगों के जीवन-मूल्यों और उनकी सोच को भी व्यक्त करती हैं, और ये जीवन-मूल्य और सोच राजस्थान के होते हुए भी पूरे देश के हैं। राज्यों की राजनैतिक सीमाएं रहती हैं, लेकिन कला, संस्कृति और सृजनात्मकता असीम होती है। इस सत्य को समझना आवश्यक है।

राजस्थानी लोक-संस्कृति में शौर्य, भक्ति, देश के प्रति त्याग, करुणा एवं अनुराग की भावना मिलती है। इसलिए मैं हमारी लोक-कलाओं को केवल कला की सम्पत्ति नहीं मानता, बल्कि हमारी चेतना की भी सम्पत्ति मानता हूं। मुझे यह बात बहुत जरूरी लगती है कि हमारी संस्कृति की इस ऐतिहासिक विरासत की रक्षा की जाए और उसे आधुनिक परिप्रेक्ष्य में लोगों तक पहुंचाया जाए।

हमारी कला में व्यक्त होते ये जीवन-मूल्य और कलात्मकता किसी वर्ग विशेष की नहीं, बल्कि हमारे देश के आम लोगों की है। जड़ों से पैदा हुई हमारी यह संस्कृति पूरे देश को एक-दूसरे से जोड़ती है। बल्कि मैं तो यहां तक कहना चाहूंगा कि केवल देश को ही नहीं जोड़ती, बल्कि अन्य देशों को भी जोड़ती

है। इन परस्पर संबध सूत्रों को बचाने का दायित्व सरकार पर, हमारे कलाकारों पर और हमारे लोगों पर है। लेकिन हमें यह काम बड़ी सजगता के साथ करना होगा। सजगता से मेरा मतलब यह है कि हमें उन सबको केवल इसलिए नहीं रखना है कि वे पुराने है। बल्कि हमे उन्हे चुनकर रखना है, जो आधुनिक परिप्रेक्ष्य में उपयोगी हैं, जो भविष्य के लिए बहुत उपयोगी होंगे और सबसे बड़ी बात यह है कि जिसमें भारतीय अस्मिता जीवंत हो तथा जो भारतीय अस्मिता को अभिव्यक्त करते हों।

पहले हमारी लोककलाओं को राजाओं का संरक्षण प्राप्त था। अब यह भूमिका हमारी राज्य-सरकारों को निभानी है। लेकिन यहां यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि ऐसी संस्था सही अर्थ में लोगो की संस्था बने। देश के लोग, विशेपकर लोक कलाओं से जुड़े हुए हमारे गाव के लोग अपने-आपको इससे सीधे-सीधे जुड़ा हुआ महसूस करें। सस्था की कार्य-प्रणाली ऐसी हो कि वह गांवों मे छिपी हुई कलात्मक क्षमता को सामने लाए, उसे दिशा दे, और उसे इस तरह से मदद दे, ताकि वह क्षमता स्वाभाविक रूप से फल-फूल सके। संस्था का यह दायित्व है कि वह हमारे लोगों मे एक कलात्मक मानसिकता का विकास करे और उनमें संरचनात्मकता का भाव पैदा करे। ऐसा होने से लोगों की रचनात्मक क्षमता का लाभ जीवन के अन्य क्षेत्रों को भी मिल सकेगा।

सस्था को यह भी देखना है कि वह अपने यहां की एक कलात्मक क्षमता को अन्य राज्यो की कलात्मक क्षमता से जोड़े ओर इस प्रकार परस्पर आदान-प्रदान द्वारा भारतीयता के स्वरूप को आधुनिक परिप्रेक्ष्य में रखकर उसकी सार्थकता स्थापित करे।

मैं यहां यह बात विशेप रूप से कहना चाहूगा कि हमारी कला और सस्कृति किसी संग्रहालय में रखने की चीज नहीं हैं। ये सब हमारी परम्परा के जीवंत तत्व हैं, जो हमारे लोगों के रोजमर्रा के व्यवहार में व्यक्त होते रहते हैं। यह ऐसी सम्पत्ति है, जो भारत के लिए ही नहीं, बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति के लिए उपयोगी है। इसलिए इस सांस्कृतिक सृजनात्मकता को कैद करके दबाकर नहीं रखना है, बल्कि इसे विमुक्त करके विस्तृत होने के साधन उपलब्ध कराने है।

मुझे इस समय पंडित नेहरू के वे शब्द याद आ रहे हैं, जो उन्होने रामधारी सिह 'दिनकर' की पुस्तक 'संस्कृति के चार अध्याय' की भूमिका में लिखे हैं। उन्होंने लिखा है-

संस्कृति का भंडार संस्कृत

मैं संस्कृत भापा को मानव जाति के अत्यंत प्राचीन, सार्वभौमिक तथा गूढ़ चितन के भार को वहन करने वाली अनुपम भापा मानता हू। आज से सहस्रों साल पहले यह भापा अपनी पूर्ण, अभिव्यक्ति क्षमता, भापागत सौंदर्य, समृद्ध शब्द-भंडार और ध्वनिगत लालित्य के साथ हमारे सामने थी। इस भापा के पास ऐसी शक्ति है कि इसमे जहा एक ओर कविताएं और नाटक लिखे गए, वहीं दूसरी ओर चिकित्सा-शास्त्र, औपध-विज्ञान, ज्योतिप-शास्त्र, आध्यात्मिक चितन, नीति-शास्त्र, व्याकरण शास्त्र तथा राजनीतिक विज्ञान जैसे विपयो का प्रणयन हुआ है। इसलिए सर विलियम जोस जव रायल एशियाटिक सोसाइटी आफ वगाल को सम्बोधित करते हुए इस भापा को "यूनानी भापा से अधिक परिपूर्ण, लैटिन से अधिक समृद्ध तथा इन दोनों से उत्कृप्ट और सुसंस्कृत भापा" कहते हुए इसकी सरचना पर आश्चर्य व्यक्त करते है, तो वे इस भापा की इसी अभिव्यक्ति की क्षमता की ओर संकेत करते है। पश्चिमी विद्वान ब्लूमफील्ड संस्कृत भापा को व्याकरणिक स्वरूप देने वाली पुस्तक 'पाणिनी की अप्टाध्यायी' को जब मानव-मस्तिप्क की सर्वोत्तम देन कहते है, तो उनका भी स्पप्ट संकेत इस भापा की जीवन-शक्ति और सवाद-शक्ति की ओर ही है।

मुझे पिछले कुछ वर्पो से अनेक राजनेताओ एव विद्वानो से मिलने का अवसर मिलता रहा है। मैने बातचीत के दौरान इस वात का अनुभव किया कि विशेपकर पश्चिमी देशों मे आज भी सस्कृत भापा के प्रति गहन श्रद्धा का भाव है और वे इसे कम्प्यूटर के लिए सर्वाधिक आदर्श भापा मानते हैं। कुछ देशों में तो माध्यमिक स्तर के पाठ्यक्रमों मे वैदिक गणित विपय को शामिल ही कर लिया गया है। अमरीका, ब्रिटेन, जर्मनी और फ्रास जैसे विज्ञान की दृप्टि से विकसित राप्ट्र आज खुले मन से सस्कृत भापा के महत्व को स्वीकार करते है और उस पर अनेक तरह के शोध-कार्य कर रहे हैं।

मै इस समय पंडित जवाहरलाल नेहरू के उन शब्दों की याद दिलाना चाहूंगा,

---

त्रिदिवमीय अखिल भारतीय सस्कृत सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए, दिल्ली, 10 जून, 1993

जिसमे उन्होने हमारे भविष्य के सदर्भ में संस्कृत भापा को रेखाकित करते हुए कहा था-

> अतीत गुजर गया है, वर्तमान हमारे साथ है और हम भविष्य के लिए काम कर रहे हैं। लेकिन मुझे इसमे कोई शक नहीं है कि चाहे भविष्य जो भी रूप अख्तियार करे, हमारे पूर्वजों की एक सबसे बड़ी, सबसे मजबूत, सबसे ताकतवर और सबसे कीमती धरोहर होगी-सस्कृत भापा।

इस बात मे तनिक भी सदेह नही है कि हमारे चिंतन की सर्वोत्तम निधियां सस्कृत भापा में सुरक्षित है। मैं यह मानता हू कि इतिहासकार तथा समाजशास्त्री हमारी राष्ट्रीयता की आज जिस रूप मे भी व्याख्या करे, लेकिन उसकी मूल अवधारणा हमारे सस्कृत साहित्य में पहले से ही विद्यमान थीं। पूरे विश्व को एक कुटुंब मानना, सम्पूर्ण मनुष्य जाति को एक जाति मानना तथा सबके सुख की कामना करना-जैसे उदात्त एव महान विचार संस्कृत भापा की देन हैं। इन्हें ही वर्तमान की शब्दावली मे राष्ट्रीयता धर्मनिरपेक्षता और मानव-अधिकार कहा जाता है। हमारी इस विरासत से परिचित होना देश के हर व्यक्ति के लिए जरूरी है। इसलिए मुझे लगता है कि यदि हमारे वैज्ञानिको, चितको तथा समाजशास्त्रियों को सस्कृत भापा का ज्ञान कराया जाए तो वे निश्चित रूप से मानव की आवश्यकता और आकाक्षाओ से परिचित होकर अपने काम को मानव-हित के सर्वाधिक अनुकूल बना सकेगे।

मैं इस बात को स्वीकार करता हूं कि सस्कृत भारत की भापाओं की जननी रही है। 'सगम साहित्य' में अनेक शव्द सस्कृत के हैं। वर्तमान दक्षिण भारतीय भापाओ मे भी संस्कृत शव्द ढूढ़ने की जरूरत नही पडेगी, क्योकि वे अत्यत स्पप्ट है। हमारे सामने इस बात का प्रमाण है कि किस प्रकार केरल के आदिशंकराचार्य ने सस्कृत भापा के माध्यम से पूरे देश को अपना सदेश दिया। अलवार सतो का सदेश भक्ति-आदोलन के माध्यम से उत्तर भारत में पहुचा और जन-जन पर छा गया। इसलिए मुझे यह लगता है कि सस्कृत भापा वह केन्द्रीय भापा है, जिसके माध्यम से देश की अन्य भापाओ को आसानी से सीखा जा सकता है। बापू ने तो सस्कृत भापा को 'गगा नदी' की तरह माना था, जिससे कि हमारे देश की अन्य भापाएं जीवन और शक्ति प्राप्त करती हैं। सस्कृत भापा के अध्ययन को आवश्यक बताते हुए 'हरिजन' के 23 मार्च, 1940 के अंक मे बापू ने लिखा था-

> प्रत्येक राष्ट्रवादी को संस्कृत भापा पढ़नी चाहिए, क्योंकि
> इससे प्रांतीय भापाओ का अध्ययन अपेक्षाकृत सरल हो जाता है।
> यह वह भापा है, जिसमें हमारे पूर्वजों ने सोचा और लिखा।

मुझे संस्कृत भापा का ज्ञान इसलिए भी आवश्यक मालूम पड़ता है, क्योंकि इसमें हमारी संस्कृति के वे तत्व सुरक्षित हैं, जो व्यक्ति मे सस्कार डालते हैं। मुझे याद है कि जब हम लोग बच्चे थे, उस समय नीति सबंधी अनेक सुभापित श्लोक हमे कंठस्थ कराए जाते थे, जो आज तक याद है और उन श्लोकों का आचरण और व्यवहार पर बड़ा सकारात्मक प्रभाव पडता था। इसलिए मै चाहूंगा कि दिल्ली सस्कृत अकादमी ऐसे सुभापित श्लोको की हिन्दी और अग्रेजी मे व्याख्या करके छोटी-छोटी पुस्तके प्रकाशित करे और उन्हें विशेपकर बच्चो तक जरूर पहुंचाए।

बच्चो को वैकल्पिक भापा के रूप में संस्कृत सीखने की सुविधा दी जानी चाहिए और कोशिश होनी चाहिए कि इसके लिए विशेपकर गर्मी की छुट्टियों में कक्षाएं लगाई जाएं और पढाने की शुरुआत सस्कृत के कठिन व्याकरण से न की जाए। सस्कृत भापा के लिए दूरदर्शन जैसे प्रभावशाली माध्यम का उपयोग किया जाना चाहिए और इसे क्षेत्रीय भापाओ के माध्यम से सिखाने की कोशिश होनी चाहिए। देश के विभिन्न विद्वानो को चाहिए कि वे सस्कृत-साहित्य का अपनी भापाओं मे अनुवाद करें। ऐसा इसलिए जरूरी है, ताकि इस भापा की निरंतरता बनी रहे और आने वाली पीढ़ियों को यह विरासत सौंपी जा सके। हमें यह याद रखना है कि संस्कृत मे ज्ञान, विज्ञान और चितन का अक्षय भंडार है। हमारे लोगो को संस्कृत भापा के माध्यम से इस ज्ञान को जानना है और इसके लिए सभी को मिलकर प्रयास करना है।

मुझे यह जानकार अत्यत प्रसन्नता हुई कि इस सम्मेलन में जिन महत्वपूर्ण बिंदुओ पर विचार किया जाएगा, उनमें सस्कृत भापा के सबध में व्याप्त भ्रातियां, संस्कृत पर आधारित कर्मकाडो के वैज्ञानिक अध्ययन तथा जन-जीवन मे सस्कृत एवं संस्कार जैसे विपय शामिल है। ये बिन्दु निश्चित रूप से वर्तमान के सदर्भ में जहां सस्कृत भापा की व्यावहारिकता को प्रमाणित करेंगे, वही भविष्य के लिए भी एक सुगम रास्ता तैयार कर सकेगे। मुझे विश्वास है कि इस सम्मेलन मे बौद्धिक बहस के दौरान कुछ ऐसे निप्कर्प प्राप्त किए जाएंगे जिससे संस्कृत भापा के विकास और उसके प्रचार और प्रसार मे मदद मिलेगी।

संस्कृति की प्रतीक हिन्दी

इस पुरस्कार का नाम हमारे देश की स्व. प्रधानमत्री श्रीमती इदिरा गांधी के नाम पर रखा गया है। मैं इसे उपयुक्त मानता हूं। मैंने यह पाया कि उनमें हमारे देश की सास्कृतिक विरासत के प्रति गहरी आस्था थी और वे हमेशा इस प्रयास मे रहती थीं कि इस विरासत की रक्षा की जाए। भाषा को वे इस संस्कृति का वाहक मानती थीं। उन्होंने 8 अप्रैल, 1967 को दिल्ली में हुए मुख्यमंत्रियों के सम्मेलन में अत्यंत महत्वपूर्ण बात कही थी। मैं उसे आज आप लोगों के सामने दोहराना चाहूंगा उन्होंने कहा था-

> सभी भाषाएं हमारी संस्कृति की धाराएं हैं, जो एक साथ मिलकर भारतीय चितन और परम्परा की विशाल नदी का निर्माण करती हैं। उनमें से किसी की भी उपेक्षा करना हमारी महान विरासत को झुठलाना होगा।

इसके साथ ही उनका यह भी कहना था-

> लेकिन हम सबके लिए यह भी आवश्यक है कि हम सभी एक-दूसरे को समझ सकें। यही कारण है कि राष्ट्र की एक सम्पर्क भाषा की जरूरत महसूस की गई।

मैंने इस बात की चर्चा यहां जान-बूझकर इसलिए की ताकि हम इस बात को स्पष्ट रूप से समझ सकें कि हमारे देश की जितनी भाषाएं हैं, उन सबके सौहार्द्रपूर्ण संबधों से ही राजभाषा विकसित हो सकती है तथा इसके साथ-ही-साथ अन्य भाषाएं विकसित हो सकती हैं। भाषा के क्षेत्र में किसी भी तरह के विवाद, तनाव तथा आपसी टकराव भाषा की शक्ति को कमजोर ही करते हैं।

यह बताने की आवश्यकता नहीं है कि हिन्दी को राजभाषा बनाने, उसे विकसित करने तथा उसका प्रचार-प्रसार करने में बहुत बड़ा योगदान अहिंदीभाषियों का रहा है। हमारी आजादी की लड़ाई के समय यह हमारे नेताओं की भाषा रही। राजा राममोहन राय ने जब 1826 में कलकत्ता से 'बंगदत्त' नामक साप्ताहिक

इदिरा गाधी राजभाषा पुरस्कार वितरण समारोह मे, नई दिल्ली, 26 जून, 1993

निकाला था, तो उसमें हिन्दी की रचनाओं को भी स्थान दिया था। सन् 1875 में केशवचन्द्र सेन ने अपने पत्र 'सुलभ समाचार' में लिखा कि 'हिन्दी को यदि भारत वर्ष की भाषा स्वीकार कर लिया जाए, तो सहज में एकता सम्पन्न हो सकती है।'' सुभाष चन्द्र बोस बंगलाभाषी थे। बापू गुजराती थे। स्वामी दयानंद सरस्वती ने गुजराती होते हुए भी अपना "सत्यार्थ प्रकाश" हिन्दी में लिखा। लोकमान्य तिलक ने राष्ट्रीय स्वाभिमान और सुविधा की दृष्टि से हिन्दी को ही उपयुक्त सम्पर्क भाषा ठहराया और देश में जगह-जगह हिन्दी के पाठ आरम्भ करने के लिए देशप्रेमी कार्यकर्त्ताओं को सूचित किया।

राष्ट्रकवि सुब्रह्मण्यम भारती ने राष्ट्रीय एकता और आवश्यकता की भावना से प्रेरित होकर हिन्दी की कक्षाएं चलाई। लोकमान्य तिलक भी ऐसा ही चाहते थे। इसके लिए मैं आप लोगों के सामने भारती जी द्वारा तिलक को 29 मई, 1908 को लिखे पत्र का उद्धरण रखना चाहूंगा। इस पत्र में भारती जी ने लोकमान्य को प्रिय गुरुजी का सम्बोधन देते हुए लिखा था-

> हमसे कहा गया है कि हम...हिन्दी पाठ की एक कक्षा खोलें। हमने तो पहले ही एक छोटी-सी कक्षा खोल रखी है। उम्मीद है कि आने वाले दिनों में इस कक्षा के द्वारा अध्ययन करने वालों की संख्या में वृद्धि होगी।

हमारी आजादी की लड़ाई के राष्ट्रीय नेताओं की यह दृढ़ धारणा थी कि आजादी के बाद हमारे लोगों की आकांक्षाओं को पूर्ण सम्मान मिलना चाहिए। इसलिए यह आवश्यक है कि हमारी सभी भारतीय भाषाओं, विशेषकर हिन्दी भाषा और उसके साहित्य को समृद्ध बनाया जाए, ताकि उसमें हर तरह के भाव और विचारों को व्यक्त करने की क्षमता आ सके। ऐसा केवल राष्ट्रीय एकता के लिए ही आवश्यक नहीं है, बल्कि हमारे देश के विकास के लिए भी आवश्यक है।

हमें अपने देश की भाषाओं की क्षमता का पूरा-पूरा उपयोग करना है। अपनी भाषाओं को विशेषकर हिन्दी भाषा को आधुनिक ज्ञान और विचारों की भाषा बनाने के प्रयास करने हैं ताकि राष्ट्र-विकास के काम से देश का जन-जन जुड़ सके।

कुछ लोग ऐसा कहते हैं कि हिन्दी भाषा के पास वह शब्द-भंडार नहीं है, जिसमें विज्ञान अर्थशास्त्र तथा अन्य नए विषयों की अभिव्यक्ति हो सके। मैं इससे सहमत नहीं हो पाता। मैं यह मानता हूं कि किसी भी भाषा में ताकत उसके उपयोग करने से आती है। और जब हम किसी भाषा का उपयोग करते हैं उस

समय हमे व्यावहारिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए।

भापा की शव्द-शक्ति दो तरीकों से वढ़ सकती है। पहला तो यह कि वह भापा नए-नए शव्द गढ़े तथा दूसरा यह कि वह भापा अन्य भापाओं के शव्दों को अपने में पचाकर उन्हे अपना वनाए। स्वयं अंग्रेजी भापा में हजारो शव्द अन्य भापाओं के हें। हिन्दी में भी अन्य भारतीय तथा विदेशी भापाओ के हजारो शव्द हैं। वर्तमान मे हिन्दी में करीब 15 से 20 हजार शव्द अन्य भापाओं के हैं। इसलिए हिन्दी को एक जीवंत भापा बनाने के लिए हमें अपने देश की भापाओ तथा बोलियों के शव्दों और यहां तक कि विदेशी भापाओ तक के शव्दों को स्वीकार करने में नही हिचकना चाहिए।

में समझता हूं कि जब इस तरह की कोशिश की जाएगी, तव हिन्दी भापा मे स्वय ही वह क्षमता आ जाएगी, जिसका दायित्व हमारे सविधान-निर्माताओं ने उसे सौपा था। सविधान के अनुच्छेद 351 में हिन्दी के ऊपर यह दायित्व डाला था कि वह "भारत की सामासिक सस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम वन सके।" अभिव्यक्ति का यह माध्यम भापा के अधिक-से-अधिक उपयोग तथा अधिक-से-अधिक आदान-प्रदान के द्वारा वनना है, न कि कृत्रिमता के द्वारा।

देश की भापाओं को नजदीक लाने का काम अनुवाद के जरिये अच्छी तरह से हो सकता है, ओर यही राजभापा हिन्दी की भूमिका महत्वपूर्ण हो जाती है। हमारे देश की सभी भापाओ के वीच मे हिन्दी भापा को एक ऐसी केन्द्रीय और सम्पर्क भापा की भूमिका निभानी है कि यदि किसी भी व्यक्ति को किसी भी भापा के साहित्य की जरूरत हो, तो वह उसे हिन्दी के माध्यम से प्राप्त हो जाए।

हमें यह देखना होगा कि कहीं ऐसा तो नहीं कि राजभापा के रूप में जो भापा विकसित हो रही है, वह जनभापा से दूर हे। भापा-शास्त्री इस बात को अच्छी तरह से जानते हैं कि भापा का इतिहास इस बात का गवाह है कि जव भी कोई भापा जनभापा से दूर होती है, उसकी ताकत कमजोर पडने लगती है और वह धीरे-धीरे अतीत की वस्तु बनने लगती है। हमें यह अनिवार्य रूप से ध्यान रखना होगा कि राजभापा का मतलव 'सरकारी भापा' से नहीं है, वल्कि 'जनभापा' से है। यह भापा ऐसी होनी चाहिए, जिसे लोग समझ सके, उपयोग में ला सकें तथा अपनी वात दूसरों को समझा सकें। उसे "चट्टानो के वीच ठहरा

हुआ नीर'' नहीं बनना है, बल्कि ''चट्टानो पर से बहता एव झरता हुआ नीर'' बनना है।

हमारे यहा बैंक, रेलवे, बीमा निगम जैसे अनेक सस्थान हैं, जिनसे लोगों का प्रतिदिन का वास्ता पड़ता है। इनमे बड़ी सस्था उन लोगों की होती है जो बहुत अधिक पढ़े-लिखे नहीं होते। इसलिए ऐसे उपक्रमो को एक ऐसी भापा विकसित करनी चाहिए, जिसे लोग सहज रूप में स्वीकर कर ले तथा स्वत स्फूर्त रूप में उसका उपयोग करने को आगे आए।

इस अवसर पर मैं अपने देश के रचनाकारो और चितको से यह कहना चाहूगा कि वे हिन्दी को अनुवाद की भापा से ऊपर उठाकर मौलिक चितन की भापा बनाने मे अपना योगदान करें। मुझे ऐसा लगता है कि जब हमारा चितन अपनी भापा में होता है, तो उस चिंतन में हमारी सस्कृति की गंध स्वाभाविक रूप से समा जाती है। अपनी भापा मे चिंतन करने और उसे अपनी ही भापा में अभिव्यक्ति देने से उसकी प्रभावशीलता बढती है। विश्व मे अनेक ऐसे देश है, जिनकी भापा हालाकि समृद्ध नहीं थी, किन्तु उन्होने अपनी भापा मे चितन किया, उसे अभिव्यक्त किया और आज वे उन्नत राष्ट्रो की श्रेणी मे है। फिर हिन्दी तो एक समृद्ध भापा है, और उसकी नाल सस्कृत जैसी श्रेष्ठ एव प्राचीन भापा से जुड़ी हुई है।

भापा देश के सभी लोगो की साझी विरासत होती है, इसलिए इसके प्रति सबका साझा दायित्त्व बनता है। मै अपने देश के लोगो से कहना चाहूगा कि वे जहा कही भी और जिस स्थिति मे भी हैं, राजभापा के प्रति अपने दायित्वों को पूरा करने मे कोई कमी न रखे।

मुझे विश्वास है कि देश के लोग भापा के प्रति उदार भावना से सचालित होकर अपने कर्तव्यों का निर्वाह करेंगे।

शिक्षक, शिक्षा और समाज

शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण सेवा के लिए राष्ट्र द्वारा सम्मानित शिक्षकों के इस प्रभावशाली आयोजन में उपस्थित होकर मुझे अत्यंत प्रसन्नता है। मैं इस वर्ष राष्ट्रीय पुरस्कार पाने वालों को अपनी बधाई और शुभकामनाए देता हू। कुछ चुने हुए शिक्षकों को यह पुरस्कार देकर सही मायने में हम देश भर के शिक्षकों को राष्ट्रीय विकास मे उनके समर्पित कार्यो के लिए सम्मानित करते है। यह पुरस्कार हमारे देश के विभिन्न भागो के प्रतिभाशाली एव समर्पित शिक्षको के सतत् प्रयासो की प्रशसा का एक प्रतीक है।

मैं इस अवसर पर पूरे शिक्षक समुदाय का अभिनंदन करता हू, जिन्हें हमारे देश की राष्ट्रीय एकता, सद्भाव और समन्वय की शक्तियो को मजबूत करने के लिए मिलकर काम करना चाहिए।

जिन शिक्षकों ने आज पुरस्कार प्राप्त किए है, उन्होंने अनुकरणीय उदाहरण पेश किया है। शिक्षक केवल अपने लिए ही जिम्मेदार नहीं होता, बल्कि वह पूरे समाज के लिए जिम्मेदार होता है। वह लोगों द्वारा स्थापित तथा पोपित किए गए उच्च जीवन-मूल्यो का रक्षक तथा उन मूल्यों को अपने छात्रो मे संचारित करने वाला होता है। शिक्षक की इस प्रकार की भूमिका की बात स्वतत्रता संघर्ष के दौरान राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने हम लोगो को बताई थी। स्वतत्रता सघर्प के समय हमारे नेताओं के चारित्रिक और नैतिक कद तथा अनगिनत स्वतत्रता सेनानियों के कारण आदोलन आगे बढ सका था।

यह सबसे अधिक महत्वपूर्ण बात है कि हर बच्चे के मन मे सही मूल्य, चरित्र, नैतिक व्यवहार तथा राष्ट्रीयता की भावना प्रस्थापित की जाए। यह हमारे बच्चो के सही विकास और राष्ट्रीय हित के लिए बहुत अधिक जरूरी है। सच्ची शिक्षा का संबध लोगो के दिमाग में सकारात्मक दृष्टिकोण और चितन पैदा करना होता है। जब यह सारे गुण मिलते हैं, तो उससे उत्तम और मजबूत चरित्र बनता है।

शिक्षक-दिवस के अवसर पर पुरस्कार वितरण करते हुए, नई दिल्ली, 5 सितम्बर, 1993

हम इस काम के लिए शिक्षक समुदाय की ओर देखते हैं और उन पर निर्भर करते हैं। यह बहुत ही अधिक जरूरी है कि अंततः शिक्षक को हमारे बच्चों के चरित्र और व्यवहार को यथासम्भव अच्छी से अच्छी तरह से ढालना और रूप देना है।

डॉ. राधाकृष्णन की जन्म-तिथि को हम 'शिक्षक दिवस' के रूप में मनाते है। हमारे समय के इस महान विद्वान और चितक ने शिक्षा के इस उद्देश्य के प्रति हमारा ध्यान आकर्पित करते हुए कहा था ·

> इस सच्चाई के बावजूद कि विज्ञान के आविष्कारों ने हमें प्रकृति की गुलामी से आजाद किया है, हम सांस्कृतिक विखंडन से पैदा हुए एक प्रकार के मानसिक रोग से ग्रस्त है। विज्ञान ने हमें गरीबी के चंगुल से राहत दिलाई है, शारीरिक तकलीफो को कम किया है। फिर भी हम एक आतरिक अकेलेपन से त्रस्त हैं। यदि हमे आज इससे बचे रहना है, तो सम्पूर्ण विश्व को चारित्रिक और आध्यात्मिक परिवर्तन को स्वीकार करना होगा।

शिक्षा और विज्ञान को मुक्तिदाता कहा जाता है-अज्ञान, पिछड़ेपन और रोगों से मुक्त करने वाला। लेकिन शक्ति और अज्ञान की महान शक्तियों का उपयोग पूरी विनम्रता के साथ सेवा की भावना से किया जाना चाहिए। सचमुच सच्चा ज्ञान और शिक्षा इसी गुण को सिद्ध करते है, जो जीवन को सार्थक बनाते हैं। कहा गया है ·

विद्या ददाति विनय, विनयाद्याति पात्रताम्।

''तैतरेय उपनिषद्'' मे दीक्षात सम्बोधन का प्रारम्भ ''सत्यम् वद, धर्म चर'' से होता है। यह शब्द इस बात पर जोर देता है कि विवेक तभी आ सकता है, जबकि हम नैतिक और आध्यात्मिक गुण से जुड़े हों। शिक्षा के माध्यम से इसको पूरा करने की बड़ी जिम्मेदारी हमारे शिक्षकों पर है।

मित्रो, जैसा कि आप सब जानते हैं, अपनी शिक्षा-प्रणाली को नया रूप देने के लिए हम पिछले कई सालो से कोशिश कर रहे हैं। हालांकि हमारे देश के शैक्षणिक स्वरूप मे तेजी से फैलाव आया है, लेकिन इस बात से भी इंकार नहीं किया जा सकता कि शिक्षा के उद्देश्य और पद्धति में परिवर्तन आना अभी बाकी है। हमें यह समझना है कि राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल भारत की

शिक्षा पद्धति को फिर से बनाए जाने की जरूरत है। शिक्षा की अनेक खामियो को समर्पित शिक्षकों की मदद से दूर किया जा सकता है। इसलिए शिक्षा कार्य के लिए प्रतिभावान लोगों की भर्ती की जानी चाहिए। तभी शिक्षा की पूरी सकारात्मक ताकत को सक्रिय किया जा सकेगा। इस बारे में मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि यदि शिक्षा के द्वारा मस्तिष्क को उसकी पूरी क्षमता के अनुकूल कार्य करने योग्य बनाना है, यदि शिक्षा को हमारे राष्ट्रीय जीवन की समस्याओं को सुलझाने वाला सहयोगी बनाना है, तो स्कूल से लेकर विश्वविद्यालय स्तर की सभी शैक्षणिक संस्थाओ को चेतना मे सक्रिय परिवर्तन लाने का केन्द्र बनना होगा तथा स्वय को अनुभवो और मूल्यों का आदान-प्रदान करने वाले केन्द्र के रूप में विकसित करना होगा। इन संस्थानों को केवल ज्ञान प्राप्ति का केन्द्र न बनकर उस ज्ञान के सही उपयोग किए जाने का केन्द्र बनना है। इन्हे केवल व्यक्तिगत प्रतियोगी महत्वाकाक्षाओं की पूर्ति का साधन न बनकर मानवता की सेवा के लिए प्रेरित करने वाला केन्द्र बनना है।

मुझे विश्वास है कि इस उद्देश्य के लिए आप जैसे बुद्धिमान और संकल्पशील शिक्षक भविष्य मे और अधिक सख्या मे सामने आएगे। बिना आपकी सहायता के हम अपने लोगो का जीवन बेहतर बनाने के रास्ते में आने वाली चुनौतियो का सामना करने मे सक्षम नही हो सकेगे। इसलिए यह उचित ही है कि राष्ट्रीय शिक्षा-नीति में शिक्षकों पर बहुत अधिक विश्वास करके उन पर राष्ट्रीय आवश्यकताओं के अनुकूल शिक्षा-पद्धति को तेज करने की जिम्मेदारी डाली गई है। उन पर यह जिम्मेदारी डाली गई है कि वे विद्यार्थियो मे वैज्ञानिक चेतना और तार्किक दृष्टिकोण पैदा करने के लिए एक ऐसा वातावरण बनाएं, जो उनमे स्वायत्तता और रचनात्मकता को बढावा दे सके।

इसके लिए शिक्षको को प्रशिक्षण दिया जाना बहुत मायने रखता है, ताकि उनकी दक्षता लगातार बढती रहे। गुरुदेव रवीन्द्र नाथ टैगोर ने कहा था

> एक शिक्षक तब तक सच्चा शिक्षक नही हो सकता, जब तक कि वह स्वय न सीख रहा हो। एक दीपक तब तक दूसरे दीपक को नहीं जला सकता, जब तक कि वह स्वयं न जल रहा हो। वह शिक्षक, जिसने अपने विषय का अत मान लिया है, जिसको अपने विषय के ज्ञान से कोई सरोकार नहीं है और जो अपने विद्यार्थियो को केवल पाठ दोहराता रहता है, वस्तुत उनके दिमाग को बोझिल

बनाता रहता है। वह उनमें जागृति पैदा नहीं कर सकता।

एक देश और एक सस्कृति के रूप में विविधता मे एकता भारत के अस्तित्व का सार रहा है। आज पहले से भी अधिक यह जरूरी है कि हमारे शिक्षक और विद्यार्थी हमारे राष्ट्रीय जीवन से जाति, धर्म और क्षेत्र की सकीर्ण भावनाओ को समाप्त करने के लिए एकजुट होकर संघर्ष करें। उन्हे एक ऐसे रास्ते को आलोकित करना है, जो चेतना को उदार बनाता है, अपने आप पर तथा एक मजबूत और आत्मनिर्भर भारत के भविष्य के प्रति आस्था पैदा करता है।

मेरी समझ मे यह एक ऐसा अवसर है, जब हमे अपने शिक्षक समुदाय की कुछ भौतिक जरूरतो की ओर भी ध्यान देना चाहिए, ताकि उनकी कुछ बाधाओं को दूर किया जा सके तथा विशेपकर प्राथमिक स्कूल के शिक्षक अपना काम कर सके। हम अपने शिक्षको को न्यूनतम जीवन स्तर दे पाने के उद्देश्य से काफी दूर है, किन्तु सौभाग्यवश विचार और भावना के स्तर पर माना जा रहा है कि शिक्षा में सुधार के लिए शिक्षको के जीवन-स्तर तथा काम करने की परिस्थितियों में सुधार लाना पहली और बड़ी जरूरत है। यदि शिक्षा का कार्य भी अन्य क्षेत्रों की तरह आकर्पक बनाया जा सके, तो हमारी शिक्षा-प्रणाली मे गुणात्मक परिवर्तन लाना सम्भव हो सकेगा और आज की इस जरूरत को पूरा किया जा सकेगा।

मित्रो, अनेक वर्पो तक विद्यार्थी और शिक्षक रहने के नाते मैं आज शिक्षकों और विद्यार्थियो के बीच उपस्थित होकर प्रसन्न हू। हमारे भविष्य के चितन को स्वरूप देने मे शिक्षको की महत्वपूर्ण भूमिका है। वे सामाजिक रूप से जितने अधिक जागरूक होंगे, कर्तव्यो के प्रति जितने अधिक सतर्क होंगे, रचनात्मक सोच एवं तार्किक मूल्याकन के रास्ते मे आने वाली रुकावटो के प्रति जितने अधिक सचेत होंगे, तथा आपस मे एव अन्य लोगो को साथ अपने विचारों के आदान-प्रदान के लिए जितने अधिक चितित होगे, भारत के सामाजिक और आर्थिक विकास के इन निर्णायक वर्पो मे वे हमारे लिए उतने ही उपयुक्त होगे।

व्यक्तित्व विकास में शिक्षा

"27 वें अन्तर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस" के इस उद्घाटन समारोह में शामिल होकर मुझे अत्यत प्रसन्नता हो रही है। मेरी यह खुशी इसलिए और भी अधिक है, क्योकि मैं लगातार तीसरे वर्ष इसमे शामिल हो रहा हूं। मुझे आमन्त्रित करने के लिए मैं मानव ससाधन विकास मत्रालय को धन्यवाद देता हूं तथा पूरे विश्व मे साक्षरता अभियान में लगे शैक्षिक एव सरकारी सस्थानो के समर्पित प्रयासो के लिए उनकी सराहना करता हू।

मै इस अवसर पर आदरणीय मदर टेरेसा का अभिवादन करता हूं, जिन्हे वर्ष 1992 का यूनेस्को शाति-शिक्षा पुरस्कार दिया गया है। मदर टेरेसा ने विश्वभर के करोडो लोगो के हृदय और मस्तिप्क को अभिभूत किया है। उनका उदात्त जीवन गरीवो और दलित लोगों की सेवा को पूरी तरह से समर्पित है। मदर टेरेसा का सम्मान करके हम प्रेम और करुणा का सम्मान कर रहे है, जो क्षेत्र, नागरिकता और राष्ट्रीयता की सीमाओं से परे होती है।

मै इस अवसर पर 'यूनेस्को, 1993 अन्तर्राष्ट्रीय पुरस्कार' पाने वालो को भी अपनी बधाई देता हूं। यह खुशी की बात है कि 'यूनेस्को का नोमा पुरस्कार' इस बार 'इंडियन यूनेस्को फैडरेशन ऑफ यूनेस्को क्लव एड एसोसिएशन' को दिया गया है। हमें इस वात की प्रसन्नता है कि भावनगर जिला साक्षरता समिति का उल्लेख साक्षरता के प्रसार के लिए किए गए उसके सकल्प और कार्यो की पहचान के लिए अतरराष्ट्रीय जूरी ने 'नोमा पुरस्कार' के लिए किया है। मुझे विश्वास है कि इसकी उपलब्धियॉ साक्षरता के चुनौतीपूर्ण काम में लगे हुए सभी सगठन एवं निकायों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगी।

मैं यहॉ 'सबेंता नेशनल इंस्टिट्यूट आफ स्विटजरलैंड' तथा 'इलीटेरेसी इरेडिकेशन एंड अडल्ट एज्यूकेशन प्रोजेक्ट, जोर्डन' के प्रतिनिधियो का स्वागत करता हूँ। इन्हे इनके महत्वपूर्ण योगदान के लिए यूनेस्को का साक्षरता पुरस्कार

27वे अतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस समारोह का उद्घाटन करते हुए, नई दिल्ली, 8 सितम्बर, 1993

दिया गया है। इसके साथ ही मैं अन्य सभी पुरस्कार विजेताओं को अपनी बधाई देता हूँ।

मित्रो, जैसा कि आप सब जानते है, अतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस प्रति वर्ष 8 सितंबर को मनाया जाता है, ताकि साक्षरता कार्यक्रमों का मूल्यांकन किया जा सके तथा अशिक्षा के विरुद्ध लोगो को सक्रिय किया जा सके। आज के दिन हम मानवता की बेहतरी तथा व्यक्तित्व के पूर्ण विकास के लिए अशिक्षा को समाप्त करने हेतु अपने यहाँ के प्रचुर मानव संसाधनों की क्षमता का उपयोग करने के संकल्प को दुहराते हैं।

इस वर्ष अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस का मुख्य विषय रखा गया है "साक्षरता और राष्ट्रीय अखंडता"। यह आज की परिस्थितियों में सबसे अधिक प्रासंगिक है। राष्ट्रीय अखंडता का मतलब एक ऐसी भावना से होता है, जिसमें लोग सभी प्रकार की असमानताओं को भूलकर एक जैसा महसूस करते हैं, एक-दूसरे के प्रति एकता व्यक्त करते है। यह भावना किसी भी राष्ट्र की ताक़त और समृद्धि की सच्ची नीव होती है। इस सदर्भ मे राष्ट्रीय अखंडता की ताकत को मजबूत करने के लिए साक्षरता अभियान की भूमिका बहुत ही महत्वपूर्ण हो जाती है।

साक्षरता मानवीय संसाधन विकास तथा राष्ट्रीय विकास का अविभाज्य तत्व है। इसका सबंध पढ़ने और लिखने की क्षमता के साथ-साथ ज्ञान के नये क्षेत्रों को खोलने एवं अभिव्यक्ति की ताकत को बढ़ाना भी है, ताकि पूरी मानवजाति को समन्वय और भाईचारे की भावना के द्वारा जोड़ा जा सके।

पिछले वर्षो मे जहा हमने अशिक्षा मे कमी लाने मे सफलता पाई है, वहीं अभी इस बारे मे बहुत कुछ किया जाना बाकी है। जनसख्या की बढ़ती हुई दर तथा प्राथमिक स्तर पर बच्चों द्वारा स्कूल छोड़ देना, हमारे देश की अशिक्षा के लिए सबसे अधिक ज़िम्मेदार हैं। साक्षरता वृद्धि अभियान के अंतर्गत लागू किए जाने वाले व्यापक कार्यक्रमों के लिए यह कहा जाना ठीक ही लगता है कि प्रौढ़ शिक्षा योजना को लागू करने के साथ-साथ उसके बाद उन्हें अन्य सामग्री उपलब्ध कराई जानी चाहिए, ताकि वे लगातार पढ़ते-लिखते रहें। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिए एक ऐसी कार्य-योजना बनाई जानी चाहिए, जिसमे केंद्र, राज्य, स्थानीय निकाय, स्वैच्छिक संगठन तथा निजी कार्यकर्ता मिलकर काम करे। यदि हमारे अधिक-से-अधिक वर्तमान दशक में अधिक-से-अधिक शिक्षा पा सके, तो यह सुनिश्चित किया जाना सभव हो सकेगा कि वे अगली शताब्दी में शिक्षित रहें,

तथा जो निश्चय ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के विभिन्न क्षेत्रों में अपना महत्वपूर्ण योगदान करने के योग्य होंगे।

जब भारत में अशिक्षा की समाप्ति के लिए योजनाएं बनाने की बात होती है, तब मुझे ऐसा लगता है कि हमें दूरदर्शन और रेडियो का ध्यान रखना चाहिए, जिसकी पहुँच पिछले कुछ वर्षो में तकनीकी प्रगति के कारण वहुत अधिक हो गई है। इसलिए हमे सार्वभैम साक्षरता के सदेश को अधिक प्रभावशाली ढंग से पहुँचाने के लिए सचार माध्यमों के क्षेत्र में हुए, इस आधुनिकतम विकास का पूरा-पूरा फायदा उठाना चाहिए।

मुझे यह जानकर खुशी हुई कि हमारे देश के 200 जिलो को पूर्ण साक्षरता अभियान के लिए लिया गया है, तथा स्थानीय लोगों को प्रेरित करके एवं प्राप्त एजेसियों के साधनों का उपयोग करके इसे जन-आंदोलन बनाने के सामूहिक प्रयास किये जा रहे है। साक्षरता और सतर्कता को सामाजिक -आर्थिक विकास के महत्वपूर्ण औजार के रूप मे विकसित किए जाने की जरूरत है। इन कार्यक्रमो के द्वारा जन-उत्थान के हमारे सविधान में निहित लोकतांत्रिक आदर्शो को अर्थपूर्ण तरीके से पूरा करने की दिशा मे परिवर्तन की प्रक्रिया को तेज किया जा सकेगा।

भारत मे शिक्षा के प्रति हमारी चिंता पुराने समय से रही है, जवकि शिक्षा के महत्व को अच्छी तरह पहचाना गया था। कुछ वर्प पहले ही हमारे देश की आजादी तथा गरीबों के लिए निःशुल्क शिक्षा हेतु संघर्प करने वाले प्रभावशाली तमिल कवि सुव्रह्मण्य भारती ने अपनी प्रसिद्ध कविता "विदुतलाई" (स्वतत्रता) में कहा था .

"आओ! हम सब अपने-आपको पूरी तरह शिक्षित करें,
और इस धरती पर वनें वुद्धिमान,
कोई भी नही होगा गरीव,
न ही होगा कोई गुलाम,
भारत में कोई भी नहीं होगा नीच-जन्मा,
प्राप्त करेगा प्रत्येक ज्ञान,
और हम सव रहेंगे खुशी के साथ एक समान।"

मित्रो, दादाभाई नारौजी ने सन् 1882 मे भारतीय शिक्षा आयोग के सामने प्राथमिक शिक्षा को सवको उपलब्ध कराने की माग की थी। गोपाल कृष्ण गोखले ने इपीरियल लेजिस्लेटिव कौसिल के सामने शिक्षा को सार्वजनिक बनाए जाने

की भावनात्मक अपील की थी। बापू ने अशिक्षा की समाप्ति को सबसे अधिक महत्त्व दिया था। हमारे प्रथम प्रधानमंत्री पडित जवाहरलाल नेहरू ने वैज्ञानिकों और शिक्षाविदों से कहा था ·

> कुछ लोग ऐसा सोचते हैं कि तालीम उतनी ज़रूरी नहीं है, जितना कि एक कारखाना लगाना। मैं कितने भी कारखाने छोड़ सकता हूँ, लेकिन लोगों को और उनकी तालीम को नहीं छोड़ सकता, क्योंकि आदमी ही होता है, जो कारखाने लगाता है और उसमे हमारी इच्छा के अनुसार चीजे पैदा करता है।

हमारे देश में साक्षरता के लिए काम करते हुए हमे महात्मा गांधी और पंडित नेहरू की इसी भावना को अपनाकर काम करना होगा, जो देश की सामाजिक, आर्थिक समस्याओ से अच्छी तरह परिचित थे तथा जिन्होंने कठिनाइयों पर विजय पाई। आइए, हम सब मिलकर भारत को एक ऐसा महान राष्ट्र बनाएँ, जैसा कि इसे होना चाहिए।

यह जानना बहुत ही उत्साहवर्द्धक है कि हमारे देश के अनेक युवक और युवतियाँ साक्षरता तथा उससे जुड़े अन्य कार्यक्रमों में भाग ले रहे है। कभी-कभी लोगों की भागीदारी की प्रकिया कठिन होती है और इसके लिए विशेप प्रयास, उत्साह तथा आशा की जरूरत होती है। भारत के लोगों की क्षमता पर हमें बहुत अधिक भरोसा है। अतत· साक्षरता कार्यक्रमो की सफलता हमारे लोगों की इसमें भागीदारी पर निर्भर करेगी। अशिक्षा के विरुद्ध छेड़े गए इस अभियान की सफलता के लिए समाज के सभी क्षेत्र के लोगो को अपना समय, अपनी क्षमता और अपने संसाधन देने होंगे।

विश्व साक्षरता का उद्देश्य कठिन और चुनौतीपूर्ण है, जिसको राजनैतिक दृढ़ इच्छाशक्ति, संयुक्त राष्ट्रसंघ के सदस्य देशो एवं गैर सरकारी संगठनों के सयुक्त प्रयासो से पाया जा सकता है। अशिक्षा की समाप्ति के लिए जन-चेतना जागृत करने की जरूरत है तथा संसाधनों का व्यापक पैमाने पर दोहन किया जाना है। मुझे यह जानकर खुशी हुई कि आज अनेक प्रसिद्ध शिक्षाविद् "कंसलटेटिव फोरम ऑन एज्यूकेशन फॉर आल" में भाग लेंगे, जिसके अंतर्गत ऐसे नौ अधिक आवादी वाले देशो में विकास के लिए बातचीत की जाएगी, जहाँ 75 प्रतिशत प्रौढ़ अशिक्षित हैं। मैं उनके प्रयासों की सफलता की कामना करता हूँ।

जो लोग शिक्षा-विकास के नेक काम में लगे हुए हैं, मैं उनके प्रयासों की

सफलता की कामना करता हूँ। स्वामी विवेकानन्द ने कहा था ·

> हमारे लोगो की एकमात्र सेवा यह किए जाने की जरूरत है कि उन्हे शिक्षा दी जाए, ताकि वे अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके। उन्हे विचार दिए जाने हैं और उनकी ऑखें खोली जानी है, ताकि वे देख सकें कि उनके चारों ओर क्या हो रहा है। तब वे अपनी दासता से मुक्ति के लिए काम करने लगेंगे।

लोकतंत्र में राष्ट्रभाषा

सबसे पहले मैं आज सम्मानित सभी हिंदी विद्वानों को अपनी वधाई देता हूं और आशा करता हूं कि वे अपनी सृजनात्मकता के द्वारा हिंदी को हमारे देश को जोड़ने वाली एक मज़बूत कड़ी बनाने के लिए अपना योगदान करते रहेंगे।

मुझे बताया गया है कि इस संस्थान द्वारा अहिंदीभापी हिंदी सेवियों को पुरस्कृत करने के लिए अलग से गंगाशरण सिंह जी के नाम से सम्मान की व्यवस्था है। मैं इसे विशेष महत्त्व का मानता हूं। मुझे लगता है कि इससे इन विद्वानों के काम को राष्ट्रीय पहचान मिल सकेगी तथा इससे अन्य लोग भी इस दिशा में आकर्पित हो सकेंगे।

मैं इस अवसर पर वताना चाहूगा कि हिंदी के प्रचार और प्रसार का सवसे अधिक काम अहिंदीभापियों ने किया है। इस दिशा में महात्मा गांधी द्वारा किया गया काम ऐतिहासिक महत्व का है, जो गुजराती थे। मद्रास में उनके द्वारा स्थापित 'दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा' आज भी अपना काम कर रही है। दयानंद सरस्वती जी भी गुजराती थे, जिन्होंने 'सत्यार्थ प्रकाश' हिंदी में लिखी। आचार्य विनोवा भावे मराठीभापी थे, जिन्होंने भूदान का सदेश सारे देश में घूम-घूमकर हिंदी में दिया। हिंदी-पत्रकारिता के पितामह वावू विष्णुराव पराड़कर भी मराठीभापी थे। इस दृष्टि से लोकमान्य तिलक का नाम सर्वोच्च्च स्थान पर आता है।, जिन्होंने राष्ट्रीय स्वाभिमान और सुविधा की दृष्टि से हिंदी को संपर्क भापा वनाने की बात कही थी। यह बात शायद वहुत कम लोगों को मालूम हो कि गुरुदेव रवींद्र नाथ टैगोर ने 'शांति निकेतन' में 'हिंदी-भवन' की स्थापना की थी और यह संस्थान उनके द्वारा स्थापित संस्थानों में से अंतिम है। हिंदी के विद्वान आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने उस समय गुरुदेव द्वारा कहे गए शव्दों का उल्लेख किया है। मैं आज इस अवसर पर उन शव्दों को दोहराना चाहूंगा। 'हिंदी-भवन' की स्थापना के समय गुरुदेव ने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी से कहा था·

तुम्हारी परपरा शक्तिशाली है। बड़े-बड़े पदाधिकारी तुमसे कहेंगे

केन्द्रीय हिन्दी मस्थान आगरा द्वारा आयोजित 'सम्मान-पुरस्कार वितरण' समारोह मे, नई दिल्ली, 14 सितम्वर, 1993

> कि हिदी में कौन-सा रिसर्च होगा भला। तुम उनकी बातो में कभी न आना। मुझे भी लोगो ने बगला मे न लिखने का उपदेश दिया था। तुम कभी अपना मन छोटा न करना। कभी दूसरे की ओर मत ताकना।. साहस ज़्यादा जरूरी है। लग पड़ोगे तो सब हो जाएगा। हिदी के माध्यम से तुम्हे ऊँचे-ऊँचे विचारो को व्यक्त करने का प्रयत्न करना होगा।

नेताजी सुभाप चद्र बोस राष्ट्रीय एकता के संदर्भ मे हिदी भापा के महत्व को स्वीकार करते थे। हमारे राष्ट्रीय कवि सुब्रह्मण्य भारती ने स्वतत्रता आदोलन के दौरान हिदी भापा के महत्व को देखते हुए हिदी की कक्षाएँ शुरू की थी। इसकी जानकारी उनके द्वारा लोकमान्य तिलक को 29 मई, 1908 की लिखे पत्र के द्वारा मिलती है।

केवल भारतीय विद्वानो और राजनेताओं ने ही भारत की राष्ट्रभापा के रूप में हिंदी के महत्व को स्वीकार करते हुए उसे बढ़ावा नही दिया, बल्कि कुछ ऐसे विदेशी विद्वानों ने भी इस दिशा मे अपना योगदान किया, जो भारत से जुड़े हुए थे। रूसी विद्वान वारान्निकोव के सस्मरण मे इस बात का उल्लेख मिलता है कि जब उन्होने कुछ भारतीय सैनिको को एक आदमी द्वारा पढ़ी जा रही पुस्तक को ध्यान से सुनते हुए देखा, तो उन्होने कहा था

> जिस भापा की पुस्तक भारत के अनेक प्रान्तों से आए हुए सैनिक सुनते है, वही भारत की राष्ट्र-भापा है।

मुशी प्रेमचद के निधन पर सी.एफ एंड्रूज ने दु ख व्यक्त करते हुए कहा था

> तुम्हें एक आदमी मिला था, जो सचमुच तुम्हारी भापा की शक्ति को पहचानता था। पर दु:ख है कि विधाता ने उसे छीन लिया। तुम्हारी भापा में बहुत शक्ति और संभावनाएँ है।

मैने इन बातो को आप लोगो के सामने सप्रमाण इसलिए रखा है, ताकि इस बात को समझा जा सके कि हिदी को राष्ट्रभापा बनाने के पीछे न तो कोई क्षेत्रीय हित की भावना थी और न ही कोई अन्य संकुचित दृष्टिकोण था। बल्कि राजकाज की जो परंपरा हमें विरासत में मिली थी तथा राष्ट्रीय हित की दृष्टि से जो उपयोगी था, उसी को ध्यान में रखते हुए हमारे सविधान-निर्माताओं ने इसे राष्ट्रभापा वनाया, जिसमे अहिदीभापियों का पूरा योगदान मिला था। इसलिए मुझे लगता है कि हमारे देश के हर नागरिक का यह पवित्र कर्तव्य है कि वह अपनी

मातृ-भापा की सेवा के साथ-साथ हिदी की सेवा करने के लिए आगे आए।

मै यह कहना चाहूगा कि भापा के मामले में प्रत्येक को अतिवादी दृष्टिकोण से बचना चाहिए। प्रत्येक को भापाई श्रेष्ठता के भ्रम से बचना चाहिए। यह मानना होगा कि भापा आदेश नही है। यह मानना होगा कि भापा राजनीति भी नही है। बल्कि भापा देश के लोगो के अदर का स्वत:स्फूर्त उछाह है। यह स्वत:स्फूर्त उछाह किसी दबाव से सामने नहीं आता, बल्कि अपने आप आता है। इसके लिए एक वातावरण बनाना होगा। इस वातावरण के लिए पूरे समर्पण से काम करना जरूरी है। मै यह मानता हूँ कि हिदी के प्रचार, प्रसार और विकास का जो काम हमारे पूर्ववर्ती नेताओ और समाज-सुधारको ने किया है, उसके लिए उन्होने यही किया कि वे लोग चुपचाप अपने काम में लगे रहे और उनके काम का असर हुआ जो आज हमारे सामने मौजूद है।

विशेपकर एक लोकतात्रिक प्रणाली वाले देश मे इस जरूरत को स्वाभाविक रूप से स्वीकार किया जाना चाहिए कि यदि हमे लोगो तक पहुचना है, तो लोगो की जुबान के द्वारा ही उन तक पहुचा जा सकता है। मै इस दृष्टि से एक छोटी-सी घटना का उल्लेख करना चाहूँगा। जापान के बौद्ध भिक्षु फूजी गुरुजी 4 अक्तूबर, 1933 को बापू से मिलने आए थे। उस समय उन्होंने भारतीयो के बीच काम करने के लिए अपनी इच्छा व्यक्त की थी। तब बापू ने फूजी गुरुजी को सलाह दी थी कि वे अपना काम शुरू करने से पहले 'हिदी' या 'हिदुस्तानी' सीखे। इसके पीछे उनका उद्देश्य यही बताना था कि लोगों तक पहुचने के लिए लोगो की भापा जानना जरूरी है। आज यह बात हमारे नेताओ, समाज-सुधारको, वैज्ञानिकों तथा बुद्धिजीवियो के लिए अत्यत महत्व की है।

पंडित जवाहरलाल नेहरू एक ऐसे भारत का सपना देखा करते थे, जिसके लोग सास्कृतिक चेतना से संपन्न वैज्ञानिक दृष्टिकोण वाले होगे। आज यह बात महसूस की जा रही है कि चूँकि विज्ञान की बातें लोगों तक लोगों की भापा में नहीं पहुँचाई गई, इसलिए लोगों का दृष्टिकोण वैज्ञानिक नहीं हो सका। हमारे देश के महान वैज्ञानिक सी वी रमन का यह मानना था कि यदि भारत मे विज्ञान मातृभापा के जरिये पढ़ाया गया होता तो आज भारत दुनिया के अग्रणी देशो में होता।

कुछ लोग अपने बचाव में यह दलील देते हैं चूँकि हिदी मे विज्ञान, कानून या अन्य विपयो की पुस्तके उपलब्ध नही है, इसलिए वे क्या करे? मै उनके

तर्क से पूरी तरह सहमत नही हो पाता। उनकी शिकायत कुछ हद तक सही है, लेकिन देखना यह है कि इसके लिए जिम्मेदार कौन है ? तथा इस शिकायत को कैसे दूर किया जा सकता है ? यह एक सरल-सी वात है कि जब तक किसी भापा में सोचा नहीं जाएगा, लिखा नही जाएगा, तब तक वह भापा समृद्ध कैसे होगी ? इस दृष्टि से मै आपको डॉ राजेद्र प्रसाद के एक पत्र की जानकारी देना चाहूँगा, जो उन्होंने तत्कालीन मुख्य न्यायाधीश न्यायमूर्ति एस आर दास को 14 मार्च, 1956 को लिखा था। उसमे उन्होने कहा था कि अंग्रेजी की तरह हिदी को भी न्यायालय की भापा के रूप में विकसित किया जाए, तभी हिदी भापा मे कानूनी शव्द तैयार किए जा सकेगे।

मेरी तो शुरू से यह मान्यता रही है है कि हमारे देश की सभी भापाएँ हमारी राष्ट्रीय भापाएँ हैं और उनमे अपने समय के चिंतन तथा अनुभूतियों की सूक्ष्मता और जटिलताओ को व्यक्त करने की ताकत है। आज जरूरत इस वात की है कि हम उन भापाओं को उपयोग में लाकर उनकी ताकत को वढ़ाएँ।

हमारे देश की एक महान और वड़ी विशेपता यह रही है कि भापा, जाति और सस्कृति की विभिन्नता के वावजूद उसका मूल चिंतन एक रहा है। मैं समझता हूँ कि भापा के स्तर पर आपसी तालमेल के लिए चिंतन की एकरूपता की यह विशेपता वहुत महत्त्व की है। फर्क सिर्फ इतना है कि एक जैसे विचार ओर भाव हमारे देश के अलग-अलग भागों में अलग-अलग ध्वनियों के रूप मे व्यक्त हुए हैं। इसके वावजूद अनेक ऐसे शव्द है, जिनमे आश्चर्यजनक रूप से समानता देखने को मिलती है। यही समानता हमारी सवसे बडी शक्ति हे। उदाहरण के तौर पर हिदी का शव्द है— 'चरखा'। यह शव्द पजावी, उर्दू, मराठी, वगला, असमिया तथा उड़िया में 'चरखा' है। गुजराती मे 'चरखो' तथा सिंधी मे 'चर्खो' वन गया है। मलयालम में 'चर्क ', तथा तमिल मे 'चरक' है। यही शव्द तेलुगु में 'राट्नमु' तथा तमिल मे 'इराट्टै' है। ये दोनो शव्द लोकभापा के शव्द 'रहट' से मिलते हैं। कश्मीरी मे यह 'यदुर' कहलाता है। मैंने आप लोगो के सामने यह छोटा-सा उदाहरण केवल यह वताने के लिए रखा है कि किसी प्रकार चिंतन के साथ-साथ हमारे यहाॅ शव्दों की भी एकरूपता मौजूद है। मै चाहूँगा कि हमारे लेखक इस एकरूपता के स्वरूप को लोगो के सामने लाएँ। हमारे देश के पत्र तथा पत्रिकाएँ इस दिशा में महत्त्वपूर्ण काम कर सकती हैं।

हमारे सविधान मे हिदी को राष्ट्रभापा स्वीकार करते हुए उस पर 'सामासिक

संस्कृति' को व्यक्त करने का दायित्व डाला गया है। हमारे देश के चिंतन में जो एकरूपता है, उसको देखते हुए तथा अनेक शब्दो की जो समानताएँ है, उसको देखते हुए मुझे यह काम बहुत कठिन नहीं लगता है। हिंदी को अपने इस संवैधानिक दायित्व को पूरा करना है-और यह काम हमारे चितक, लेखक, पत्रकार बंधुओ को राष्ट्रीय भावना से प्रेरित होकर करना चाहिए।

इस दृष्टि से अन्य भापाओं के साहित्य का हिदी भापा में अनुवाद किया जाना उपयोगी सिद्ध होगा। क्योंकि ऐसा करते समय उन भापाओ के लोकप्रिय एव समान रूप वाले शब्दों को ज्यो-का-त्यो स्वीकार किया जा सकेगा। फिर इससे हमारे देश की यह जरूरत भी पूरी हो सकेगी कि यदि किसी को किसी भी भापा का साहित्य जानना हो तो वह उसे हिंदी के माध्यम से जान सकेगा। और सच तो है कि तभी हिंदी एक सपर्क भापा की भूमिका निभा सकेगी।

मुझे विश्वास है कि 'हिंदी दिवस' के अवसर पर देश के रचनाधर्मी राष्ट्रीय एकता को मजबूत बनाने का संकल्प लेते हुए इस काम के लिए आगे आएगे।

शिक्षा और ग्राम्य विकास

गुजरात विद्यापीठ के इस पदवी दान समारम्भ में उपस्थित होकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। बापू ने 18 अक्तूबर, 1920 को इस विद्यापीठ की स्थापना की थी। आज की ही तारीख को सन 1901 में बापू दक्षिण अफ्रीका से भारत की यात्रा के लिए रवाना हुए थे। यहा उन्होंने अपने कार्यो से हमें आजादी दिलाई, भविष्य के लिए हमें रास्ता दिखाया। इसलिए इस विद्यापीठ की स्थापना तिथि 18 अक्तूबर एक ऐतिहासिक महत्व रखती है।

लम्बे समय तक बापू इस विद्यापीठ से जुड़े रहे। कस्तूरबा गांधी, आचार्य नरेन्द्र देव, सरदार पटेल, डॉ राजेन्द्र प्रसाद, डॉ राधाकृष्णन्, ज़ाकिर साहब, अब्दुल गफ्फार खां और पं. नेहरू जैसे अनेक महान लोग किसी न किसी रूप में इससे जुडे रहे हैं। इसलिए ऐसे संस्थान से जुड़कर मैं स्वाभाविक रूप से अभिभूत हूॅ।

मुझे जब भी गुजरात आने का अवसर मिलता है, मैं आने की कोशिश करता हूॅ। क्योंकि मेरे लिए गुजरात केवल एक राज्य भर नहीं है, बल्कि एक उत्तुंग विचारधारा का प्रतीक है, जिससे हमारे देश को प्रेरणा मिलती रही है। पुरातन काल से यहा विलक्षण महिमा के महात्माओं एवं महापुरुषों का प्रादुर्भाव होता रहा है। यहां की द्वारिका से कृष्ण का नाम जुड़ा हुआ है। यह हमारे चार धामों में से एक है। प्रथम तीर्थकर ऋषभदेव ने यहां के शत्रुंजय गिरि पर धर्मोपदेश दिया था। 22वें तीर्थकर नेमिनाथ के तीन प्रमुख कल्याणक—महाभिनिष्क्रमण, केवल ज्ञान और निर्वाण गिरनार मे सम्पन्न हुए थे। यहां माघ जैसे साहित्यकार हुए हेमचन्द्राचार्य जैसे व्याकरणाचार्य हुए। मध्यकाल के महान सन्त नरसी मेहता के पदों से तो सारा देश परिचित ही है। भक्ति और ज्ञान की इस परम्परा को बाद में स्वामी दयानन्द सरस्वती ने आगे बढाया।

यहीं हमारे देश के 'लौहपुरुष' सरदार पटेल हुए। गुजरात की पवित्र भूमि को यह सौभाग्य प्राप्त है कि इसने 20वीं सदी के एक अद्भुत एवं विलक्षण व्यक्तित्व बापू को जन्म दिया, जिनके पीछे करोड़ों लोग चले और देश के लिए अपनी कुर्बानियां दीं।

गुजरात विद्यापीठ के पदवी दान समारम्भ मे, अहमदाबाद, 18 अक्तूबर, 1993

मैं जब भी गुजरात के बारे में सोचता हूँ तो मेरे दिलोदिमाग पर ये सारे नाम इन्द्रधनुप के सुन्दर रंगों की तरह छा जाते हैं। ये नाम मुझे केवल स्मरण में ही नहीं आते, बल्कि मैं अपने हृदय पर इनका स्पर्श भी अनुभव करता हूँ। इसलिए मैं गुजरात विद्यापीठ का आभारी हूँ कि मुझे यहां आने का अवसर दिया गया।

सबसे पहले मैं उन सभी विद्यार्थियों को अपनी बधाई देता हूँ, जिन्हें आज पदवियां दी गई है। मेरा विश्वास है कि यहा से निकले हुए विद्यार्थी बापू के सपनों के भारत को सच बनाने में अपना योगदान करेंगे और इस प्रकार अपना, अपने विद्यापीठ का और अपने देश का नाम रोशन करेंगे।

73 साल पहले बापू ने इस विद्यापीठ की स्थापना की थी। बापू ने इस विद्यापीठ की स्थापना के कार्य को एक ऋषि का कार्य माना था। इसकी स्थापना के समय बापू ने अपने उद्बोधन के शुरूआत में ही कहा था—

> अपनी जिन्दगी मे मैंने अनेक काम किए हैं। उनमें से बहुत से कामों के लिए मैं गर्व का भी अनुभव करता हूँ। कुछ कामों के लिए मुझे पछतावा भी होता है। उनमें से बहुत सी बड़ी जिम्मेदारी के काम थे। लेकिन इस समय मैं थोड़ी भी अतिश्योक्ति के बिना कहना चाहता हूँ कि मैंने ऐसा एक भी काम नहीं किया, जिसके साथ आज किए जाने वाले इस काम की तुलना की जा सके।

बापू के इस कथन से आप समझ सकते हैं कि वे हमारे देश के लिए शिक्षा के काम को कितना बड़ा काम समझते थे। इसके साथ ही आप लोगों को यह भी याद रखना है कि बापू ने यह बात कह कर यहा के शिक्षको और विद्यार्थियों पर कितनी बड़ी जिम्मेदारी डाली है।

आपके विद्यापीठ का आदर्श वाक्य है— "सा विद्या या विमुक्तये।" मैं समझता हूँ कि यह आदर्श वाक्य हमारी संस्कृति और चिन्तन का तथा बापू के कार्यों और विचारों का केन्द्र बिन्दु है। इसके "विमुक्त" शब्द का अर्थ अत्यंत गहरा और व्यापक है। सचमुच विद्या वही है, जो व्यक्ति को सभी ओर के अधकार और सभी तरह के बंधनो से मुक्त करती है। बापू की सीख इसी प्रकार की थी। उनके जीवन कार्य ओर उनका जीवन संदेश हमें विभिन्न बंधनों से मुक्ति प्राप्त करने मे सक्षम बनाता है। इसमें मन, स्वभाव और शरीर के हर प्रकार के बंधन आते हैं। वे व्यक्ति और समाज को अज्ञान, असत्य, द्वेपाग्रह जैसे मानसिक बंधन तथा

गरीबी, बीमारी, दुर्बलता और पीड़ा जैसे आर्थिक और शारीरिक बंधनों से मुक्त कराकर उसका आध्यात्मिक विकास करना चाहते थे, ताकि देश के सम्पूर्ण विकास के लिए वह अपनी क्षमता के विशाल क्षितिज तक पहुँच सके। उन्होंने हमें जाति, पंथ और क्षेत्र इत्यादि पर आधारित संकीर्णताओं से उबरने को प्रवृत्त किया।

बापू के नेतृत्व मे हमें आजादी मिली। राजनीतिक रूप से हमारा देश आज स्वतंत्र है। लेकिन बापू के स्वराज्य का अर्थ केवल राजनीतिक स्वतंत्रता तक सीमित नहीं है। हमें देश का आर्थिक और सामाजिक विकास करके एक नए भारत का निर्माण करना है। इस दृष्टि से हमें अभी बहुत काम करना है। भारतवासियों को इस लक्ष्य की पूर्ति हेतु यह समझना आवश्यक है कि ऐसे कठिन काम को हम तभी पूरा कर सकेंगे, जब हमारे समाज और व्यक्ति-व्यक्ति की विचार पद्धति में जो कमियां हैं, जो विकृतियां है या कुप्रवृत्तियां हैं, उन्हें पहचानकर दूर किया जाए। यह काम सभी को करना है और इसमें हमारे शिक्षण संस्थाओं से विशेष योगदान की अपेक्षा है। यह काम इन शिक्षण संस्थाओ से निकले हुए विद्यार्थियों को करना है। बापू ने ''यंग इण्डिया'' के 9 जून, 1927 के अंक में विद्यार्थियों के कर्तव्य की चर्चा करते हुए लिखा था—

''विद्यार्थियों को राष्ट्र का निर्माता बनना है। विद्यार्थियो को दकियानुसी विचारों की सुधारों की अगुवाई करनी चाहिए। उन्हें जो कुछ भी हमारे देश में अच्छा है, उनकी सुरक्षा करनी चाहिए और निर्भीकता के साथ उन सभी अनगिनत बुराइयों से समाज को मुक्त करना चाहिए, जो उस पर छा गई हैं। विद्यार्थियों को लाखों मूक लोगों के लिए सक्रिय होना चाहिए। उन्हे प्रान्त, नगर, वर्ग और जाति के रूप में सोचने के स्थान पर विश्व के रूप में सोचना सीखना चाहिए।''

बापू ने अपने विचार और कार्यो द्वारा हमेशा इसी व्यापक और उदार जीवन दृष्टि को हमारे लोगों के सामने रखा। तंगदिली का उनसे दूर तक वास्ता नहीं था। सभी धर्म और जाति के लोगों के प्रति उनकी दृष्टि समान थी। इसी महाविद्यालय में बापू ने 8 अगस्त, 1924 को चेतावनी भरे स्वर में कहा था—

> हिन्दू, मुसलमान, पारसी, ईसाई, यहूदी— सब तुम्हारे भाई हैं। ऐसी श्रद्धा तुममें न हो और उसके अनुसार चलने को तुम्हारी तैयारी न हो, तो तुम विद्यालय छोड़ सकते हो।

मैं इस तरह की भावना को ही विमुक्त भावना मानता हूँ। यह विचार हमारी सांस्कृतिक धरोहर रही है। मुझे यह जानकर अत्यन्त ही खुशी हुई है कि गुजरात

विद्यापीठ की शिक्षण संस्थाए सभी धर्मो के प्रति समभाव की शिक्षा दे रही है। यहां पहले से ही बौद्ध धर्म की पढ़ाई की व्यवस्था है। यह उल्लेखनीय है कि गुजरात के गिरनार में मौर्य सम्राट अशोक का एक शिलालेख है, जिसमें उस महान, बौद्ध चिन्तक और दृष्टा महापुरुप ने करुणा और समन्वय भाव को व्यक्त किया है। साथ ही इसकी अनुकरणीयता को प्रमाणित किया।

मुझे आज यह घोपणा करते हुए हार्दिक प्रसन्नता हो रही है कि इस शैक्षणिक वर्प से विद्यापीठ ने अन्तर्राष्ट्रीय जैन विद्या केन्द्र की स्थापना की है। ऐसा करके इसने इस दिशा में एक नया कदम उठाया है। यहां अब जैन धर्म के उच्चतम अभ्यास की सुविधा प्रारम्भ हो रही है। मैं इस अवसर पर इस अन्तर्राष्ट्रीय जैन विद्या केन्द्र के उद्घाटन की विधिवत् घोपणा करता हूँ। साथ ही विद्यापीठ के इस निर्णय की सराहना करते हुए इसके उज्ज्वल भविप्य की कामना करता हूँ।

बापू ने जिस अहिसा और प्रेम की बात कही थी, वह जैन धर्म का केन्द्र बिन्दु रहा है। गुजरात के गिरनार पर्वत पर मोक्ष प्राप्त करने वाले 22वे तीर्थकर नेमिनाथ जी ने जो अत्यन्त गूढ़ बात कही थी, मै उसे यहा दोहराना चाहूँगा। उन्होने अपने सामने उपस्थित जिज्ञासुओ से कहा था-

> हमें सभी जीवों के प्रति मैत्री भाव, गुणवानो के प्रति प्रमोद या हर्प का भाव, दु:खी प्राणियों के प्रति दया का भाव और दुष्ट प्राणियो के प्रति मध्यस्थता का भाव रखना चाहिए।

जैन धर्म के अन्तर्गत श्रावको के आत्मिक विकास के लिए 12 व्रतो का विधान है। इनमे से पाच अणुव्रत हैं, तीन गुणव्रत है और चार शिक्षाव्रत है। पाच अणुव्रत है—अहिसा, सत्य, अस्तेय, स्वदारसतोप एव परिग्रह - परिमाण। तीन गुणव्रत हैं— दिग्व्रत, उपभोग-परिमाण व्रत तथा अनर्थदण्ड विरमण व्रत। चार शिक्षाव्रत हैं— सामायिक, देशावकाशिक, प्रोषधोपवास तथा अतिथि सविभाग। वैसे तो बापू के एकादश व्रतों मे इन सभी की कुछ-न-कुछ झलक मिल जाती है, किन्तु विशेपकर अणुव्रत उनसे ज्यों-के-त्यों मिलते हैं। बापू के एकादश व्रत हैं—

> अहिंसा, सत्य, अस्तेय, ब्रह्मचर्य, असग्रह ।
> शरीरश्रम, अस्वाद, सर्वत्र भयवर्जनम्॥
> सर्वधर्म-समानत्व, स्वदेशी, स्पर्श भावना ।
> हीं एकादश सेवार्वी नम्रत्वे व्रतनिश्चये॥

इसमें पहली पक्ति के पाचों व्रत अणुव्रत जैसे ही है।

मैं बापू की इस प्रार्थना के सत्य, अहिसा, अपरिग्रह, अस्तेय, श्रम, निर्भीकता, सभी धर्मो के प्रति समान भाव, स्वदेशी की चेतना तथा अस्पृश्यता की समाप्ति को उनके रचनात्मक कार्यो का केन्द्र बिन्दु मानता हूँ। बापू इसका न केवल पाठ ही किया करते थे, बल्कि उन्होंने इसे कार्य रूप में परिणत करके लोगों के सामने अनुकरणीय उदाहरण रखा था। उनके इन व्रतो में गीता के निष्काम कर्मयोगी की इच्छा-शक्ति तथा एक समर्पित सेवक के समर्पण की भावना छिपी हुई है। ये वे गुण हैं, जो हमारे देश के प्रत्येक नागरिक के चरित्र के स्वाभाविक अग होने चाहिएं ताकि उनका चारित्रिक और आत्मिक विकास हो सके। याद रखे कि यही शिक्षा का मुख्य उद्देश्य भी होना चाहिए। बापू ने अपनी आत्मकथा "सत्य के प्रयोग" मे लिखा है—

> मैने हृदय की शिक्षा को अर्थात् चरित्र के विकास को हमेशा पहला स्थान दिया है। मैंने चरित्र के विकास को शिक्षा की बुनियाद माना है। यदि बुनियाद पक्की है, तो अवसर मिलने पर बालक दूसरी बातें किसी की सहयता से या अपनी ताकत से खुद ही जान सकते है।

व्यक्ति के आचरण मे सुधार करके उसका आत्मिक उत्थान करना जैन धर्म के व्रतो का उद्देश्य रहा है। यही बात हमें बापू के एकादश व्रतों में देखने को मिलती है। ये ही वे व्रत हैं, ऐसी साधना है, जिनके अभ्यास से व्यक्ति विमुक्त हो सकता है। और मैं समझता हूँ कि "विमुक्त" व्यक्ति ही सच्चे अर्थो में एक विमुक्त समाज की रचना कर सकता है।

बापू ने इस एकादश व्रत मे स्वदेशी भावना की जो बात कही थी, उसे मै आज भी प्रासगिक मानता हूँ। उनकी स्वदेशी भावना मे गॉव के लोगो को रोजगार मुहैया कराकर उनकी गरीवी को दूर करने की बात मुख्य थी। बापू का चरखा और खादी सही मायने मे कृषि एवं श्रम पर आधारित हमारी ग्रामीण औद्योगिक व्यवस्था के ही प्रतीक थे। मुझे लगता है कि हम अपने ग्राम्य आधारित उद्योगों को विकसित करके तथा स्थानीय हस्त-शिल्प, कलात्मक तथा कृषि-औद्योगिक प्रतिभाओं को प्रोत्साहित करके ही सही मायने में गॉव का विकास कर सकेंगे और इस प्रकार हमारे देश का विकास हो सकेगा। केवल इतना ही

नहीं, बल्कि हमारा देश अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर मिलने वाली आर्थिक चुनौतियों का भी सामना कर सकेगा।

मुझे यह देखकर अच्छा लगा कि यह विद्यापीठ मुख्य रूप से गांव के विकास से जुड़ी हुई शिक्षा दे रहा है। ग्राम प्रबंधन, ग्राम्य अर्थ-व्यवस्था तथा श्रम पर आधारित सामूहिक कार्य जैसी शिक्षाएं दे रहा है। इसके ग्रामीण सेवा केन्द्र भी हैं। साथ ही यह हमारे देश की वर्तमान आवश्यकताओं के अनुकूल राष्ट्रीय साक्षरता मिशन के काम में भी लगा हुआ है। इससे निश्चित रूप से हमारे देश के लोगों को अशिक्षा और गरीबी जैसे बधनो से मुक्त करने मे सहायता मिलेगी। मुझे विश्वास है कि यह विद्यापीठ इस दिशा में और भी अधिक प्रयास करेगा और हमारे गांव को के सपनो के अनुरूप बनाने में अपनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाएगा। बापू ने देश की आज़ादी के अपने उद्देश्य की चर्चा करते हुए "यग इण्डिया" के 10 सितम्बर, 1925 के अंक में लिखा था —

"मैं अपने देश की आजादी इसलिए चाहता हूँ, ताकि दूसरे देश मेरे आजाद देश से कुछ सीख सकें, ताकि मेरे देश के संसाधनो का उपयोग मानव के हितों के लिए किया जा सके।"

यह उद्देश्य तब तक पूरा नही होता, जब तक कि हमारे गांव के आर्थिक, सामाजिक और सास्कृतिक ससाधनो का उचित इस्तेमाल करके उनका विकास नही किया जाता।

ये सब बाते मैंने आप लोगों के सामने इसलिए रखी हैं, ताकि आज का युवा वर्ग अपने देश की जरूरतों को, अपने कर्तव्यों को और बापू के विचारों की सामयिकता को पूरी तरह समझ सके। और पूरी कटिबद्धता के साथ, शुद्ध मन से एवं पूर्ण सेवा-भाव से अपने-अपने कर्तव्य को पूरा करने के प्रयास में लीन हो जाए।

मैं इस अवसर पर यह बात विशेष रूप से कहना चाहूंगा कि कर्म करने का यह भाव बिना किसी फल की कामना के होना चाहिए। आप लोगों को अपना काम एक निष्काम योगी की तरह करना है। यदि आप फल की इच्छा नहीं रखेंगे, तो यह आपके ही हित में होगा, क्योंकि तब आपको दु:ख नहीं होगा। जो भी काम आप करें, उससे मिलने वाला आत्म-संतोष ही आपका सबसे बड़ा पुरस्कार होता है। आपको यह आत्म-सतोष होना चाहिए कि आपने अपना काम पूरा किया, अच्छी तरह से पूरा किया तथा पूरे सेवा-भाव के साथ किया।

मै बताना चाहूगा कि दूसरों की सेवा की यह भावना विश्व के सभी धर्मो का सार रही है। हमारे यहां कहा गया है—

''सर्वशास्त्रपुराणेपु व्यासस्य वचनं ध्रुव।
परोपकारस्तु पुण्याय पापाय परपीड़नम्॥''

अर्थात, सभी शास्त्र और पुराणों के बीच व्यास का यह कथन ध्रुव सत्य की तरह है कि दूसरो को परोपकार करने से पुण्य मिलता है और दूसरों को दु ख देने से पाप।

बापू ने भी मनुष्य के लिए सेवा भाव को महत्वपूर्ण मानते हुए 'हैल्थ गाईड' के पृष्ठ 165 पर लिखा था —

> याद रखे कि प्राणियो की सेवा करने के लिए मनुष्य ईश्वर का प्रतिनिधि है, और इसके माध्यम से वह ईश्वर की गरिमा और प्रेम को अभिव्यक्त करता है। सेवा-भाव को अपनी आत्मा का आनन्द बनने दो, तब तुम्हें जीवन में किसी अन्य आनंद की आवश्यकता नहीं होगी।

मै आशा करता हूँ कि हमारे देश के लोग विशेपकर विद्यार्थी बापू की इस भावना को आत्मसात करके उसे व्यवहार में लाएगे।

संस्कृत की प्रतिष्ठा

आप जैसे विद्वानों के बीच मे संस्कृत भापा के वैभव के विपय में कुछ कहने की अपेक्षा नहीं है। मैं अपने आप को सौभाग्यशाली मानता हूँ कि मुझे सस्कृत भापा के अध्ययन का अवसर प्राप्त हुआ। संस्कृत पर मेरी स्वाभाविक और दृढ़ आस्था है। इस आस्था का कारण प्राचीनता के प्रति मेरी आदर्श भावना ही नहीं है, अपितु मैं नम्रतापूर्वक स्वीकार करता हूँ और बार-बार कहता हूँ कि यह भापा अत्यन्त विशाल और महत्वपूर्ण साहित्य से परिपूर्ण है। यदि केवल साहित्य की सम्पत्ति की दृष्टि से भी विचार किया जाये तो भी यह विश्व की समृद्धतम भापाओ मे गिनी जाती है। यह आध्यात्मिकता का पहला स्रोत है। विज्ञान की धरोहर है। नैतिक मूल्यों की आधारशिला, समस्त कलाओं की विकास भूमि और राष्ट्रीय एकता की भावना की संस्थापिका है। यह हमारी सस्कृति का मूल है — जिसमें धर्म, अर्थ, काम, मोक्ष, इन चारो पुरुपार्थो को औचित्य के अनुसार महत्व दिया गया है। इस सस्कृति मे धर्म और मोक्ष, इन दो तटो के मध्य मे अर्थ और काम की धारा बहती है, और यह अर्थ और काम की धारा धर्म और मोक्ष का उल्लंघन नही करती।

आज समाज के सामने सबसे बड़ी जटिल समस्या यह है कि काम और अर्थ का प्रवाह सारे जीवन को अपने आप मे पूर्ण रूप से समा लेना चाहता है। इसलिए आज की यह बड़ी आवश्यकता है कि नैतिक मूल्यो की स्थापना की दृष्टि से यह भापा फिर से समाज में प्रचारित हो। इसकी गोद में आश्रय प्राप्त कर अन्य भापाएँ भी फलती-फूलती हैं, और समृद्ध होती है। इसकी मनोरम सुगन्ध से न केवल भारत अपितु सारे विश्व का अन्त.करण सुरभित होता है। भापा के रूप मे संस्कृत की प्रतिष्ठा सबने की है। सारे विश्व ने पाणिनि के व्याकरण की मौलिकता, तार्किकता और वैज्ञानिकता स्वीकार की है।

आधुनिक कम्प्यूटर वैज्ञानिको ने भी यह स्पष्ट रूप से घोपणा की है कि यह भापा कम्प्यूटर के लिए सबसे उपयुक्त है। इसके दर्शन शास्त्रों में लौकिक

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ द्वारा 'वाचस्पति' सम्मानोपाधि समर्पण के अवसर पर, नई दिल्ली, 3 दिसम्बर, 1993

और पारलौकिक समस्त चेतना देखी जा सकती है। वाल्मीकि, कालिदास, भवभूति, माघ जैसे महाकवि, मनु जैसे आचार्य, न्यायवेत्ता कौटिल्य के समान राजशास्त्र और अर्थशास्त्र के विशेपज्ञ, चरक, सुश्रुत, वाग्भट जैसे आयुर्वेद के विद्वान, आर्यभट्ट, वराहमिहिर और भास्कराचार्य आदि गणित-ज्योतिप शास्त्र के ज्ञाता, वास्तु शास्त्र के अनेक विशारदों और कला-मर्मज्ञों ने इस भाषा को ज्ञान और विज्ञान से अलंकृत किया है। आज भी इस भाषा की प्रासंगिकता सहज रूप में देखी जा सकती है। मैंने स्थान-स्थान पर यह कहा है कि वैदिक मंत्रों ने हजारो वर्ष पूर्व भी—

द्यौः शान्तिरन्तरिक्ष शान्ति. पृथिवी शान्तिरापः शान्तिरोपधयः शान्ति·।
वनस्पतय· शान्तिर्विश्वेदा. शन्तिर्ब्रह्म शान्तिः सर्व शान्तिः शान्तिरेव
शान्ति· सा मा शान्तिरेधि॥

(शुक्लयजुर्वेद—अध्याय· 36, मत्र-17)॥

आदि मंत्रो से न केवल ब्रह्माण्ड अपितु जल, औपधियों और प्रकृति के समस्त अंगों की शान्ति के लिए प्रार्थना की है। इतने लम्वे समय पूर्व वैदिक ऋपियो द्वारा की हुई यह कामना प्रकृति के महत्व और उसके माध्यम से पर्यावरण शुद्धि की प्रेरणा देती है। "एक सद् विप्रा बहुधा वदन्ति", इस ऋग्वेद मंत्र में ब्रह्म की एकता का प्रतिपादन किया गया है, जिससे हमारे सम्प्रदाय भेद की भावना का मूल ही नष्ट हो जाता है। मूल में हम सव एक हैं, लेकिन लोग इसे अनेक रूपों में कहते हैं। "वसुधैव कुटुम्वकम्" यह वाक्य सारे विश्व में बन्धुत्व की भावना अर्थात् सारे विश्व को एक परिवार के रूप में देखने तथा "माता भूमिः पुत्रोऽह पृथिव्या.", आदि मन्त्र मनुष्य मात्र को देश की सीमा से विशाल वताते हुए केवल पृथ्वी के पुत्र के रूप में प्रस्तुत करते हैं। "जनं विभ्रति बहुधा विवाचसम्" — इससे यह स्पष्ट होता है कि हम सब अनेक भापा-भापी रहे हैं। इसलिए भापाओं के विपय में हमारे विवाद उचित नहीं लगते। देश की अखण्डता, एकता और विशेपकर भारतीय सस्कृति का मूल तो संस्कृत वाङ्मय है ही। हृदय की विशालता, उदारता, एक-दूसरे के विचारो की सहिष्णुता, दूसरे के उपकार की भावना, गरीवो की सेवा, तप, तपस्या, त्याग और साधना जैसे महान विशिष्ट योगदानों से यह साहित्य समृद्ध है। अतएव मै इसका विशेप आदर करता हूँ और मेरी इसमे निष्ठा है।

लेकिन इस सवन्ध में अभी बहुत कुछ करना वाकी है। देश की विभिन्न प्रादेशिक भापाओं मे संस्कृत साहित्य की उत्कृष्ट रचनाओं के अनुवाद किए जाने

चाहिएँ तथा इसी प्रकार प्रादेशिक भाषाओं की श्रेष्ठ कृतियाँ संस्कृत भाषा में अनूदित की जानी चाहिएँ। जिससे दोनों का साहित्य समृद्ध हो और जो अमृत सस्कृत भाषा में है, वह जन-साधारण के लिए सुलभ हो सके। इसी प्रकार आने वाली पीढ़ी को सेवा-भावना से विद्वान इस भाषा का ज्ञान उपलब्ध करा सकें — इस प्रकार के प्रयास होने चाहिएं। मेरा यह निवेदन है कि आप सब ऐसे कार्यक्रमों को विशेष रूप से नेतृत्व प्रदान करें।

मैं श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ के विकास से सुपरिचित हूँ। राजधानी में स्थित इस संस्था ने सारे देश में संस्कृत विद्या की उन्नति और उसके पुनर्जागरण के लिए जो प्रयत्न किए हैं, मैं उसके लिए संस्था को बधाई देता हूं। जिन अध्यापकों, छात्रों और अधिकारियों की साधना से यह प्रगति हो पायी है, मैं उनका अभिनन्दन करता हू। मेरा यह विश्वास है कि भारत सरकार और विश्वविद्यालय अनुदान आयोग इसकी प्रगति में और अधिक आर्थिक सहयोग प्रदान करेंगे, जिससे यह विद्यापीठ श्री लाल बहादुर शास्त्री जी की कल्पनाओं को साकार कर सके।

खेलों से आत्मविश्वास

खुशी के इस मौके पर मैं आप सभी को अपनी हार्दिक वधाई और शुभकामनाएं देता हूं, जो हमारे इस विशाल देश के अलग-अलग भागों से यहां आए हुए हैं।

पूना में वने इस भव्य स्टेडियम को देखकर मुझे हर्ष हुआ है। राज्य सरकार, विभिन्न संस्थान तथा वे लोग हमारे विशेष धन्यवाद और प्रशंसा के पात्र हैं, जिन्होंने कड़ी मेहनत करके खेलों के लिए इतना अच्छा वातावरण तैयार किया है। इस स्टेडियम तथा इससे संवद्ध खेल सुविधाओं से भारत के आधुनिक खेल के आधारभूत ढांचे में वढ़ोत्तरी हुई है। मुझे पक्का विश्वास है कि इससे हमारे अधिक-से-अधिक युवा खिलाड़ी विभिन्न खेलों में भाग लेने के लिए उत्साहित और प्रेरित होंगे तथा अपनी दक्षता और क्षमता वढ़ायेंगे। मैं चाहूँगा कि आने वाले वर्षो मे यहां उपलव्ध कराई गई खेलों की सभी सुविधाओं का पूरी तरह से उपयोग हो।

यह उपयुक्त है कि इस सारे क्षेत्र को श्री शिव छत्रपति शिवाजी महाराज के नाम से जाना जाता है, जिनका गौरवशाली जीवन हम लोगों को हमेशा राष्ट्र-भक्ति, एकता, सर्वधर्मसमभाव, दृढ़ संकल्प एवं साहस, गतिशीलता तथा कर्म के आदर्श के लिए प्रेरित करता रहेगा।

यह वहुत जरूरी है कि हमारे देश के नौजवान इन आदर्शो को याद रखें। यह आवश्यक है कि भारत के भविष्य के निर्माता हमारे युवक एवं युवतियां तथा वच्चे और वच्चियां भारत की मजवूती और समृद्धि में योगदान करने के लिए इन आदर्शो के आधार पर प्रेरणा प्राप्त करें।

किसी भी क्षेत्र में प्रदर्शन के उच्चतम् स्तर को प्राप्त करने के लिए खेल सुविधाओं, सामानों और प्रतियोगिता की आवश्यकता के अलावा सवसे निर्णायक वात होती है — शरीर, मस्तिष्क और आत्मा का पूरी तरह से सुमेल होना। उत्कृष्टता के लिए प्रवल उत्साह तथा निर्धारित लक्ष्य के प्रति एकाग्र दृढ़ निश्चय एवं प्रयास होना चाहिए। मुख्यत: सर्वोत्तम प्रदर्शन की स्पर्धा किसी दूसरे के प्रति उतनी नहीं होती, वल्कि यह अपनी ही सीमाओं के विरुद्ध सफलता और विजय होती है।

तृतीय राष्ट्रीय खेल के उद्घाटन समारोह में पुणे, 16 जनवरी, 1994

वे अपने आगे बढ़ने के लिए प्रतिमान स्थापित करते हैं।

इसलिए आपमें से प्रत्येक व्यक्ति को प्रदर्शन के उत्तरोत्तर बढ़ते हुए उच्च स्तरों को प्राप्त करने के लिए लगातार व्यक्तिगत प्रयास करना है।

हमारे देश में काफी प्रतिभा है। विश्व की दूसरी सबसे अधिक आबादी वाले हमारे देश में सर्वोत्तम खिलाड़ी तैयार करने की क्षमता है। निःसंदेह रूप से खेल की सुविधाएं, संसाधनों तथा सहयोग का महत्व होता है। लेकिन व्यक्ति का अपना संकल्प और दृढ़ निश्चय तथा उसकी अपनी प्रतिबद्धता अधिक महत्वपूर्ण बात है।

मुझे यह देखकर बहुत खुशी होती है कि विभिन्न खेलों में लड़कियाँ और युवतियाँ बड़ी संख्या में भाग लेने लगी हैं। खेल में लड़कियो की बढ़ती हुई भागीदारी उनमें बढ़ते हुए आत्मविश्वास तथा राष्ट्रीय विकास में हमारे देश की महिलाओं के बढ़ते हुए योगदान का प्रमाण है।

राष्ट्रीय खेल आप लोगों को एक ऐसा अवसर भी देता है, जब आप देश के विभिन्न राज्यों और क्षेत्रों से आए हुए लोगों से परिचित होते हैं तथा उनसे अपनी मित्रता बढ़ाते हैं। मैं समझता हूँ कि भारत की विभिन्न संस्कृति और भाषा के लोगों के बीच इस प्रकार का व्यक्तिगत आदान-प्रदान सभी के लिए एक लाभकारी अनुभव होगा। इससे आप लोगों में 'संपूर्ण भारतीय तादात्मय' की भावना पैदा होगी, एकत्व की भावना बढ़ेगी तथा भारतीय विरासत की सांस्कृतिक एवं सामाजिक सम्पदा तथा भारत के भविष्य की क्षमता के प्रति प्रशंसा का भाव पैदा होगा। इन सबसे अधिक ये खेल इस बात को गहराई से सोचने का अवसर देते हैं कि यदि हम मिलकर उत्कृष्टता के लिए अपनी समस्त क्षमता और प्रतिभा का सामूहिक रूप से प्रयास करें, तो हम भारतीय किसी भी अंतरराष्ट्रीय क्षेत्र में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त कर सकते है।

हम सबके सामने एक मज़बूत, सक्रिय, समृद्ध एवं प्रगतिशील भारत का सपना है। हम इस सपने को सच्चाई में बदल सकते हैं, बशर्ते कि हर युवक और युवती एकता और राष्ट्र-भक्ति की भावना से प्रेरित होकर उत्कृष्टता की प्राप्ति के लिए अपने आपको लगा दे।

नारी शिक्षा की भूमिका

महारानी गायत्री देवी कन्या विद्यालय के स्वर्ण जयंती समापन समारोह के अवसर पर आप सबके बीच उपस्थित होकर मुझे स्वाभाविक रूप से खुशी हो रही है। शिक्षा से मेरा शुरू से ही लगाव रहा है, और यह मेरे लिए सौभाग्य की बात रही है कि मैं हमेशा किसी-न-किसी रूप में इससे जुड़ा रहा हूँ। इसलिए, विशेपकर स्कूल और कॉलेज के बच्चों से मिलने और उनसे बातचीत करने में मुझे एक अलग ही तरह का सुख मिलता है। मुझे यह अवसर दिया गया, इसके लिए मै राजस्थान-शासन का, गायत्री देवी जी का और आप सबका आभारी हूँ।

मै उन बच्चियों को अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ, जिन्होंने अभी पुरस्कार पाए हैं। इसके साथ ही आप सभी के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

मै गायत्री देवी जी और उनके पति सवाई मानसिह जी की इस बात के लिए प्रशसा करना चाहूँगा कि उन्होंने आज से पचास वर्प पहले नारी-शिक्षा के महत्व को समझा था। साथ ही यह भी समझा था कि हमारी लड़कियाँ आधुनिक ज्ञान पाये और अपनी सस्कृति के शाश्वत मूल्यों से भी जुड़ी रहें। इस महत्वपूर्ण और उपयोगी उद्देश्य से आगे आकर उन्होंने उस समय इस विद्यालय की स्थापना की थी। मुझे बताया गया कि यह लड़कियो के लिए स्थापित किया गया देश का पहला पव्लिक स्कूल है। इसके लिए वे सचमुच बधाई की पात्र हैं।

जहॉ तक नारी की क्षमता, उसकी बौद्धिकता, और समाज में उसके स्थान का प्रश्न है, मै शुरू से यह मानता रहा हूँ कि इस बारे में हमारी परंपरा अत्यंत समृद्ध रही है। वैदिक काल मे हमारे यहॉ मैत्रेयी और गार्गी जैसी मंत्रदृष्टा विदुपियॉं हुई। तैत्तरीय उपनिपद् की शिक्षा वल्ली मे "मातृ देवोभव, पितृ देवोभव, आचार्य देवोभव" कहा गया है। इसमें माता को सबसे पहला स्थान दिया गया है। आश्रमों मे गुरुपत्नी अत्यंत सम्मानीय होती थी।

उस समय नारिया युद्ध-स्थल में जाती थी। केकैयी ने युद्ध-स्थल मे जाकर

महारानी गायत्री देवी कन्या विद्यालय के स्वर्ण जयती समापन समारोह के अवसर पर, जयपुर, 3 फरवरी, 1994

दशरथ जी के रथ के पहिए के निकलने पर बहुत ही निर्णायक भूमिका निभाई थी। अनुसुया ने सीता जी को उपदेश दिया था।

हमारे देश की नारिया अन्य क्षेत्रो मे भी सक्रिय रही है। अहिल्याबाई होल्कर एक कुशल-शासिका थी, जिन्होने राष्ट्रीय दृष्टिकोण को ध्यान में रखकर गगोत्री से कन्याकुमारी तक जन-कल्याण के अनेक काम किये। शिवाजी की राष्ट्रभक्ति, वीरता और निर्भीकता की नीव में उनकी माँ जीजाबाई रहीं, जिसके बल पर शिवाजी उस समय के सबसे बडे सम्राट से टक्कर ले सके।

राजस्थान की नारियों का त्याग और बलिदान वीर पुरुषों के लिए प्रेरणा का स्रोत रहा है। पन्ना धाय में करुणा, कठोरता, कर्तव्यपरायणता और त्याग का अद्भुत समन्वय देखने को मिलता है।

रानी लक्ष्मीबाई ने अग्रेजो के विरुद्ध स्वतंत्रता का शखनाद किया था, और प्रथम स्वतत्रता संग्राम मे वीरता के साथ लड़ते हुए शहीद हुई थीं। भीकाजी कामा ने विदेश में भारत का झडा फहरा कर अपने साहस और राष्ट्रप्रेम का परिचय दिया था।

हमारी आजादी की लडाई के दौरान बापू ने नारी की इस शक्ति और क्षमता को पहचाना था। इसलिए उन्होने नारियो को राजनीतिक एव सामाजिक कामो से जोड़ा और उन्हे कठिन काम दिये। उस समय वे धरने पर बैठी, लाठियों के वार सहे और जेल भी गई। कस्तूरबा गाधी बापू के साथ कंधा मिलाकर चलीं। कमला नेहरू ने अपने समय की नारियो का स्वतंत्रता आंदोलन में नेतृत्व किया। सरोजिनी नायडू भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस की अध्यक्ष रहीं, जेल गई, और लोगो को प्रेरणा दी। सुभद्रा कुमारी चौहान ने अपनी कविताओं से देशवासियों को प्रेरित किया। सुभाष चन्द्र बोस ने तो महिलाओं के लिए 'रानी झासी रेजिमेंट' बनाई थी, जिसकी कमाडेंट लक्ष्मी स्वामीनाथन थीं।

ये सब इस बात की गवाह हैं कि हमारे देश की नारियो का प्रत्येक युग के हर क्षेत्र में सक्रिय एव महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इसीलिए बापू ने स्पष्ट रूप से यह कहा है

> नारी पुरुष की सहयोगी है। उसके पास पुरुष के बराबर ही क्षमता है। उसे पुरुष के प्रत्येक छोटे-छोटे काम तक में भाग लेने का अधिकार है। उसे पुरुष के बराबर स्वतंत्रता और अधिकार है।

बापू की यह मान्यता हमारी सांस्कृतिक विरासत तथा तात्कालीन जरूरत के बिल्कुल अनुकूल है। इसी मान्यता को आगे बढ़ाते हुए हमारे संविधान में नारी को पुरुष के बराबर अधिकार दिए गये, और इसके अच्छे परिणाम भी देखने में आए हैं। आज हमारे देश की महिलाए सामाजिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों मे कुशलता के साथ अपने दायित्यो का निर्वाह कर रही है। मैं यह मानता हूँ कि इनके कार्य-क्षेत्रों मे जो फैलाव आया है, इनमें जो एक नया आत्मविश्वास आया है, उसका एक महत्वपूर्ण कारण शिक्षा है।

आजादी के बाद से हमारे यहां नारी-शिक्षा का प्रतिशत बढा है। सन् 1951 मे जहा सौ में से केवल नौ महिलाएं ही शिक्षित थीं, वहीं आज करीब 40 महिलाए शिक्षित हैं। लेकिन हम इससे सन्तुष्ट नही हो सकते, क्योंकि पुरुषो की तुलना में शिक्षित नारियो की सख्या अभी भी बहुत कम है। केवल इतना ही नहीं, बल्कि जो नारियों शिक्षित है, वे भी मुख्यत· शहरो मे हैं। गावो में अशिक्षित नारियों का प्रतिशत अभी भी बहुत अधिक है।

इसलिए मै इस अवसर पर यह बात जोर देकर कहना चाहूँगा कि हमारे देश मे नारी-शिक्षा को अधिक-से-अधिक व्यापक बनाना है, उसे गांवो तक पहुंचाना है। इस काम को केवल राज्य सरकारों के भरोसे नहीं छोड़ा जाना चाहिए। यह एक बहुत बड़ा सामाजिक काम है, जिसे सबको मिलकर करना होगा। हमारी स्वयसेवी सस्थाओ, शिक्षको, अभिभावकों, और यहां तक कि विद्यार्थियो को भी इस काम मे हाथ बटाना होगा। तभी हम इस काम मे सफल हो सकेगे।

मैं अपने सामने बैठी बच्चियो से विशेष रूप से कहना चाहूँगा कि वे अपनी इस शिक्षा का समाज के हित में उपयोग करे। जब आप सब अपने सक्रिय जीवन में प्रवेश करें, तब यह देखे कि आप दूसरों के लिए कितना कुछ कर सकती हैं। दीप से दीप जलता है। आप यहाँ पढ़ रही हैं। जब आप यहां से बाहर जाएं, तो कोशिश करे कि आप दूसरो को शिक्षित करें। और यदि यह प्रक्रिया जारी रही, तो मैं समझता हूँ कि इस शताब्दी के अत तक हमारे देश को निरक्षरता के कलक से मुक्ति मिल जाएगी।

मैं आप लोगों के सामने महात्मा गांधी के कुछ शब्द रख रहा हूँ। मैं चाहूँगा कि आप सब इन्हे अपने जीवन में उतारने की कोशिश करें। 'द रोल ऑफ वीमेन' के पृष्ठ 45 पर बापू ने लिखा था·

आपके माता-पिता आपको स्कूल इसलिए नहीं भेजते कि आप

> गुड़िया बनें। बल्कि इसके विपरीत आपसे 'करुणामयी' बनने की अपेक्षा की जाती है। . वह क्षण भर में 'करुणामयी' बन जाती है, जो अपने बारे मे कम सोचती है, और अपने से अधिक उन लोगों के बारे में सोचती है जो गरीब हैं, जो अभागे है।

नारी में करुणा, सेवा और त्याग की उदात्त भावना नैसर्गिक रूप से उनके जन्म से ही होती है। मैं यह मानता हूँ कि शिक्षा इन महान मानवीय गुणों को उभारने का काम करती है। हमारे शिक्षको और शिक्षिकाओं को, विशेपकर नारी के अंदर छिपे इन गुणों को सामने लाने का प्रयास करना है। मेरा दृढ़ विश्वास है कि जिस दिन हमारे देश की नारी-ऊर्जा जागृत होकर राष्ट्र के विकास-कार्यो मे लग जाएगी, उस दिन से हमारी उन्नति के रास्ते और भी आसान हो जाएंगे। इसलिए हमारे देश की महिलाओं को एक प्राणवान समाज के निर्माण के लिए अपनी सृजनात्मक क्षमता का उपयोग करना है। ऐसा करके आप विश्व के सामने एक आदर्श प्रस्तुत कर सकती हैं।

शिक्षा को मैं समाज के विकास और परिवर्तन का सबसे महत्वपूर्ण कारक समझता हूँ। हालांकि समाज के विकास के साथ-साथ समाज में बदलाव आते रहते हैं, लेकिन शिक्षा को उस बदलाव की रफ्तार को तेज करने के साथ-साथ उसे सही दिशा देनी चाहिए। उसे लोगो मे जीवन के प्रति एक रचनात्मक और सकारात्मक दृष्टिकोण पैदा करना चाहिए। यदि हमारे देश की महिलाएँ शिक्षित हो जाएं, तो उनमें एक आत्मविश्वास आएगा। वे अपनी अस्मिता को पहचान सकेंगी। और इस प्रकार जब वे हमारे सामाजिक जीवन में सक्रिय भूमिका निभाएंगी, तब उनके प्रति समाज का दृष्टिकोण खुद-ब-खुद बदलेगा। आज नारी के प्रति हमारे समाज के दृष्टिकोण को बदलने की जरूरत है। आज भी बहुत से अभिभावक, खास तौर से पिछड़े हुए क्षेत्रों के लोग अपनी बच्चियो को स्कूल भेजना गलत समझते है। यह प्रतिक्रियावादी सोच है। इसे तोड़ना बहुत जरूरी है। हालाँकि साक्षरता मिशन जो काम कर रहा है, संचार माध्यम इसके प्रचार-प्रसार के लिए जो कुछ कर रहे हैं, उससे थोड़ा फर्क पड़ा है। लेकिन यदि हमारे पढ़े-लिखे बच्चे और बच्चियाँ, शिक्षक और अभिभावक इस काम मे लग जायें तो और अधिक सफलता मिल सकेगी क्योंकि जब आप सब लोगों से मिलकर यह बात कहेंगे, तो उसका अधिक असर होगा।

जयपुर एक ऐसा नगर है, जो आज से करीब ढाई सौ साल पहले वैज्ञानिक

तरीके से बसाया गया था। इसके संस्थापक शासक ने वास्तु-शास्त्र के अध्ययन के लिए अपने एक प्रतिनिधमंडल को बुखारा भेजा था, और पुर्तगाल के विद्वानों को अपने यहाॅ आमन्त्रित किया था। इस प्रकार शिक्षा और ज्ञान के प्रति यह चाहत इस नगर की नींव मे रही है। मैं चाहूॅगा कि राज्य के लोग संपूर्ण राज्य को जल्दी-से-जल्दी साक्षर बनाने का सकल्प ले। पिछले दिनों दिल्ली में एक सम्मेलन हुआ था, जिसका नाम था- 'सबके लिए शिक्षा'। उस सम्मेलन मे इस शताब्दी के अंत तक सबके लिए शिक्षा की सुविधा उपलब्ध कराए जाने की बात कही गयी। इस शताब्दी के समाप्त होने में केवल सात साल बाकी हैं। सात साल बहुत अधिक नही होते। लेकिन यदि संकल्प भाव पैदा करके सब लोग अपने-अपने स्तर पर इस काम मे लग जायें, तो यह समय कम भी नही है।

यहाॅ हमें इस बात का विशेप ध्यान रखना है कि हमारे विद्यार्थी अपनी संस्कृति से जुड़े रहे। हमारी बच्चियो को अपनी ऐतिहासिक एवं सास्कृतिक परपराओं की नींव पर ही अपने व्यक्तित्व का इस तरह से निर्माण करना है, ताकि वे आधुनिक समय की चुनौतियों का सामना कर सके। हम आधुनिक ज्ञान के बिना पिछड़ जायेंगे, और अपने जीवन-मूल्यो के बिना उखड़ जायेंगे। इसलिए दोनों बातें जरूरी हैं। हमारे यहां ऋग्वेद में कहा गया है- ''आ नो भद्रा कृतवो यन्तु विश्वत·'', अर्थात् अच्छे विचार चारों ओर से आने दो। हमें यह बात याद रखनी है। हमें पुराने और नये ज्ञान में सामजस्य स्थापित करना है। इस विद्यालय की स्थापना के पीछे यह एक उद्देश्य रहा है। समय तेजी से बदल रहा है। हमें भी अपनी समझ और विकास की रफ्तार को सोच-समझकर, सतुलित ढंग से तेज करना होगा।

इसके लिए हमारे देश की महिलाओ को इस बात की प्रतीक्षा नहीं करनी चाहिए कि कोई आएगा और उनकी स्थिति में चमत्कारिक तरीके से परिवर्तन ला देगा। उन्हें स्वय अपने रथ का सारथी बनना होगा। उन्हे स्वय इसके लिए आगे आना होगा। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि शिक्षा इसके लिए आपकी सच्ची सहयोगी सिद्ध होगी।

झाबरमल शर्मा जी के अनुसार, राजस्थान को ही यह गौरव प्राप्त है कि उसने विविदिपानद को विवेकानद नाम दिया था। विवेक का अर्थ है-ज्ञान, प्रज्ञा। विवेकानंद जी इस नगर मे आते रहते थे। सन् 1897 के अत मे वे यहाॅ आकर करीब एक सप्ताह रुके थे। वे नारी-गरिमा के महत्त्वपूर्ण प्रवक्ताओं में से थे।

उन्होंने शिकागो से 28 दिसबर, 1893 को अपने एक परिचित को लिखे पत्र मे कहा था :

> क्या तुम अपने देश की महिलाओं की अवस्था सुधार सकते हो ? तभी तुम्हारे कल्याण की आशा की जा सकती है, नही तो अवश्य की पिछड़े रहोगे।

श्रीमती इंदिरा गांधी ने 10 नवंबर, 1980 को त्रिचूर में एक महिला रैली को संबोधित करते हुए कहा था·

> बिना महिलाओ की भागीदारी के कोई कार्यक्रम सफल नहीं हो सकता। इसके बिना न तो हम विकास कर सकते है, न ही नया भारत बना सकते है।

इसलिए यह पूरे देश के हित में है कि नारी-शिक्षा को महत्व दिया जाए, और उसके लिए मिलकर काम किया जाये। यह सीधी-सी बात है कि देश की आधी जनता को अशिक्षा के अधेरे मे रखकर उजाले की उम्मीद नहीं की जा सकती। यदि हमें संपूर्ण विकास करना है, तो नारी-शिक्षा को महत्व देना ही होगा। नारी की गरिमा स्वीकार करनी ही होगी। उसकी शक्ति को पहचानना होगा और उसकी क्षमता का उपयोग करने के लिए उसे उपयुक्त अवसर उपलब्ध कराने होगे। मैं याद दिलाना चाहूँगा कि सन् 1986 मे जो राष्ट्रीय शिक्षा-नीति तैयार की गयी थी, उसमें पहली बात 'महिला समानता के लिए शिक्षा' की कही गयी है। यह खुशी की बात है कि इसके लिए कोशिश की जा रही है। मैं विश्वास करता हूँ कि इस शताब्दी का अत, हमारे देश की अशिक्षा का अत बनेगा। इसके लिए मै देश के सभी लोगों से मिलकर काम करने की अपील करता हूँ।

आज विश्व के विभिन्न भागों मे नारियॉ अपने सामर्थ्य का प्रमाण दे रही हैं। श्रीमती इंदिरा गांधी हमारे देश की प्रधानमत्री रही। श्रीलंका, इंग्लैड तथा इजराइल मे भी नारियॉ देश की प्रधान रही है। वर्तमान में पाकिस्तान, बंगला देश, तुर्की तथा नार्वे मे महिला प्रधानमंत्री है। भारत मे भी शिक्षा, वैज्ञानिक अनुसधान, इजीनियरिंग तथा जीवन के अन्य क्षेत्रो में भी महिलाये पूरी कुशलता के साथ अपना दायित्व निभा रही हैं। लेकिन अभी इस दिशा में बहुत कुछ और किया जाना है।

मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि एम जी डो कन्या विद्यालय लड़कियों की शिक्षा के क्षेत्र में पिछले पचास वर्षो से महत्वपूर्ण भूमिका निभा रहा है। यह जानकर

अच्छा लगा कि यहाँ कला विषयों के साथ-साथ वाणिज्य और विज्ञान के विषय भी पढ़ाये जा रहे हैं। मैं चाहूंगा कि विद्यालय अपने यहाॅ उन नये विषयों को शुरू करने में भी अग्रणी रहे, जो आज की जरूरत के अनुकूल है, ताकि हमारी बच्चियाॅ किसी क्षेत्र में पीछे न रहें।

संस्कृत समृद्ध भाषा

यह प्रसन्नता की बात है कि एक रात्रिकालीन विद्यालय के रूप में प्रारम्भ हुए इस विद्यालय ने अब विश्वविद्यालय का रूप ग्रहण कर लिया है। इसके सहस्रो विद्यार्थी देश और विदेशों मे संस्कृत के अध्यापन कार्य मे लगे हुए हैं। मुझे विश्वास है कि यह विद्यापीट निरन्तर विकास की ओर अग्रसर होता रहेगा।

स्वर्गीय लाल बहादुर शास्त्री जी का नाम इस विद्यापीठ से जुड़ा हुआ है। मैंने अभी यहीं पास में उनकी प्रतिमा का अनावरण किया। मैं आपके विद्यापीठ से शास्त्री जी के नाम के जुड़े होने, तथा यहाँ स्थापित उनकी प्रतिमा को बहुत महत्वपूर्ण मानता हूँ।

शास्त्री जी को मुझे निकट से जानने, समझने, बल्कि यहाँ तक कि उन्हे अनुभव करने का सौभाग्य मिला है। उनमे जो सादगी थी, उनमें जो सहजता थी, उनमे जो सरलता तथा राष्ट्र प्रेम की जो उदात्त भावना थी, उन्हें याद करके मैं भी रोमांचित हो उठता हूँ। वे भारतीय संस्कृति के प्रतिमूर्ति थे।

शास्त्री जी अपनी जमीन से जुड़े हुए एक महान नेता थे। उनके व्यक्तित्व मे, उनके विचारो मे और उनके व्यवहार में हमारे देश के आम आदमी की जीवन-पद्धति, तथा उसकी बेहतरी की चिन्ता हमेशा साफ-साफ दिखाई पड़ती थी। उनके लिए संस्कृति जीने की वस्तु थी, विचार या बहस करने की नहीं। शायद यह एक बहुत बडा कारण था कि उन्हे सारे देश का इतना गहरा और आत्मीय सम्मान मिला। मैं कहना चाहूँगा कि आपके विद्यापीठ से ऐसे व्यक्तित्व का नाम जुडा होना आप सबके ऊपर एक गहरा दायित्व डालता है। यह दायित्व है - संस्कृत और संस्कृति के विस्तार और विकास का। शास्त्री जी की संस्कृत के प्रति आस्था उनके द्वारा वाराणसी के संस्कृत विश्वविद्यालय में 26 दिसम्बर, 1964 को दिए गए दीक्षांत भाषण मे परिलक्षित होती है। शास्त्री जी ने कहा था -

संस्कृत इस देश की एक अमूल्य धरोहर है। यह हमारी संस्कृति

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ के प्रथम दीक्षांत समारोह में, नई दिल्ली, 15 फरवरी, 1994

> और सभ्यता का मूल स्रोत है। सच तो यह है कि सस्कृत भाषा और साहित्य का इतिहास इस देश के बौद्धिक विकास का इतिहास है। इस भाषा मे भारत की आत्मा अभिव्यक्त हुई है, और यह अनेक भारतीय भापाओं की माॅ, बहन ओर धात्री रही है।

वस्तुतः जब भी संस्कृत की बात आती है, तो उसके साथ संस्कृति की बात अपने आप ही आ जाती है। यह स्वाभाविक भी है, क्योंकि संस्कृत केवल एक भाषा नहीं है, बल्कि यह मानव जाति के पूर्वजों के चिन्तन का आधार भी है। यह एक ऐसा माध्यम है, जिससे हमारी संस्कृति की जड़ें हजारों साल पीछे जाकर उससे अपना जीवन रस प्राप्त करती हैं। यही वह भाषा है, जिसने भारत को विश्व का गुरु बनाया। हमारे देश के प्रथम प्रधान मंत्री पं जवाहरलाल नेहरू बिल्कुल सही कहा करते थे-

> यदि मुझसे पूछा जाए कि भारत के पास कौन सी श्रेष्ठ बहुमूल्य वस्तु है और हमारी सबसे सुन्दर विरासत क्या है, तो मैं बिना किसी हिचकिचाहट के उत्तर दूंगा कि वह है – संस्कृत भापा, संस्कृत साहित्य और उसमें पाई जाने वाली सभी सामग्री। यह एक ऐश्वर्यशाली विरासत है। जब तक यह बनी रहेगी, और हमारे देश में रहने वालों को प्रभावित करती रहेगी, तब तक भारत के बुद्धि-वैभव का स्रोत लगातार प्रवाहित होता रहेगा।

सर विलियम जोन्स ने आज से करीब दो सौ साल पहले जब इस बात को स्वीकार किया था कि सस्कृत भापा ग्रीक की अपेक्षा अधिक पूर्ण है, लैटिन की अपेक्षा अधिक व्यापक है, तथा इन दोनों की अपेक्षा अधिक परिमार्जित एवं उत्कृष्ट है, तो इसमें कोई आश्चर्य नहीं होना चाहिए। मेरा यह मानना है कि कोई भी भापा, जो अपने समय के विभिन्न विचार और भावों को सटीक रूप से पूरी तरह व्यक्त कर सकती है, एक उत्कृष्ट एवं सम्पूर्ण भाषा है। निश्चित रूप से संस्कृत एक ऐसी ही भापा थी, और आज भी है। सस्कृत भापा में विभिन्न विषयो पर उपलब्ध साहित्य इस बात के प्रमाण हैं कि चिन्तन का कोई भी कोना इससे अछूता नहीं रहा। दर्शन, आध्यात्म, कविता, नाटक, व्याकरण, काव्य-शास्त्र, इतिहास, समाज शास्त्र, राजनीति, ज्योतिप, आयुर्विज्ञान, शल्य चिकित्सा, वास्तु शास्त्र, अन्तरिक्ष विज्ञान, रसायन शास्त्र, गणित, मनोविज्ञान तथा खगोल शास्त्र, जैसे सारे विपयों को इस भाषा ने अभिव्यक्ति दी।

वेदों की ऋचाओं में आध्यात्मिक अनुभव की गहराई और ऊंचाई मिलती है। ज्योतिष शास्त्र पर 'सूर्यसिद्धान्त' और 'लीलावती' जैसे ग्रन्थ तथा सामुद्रिक शास्त्र पर 'बृहत्संहिता' जैसी महान रचनाएं उपलब्ध हैं। आर्यभट्ट की कृति में गणित विज्ञान की सूक्ष्म पहेलियों का अद्‌भुत रूप देखने को मिलता है। इसी महान भारतीय वैज्ञानिक ने पहली बार सिद्ध किया था कि पृथ्वी अपनी धुरी पर घूमती है। इसी ग्रन्थ में सूर्य और चन्द्र ग्रहण का सिद्धान्त भी निहित है। 'चरक संहिता' आयुर्विज्ञान का महान ग्रन्थ है। "सुश्रुतसंहिता" का अपना विशिष्ट स्थान है। वाग्भट्ट की महान रचना "अष्टांगहृदयम्" में जिन आठ चिकित्साओं का वर्णन मिलता है, उनमें शल्य-चिकित्सा और रसायन चिकित्सा भी हैं।

महान व्याकरणाचार्य पाणिनि की "अष्टाध्यायी" आज भी लोगों को विलक्षण लगती है। इससे तुलनात्मक भाषा-विज्ञान का अभ्युदय हुआ। "निरुक्त" में शब्दों के समुचित चयन और पर्याय शब्दों की व्यवस्था मिलती है। भरतमुनि ने जिस "नाट्यशास्त्र" की रचना की; उद्‌भट, रुद्रट, शंकुक, भट्टलोलट, अभिनव गुप्त, मम्मट, भामह, दण्डी तथा वामन जैसे आचार्यों ने काव्य शास्त्र के जो सिद्धान्त स्थापित किए, वे आज भी पूरे विश्व में कला और साहित्य के क्षेत्र में मानदण्ड माने जाते हैं।

साहित्य के क्षेत्र में हमारे पास वाल्मीकि और कालिदास जैसे अनेक विश्व विख्यात नाम हैं, जिन्होंने संस्कृत के माध्यम से अपनी रचनात्मकता को अभिव्यक्ति दी। विष्णु शर्मा का "पंचतंत्र" तो विश्व की सर्वश्रेष्ठ कृतियों में मानी जाती है, जिसका सन् 570 ई० में ही सीरियाई भाषा में अनुवाद हो गया था, जो आज भी उपलब्ध है।

इसके साथ ही संस्कृत भाषा की महानता इस महत्वपूर्ण बात में भी निहित है कि इस भाषा ने ईसा से करीब एक हजार वर्ष पहले से ही भारत उपमहाद्वीप के अपने पड़ोसी देशों की भाषा और विचारों को प्रभावित करना शुरू कर दिया था। चीन, जापान, कोरिया, वियतनाम, थाइलैण्ड, मलाया, कम्बोडिया, इण्डोनेशिया तथा श्रीलंका को सांस्कृतिक रूप से एक-दूसरे से जोड़ने में संस्कृत की महत्वपूर्ण भूमिका रही है। जब भारत की बौद्ध विचारधारा अपनी लोकप्रियता की चरम सीमा पर थी, उस समय चीन के विद्वान भारत में संस्कृत और पाली पढ़ने आते थे। फाह्यान और ह्वेनसांग इसी परम्परा के यात्री रहे। ह्वेनसांग ने तो अपना नाम ही मोक्षाचार्य रख लिया था, जिसे चीनियों के संस्कृत प्रेम का उदाहरण माना जा

सकता है। इंडोनेशिया के द्वीपों और कम्बोडिया मे संस्कृत मे लिखे हुए अनेक शिलालेखो की खोज हो चुकी है। चीन और मंगोलिया में संस्कृत की अनेक पाण्डुलिपियां, शिलालेख तथा ताम्रपत्र उपलब्ध हैं।

विदेशों में संस्कृत के प्रचार–प्रसार में भारतीय गणित का बहुत महत्व रहा है। जब ईसा की पांचवीं सदी में महान भारतीय वैज्ञानिक आर्यभट्ट ने गणित के क्षेत्र में विश्व–व्यापी सिद्धान्त स्थापित किया, तव आठवीं शताब्दी में अरब देशों ने आर्यभट्ट के सिद्धान्तों का अपनी भापा में अनुवाद कराया। इसके साथ ही ग्रीक लोगो ने भारत के ज्योतिर्विज्ञान में रुचि दिखाई। शून्य के सिद्धान्त से संख्या वृद्धि मानना तथा दशमलव की प्रणाली संस्कृत भापा में ही व्यक्त की गई थी। इसकी विज्ञान के विकास में महत्वपूर्ण भूमिका रही है। इसके कारण विश्व का ध्यान संस्कृत भापा की ओर खिंचा और यह भापा अरव देशों से होते हुए यूरोप की ओर बढ़ने लगी। वाद में अनेक यूरोपीय देश इस ओर आकर्पित हुए, और उन्होंने न केवल उनका अपनी भापा में अनुवाद ही किया, वल्कि उनमे वताए गए सिद्धान्तों का सहारा लेकर नए–नए आविप्कार भी किए। आज अमेरिका, स्विटजरलैण्ड, हालैंड तथा जर्मनी जैसे देशो में हमारे आयुर्वेद की चिकित्सा पद्धति पर अनेक शोध किए जा रहे है। वाल्टिक देशो पर संस्कृत का गहरा प्रभाव रहा है।

मेंने यहां इन वातों का उल्लेख करना इसलिए आवश्यक समझा, ताकि लोगो का यह भ्रम दूर हो सके कि संस्कृत केवल आध्यात्म की भापा है, और इसमें आधुनिक विज्ञान को व्यक्त करने की क्षमता नहीं है। इस वात को अच्छी तरह समझा जाना चाहिए कि इस भापा का आधार अत्यंत वैज्ञानिक है। इसमे "धातु" की जो व्यवस्था है, वह विलक्षण है। धातु शव्द में उपसर्ग और प्रत्यय लगाकर नए–नए अर्थो को व्यक्त करने वाले अनगिनत शव्द अत्यंत सरलता और वैज्ञानिक पद्धति से गढ़े जाते हें तथा गढ़े जा सकते हैं। साथ ही संस्कृत व्याकरण अपने में अनुपमता का प्रतीक है। अपनी इसी अद्‌भुत विशिष्टता के कारण ही यह भापा कम्प्यूटर के लिए सवसे उपयुक्त भापा मानी जा रही है। मैं आप लोगों को वताना चाहूंगा कि मैंने अन्य देशों के विद्वानो से वातचीत करने के दौरान यह पाया है कि उनमें संस्कृत भापा के प्रति वहुत उत्सुकता है, और वे इसे अत्यन्त समृद्ध भापा मानते हैं। अव तो पश्चिमी वैज्ञानिक यह स्वीकार करने लगे हैं कि संस्कृत भापा कम्प्यूटर के लिए सवसे आदर्श भापा है। विदेशों में संस्कृत भापा के प्रति

लोगों की रुचि बढ़ रही है। अमेरिका, इंग्लैण्ड, जर्मनी, इटली, हालैण्ड, जापान, थाइलैंड, हंगरी और रूस में इसके अध्ययन और अध्यापन को पर्याप्त महत्व दिया जा रहा है। अभी जिन विद्वानों को उपाधियाँ दी गई हैं, उनमें इटली और जापान के विद्वान भी हैं। यह मेरी इस बात को और भी प्रमाणित करता है।

यह प्रसन्नता की बात है कि हमारी इस ऐतिहासिक समृद्धि के प्रति देशवासियों में जहां एक सतर्कता आई है, वहीं पश्चिमी देशों ने भी इसके महत्व को पूरी तरह स्वीकार करके उस पर काम करना शुरू किया है। मुझे विश्वास है कि इस प्रकार की जागरूकता से संस्कृत भाषा को एक नई शक्ति मिलेगी, लोगों में इसके प्रति आकर्षण उत्पन्न होगा, और इसे फिर से अपना खोया हुआ गौरव मिल सकेगा।

संस्कृत प्राचीन काल में हमारे पूर्वजों के विचारों की अभिव्यक्ति का माध्यम रही है। लेकिन मैं इससे भी कहीं अधिक, इस भाषा को उन उदात्त और महान विचारों की गोद समझता हूँ, जिसमें मानवता के महान जीवन मूल्य पले और बड़े हुए। ये महान मूल्य हैं - समानता के, बहुलवाद के और एकत्व के, समन्वय के, विचार स्वातंत्र्य तथा मानव प्रेम के।

ऋग्वेद में कहा गया है "एकैव मानुषि जाति", अर्थात् सम्पूर्ण मनुष्य जाति एक ही है। यह बात याद रखने की है कि हमारे पूर्वजों के उदार मन में किसी भी प्रकार का कोई द्वेष और संकीर्णता नहीं थी। उन्होंने मनुष्य और मनुष्य को समान माना। इसी प्रकार उन्होंने पुरुष और नारी को समान माना। मैत्रेयी और गार्गी जैसी मंत्रदृष्टा विदूषियां इस बात का प्रमाण हैं कि हमारी संस्कृति में नारी और पुरुष को समान स्थान दिया गया। उन्हें बराबर अधिकार दिए गए। अन्नपूर्णा स्त्रोत में कहा गया है-

माता मे पार्वती देवी पिता देवो महेश्वर:
बान्धवा: शिव भक्ताश्च स्वदेशो भुवनत्रयम्।

संस्कृत के दर्शन ने हमेशा बहुलवाद का सम्मान किया और उसे राष्ट्र और संस्कृति की शक्ति के रूप में स्वीकार किया। ऋग्वेद में कहा गया - "एकम् सत् विप्रा बहुधा वदन्ति।" इसी प्रकार "पृथ्वीसूक्त" में प्रार्थना की गई-

जनं बिभ्रति बहुधा विवाचसं
नानाधर्माणं पृथिवी यथौकसम्।
सहस्त्रं धारा द्रविणस्य मे दुहां
ध्रुवेव धेनुरनपस्फुरन्ती॥

इस बहुलवाद को स्वीकार करते हुए विचार स्वातंत्र्य और उनमे एकत्व की बात कही गयी। क्योंकि एकत्व की चेतना ही महान सत्य तक पहुँचा सकती है, और किसी भी महान सस्कृति एवं राष्ट्र की सच्ची शक्ति बन सकती है। "उदारचरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्", की उदात्त भावना इसी विशाल मन की देन है। ऋग्वेद मे कहा गया है –

सगच्छध्व सं वदध्व स वो मनांसि जानताम्।
देवा भागं यथा पूर्वे सं जानाना उपासते॥

इसमे लोकतत्र की भावना निहित है। भाव है कि एक साथ चले, बातचीत करे, निष्कर्प निकालें, और उसका अनुसरण करें।

इसी का अगला श्लोक है –

ओऽम्। समानो मन्त्र·समिति.समानी, समानं मन. सह चित्तमेपाम्।
समानं मन्त्रमभिमन्त्रये व·, समानेन वो हविपा जुहोमि॥

"आ नो भद्रा कृतवो यन्तु विश्वत", जैसे वाक्य इस बात के प्रमाण है कि हमारा चिन्तन कितना खुला, सामन्जस्यपूर्ण और समन्वययुक्त रहा है। यह इस बात का प्रमाण है कि भारतीय जीवन दृष्टि कितनी अधिक प्रगतिशील रही है, और अपनी जडों से जुडी रह कर वह किस प्रकार नए विकास के लिए तत्पर रही है। ऐसी है हमारे चिन्तन की महान विरासत, जो संस्कृत भापा में सुरक्षित है। यह चिन्तन मानव के कल्याण से जुडा हुआ है। इसीलिए मेरा यह मानना है कि संस्कृत मात्र एक भापा नहीं है, अपितु एक सस्कृति भी है। मुझे इस समय लखनऊ के अखिल भारतीय सस्कृत परिषद के कार्यालय के मुख्य द्वार पर अंकित शब्द याद आ रहे हैं। वहा लिखा हुआ है –

यदि नो संस्कृता दृष्टि यदि नो संस्कृत मन ।
यदि नो सस्कृता वाणी संस्कृताध्ययनेन किम्॥

अर्थात् सस्कृत के अध्ययन से क्या लाभ हुआ, यदि दृष्टि सस्कृत नहीं हुई, अर्थात् व्यापक और सतुलित नहीं हुई, मन संस्कृत नही हुआ अर्थात् उदात्त नही हुआ, और वाणी सस्कृत नहीं हुई अर्थात् परिष्कृत एवं नम्र नहीं हुई।

सस्कृत साहित्य में हमें भारत के विशाल स्वरूप की जानकारी मिलती है। विष्णुपुराण में लिखा है–

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्प तद् भारतं नाम भारती यत्र सन्तति.॥

मैं यहां कहना चाहूँगा कि भारतवर्ष की यह परिकल्पना भौगोलिक भी है और राजनीतिक भी है। भारत का अर्थ है - विश्व भर के मानव जाति की सांस्कृतिक एवं नैतिक अस्मिता का भरण-पोषण करने वाला। समस्त पृथ्वी के विश्व-जीवन को संजोने वाला भारत है। यह एक महान परिकल्पना है। ऐसी उदात्त भावना देश के प्रत्येक व्यक्ति पर एक नैतिक दायित्व डालती है। यह दायित्व है - मानवीय मूल्यों के पोषण का और उसे व्यापक बनाने का। और यही हमें संस्कृत में दिखाई पड़ती है।

इसलिए मेरा यह मानना है कि संस्कृत अतीत की ही भाषा नहीं है, बल्कि यह भविष्य की भाषा भी है। यह एक ऐसी समृद्ध भाषा है, जिसमे दार्शनिक चिंतन के साथ-साथ वैज्ञानिक तथ्यो को पूरे प्रभावशाली ढंग से अभिव्यक्त किया जा सकता है। यह सभ्यता और संस्कृति के प्राचीन युग की भाषा ही नहीं है, बल्कि इसमें मानवीय सभ्यता के सर्वोत्कृष्ट एवं संस्कारित चिंतन के अभिव्यक्त की भाषा बनने की क्षमता है। हमें इस सच्चाई को समझना है और इसके साहित्य, दर्शन और ज्ञान का आधुनिक युग में लाभ लिया जाना चाहिए। ऐसा करना सबके हित में होगा। उपयुक्त है कि यह भारत की भूमि पर फले-फूले।

मैं यह मानता हू कि हमारे देश के नैतिक और चारित्रिक मूल्यों की दृष्टि से संस्कृत भाषा की अत्यन्त महत्वपूर्ण भूमिका है। मुझे याद है कि जब हम लोग विद्यार्थी थे, उस समय विद्यालयो में संस्कृत के छोटे-छोटे सुभाषित वाक्य याद कराये जाते थे। उनका मन और मस्तिष्क पर बड़ा अच्छा असर होता था। मैं चाहूंगा कि इस तरह के प्रयास फिर से प्रारम्भ किए जाएं।

संस्कृत को मैं एक जोड़ने वाली भाषा मानता हूँ। इसने सारे देश को विचारों और भावों के स्तर पर जोड़ा है। इसने अपने उपमहाद्वीप के देशों को सांस्कृतिक स्तर पर जोड़ा तथा पूर्व और पश्चिम को एक-दूसरे से जोड़ा। हमारे संविधान निर्माता संस्कृत की इस ऐतिहासिक समन्वयात्मक शक्ति से अच्छी तरह परिचित थे। इसलिए जब हिन्दी को राजभाषा बनाया गया, तो उसमे संस्कृत को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया। संविधान के अनुच्छेद 351 के अंतर्गत कहा गया -

> संघ का यह कर्तव्य होगा कि वह हिन्दी भाषा का प्रसार बढ़ाए, उसका विकास करे, जिससे वह भारत की सामासिक संस्कृति के सभी तत्वों की अभिव्यक्ति का माध्यम बन सके और उसकी प्रकृति में हस्तक्षेप किए बिना, हिन्दुस्थानी में और आठवीं अनुसूची मे

विनिर्दिष्ट भारत की अन्य भापाओं में प्रयुक्त रूप, शैली और पदों को आत्मसात करते हुए, और जहां आवश्यक या वांछनीय हो, वहां उसके शव्द-भंडार के लिए मुख्यत: संस्कृत से और गौणत· अन्य भापाओं से शव्द ग्रहण करते हुए उसकी समृद्धि सुनिश्चित करे।

इस निर्देश में दो वाते महत्व की हैं। पहली यह कि हिन्दी भापा सामासिक संस्कृति को व्यक्त करने वाली भापा वने। दूसरी यह कि इस काम के लिए शव्द मुख्यत: संस्कृत भापा से लिए जाएं। दक्षिण भारत के कन्नड़, तेलुगु ओर मलयालम ने सस्कृत के अनेक तत्सम् और तद्भव शव्दों को ग्रहण किया है। उत्तर, पूर्व, पश्चिम एवं मध्य भारत की भापाओं के केन्द्र में संस्कृत, प्राकृत और अपभ्रंश रही है। शायद आप लोगों को यह जानकर सुखद आश्चर्य होगा कि पंजावी भापा में करीव पन्द्रह हजार वाक्यांश ज्यो-के-त्यों वैदिक सस्कृत जैसे ही प्रयुक्त होते हैं। यह जानकारी गंगानाथ झा केन्द्रीय सस्कृत विद्यापीठ, इलाहावाद द्वारा प्रकाशित ''पजावी-संस्कृत शव्दकोश'' मे मिलती है। ये सव वातें इस वात की प्रमाण हैं कि किस प्रकार संस्कृत हमारे विचारों, भावों और व्यवहारों में घुली-मिली है। हमें इसकी क्षमता को पहचानकर राष्ट्र हित में इसका भरपूर उपयोग करना है। इसके लिए संस्कृत विद्यालयों, विश्वविद्यालयों तथा उससे वढ़कर निकले विद्यार्थियो को प्रमुख भूमिका निभानी होगी। यह देखना होगा कि यह भापा किस प्रकार आसान ढंग से लोगों को सिखाई जा सकती है। मैं समझता हूॅ कि भापा के वारे में व्यावहारिक जानकारी देने वाली छोटी-छोटी पुस्तकों का प्रकाशन, सांध्य कक्षाए तथा आधुनिक संचार माध्यम इसके लिए उपयोगी हो सकते हैं।

इसके साथ ही शासन और समाज को यह देखना होगा कि वे संस्कृत के विद्वानों को उचित स्थान दें, उचित सम्मान दें, जिससे विद्यार्थी इसकी ओर आकर्पित हो सकें।

मुझे यह आवश्यक लगता है कि संस्कृत का अध्ययन और अध्यापन अन्योन्याश्रित प्रणाली से भी होना चाहिए। हमारे संस्कृतज्ञो को आधुनिक ज्ञान का होना आवश्यक है। साथ ही हमारे वैज्ञानिकों, चिकित्सकों, इंजीनियरों तथा अन्य विपयो के विद्वानो को संस्कृत का ज्ञान होना चाहिए। तभी संस्कृत भापा में संचित ज्ञान के कोप का उपयोग मानव कल्याण के लिए हो सकेगा। अनुभव पर आधारित आयुर्वेद की चिकित्सा पद्धति का हमारे पास वृहद् कोप है। उसमें हृदय तथा मधुमेह जैसी व्याधियों के इलाज वताये गये हैं। इसके महत्व को देखते हुए ही पंडित

नेहरू ने लखनऊ में इस पर अनुसंधान के लिये केन्द्र खोला था। विदेशों में आयुर्वेद पर अनेक अनुसंधान हो रहे हैं।

मैं श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय विद्यापीठ की इस बात के लिए सराहना करना चाहूँगा कि यहां संस्कृत में उच्च स्तरीय शिक्षा दी जा रही है। इसके साथ ही साथ शोध तथा प्रकाशन आदि की भी व्यवस्था है। यहां स्रोतसूत्र और मीमांसा दर्शन पर काम हुआ है, और उनका प्रकाशन भी हुआ है। निश्चित रूप से इससे हमारे ज्ञान की मूल्यवान निधि देश के सामने आ सकेगी।

वर्तमान युग में यह आवश्यक है कि अध्ययन और शोध के लिए विज्ञान की आधुनिक सुविधाओं का उपयोग किया जाए। इस दिशा में एक बहुत बड़ा काम है - संस्कृत, पालि और प्राकृत भाषाओं की पाण्डुलिपियों का सरक्षण करना, उन्हें सूचीबद्ध करना और उनका वर्गीकरण करना। इन भाषाओं में हमारे चिंतन की अमूल्य निधियां हैं। उनका फिल्माकन करके उन्हें सुरक्षित किया जाना है। इसी प्रकार शोध के लिए कम्प्यूटर जैसी आधुनिक तकनीक उपलब्ध कराई जानी चाहिए। में चाहूंगा कि शास्त्री जी के नाम पर स्थापित यह विद्यापीठ संस्कृत के अध्ययन एवं शोध के क्षेत्र में देश का आधुनिक सुविधाओं से युक्त एक आदर्श केन्द्र बने। यह केन्द्र देश की राजधानी में स्थित है इसलिए इसे स्वय को उत्तम केन्द्र के रूप में विकसित करने का प्रयास करना चाहिए।

अब मैं तैत्तिरीयोपनिषद् के दीक्षांत उपदेश के कुछ भाग उद्धृत करना चाहूँगा, जो मुझे आज भी सबसे अच्छा दीक्षान्त उद्बोधन लगता है-

सत्यं वद। धर्मं चर।
स्वाध्यायान्मा प्रमदः।
सत्यान्न प्रमदितव्यम्।
धर्मान्न प्रमदितव्यम्।
कुशलान्न प्रमदितव्यम्।
भूत्यै न प्रमदितव्यम्।
स्वाध्यायप्रवचनाभ्यां न प्रमदितव्यम्।
देव पितृकार्याभ्यां न प्रमदितव्यम्।
मातृदेवो भव।
पितृदेवो भव।
आचार्यदेवो भव।

अतिथिदेवो भव।
एष आदेशः एष उपदेश ।
एष वेदोपनिषत्।
एतदनुशासनम्।
एवमुपासितव्यम।
एवमुचैतदुपास्यम्।

हिन्दी भाषा का योगदान

सबसे पहले मैं आज पुरस्कृत किए गए सभी विद्वानो को अपनी हार्दिक बधाई देता हू। मुझे विश्वास है कि आप सभी रचनाकार तथा आपसे प्रेरित होकर अन्य रचनाकार भी इस काम के लिए आगे आएंगे। मैं आप सबके उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूं।

इस समय मुझे स्वर्गीय श्रीमती इन्दिरा गाधी के वे शव्द अनायास ही याद आ रहे हैं, जो उन्होंने प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के अवसर पर कहे थे। उन्होने कहा था -

> भारत जैसे संयुक्त परिवार का अच्छा उदाहरण मिलना कठिन है। हमारी प्रत्येक भापा इस परिवार की पुत्री के समान है। ये सभी भाषाएं भारत की सास्कृतिक सम्पत्ति की समान उत्तराधिकारिणी हैं। ये भाषाए भारत की राष्ट्रभाषाएं हैं, और इनमें से हिन्दी सम्पर्क की भापा है।

पुराने समय से देश के कोने-कोने के लोगों ने अपने इस पारिवारिक दायित्व को निभाया है। इसी का परिणाम है कि आज यह महान और विशाल देश इतना शक्तिशाली है, जो किसी-किसी के लिए ईर्ष्या का कारण तक बन जाता है। भारत की महानता प्रत्येक भारतीय के इस पारिवारिक दायित्व पर निर्भर है।

आज इस अवसर पर, जबकि विभिन्न भाषाओं के रचनाधर्मी यहां उपस्थित हैं, मुझे उपयुक्त लग रहा है कि मैं इस बात की चर्चा करूं कि हमारी राजभाषा हिन्दी के लिए पूरे देश का योगदान रहा है।

मैं अपनी बात की शुरूआत दक्षिण भारत के योगदान से करना चाहूंगा। हिन्दी के विद्वान मेरी इस बात से सहमत होगे कि हिन्दी का विकास केवल उत्तर भारत में ही नही हुआ है, बल्कि दक्षिण भारत का भी इसमे बहुत बड़ा योगदान रहा है। वहां की हिन्दी को "दक्खिनी हिन्दी" कहा गया। "दक्खिनी हिन्दी" हिन्दी का वह रूप है, जिसका विकास 14 से 19वीं सदी तक बहमनी, कुतुबशाही

केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय के पुरस्कार वितरण समारोह मे, नई दिल्ली, 12 मार्च, 1994

और आदिलशाही सुलतानों के संरक्षण में हुआ था। जिस समय उत्तर भारत में खड़ी बोली केवल बोल-चाल की भापा थी, उस समय दक्षिण मे वहां के शासकों के सरक्षण में हिन्दी में साहित्य की रचना हो रही थी। इतिहासकार फरिश्ता ने लिखा है कि राजकीय कार्यालयो मे फारसी की बजाय हिन्दी चलती थी।

17वी सदी मे तन्जावुर पर शासन करने वाले शाहजी महाराज ने हिन्दी भापा में दो यक्ष गानों की रचना की थी। सन् 1880 के आस-पास श्री शिष्टु कृष्णमूर्ति शास्त्री तथा नरहरी नामक विद्वानों ने तुलसीदास के ''रामचरितमानस'' का तेलुगु में अनुवाद किया था। इसी के आस-पास मछलीपट्टणम् के निवासी नोदेल्ल पुरुपोत्तम कवि ने 32 हिन्दी नाटको की रचना की, जो उस समय खेले गए, और जिनका वहां के लोगों पर काफी प्रभाव पड़ा। श्री शिवन्न शास्त्री लगातार ''सरस्वती'' पत्रिका में लिखते रहे, और उन्होंने खडी बोली हिन्दी का स्वरूप सवारने में आचार्य महावीर प्रसाद द्विवेदी की काफी सहायता की। सन् 1942 के आन्दोलन मे अल्लूरी सत्यनारायण राजू ने जेल मे रह कर हिन्दी सीखी और महान विद्वान राहुल सास्कृतायन के उपन्यास ''वोल्गा से गगा'' का तेलुगु में अनुवाद किया।

कर्नाटक में सदियों से ''दक्खिनी हिन्दी'' के रूप मे ''कर्नाटकी हिन्दी'' की चर्चा रही है। गुलबर्गा इसका केन्द्र रहा। वहॉ बन्दे नवाज वली जैसे प्रसिद्ध दक्खिनी कवि हुए। स्वयंभू जैसे जैन कवियो की हिन्दी को देन विख्यात है। मध्य काल में कर्नाटक के हरि कथाकार अपनी कथाओं के बीच-बीच में तुलसी, कबीर ओर मीरा के लोकप्रिय गीत सुनाते थे। मैसूर तथा अरकाट के सुलतान अपने राज्यों में दक्खिनी तथा उर्दू को विशेप प्रोत्साहन देते थे। मैसूर के सुलतान टीपू तथा कोल्ली के राजा के बीच हुए समझौते में कोल्ली राज परिवार मे हिन्दुस्तानी की शिक्षा दिए जाने का उल्लेख मिलता है।

केरल के महाराजा स्वाति तिरुनाल ने ब्रज भापा में अनेक गीत रचे। उनके 37 गीत मिलते हैं। मध्य काल में केरल की सेना में मराठा रेजिमेन्ट और राजपूत रेजिमेन्ट हुआ करते थे। ये सैनिक तथा उनका परिवार हिन्दी जानता था, और उनका स्थानीय लोग आदर करते थे। इनके द्वारा लोगों पर हिन्दी का प्रभाव पडा। सन् 1941 मे केरल मे त्रिचूर से पहली हिन्दी पत्रिका ''हिन्दी मित्र'' का प्रकाशन हुआ, जिसके सम्पादक के जी नीलकठन नायर थे। यह परम्परा विकसित होती गई, और आज केरल के अनेक रचनाकार और अनुवादक इस कार्य को आगे बढ़ा रहे है।

राष्ट्रकवि सुब्रमण्य भारती एकता की दृष्टि से हिन्दी भापा को पर्याप्त महत्व देते थे। स्वतत्रता आन्दोलन के दौरान इसके महत्व को देखते हुए उन्होने हिन्दी की कक्षाए भी शुरू की थीं। लोकमान्य तिलक को 29 मई, 1908 को लिखे एक पत्र में उन्होने उन्हें "प्रिय गुरु जी" सम्बोधित करते हुए लिखा था-

> हमसे कहा गया है कि हम हिन्दी पाठ की एक कक्षा खोलें। हमने तो पहले ही एक छोटी-सी कक्षा खोल रखी है। उम्मीद है कि आने वाले दिनो मे इस कक्षा में पढने वालो की सख्या बढ़ेगी।

यह ध्यान देने की बात है कि बापू ने सन् 1918 मे जिस 'दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा' की स्थापना की थी, उसका मुख्यालय मद्रास रखा गया, और इस काम के लिए उन्होने अपने पुत्र देवदास गाँधी को मद्रास भेजा था। 17 जून, 1918 को ब्राडवे के तत्कालीन होम रूल कार्यालय मे श्री सी पी रामास्वामी अय्यर की अध्यक्षता मे श्रीमती एनी बेसेन्ट ने प्रथम हिन्दी वर्ग का उद्घाटन किया था। चार वर्प के अन्दर ही वहा हिन्दी प्रचार का काम इतना बढ़ गया था कि उसकी सुविधा के लिए 'हिन्दी प्रचार प्रेस' खोलना पडा था।

मुझे यह जानकर अच्छा लगा कि कई तमिल भापी विद्वान महान भापा तमिल और हिन्दी रचनाकारो का तुलनात्मक अध्ययन करते आ रहे है। इसी प्रकार महत्वपूर्ण लेखको के साहित्य का एक-दूसरे की भापाओं मे अनुवाद किया जा रहा है। मैं इसे अत्यन्त सराहनीय काम मानता हूँ, क्योकि अनुवाद की प्रक्रिया से हमारे देश की महान भापाओं के विद्वानो के विचार और शैली का विस्तार होगा। इससे हमारी आने वाली पीढ़ी को भी हमारी सस्कृति की विविधता मे एकता का लाभ मिल सकेगा। अनुवाद की इस प्रक्रिया में हिन्दी की महत्वपूर्ण भूमिका हो सकती है।

पाण्डिचेरी में सन् 1949 से अरविन्द आश्रम से फ्रेंच और अग्रेजी मे निकलने वाली पत्रिका का हिन्दी सस्करण निकलने लगा था।

महाराष्ट्र उत्तर और दक्षिण के बीच मे बसा हुआ राज्य है। इसलिए स्वाभाविक रूप से इसका दोनों से सम्पर्क रहा। नामदेव और एकनाथ जैसे संतो ने मराठी के साथ-साथ हिन्दी में भी पदों की रचना की, प्रवचन दिये, विचार प्रबोधन किया तथा हिन्दी के माध्यम से लोगो में एकता, समानता और सक्रियता की भावना का सचार किया।

महाराष्ट्र की समाज सेविका रमाबाई ने अमेरिका से लौटने के बाद सन् 1890 मे "यूनाइटेड स्टेट्स की लोकस्थिति व प्रवासवृत्त" नामक पुस्तक लिखी। इस पुस्तक में हिन्दी की चर्चा करते हुए उन्होने लिखा—

> जिस प्रकार अग्रेजी दस करोड़ लोगों की भापा है, उसी प्रकार हमारे यहां भी एक आम भापा है। भारत के करीब सभी लोग हिन्दी भापा समझते हैं। यदि हमारी राष्ट्रीय और सार्वजनिक सभाए हिन्दी स्वीकार कर ले, तो हिमालय से कन्याकुमारी तक और सिन्धु समुद्र संगम से मणिपुर की सरहद तक सभी देशप्रेमी स्वत. ही हिन्दी भापा के प्रचार मे जुट जाएगे।

लोकमान्य तिलक ने स्वाभिमान तथा सुविधा की दृष्टि से हिन्दी को राष्ट्रभापा बनाने की उपयुक्तता का समर्थन किया। सन् 1917 में राष्ट्रभापा प्रचार के लिए कलकत्ता में आयोजित एक सम्मेलन मे उन्होंने कहा कि हम सभी भारतीय भाई अपने-अपने प्रातीय भेदभावों को भुलाकर यह काम करेगे। बाद में उन्होंने स्वयं हिन्दी में भापण देना शुरू किया। काका कालेलकर ने अपने एक सस्मरण में इस बात की चर्चा की है कि लोकमान्य तिलक ने मध्य प्रदेश के खण्डवा में अपना भाषण हिन्दी मे दिया था। कुछ हिन्दी प्रेमियों ने राष्ट्रभाषा के सवंध में जब उनके पास ज्ञापन भेजा, तव उसके उत्तर मे तिलक ने कहा था—

> राष्ट्र के संगठन के लिए एक ऐसी भाषा की आवश्यकता है, जिसे सर्वत्र समझा जा सके। हिन्दी भाषा राष्ट्रभाषा बन सकती है।

विनोबा भावे ने भी राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की प्रक्रिया में हिन्दी के महत्व को पूर्ण रूप से समझकर लोगो को समझाने का अथक प्रयास किया। अपने सर्वोदय आन्दोलन के दोरान वे सभी लोगो से हिन्दी मे ही बात करते थे। उन्होंने यह स्वीकार किया है कि उनके सर्वोदय आन्दोलन की सफलता मे हिन्दी का सबसे बड़ा योगदान रहा है। इस प्रकार वे हिन्दी के प्रेमी तो थे ही, साथ उन्होंने अपने सर्वोदय आन्दोलन की सफलता के द्वारा हिन्दी की उपयुक्तता को प्रमाणित भी किया।

हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में मराटी भापियों के योगदान से आज सभी परिचित हैं। बाबूराव विण्णु पराड़कर, गोविन्द शास्त्री दुगवेकर, लक्ष्मी नारायण गर्दे तथा बालकृष्ण भट्ट जैसे विद्वान मराटी भाषियों ने हिन्दी पत्रकारिता की नींव रखी। उनका मुख्य जीवन कार्य देश भर में एक राष्ट्रीय दृष्टिकोण प्रस्थापित करना था।

इस प्रयास में लोगो में राष्ट्रप्रेम जागृत करना और राष्ट्रीय जीवन में हिन्दी को केन्द्रीय स्थान देना उनके महत्वपूर्ण लक्ष्य थे।

काका कालेलकर ने राष्ट्रभाषा के प्रचार को राष्ट्रीय कार्यक्रम का अंग मानकर उसके लिए लगातार काम किया। उन्होने अपनी मौलिक रचनाओं द्वारा हिन्दी भाषा और साहित्य को समृद्ध किया।

यह बात विशेष रूप से गौर करने की है कि प्रथम हिन्दी साप्ताहिक "उदत्तमार्तण्ड" सन् 1826 में कलकत्ता से प्रकाशित हुआ था। महान समाज सुधारक राजा राममोहन राय पश्चिमी विचारों से प्रभावित होने के साथ-साथ भारतीय भाषाओं के पोषक थे। उनके सम्पादन में सन् 1826 में निकलने वाले "वंगदूत" समाचार पत्र में अग्रेजी के साथ-साथ हिन्दी, वंगला और फारसी भी होती थी। सन् 1844 मे तारामोहन मैत्रेय ने "सुधारक" अखवार निकाला। कलकत्ता से प्रकाशित "देवनागर" पत्रिका के सस्थापक न्यायमूर्ति शारदाचरण मित्र का नाम आज भी श्रद्धापूर्वक लिया जाता है।

गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर के मन में मातृभाषा के प्रति गहरे अनुराग का भाव था। यह अनुराग हमारे देश की सभी भाषाओं के प्रति था। उन्होंने स्वयं शांतिनिकेतन में हिन्दी भवन की स्थापना की। हिन्दी भवन की स्थापना के समय गुरुदेव ने आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी से कहा था—

> (हिन्दी की) परपरा शक्तिशाली है। . हिन्दी के माध्यम से ऊँचे-से-ऊँचे विचारों को व्यक्त करने का प्रयत्न करना होगा।

इस संवध में मैं नेताजी सुभाष चन्द्र बोस का विशेष उल्लेख करना चाहूंगा। स्वतंत्रता आदोलन में इस वीर पुरुष ने "आजाद हिन्द फौज" की विभिन्न टुकड़ियों को हिन्दी नाम दिए थे। इनके कमांड भी हिन्दी में होते थे। "दिल्ली चलो" का उत्तेजक नारा नेता जी ने देश को दिया था। देश के अधिकांश लोगों के हिन्दी ज्ञान को ध्यान मे रखते हुए सुभाष चन्द्र बोस ने सन् 1938 में हिन्दी प्रशिक्षण संस्थान, वर्धा के दूसरे अधिवेशन मे अपने विचार व्यक्त करते हुए कहा था—

> हिन्दी का प्रचार इसलिए किया जा रहा है, क्योंकि यह बहुत ही व्यापक रूप में बोली और समझी जाती है।

भारत के उत्तर-पूर्व में बसे असम में भी हिन्दी की झलक मिलती है। असम के संत कवि शकरदेव और माधवदेव के नाटकों और गीतो में "ब्रज-बुलि"

भापा का प्रयोग मिलता है। बाद में नाथ-पथियों और वैष्णव सतों ने असमिया भापा के साथ-साथ हिन्दी को भी आगे बढ़ाया। स्वतत्रता आन्दोलन के दौरान 3 नवम्बर, 1938 को लोकप्रिय गोपीनाथ बरदलोई की अध्यक्षता में असम हिन्दी प्रचार समिति स्थापित की गई। यह बात ध्यान देने की है कि आज से करीब डेढ सौ वर्प पूर्व सन् 1842 में असम के तिनसुकिया से प्रथम हिन्दी साप्ताहिक ''अकेला'' प्रकाशित हुआ था, जो अब भी प्रकाशित हो रहा है।

असम के ही पड़ोसी राज्य मणिपुर मे पुराने समय में ''शैल'' नामक एक जातिय सिक्का चलता था। उसमे देवनागरी लिपि में हिन्दी का उल्लेख मिलता है।

हिन्दी साहित्य और भापा मे गुजरात के योगदान से सारा देश परिचित है। केशवराम, नरसी मेहता जैसे सत कवियो ने गुजराती के साथ-साथ हिन्दी में भी रचनाए की। गुजरात के सूफी सतो ने अमीर खुसरो की भापा शैली का अनुसरण करते हुए खडी बोली में रचना की, जिनकी भापा को ''हिन्दवी'' या ''गूजरी'' कहा गया। इन सूफी सन्तों मे शेख बहाउद्दीन बाथन, मदमूद दरियोपी, शाहअली, जी नामधनी तथा हजरत खूब मोहम्मद चिस्ती आदि के नाम उल्लेखनीय है। कच्छ, सौराष्ट्र और राजकोट के शासको ने हिन्दी कवियों को आश्रय दिया तथा हिन्दी सिखाने की सुविधा प्रदान की।

मध्य काल मे भक्त कवियों के कारण ब्रजभापा तथा उड़िया में आदान-प्रदान की भावना की शुरूआत हुई थी। कवि वशी वल्लभ ने हिन्दी गान और दोहो की रचना की। आगे चलकर राजकवि प्रतापचन्द्र देव, दामोदर चम्पती राय, कृष्ण दास, अनन्त दास तथा भीमदेव आदि प्रसिद्ध कवियों ने उड़िया और बगला सहित ब्रजभापा मे भी भक्ति रस की रचनाए की। 18वीं शताब्दी मे जगबन्धु हरिचन्दन, रामदास तथा प्रह्लाद राय आदि उड़िया कवि हुए, जिन्होने ब्रज भापा में रचना की। आजादी के बाद उड़ीसा के प्रथम मुख्यमत्री हरेकृष्ण मेहताब द्वारा हिन्दी प्रचार को प्रोत्साहन मिला। सन् 1948 में उन्होंने ''गांधी राष्ट्रभापा भवन'' का उद्घाटन किया।

पजाबी भापा की लिपि गुरुमुखी जरूर है, लेकिन हिन्दी और पजाबी जानने वालों के लिए एक-दूसरे की भापा को समझना काफी सरल है। इसी सरलता ने एक-दूसरे की भापा को आदान-प्रदान के द्वारा समृद्ध किया है। हिन्दी के महाकाव्य ''पृथ्वीराज रासो'' के रचयिता चन्द्र बरदाई का जन्म वर्तमान लाहौर

मे हुआ था। गुरुनानक देव की वाणी से सारा देश परिचित है। उन्होंने पंजावी भापा के साथ-साथ हिन्दी में भी काव्य रचना की। इस दृष्टि से गुरु गोविन्द सिंहजी का नाम स्मरणीय है। हालांकि सूफी प्रेम काव्य की परम्परा के कवि शेख फरीद, बुल्लेशाह और शाह हुसैन आदि की कविताओ मे पंजावी भापा प्रधान थी, किन्तु उनमें हिन्दी की झलक मिलती है। पटियाला तथा फूलवंश आदि रियासतो में हिन्दी कवियों का बड़ा सम्मान था। लाला लाजपत राय, स्वामी श्रद्धानन्द, महात्मा हेमराज, पं. गुरुदत्त तथा भाई परमानन्द आदि ने स्वयं हिन्दी सीखी, और लोगों को हिन्दी सिखाई। यह प्रसन्नता की वात है कि आज भी अनेक पजावी भापी हिन्दी में मौलिक लेखन कर रहे हैं।

महान विचारक, समाज सुधारक तथा आर्यसमाज के संस्थापक दयानन्द सरस्वती गुजराती भापी थे। लेकिन उन्होंने बाद में न केवल हिन्दी मे बोलना ही शुरू किया, बल्कि हिन्दी में लिखा और अपने पहले के ग्रन्थों का भी हिन्दी में अनुवाद कराया। साथ ही उन्होने दूसरो को भी हिन्दी सीखने के लिए प्रेरित किया।

दयानन्द सरस्वती जी ने हिन्दी भापा के पठन-पाटन को आर्यसमाज के मूल नियमों में शामिल किया, जिसकी हिन्दी के प्रचार और विकास में महत्वपूर्ण भूमिका रही। ऐसा उल्लेख मिलता है कि दयानन्द सरस्वती जी को हिन्दी सीखने की बात कलकत्ता में ब्रह्म समाज के नेता केशवचन्द्र सेन ने कही थी। महत्वपूर्ण वात यह है कि उस समय हिन्दी की आवश्यकता को एक बंगला भापी ने महसूस किया था, और एक गुजराती भापी ने उसे स्वीकार किया।

हिन्दी भापा के विकास मे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, जिनकी मातृभापा गुजराती थी, का अत्यंत महत्वपूर्ण योगदान रहा है। उन्हे भारत की महान भापाओं का गर्व था। उनकी आत्मकथा में उल्लेख मिलता है कि वे स्वयं तमिल सीखना चाहते थे। लेकिन उन्होंने राष्ट्रीय पुनर्निर्माण, नवमानव के निर्माण, लोकचेतना जागृत करने तथा लोक-सम्पर्क एवं पारस्परिक सद्भाव के लिए हिन्दी को चुना।

राष्ट्रपिता ने दक्षिण भारत में हिन्दी के विकास के लिए "दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा" की स्थापना की। वे सन् 1918 और 1935 में हिन्दी साहित्य सम्मेलन के सभापति रहे। सन् 1925 में गांधी जी के अनुरोध पर कांग्रेस के कानपुर अधिवेशन में हिन्दी सवंधी प्रस्ताव प्रस्तुत हुआ और पारित हुआ। वापू ने सन् 1918 मे वम्बई में हिन्दी सम्मेलन की प्रारम्भिक बैठक में हिन्दी को सत्य और सत्याग्रह से जोड़ते हुए कहा था—

> सत्य की लडाई के लिए सत्याग्रह जरूरी है। यदि हममे सत्य के प्रति सम्मान है, तो हमें यह स्वीकार करना होगा कि केवल हिन्दी ही वह भापा है, जिसका हम राष्ट्रभापा के रूप में उपयोग कर सकते हैं।

कश्मीर प्राचीन काल से ही हमारे देश का तीर्थ स्थान रहा है। शंकराचार्य ने कश्मीर मे शैव मत का प्रचार किया। इसके साथ ही साथ कश्मीर संस्कृत विद्या का केन्द्र भी रहा।

मध्य काल में कश्मीर के कवि कश्मीरी के साथ-साथ हिन्दी में कविता करने लगे थे। सन् 1572 में वल्लभदेव ने तुलसी के "रामचरितमानस" का अनुवाद किया। 18वीं शताब्दी में महाकवि परमानन्द के समय हिन्दी का काफी प्रसार हुआ। 1823 मे कविदत्त ने व्रज भापा में काव्य रचना की। 19वी शताब्दी के उत्तरकाल में महाराजा रणवीर सिह ने डोगरी भापा और देवनागरी लिपि में अपना राजकार्य चलाया।

मैंने ऐतिहासिक परिप्रेक्ष्य मे इन बातों का उल्लेख दो विशेप उद्देश्यों को ध्यान मे रखकर किया है। पहला तो यह कि हिन्दीतर भापियो द्वारा हिन्दी की सेवा के लिए किए गए कार्यो का पूर्ण और उचित सम्मान हो। दूसरा यह कि हिन्दी भापियो को इस तथ्य की जानकारी हो।

हिन्दी को राजभापा इसलिए बनाया गया, क्योंकि वह हमारे देश के सबसे बडे हिस्से मे समझी जाने वाली और सबसे अधिक लोगो द्वारा बोली जाने वाली भापा है। ऐसा नही है कि इस बात का अनुभव कुछ वर्प पहले ही किया गया था, वल्कि शुरू से ही लोग इस बात का अनुभव कर रहे थे। और यही कारण था कि पूरा देश हिन्दी भापा के विकास में अपना कुछ-न-कुछ योगदान कर रहा था। मै यहा श्रीमती ऐनी वेसेन्ट की पुस्तक "नेशन बिल्डिग" के शव्द उद्धृत कर रहा हूँ—

> भारतवर्प के भिन्न-भिन्न भागो मे जो अनेक देशी भापाए बोली जाती हैं, उनमे एक भापा ऐसी है, (जो) व्यापक रूप मे जानी जाती है। हिन्दी जानने वाला आदमी पूरे भारत में घूम सकता है।

मुझे लोगों से यह जानकर और देखकर बहुत सुख मिलता है कि हमारे देश की विभिन्न भापाओं के बीच अन्तर्प्रवाह शुरू हो गया है। इसके प्रमाण के रूप में आज के पुरस्कृत लेखक है। विभिन्न भापाओं के आपस मे अनुवाद होने

लगे है। अन्तरराष्ट्रीय हिन्दी विश्वविद्यालय बनाने की तैयारी चल रही है, जिससे विभिन्न भापाओं के अतर सबध और मजबूत हो सकेंगे। हमारे देश की भापाओ की अटूट एकता का इससे बड़ा प्रमाण और क्या हो सकता है कि हमारी सभी भापाओं की वर्णमाला एक है और उनके चिंतन का मूल एक है। मैं समझता हूँ कि जिस देश की भापाओं की नींव में इतनी एकरूपता हो, उस पर राजभापा की एक मजबूत इमारत खडी करना अपेक्षाकृत आसान हो जाता है। मेरा विश्वास है कि इस दिशा मे सार्थक प्रयास होंगे।

मै इस बात के लिए मानव ससाधन विकास मत्रालय तथा केन्द्रीय हिन्दी निदेशालय की प्रशसा करता हूँ कि उन्होने अहिन्दी भापियों को हिन्दी कार्य के लिए सम्मानित करने का निर्णय लिया, और यह काम किया जा रहा है। इस अवसर पर मेरे मन में एक विशेप बात आ रही है, वह मैं कहना चाहूगा। मुझे लगता कि हिन्दी भापा केवल हमारे देश की सीमाओं तक सीमित नही है, बल्कि अब यह विश्व के कई देशो मे पहुच चुकी है। उन देशो मे यह भापा न केवल बोली ही जा रही है, बल्कि वहा के महाविद्यालयो और विश्वविद्यालयो में पढाई भी जा रही है। मुझे लगता है कि ऐसी स्थिति मे मत्रालय यदि किसी विदेशी हिन्दी विद्वान को भी सम्मानित करने का निर्णय ले, तो यह उपयुक्त होगा। मारीशस, गुयाना, सूरीनाम जैसे देशो मे हिन्दी भापा के प्रति विशेप प्रेम है। वहा के भी हिन्दी विद्वानो का सम्मान किया जाना स्वागत योग्य होगा।

मैं यह मानता हूँ कि हमारे देश की सभी महान भापाए राष्ट्रीय भापाएं हैं, और सबके पास अपना-अपना समृद्ध साहित्य है। प्रत्येक भारतीय का यह कर्त्तव्य है कि वह देश में भावनात्मक एकता के लिए राष्ट्र की सभी भापाओ मे समन्वय करे। हिन्दी भापा को इन सबके बीच समन्वय स्थापित करने मे महत्वपूर्ण भूमिका निभानी हे।

मानव धर्म की समानता

सबसे पहले मैं उन सभी को अपनी हार्दिक बधाई देता हू, जिनको आज ये पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। मुझे विश्वास है कि आप लोगों ने जिस साहस और सद्भाव का परिचय दिया है, उससे समाज को प्रेरणा मिलेगी।

अभी जिन्हें पुरस्कार दिए गए हैं, वे हमारे देश के अलग-अलग भागो से है। इसे मैं इस बात का प्रमाण मानता हूं कि साम्प्रदायिक-सद्भाव की चेतना हमारे पूरे देश मे एक जैसी है। दुर्भाग्य से संकीर्ण दिमाग के कुछ लोग अपने निहायत ही छोटे स्वार्थो के लिए हमारे देश की स्वाभाविक सद्भावना को तोडने का प्रयास करते हैं। कभी धर्म के नाम पर, तो कभी जाति और रीति-रिवाजो के नाम पर वे लोगो को उकसाते है। नि:सदेह इससे कुछ देर के लिए समाज मे दरार पैदा हो जाती है, और तनाव का वातावरण बन जाता है। लेकिन अपने देश की लोक चेतना पर मेरा इतना दृढ विश्वास है कि उसे थोड़ी देर के लिए भले ही समुद्र मे उठते हुए ज्वार की तरह उकसा लिया जाए, लेकिन उसे हमेशा विभाजित करके नहीं रखा जा सकता। हमारे समाज की सामूहिक चेतना उस समुद्र की सतह के समान है, जिसमे तरंगें उठती रहती हैं, ज्वार-भाटे भी आते रहते हैं। लेकिन इसके बावजूद वह एक बना रहना है। आप सबके ये प्रयास इसी बात को दिखाते है। आप लोगो ने अपने शुभ कार्यो से यह सिद्ध किया है कि आदमी अन्तत आदमी ही है। वह लम्बे समय तक न तो शैतान बना रह सकता है, और न ही पशु बना रह सकता है। उसकी अंतिम नियति इन्सान बनना ही है। और यही उदात्त भावना है, जिसके कारण वह सच्चा मानव बनता है। इसी साहस और सद्भाव की चर्चा करते हुए कबीर दास ने कहा था—

"जो घर जारै आपनो, चले हमारे साथ।"

अपने घरो के जल जाने का खतरा उठाकर दूसरो के घरो मे रोशनी भरने का जो यह महान कार्य आप लोगों ने किया है, उसके लिए मैं एक बार फिर से आप सबको तहे-दिल से अपनी बधाई देता हूं।

कबीर पुरस्कार प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 13 अगस्त, 1994

आप लोगों द्वारा मानवता की रक्षा के लिए किए गए कामो से मै परिचित हूँ। इसलिए मुझे इस समय स्वाभाविक रूप से गणेश शंकर विद्यार्थी जी की याद आ रही है। आप लोगो को मालूम ही होगा कि सन् 1931 मे जब कानपुर में साम्प्रदायिक दंगे भड़क उठे थे, तो उसे रोकने के लिए गणेश शंकर विद्यार्थी जी पूरी निर्भीकता से लग गए थे। लोगों ने उन्हें मना भी किया कि इससे उनकी जान को खतरा हो सकता है। लेकिन उन्होने इस बात की कोई परवाह नहीं की, और हिन्दू-मुस्लिम एकता के लिए अपनी कुर्बानी दे दी। मुझे इस समय बापू के वे शव्द याद आ रहे है, जो उन्होंने गणेश शकर विद्यार्थी की कुर्बानी पर लिखे थे। बापू ने ''यग इण्डिया'' के 19 अप्रैल, 1931 के अंक में लिखा था—

> गणेश शकर विद्यार्थी को ऐसी मृत्यु मिली, जिस पर हम सबको ईर्ष्या है। उनका खून अत मे दोनो मजहबो को जोड़ने का काम करेगा।

इसे एक विचित्र संयोग ही कहा जाएगा कि ये ही बापू अत मे साम्प्रदायिक एकता के लिए शहीद हुए। अपने जीवन के अतिम वर्पो मे वे नोआखली में साम्प्रदायिक सद्भाव के लिए नंगे पांव घूमते रहे। लेकिन उनमें जो आत्म-विश्वास था, अपने उद्देश्य के प्रति जो स्पष्टता और दृढ़ता थी, वही उनका सच्चा कवच था। बापू ने सन् 1924 मे ही ''यग इण्डिया'' में यह घोपणा कर दी थी—

> मैं इस बात की कोशिश कर रहा हूँ कि मै दोनों समुदायों को सुदृढ़ता से जोड़ सकू। मेरी यह इच्छा है कि यदि जरूरी हुआ तो मै दोनों की एकता के लिए अपना खून बहाने के योग्य बनू।

गणेश शकर विद्यार्थी की कुर्बानी और बापू का बलिदान हर भारतवासी को उसके कर्तव्यों की याद दिलाता रहेगा।

मुझे ऐसा लगता है कि हमारे लोगो मे साम्प्रदायिकता की भावना तभी आती है, जब वे हमारे ऐतिहासिक चिन्तन तथा महात्माओ की बातों को भूल जाते है। भेद की भावना; चाहे उसका आधार कुछ भी हो, तभी आती है, जब लोगों के दिमाग से अभेद का चिन्तन मिटने लगता है। हमारे लोगो को यह याद रखना होगा कि जव से हमारा समाज बना, तब से ही भारतीय चिन्तन अभेदवादी रहा है। उसने कभी मनुष्य और मनुष्य मे भेद नहीं किया। ऋग्वेद में; जिसे मनुष्य चिन्तन के श्रेष्ठ ग्रन्थों मे माना जाता है, कहा गया है—

''एकैव मानुपी जाति।''

इसका अर्थ है कि सभी मनुष्य जाति एक ही हैं। इस सभी मनुष्य जाति में केवल भारत की ही बात नहीं, बल्कि पूरे विश्व की बात है। इसीलिए हमारे यहा 'वसुधैव कुटुम्बकम्' का आदर्श रखा गया। यह हमारा सामाजिक-आदर्श हैं, राष्ट्रीय-आदर्श है और वैश्विक-आदर्श है।

कबीर दास जी, जिनकी महान स्मृति में इस पुरस्कार को नाम दिया गया है, स्वयं एक ऐसे क्रान्तिकारी कवि और समाज सुधारक थे, जिन्होंने पूरी निर्भीकता के साथ समाज में अभेद की स्थिति लाने का काम किया। इसके लिए उन्होने लोगो को समझाने की कोशिश की, और जहा जरूरत पड़ी, वहां लोगो को डाटा भी। कवीर दास जी का मानना था कि धर्म से जुड़े हुए आडम्बर लोगों को अलग करते हैं। उन्होंने धर्म के भेद को ललकारा, जाति के भेद को ललकारा तथा वर्ग के भेद को ललकारा। मानव मात्र में ईश्वर की उपस्थिति मानते हुए संत कबीर कहते हैं—

मो को कहाँ ढूँढ़े बँदे, मैं तो तेरे पास में।
ना मैं देवल, ना मैं मस्जिद, ना काबे कैलास में॥

हमारे देश का मध्य काल समाज में हर तरह के भेदभाव को समाप्त करने का काल रहा हे। इस युग मे न केवल उत्तर भारत में ही, बल्कि पूर्वी, पश्चिमी और दक्षिणी भारत मे भी हमारे सूफी एवं संत कवियों ने अपने सुन्दर-सुन्दर पदों की रचना करके उन्हें गा-गाकर लोगो तक पहुंचाया, ताकि लोग धर्म को व्यापक रूप से देख और समझ सकें। मैं समझता हूँ कि इस अवसर पर हमारे देश के विभिन्न भागों के ऐसे कुछ सतों के संदेशों को याद करना उपयुक्त होगा।

असम के सत-कवि शकरदेव और माधवदेव के नाम से सारा देश परिचित है। इन दोनों कवियो के लिखे ''वरगीत'' (श्रेष्ठगीत) पूरे असम में लोकप्रिय है। विश्व की प्रत्येक वस्तु में एक ही ब्रह्म का प्रकाश मानते हुए शकरदेव कहते हैं—

''तुमि सत्यब्रह्म तोमात प्रकाशे, जगत एटो असन्त।
जगततो सदा तुमिये प्रकाशा, अन्तर्यामी भगवन्त॥

शंकरदेव जी ने इस पद मे यह भाव व्यक्त किया है कि जगत ही ब्रह्म है। इसी बात को कबीर अपने ढग से कहते हैं—

खालिक खलक, खलक में खालिक
सव घट रह्यो समाई।

पश्चिम बंगाल के कृष्ण भक्त महाप्रभु चैतन्य ने अपने व्यवहार द्वारा यह सिद्ध किया कि यदि व्यक्ति में भाव का आवेश और विचारो की उदात्तता हो, तो वह सहजता से ही ईश्वर को प्राप्त कर सकता है। गुजरात के नरसी मेहता की सरलता और सहजता ने उन्हें भगवत पद का अधिकारी बनाया। महाराष्ट्र के सभी संत-कवियों ने मानव जाति की एकता का संदेश दिया।

अमीर खुसरो तथा सूफ़ी-संतों ने धर्म और जाति के भेदभाव को मिटाकर समाज में समानता और आचरण की शुद्धता पर जोर दिया। रहस्यवादी सूफी कवियों ने विश्व के कण-कण में ब्रह्म की छवि निहारते हुए प्राणि मात्र के प्रेम पर जोर दिया। रहीम, रसखान और जायसी जैसे कवियो ने अपनी रचनाओं में सांस्कृतिक सौहार्द की जो भावना व्यक्त की है, उसे मैं हमारे समाज की एक उज्ज्वल धरोहर मानता हूँ।

हमारे यहां ये बातें केवल कही ही नहीं गई, वल्कि प्रत्यक्ष रूप से देखने में भी आई। इस काल मे अनेक ऐसे सत-कवि हुए हैं, जिन्होंने जाति के आधार पर किसी उच्च कुल में जन्म नहीं लिया था। लेकिन अपने कर्म की श्रेष्ठता के कारण वे आज भी सम्मानित हैं। इनकी सहजता, सरलता, एकनिष्ठता तथा समर्पण और सेवा की भावना ने उन्हें अपने समय का गुरु बना दिया। तमिलनाडु के संत तिरुवल्लुवर ने 'तिरुक्कुरल' में लिखा है—

सभी मनुज है जन्म से, होते एक समान।
गुण विशेप फिर सम नहीं, कर्म भेद से जान॥

मैंने यहां कुछ संत कवियों का उल्लेख विशेप रूप से इसलिए किया, क्योंकि पुरस्कार पाने वालों में उन राज्यों के व्यक्ति यहां उपस्थित है। मुझे इस बात की प्रसन्नता है कि आप लोगों ने इन संतों के विचारों पर चलकर समाज के सामने उदाहरण प्रस्तुत किया है।

मै यहां इस बात पर विशेप रूप से जोर देना चाहूंगा कि हमारे सूफी और संत-कवियों की यह भावना तथा हमारे पथ-प्रदर्शक नेताओं के ये कार्य और विचार मूल रूप से हमारे आम लोगो की भावना और कार्यो का प्रतिनिधित्व करते हैं। सही मायने में युग-युग से यही हमारी लोक चेतना रही है। इसलिए किसी को भी इस भ्रम में नहीं रहना चाहिए कि इस लोक चेतना से अलग हटकर मानव जाति का हित किया जा सकता है। खासकर भारत जैसे ऐसे देश के लिए तो यह बहुत ही जरूरी है, जो सदियो से विश्व का आश्रय-स्थल रहा है, जिसके

कारण यहा अनेक धर्म फलते-फूलते रहे है, और अनेक जातिया विकसित होती रही है। इसलिए मैं इस अवसर पर देश के लोगों से कहना चाहूगा कि वे आपस मे भाईचारे के रिश्ते के मजबूत बनाकर अपने लिए, अपने समाज के लिए और अपने देश के लिए काम करने में जुट जाएं। यदि कोई शक्ति इस भाईचारे के रिश्ते में दरार डालने की कोशिश करती है, तो उसे पूरी बुद्धिमत्ता के साथ पहचाने तथा उसका मिलकर पूरी शक्ति के साथ प्रतिरोध करें। समन्वय और सामंजस्य की अपनी ऐतिहासिक विरासत को हमे किसी भी कीमत पर भूलना नहीं है। यह हमारी एक बहुत बडी ताकत रही है, और यही हमारी एक बहुत बडी ताकत रहेगी। मुझे विश्वास है कि देश के लोग आने वाले दिनो मे इसी भावना से अपने सामाजिक दायित्व का निर्वाह करेंगे। वे यह समझेंगे कि साम्प्रदायिक तनाव से किसी दूसरे का नही, बल्कि अन्तत उनका अपना ही नुकसान होता है, और उनकी ही आने वाली पीढ़ी को इसका खामियाजा भुगतना पड़ेगा।

शिक्षक और समाज

अपने-आपको देश के सभी भागों से आए हुए शिक्षकों के बीच पाकर मुझे हार्दिक प्रसन्नता हो रही है। मुझे इस बात का गर्व है कि मै स्वय भी शिक्षक रहा हूं, और अब तक किसी-न-किसी रूप में निरतर शिक्षा से जुड़ा हुआ हूं। इसलिए यहा स्वाभाविक रूप से मेरी प्रसन्नता और भी बढ़ जाती है।

सबसे पहले मै उन सभी शिक्षक बन्धुओं को अपनी हार्दिक बधाई देता हू, जिनको आज पुरस्कृत किया गया है। मेरा विश्वास है कि ये सम्मान अन्य शिक्षकों के लिए प्रेरणा का स्रोत बनेगे, तथा शिक्षक-जगत एक नए उत्साह के साथ अपने दायित्व को पूरा करने में और अधिक जुट जाएगा।

किसी भी राष्ट्र की सस्कृति और उसके विकास में शिक्षको की केंद्रीय भूमिका होती है। हमारा स्वय का इतिहास, हमारा चितन तथा हमारी संस्कृति इस बात के प्रमाण हैं कि हमारे देश ने हमेशा शिक्षकों को महत्वपूर्ण एव ऊचा स्थान दिया है। हमारे प्राचीन ऋषि-मुनियो और गुरुओं के कारण ही हमारे पूर्वजों की ऐतिहासिक सांस्कृतिक धरोहर आज हमारे पास मौजूद है। इसीलिए महान शिक्षक डॉ0 राधाकृष्णन शिक्षकों को ''सभ्यता का दीप'' कहा करते थे। हमारे प्राचीन गुरुओं की उदात्त-चेतना, तार्किक-क्षमता, प्रभावशाली व्यक्तित्व तथा आचरण की शुद्धता का ही परिणाम था कि हमारा देश एक समय पूरे विश्व का गुरु माना जाता था।

स्वतन्त्रता-संघर्ष के दौरान भी हमारे देश के शिक्षको और शिक्षा-केंद्रों ने अपने राष्ट्रीय दायित्व को अच्छी तरह समझा था, और उसे बखूबी निभाया था। जब मैं विद्यार्थी था, उस समय न जाने कितने शिक्षा-सस्थान राष्ट्रीयता की भावना तथा स्वतंत्रता-संघर्ष के केन्द्र बन गए थे। आप लोगों ने ध्यान दिया होगा कि उस काल के बारे में लिखी गई कहानियों और उपन्यासो में, विशेषकर गांव के शिक्षकों को हमारे स्वाधीनता सग्राम एव राष्ट्रीय मूल्यो के प्रति कटिबद्ध चरित्र के रूप मे दिखाया गया है। मुझे यह कहते हुए खुशी है कि आज भी हमारे

शिक्षक-दिवस के अवसर पर पुरस्कार वितरण करते हुए, नई दिल्ली, 5 सितम्बर 1994

समाज में ऐसे शिक्षक हैं, और इन्हीं पर हमारे भविष्य की आशा टिकी हुई है।

पिछले कई वर्षों से हम आज के दिन को 'शिक्षक-दिवस' के रूप में मनाते आ रहे हैं। मुझे लगता है कि इस दिन को मात्र एक औपचारिक दिन न मानकर कुछ नया सोचने और कुछ नया करने का संकल्प लेने का दिन मानना चाहिए। यह दोनों ही ओर से होना चाहिए। हमारे शिक्षको को आत्मनिरीक्षण करना चाहिए, और सोचना चाहिए कि अपने कार्यो के द्वारा उन्होंने समाज को कितना दिया है, और उन्हे कितना कुछ और देना है। ठीक इसी प्रकार हमारे समाज और हमारी राज्य सरकारों को भी यह सोचना है कि वे शिक्षकों के लिए कितना कर रहे है ?

शिक्षक और समाज दोनों को कुछ लेकर कुछ देने की भावना से काम नहीं करना है, वल्कि पहले कुछ देकर फिर कुछ पाने की इच्छा से काम करना होगा। में समझता हूँ कि तभी शिक्षक और समाज के वीच एक ऐसा स्वस्थ और संतुलित संवंध वन सकेगा, जिसमें दोनों एक-दूसरे से तालमेल रखते हुए एक-दूसरे का सहयोग करते हुए शिक्षा के क्षेत्र में अपना-अपना समुचित योगदान कर सकेंगे।

हमारे शिक्षकों को यह याद रखना है कि पढ़ाने का काम केवल आजीविका अर्जन का काम नहीं है। इसी तरह हमारे समाज को भी यह याद रखना है कि शिक्षक महज राजतन्त्र का हिस्सा मात्र नहीं है, वल्कि वह उनके परिवार के अभिभावक वर्ग का एक हिस्सा है। मैं समझता हूँ कि तभी हमारी प्राचीन गुरु-शिष्य परंपरा अपनी सच्ची आत्मा के अनुकूल स्थापित हो सकेगी, और तभी वच्चों का समुचित रूप से मानसिक और आध्यात्मिक विकास हो सकेगा। मुझे लगता है कि इस प्रकार के संवधो की स्थापना वच्चो को वीच में ही स्कूल छोड़ने से रोक सकेगी, तथा शिक्षा के प्रति समाज के मन में एक नया विश्वास और एक तीव्र आकर्पण पैदा हो सकेगा। में यह जानता हूँ कि आपका काम ऐसा नहीं है कि आप संवंधों के स्तर पर तटस्थ रह सकें, और न ही आपको तटस्थ रहना चाहिए। आप शिल्पकार हें। आपको भारत के भविष्य को संवारने वाली मूर्तियाँ गढ़नी हैं। यह काम आप अपने शिष्यों से स्नेह-संवध स्थापित करके ही कर सकते हैं। वच्चों पर आपके व्यक्तित्व का वड़ा दूरगामी प्रभाव पड़ता है। इसीलिए समाज शिक्षकों को अतिरिक्त सम्मान देता है। अपने वचपन के शिक्षक आज तक मेरी स्मृति में वने हुए हें। यही वह समय होता है, जव आप विद्यार्थी को अपना सर्वोत्तम दे सकते हैं, और आपको देना चाहिए।

वर्तमान समय में व्यावसायिक शिक्षा पर काफी जोर दिया जा रहा है। यह ठीक भी है, क्योंकि शिक्षा को ऐसा तो होना ही चाहिए, जो शिक्षार्थियों की आर्थिक जरूरतों को पूरा करने में सहयोगी हो सके। लेकिन इसके साथ ही हमें यह बात भी याद रखनी है कि शिक्षा का उद्देश्य आजीविका के साधन जुटाने से कहीं बहुत अधिक है। राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने शिक्षा के उद्देश्य को स्पष्ट करते हुए 'हरिजन' के 31 जुलाई, 1937 के अंक में बिल्कुल सही लिखा था :

> शिक्षा से मेरा मतलब बच्चों और व्यक्तियो के शरीर, मस्तिष्क और आत्मा के सभी सर्वोत्तम तत्वो को सामने लाना है।

डॉ राधाकृष्णन ने, जो स्वयं एक शिक्षक थे, और जिनके जन्म-दिवस पर 'शिक्षक-दिवस' मनाया जाता है, 22 नवम्बर, 1963 को शिक्षकों को राष्ट्रीय पुरस्कार देते हुए उनसे अपील की थी ·

> शिक्षकों को मनुष्य की आत्मा को स्वतंत्र करने का लक्ष्य अपने सामने रखना चाहिए।

उन्हीं की अध्यक्षता मे गठित आयोग ने सिफारिश की थी .

यदि हमने अपने-आपको शिक्षा तक केंद्रित किया, और मस्तिष्क तथा आत्मा के उत्थान की उपेक्षा की, तो हम दंतकथाओं में वर्णित उस राक्षस के समान हो जाएंगे, जिसके पास प्रचंड शक्ति तो है, लेकिन उसका कोई नैतिक उद्देश्य नहीं है।

पंडित नेहरू जब भी ज्ञान-विज्ञान की बात करते थे, तो उसके साथ आत्मिक विकास की बात करना कभी नहीं भूलते थे। इसलिए हमारे शिक्षा-जगत से जुड़े नीति-निर्माताओ तथा शिक्षको को यह देखना है कि वे किस प्रकार बच्चों को अपनी सास्कृतिक विरासत तथा उच्च जीवन-मूल्यों से परिचित करा सकते हैं। उनमें सेवा, त्याग, समर्पण, सहनशीलता, सर्वधर्मसमभाव जैसी बातें; जो हमारी संस्कृति के आंतरिक मूल्य रहे हैं, का सचार शिक्षा के माध्यम से किया जाना है। महान शिक्षाविद् जाकिर हुसैन साहब ने शिक्षकों को राष्ट्रीय पुरस्कार देते हुए 7 नवंबर, 1967 को कहा था :

> नौजवानों के जीवन के मूल्यों का संचार करना उसकी (शिक्षकों की) जी-जान कोशिशों का सार है। उसकी कोशिश का वाहिद मकसद नैतिक शख़्सियत का स्वाभाविक रूप से विकास करना है।

इसके साथ ही मुझे यह भी लगता है कि हमारे देश के भावी नागरिकों में श्रम के प्रति सम्मान की भावना पैदा की जानी चाहिए। उन्हें अपनी राष्ट्रीय समस्याओं से अवगत कराया जाना चाहिए, ताकि वे आगे चलकर उन समस्याओ के निदान में प्रभावशाली भूमिका निभा सकें। मेरे कहने का तात्पर्य है कि हमारी शिक्षा को केवल पुस्तको पर ही आधारित नहीं होना है, बल्कि उसे हमारे जीवन-मूल्यों पर आधारित होना है। मैं देश के सभी शिक्षकों से अपील करना चाहूँगा कि वे बच्चो को केवल किताबे ही न पढ़ाएँ, बल्कि स्वयं को भी एक खुली किताब बनाएँ, और अपने-आपको एक आदर्श के रूप में प्रस्तुत करें।

हमारे देश की राजनैतिक, सामाजिक और सांस्कृतिक संरचना कुछ मूलभूत तत्वों पर टिकी हुई है। ये मूलभूत तत्व हैं — सहिष्णुता, लोकतत्र और सामाजिक न्याय। इन तत्वो की अच्छी जानकारी हमारे शिक्षक स्वाभाविक तौर पर दे सकते हैं। हमारे नागरिकों मे आपस मे मिलकर काम करने की भावना का होना जरूरी हैं। सामजस्य और समन्वय की यह भावना किसी भी समुदाय या देश की सफलता का आधार होती है। भारत जेसे विविध धर्म, जाति, भापा और क्षेत्र वाले देश के नागरिकों के दृष्टिकोण का उदार होना जरूरी है। इसकी कोशिश विद्यार्थी स्तर पर ही होनी चाहिए। मै समझता हूँ कि इसे शिक्षक ही अच्छी तरह कर सकते हैं।

हमारे अपने देश में, और यहा तक कि विश्व स्तर पर आर्थिक और तकनीकी क्षेत्र में तेजी से परिवर्तन हो रहे हैं। इन परिवर्तनों ने समाज के सामने कुछ नई चुनौतियाँ पेश की हैं। इसलिए यह जरूरी है कि हमारी शिक्षा-पद्धति ऐसी हो, ताकि हमारे लोग भविष्य की इन चुनौतियों का सामना कर सके। इसके लिए शिक्षको को आवश्यक प्रशिक्षण दिया जाना तथा स्कूलो में शिक्षा सबधी जरूरी साजो-सामान उपलब्ध कराया जाना जरूरी है। इस दृष्टि से गांवो के स्कूलों पर विशेप ध्यान दिये जाने की जरूरत है।

मुझे लगता है कि शिक्षा के लिए स्थानीय इकाइयों, स्वयसेवी संगठनों तथा विभिन्न सामाजिक समुदायो को आगे आना चाहिए। मैं अपने अनुभव से यह बात कह सकता हूँ कि यदि इन लोगों ने सामने आकर शिक्षा का बीड़ा उठाया, तो हमारे देश के माथे पर से अशिक्षा का कलक मिटते देर नही लगेगी। हमारे लोगो को शिक्षा को प्राथमिकता देनी होगी। इस काम के बोझ को केवल सरकार के कधो पर ही डालकर निश्चित नहीं हो जाना है। इसलिए आज 'शिक्षक-दिवस'

के अवसर पर मैं अपने देश के प्रत्येक नागरिक से यह अपील करना चाहूँगा कि वे इस कार्य को एक अत्यत पवित्र कार्य समझें, और इसमें अपना-अपना योगदान करें। श्रीमद्भगवद्गीता के चौथे अध्याय में भगवान् श्रीकृष्ण ने अर्जुन के भ्रम का निवारण करते हुए कहा था —

"न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते"

श्रीमद्भगवद्गीता, 4/38

अर्थात्, संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला अन्य कुछ भी नहीं है।

राष्ट्रभाषा के प्रति सद्भावना

मैं हिन्दी के उन सभी विद्वानों को अपनी बधाई देता हूं, जिन्हें आज सम्मानित किया गया है। मैं विशेष रूप से डॉ. लोठार लुत्से जी को अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ, जिन्होने प्रथम 'जॉर्ज ग्रियर्सन सम्मान' प्राप्त किया है। मेरा विश्वास है कि आप सबके द्वारा प्राप्त किए गए उन पुरस्कारों से देश और विदेश के अन्य विद्वानों को भी हिन्दी की सेवा करने के लिए प्रोत्साहन मिलेगा।

मुझे यह देखकर और सुनकर अच्छा लगता है कि हमारे देश के लोगो में राष्ट्रभाषा के प्रति सद्भावना बढ़ रही है। वे इस ओर आकर्षित हो रहे हैं, और इसे सीखना चाहते हैं। अनेक हिन्दी और अहिन्दीभाषी विद्वान तथा कुछ संस्थाएं इस दिशा में काम कर रही हैं। यह काम केवल उत्तर भारत में ही नहीं, बल्कि दक्षिण भारत में भी हो रहा है। हमारे जन संचार माध्यम भी इस काम में अपना समुचित योगदान कर रहे हैं। इससे निश्चित रूप से देश में एक ऐसा वातावरण तैयार हो रहा है, जिसमे हिन्दी के फलने-फूलने की सम्भावनाएं बढ़ रही हैं। इसके लिए में अपने देशवासियों की प्रशसा करना चाहूगा। मैं उन्हें इस बात के लिए साधुवाद देता हूँ कि वे अपनी-अपनी मातृभाषाओ को समृद्ध करने के साथ ही हिन्दी भाषा को भी समृद्ध करने में अपनी भूमिका निभा रहे है।

मैं तो शुरू से ही यह मानता हूं कि हिन्दी भाषा के विकास में सबसे बड़ा योगदान अहिन्दीभाषियों का रहा हे। चाहे गुजराती भाषी दयानन्द सरस्वती और बापू हों, चाहे मराठी भाषी बाबूराव विष्णु पराड़कर और विनोबा भावे हों, चाहे केशव चन्द्र सेन और सुभाष चन्द्र बोस हों, या कि राष्ट्र कवि सुब्रह्मण्य भारती हों, सभी ने अपने-अपने स्तर पर हिन्दी को आगे बढाया। सच बात तो यह है कि इन्हीं अहिन्दीभाषी विद्वानों, राजनेताओं और समाज सुधारकों ने इसे अखिल-भारतीय स्वरूप प्रदान किया।

अहिन्दीभाषियों के इस योगदान को मैं इस बात का प्रतीक मानता हूँ कि उनके मन में राष्ट्र हित की भावना सर्वोपरि थी। किसी भी अन्य भाषा के सीखने

केन्द्रीय हिन्दी सस्थान, आगरा के हिन्दी सेवी सम्मान समारोह मे, नई दिल्ली, 14 सितम्बर, 1994

का अर्थ यह नहीं होता कि हम अपनी भाषा की उपेक्षा कर रहे हैं। बल्कि मुझे तो लगता है कि अपनी मातृभाषा के साथ-साथ यदि हम कोई अन्य भाषा सीखते हैं, तो उससे हम अपनी ही मातृभाषा और साहित्य को समृद्ध करते हैं। इसीलिए हमारे राष्ट्रीय नेताओं में कई भाषाओं के सीखने की ललक दिखाई पड़ती है। बापू ने अपनी 'आत्मकथा' में लिखा है कि वे तमिल और तेलुगू सीखना चाहते थे। उन्होंने कुछ समय तक सीखा भी। पं. नेहरू उर्दू के अच्छे जानकार थे। लोकमान्य तिलक ने भी हिन्दी सीखी थी। गुरुदेव रविन्द्रनाथ टैगोर मुंशी प्रेमचंद की भाषा के प्रशंसक थे।

यहां तक कि अनेक विदेशी विद्वानों ने भी हिन्दी भाषा के विकास और विस्तार के लिए काम किया। जॉर्ज ग्रियर्सन के नाम से आप सभी परिचित ही हैं, जिन्होंने पहली बार उत्तर भारत की भाषाओं का सर्वेक्षण किया था। भाषा विज्ञान पर किया गया उनका काम आज भी 'मील का पत्थर' माना जाता है। इसके साथ ही डॉ. गिलक्राईस्ट, गार्सा द तॉसी, डॉ मोनियर विलियम्स, मिस मेरी वर्ड तथा फॉदर कामिल बुल्के जैसे अनेक विद्वान हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत और हिन्दी भाषा तथा साहित्य के विकास में ऐतिहासिक योगदान किया है। आज सम्मानित किए गए विद्वान डॉ लोठार लुत्से को मैं इसी समृद्ध ऐतिहासिक परम्परा की वर्तमान कड़ी मानता हूँ।

ऐसे समय पर मन में एक प्रश्न स्वाभाविक रूप से उठता है कि आखिर वह ऐसी कौन-सी बात होती है, जो किसी भाषा और उसके साहित्य की ओर लोगों को आकर्षित करती है। एक यह व्यावहारिक बात तो हमें स्वीकार करनी ही चाहिए कि जब तक किसी भाषा और उसके साहित्य के प्रति आकर्षण का कोई विशेष भाव नहीं होगा, तब तक उसके विकास और विस्तार की सम्भावनाएं कमजोर ही रहती हैं। निश्चित रूप से हिन्दी की ओर भारतीय और पाश्चात्य विद्वानों का जो आकर्षण रहा है, उसके कुछ महत्वपूर्ण कारण हैं।

पहला कारण तो यही है कि भारत विषयक प्राच्य विद्या के ज्ञान के लिए संस्कृत भाषा का ज्ञान होना बहुत उपयोगी है। संस्कृत भाषा का यह ज्ञान विद्वानों को सीधे-सीधे हिन्दी भाषा से जोड़ देता है। दूसरा यह भी है कि यह भाषा भारत के सबसे बड़े भू-भाग में तथा सबसे अधिक लोगों द्वारा बोली और समझी जाती है। इसलिए भी हिन्दी भाषा के जानने का मतलब होता है - देश के बहुत बड़े भू-भाग के लोगों से सीधे-सीधे जुड़ जाना। तीसरा यह कि हिन्दी भाषा हमारे

देश की समन्वयात्मक संस्कृति को व्यक्त करने वाली भाषा रही है। अपने जन्म से ही यह भाषा केवल उत्तर भारत तक सीमित नहीं थी, बल्कि दक्षिण भारत में 'दक्खिनी हिन्दी' के नाम से लोकप्रिय थी। मध्यकाल के हमारे देश के भक्त और संतों की मूल भावनाएं और संस्कार एक से थे। ये संत-कवि पूरे देश में हुए। इन संतों ने पूरे देश की यात्रा की। ये एक-दूसरे से मिले-जुले। इससे भी हिन्दी भाषा में सभी क्षेत्रों के भाव, विचार और व्यवहार शामिल हो गए। इसी समय उत्तर भारत देश का प्रमुख व्यापारिक केन्द्र भी रहा। इसी प्रकार यह भाषा देश के व्यापारियों, उत्पादकों और उपभोक्ताओं की भाषा रही। इस भाषा के इन गुणों ने स्वाभाविक रूप से आधुनिक काल में लोगों को आकर्षित किया।

समन्वय की यह शक्ति हिन्दी भाषा की बहुत बड़ी शक्ति है, इस बात को अच्छी तरह याद रखा जाना चाहिए। हमें इस रास्ते से तनिक भी नहीं भटकना है। हिन्दी भाषा को राजभाषा होने के नाते शीर्ष भाषा होने का अहम् नहीं पालना है। बल्कि इसे सभी भाषाओं के केन्द्र में होने का भाव रखना है, ताकि चारों ओर की भाषाओं के प्रभाव को पचाकर वह स्वयं को समृद्ध कर सके तथा लोगों की सद्‌भावनाएं पा सके।

इस दृष्टि से मुझे एक बात यह जरूरी लगती है कि हिन्दी भाषा में अन्य भाषाओं के साहित्य के अनुवाद को बढ़ावा दिया जाना चाहिए। मैं यहां यह बात स्पष्ट कर देना चाहूंगा कि मैंने साहित्य के अनुवाद की बात कही है, न कि भाषा के अनुवाद की बात। मेरे इस कहने का अर्थ यह नहीं लगाया जाना चाहिए कि हिन्दी भाषा को अनुवाद की भाषा बनाने की बात कर रहा हूँ। सच तो यह है कि इसे अनुवाद की भाषा नहीं, बल्कि अनुभव की भाषा बनाना है। इसे मौलिक चिन्तन और मौलिक लेखन की भाषा बनाना है। लेकिन जहाँ तक अन्य भाषाओं के साहित्य का सवाल है, तो स्वाभाविक है कि उसका अनुवाद ही किया जा सकता है। इस रूप में हिन्दी भाषा को एक ऐसी भाषा की भूमिका निभानी है, ताकि यदि कोई भी व्यक्ति देश के अन्य भाषा के साहित्य को जानना चाहे, तो वह उसे हिन्दी के माध्यम से प्राप्त हो सके। इससे न केवल हिन्दी भाषा और उसका साहित्य समृद्ध होगा, बल्कि लोगों में भी इस भाषा को जानने का आकर्षण बढ़ेगा।

यहां मैं इस बात पर विशेष रूप से जोर देना चाहूंगा कि भारतीय भाषाओं का हिन्दी में अनुवाद सीधे-सीधे होना चाहिए, अन्य भाषा के माध्यम से नहीं।

यदि तमिल साहित्य का अनुवाद हिन्दी में होना है, तो वह सीधे तमिल से हिन्दी में आए, न कि अंग्रेजी या अन्य किसी भापा के माध्यम से। भारतीय भापाओं तथा हिन्दी भापा के बीच किसी अन्य भापा की मध्यस्थता नहीं होनी चाहिए। तभी उस अनुवाद में जान आ सकेगी, और तभी दोनों भापाएं एक-दूसरे से कुछ ग्रहण कर अपने आपको समर्थ कर सकेंगी। मैं समझता हूँ कि हमारे शिक्षण संस्थानों को, विशेपकर हिन्दी से जुड़ी अकादमियों को इस दिशा में मौलिक प्रयास करने चाहिएं। कोशिश होनी चाहिए कि हम अपने यहां ऐसे बहु-भापाविज्ञ तैयार करें, जो सीधे अनुवाद का काम कर सकें। प जवाहरलाल नेहरू ने साहित्य अकादमी के पुरस्कार देते हुए 31 मार्च, 1953 को कहा था :

> यह सोचना कि एक भापा दूसरी भाषा द्वारा दबाई या कुचली जाती है, सही नहीं है। यह दूसरी भापाओ से समृद्ध होती है। हमारी भापाएं उतनी ही अधिक समृद्ध होंगी, जितनी वे एक-दूसरे के सम्पर्क में आएंगी।

हमें अपने देश के प्रथम प्रधानमन्त्री के इस विचार को याद रखकर भारतीय भापाओं के पारस्परिक सम्पर्क को बढ़ाना है। इस काम के लिए हिन्दी भापी विद्वानों की सबसे अधिक जिम्मेदारी बनती है। उन्हें चाहिए कि वे अन्य भारतीय भापाओं का अच्छा ज्ञान प्राप्त करें, और उस भापा का साहित्य हिन्दी में लाएं। यह काम अहिन्दीभापियों के जिम्मे छोडकर निश्चिन्त नहीं हो जाना है। वे तो कर ही रहे हैं। लेकिन हिन्दी भापियो को और भी अधिक आगे आकर इसे करना होगा।

जन-जन की भाषा हिन्दी

आज यहाँ इन्दिरा गांधी राजभापा पुरस्कार प्रदान करते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। सवसे पहले मै उन उन सभी मंत्रालयों एवं विभागो को तथा उन लेखको को अपनी वधाई देता हू, जिन्हें अभी पुरस्कार दिए गए हैं। मेरा विश्वास है कि इसमें न केवल आप सव में ही और अधिक उत्साह पैदा होगा, वल्कि अन्य लोगों को भी इससे प्रेरणा मिलेगी।

इस पुरस्कार का नाम भूतपूर्व प्रधानमंत्री श्रीमती इन्दिरा गाधी के नाम पर रखा गया हे। मैं इसे उपयुक्त मानता हू, क्योंकि इन्दिरा जी में राजभापा हिन्दी के प्रति स्नेह का भाव था। उनका यह स्नेह-भाव किसी पक्षपात के कारण नहीं था, वल्कि राष्ट्रीय आवश्यकता के कारण था। सभी भापाओ के प्रति उनमें समान दृष्टि थी। साथ ही वे ऐसा महसूस करती थी कि इसके वावजूद एक सम्पर्क भापा होनी ही चाहिए। राष्ट्रपति के अभिभापण पर हुई वहस का उत्तर देते हुए 5 अप्रैल, 1967 को उन्होंने कहा था

> हम ऐसा मानते है कि हमारी सभी भापाए राष्ट्रीय भापाएं है, और वे सभी समान स्तर की हैं। लेकिन हम सवके लिए यह भी जरूरी हे कि हम सभी एक-दूसरे को समझ सके। यही कारण हे कि राष्ट्र की एक सम्पर्क भापा की जरूरत महसूस की गई।

हमारे सविधान निर्माताओ ने इतिहास को ध्यान मे रखकर, देश की सस्कृति को ध्यान मे रखकर, तथा देश के लोगो की सहूलियत को ध्यान में रखकर हिन्दी को राजभापा का दर्जा दिया। इस भावना की अभिव्यक्ति प्रधानमंत्री प. जवाहर लाल नेहरू ने 30 जुलाई, 1956 को ससद मे की थी। उन्होंने स्पष्ट रूप से कहा था :

> हिन्दी को किसी भापायी श्रेष्ठता के कारण अखिल भारतीय भापा नहीं बनाया गया, बल्कि इसलिए बनाया गया, क्योंकि यह अधिकाश भागों में फैली हुई हे।

इन्दिरा गाधी राजभापा पुरस्कार (1991-92 एव 1992-93) प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 7 नवम्वर, 1994

हमारा इतिहास इस बात का गवाह है कि जिस भापा को राजभापा का दर्जा दिया गया है, वह 13वी-14वीं शताब्दी से ही देश में उभरने लगी थी। यह भापा देश के किसी कोने विशेप मे ही नहीं, बल्कि अनेक भागो मे धीरे-धीरे उभरी। यह अपने समय मे भक्त और सत कवियो की भापा रही, व्यापारियो की भापा रही, सैनिको की भापा रही, तथा आम लोगो की बोल-चाल की भापा रही। मुझे लगता है कि इसी कारण हिन्दी मे ग्राह्यता का विलक्षण गुण पैदा हो सका, उसकी समन्वय शक्ति बढ सकी, और उसमे हमेशा लचीलापन बना रहा। अपने इन्हीं गुणों के कारण यह भापा निरन्तर आगे बढती गई, और अपना रूप निखारती गई।

स्वतत्रता आन्दोलन के हमारे नेताओं ने यह बात महसूस की थी कि यदि उन्हें देश के जन-जन तक पहुचना है, तो उसके लिए हिन्दी भापा सबसे अधिक उपयुक्त हो सकती हे। उनके इस निर्णय के पीछे न तो किसी भापा की उपेक्षा करने की भावना थी, और न ही किसी भापा विशेप को ऊँचा दर्जा देने की सोच थी। उनका उद्देश्य तो केवल एक ऐसी भापा का सहारा लेना था, ताकि वे अपनी बात लोगो तक पहुचा सके। ऐसा सोचकर हिन्दी भापा को अपनाने वालों मे केवल हिन्दी-भापी लोग ही नही थे, बल्कि कहीं उससे भी अधिक अहिन्दीभापी लोग थे। यह बात बहुत महत्वपूर्ण है, और मुझे लगता है कि हमारे देश के प्रत्येक नागरिक को इसे अच्छी तरह समझना चाहिए

भापा का इतिहास इस बात का गवाह है कि किसी भी एक समय में राजकाज की भापा और लोगो की भापा प्रचलित रहती है। लेकिन अब हमे नई राजनीतिक व्यवस्था और बदलते हुए परिवेश मे यह देखना होगा कि क्या अब भापा के ये अलग-अलग स्वरूप एक ही समय मे मौजूद रह सकते हैं ? और यदि रह सकते हैं, तो उनकी सीमाए क्या होनी चाहिए ? यदि वे एक-दूसरे से आदान-प्रदान करती है, तो उनके आदान-प्रदान करने की स्थिति क्या होगी ? इन सभी प्रश्नों का उत्तर ढूंढते समय हमें यह बाते ध्यान मे रखनी चाहिए कि अब हम किस राजनीतिक व्यवस्था मे रह रहे है ? हमारे सामने भापाओ के आदान-प्रदान के किस तरह के माध्यम है, किस तरह की सुविधाएं हैं और कितनी तेजी के साथ वे एक-दूसरे से मिलकर एक-दूसरे को स्वीकार करते हैं, या कि एक-दूसरे को नकारते है ?

हम अपने सामने देख रहे है कि अब समाज की स्थिति पहले जैसी नही रही है। भारत में ही नही, बल्कि विश्व मे लोकतात्रिक प्रणाली प्रबल होती जा

रही है। यह प्रणाली निश्चित रूप से लोगों की प्रणाली होती है। इस प्रणाली में सही मायने मे सत्ता जन-जन के हाथों में विकेन्द्रित होती है। सच तो यह है कि इस प्रणाली का जन्म ही जन-जन को सत्ता में बराबर का भागीदार बनाने के लिए हुआ है। अब पहले जैसा न तो अवरोध रह गया है, और न ही सत्ता के भागीदारों के अलग-अलग स्तर रह गए हैं। इसलिए यह स्वाभाविक है कि जन के साथ जन की भापा भी राज तक पहुँचेगी। फिर यह भी कि शासन का काम लोगो से सम्पर्क करना है। यह सम्पर्क लोगों की भापा से ही सम्भव है। इसके कारण राजभापा और जनभापा मे निश्चित रूप से बहुत तेजी के साथ अन्तर्सवन्ध स्थापित होगे, और वे एक-दूसरे को प्रभावित भी करेंगे। ऐसी स्थिति मे मुझे लगता है कि राजभापा को लोगों की भापा के करीब लाया जाना चाहिए। *विशेपकर एक लोकतान्त्रिक प्रणाली मे राजभापा जन-जन के लिए ही होती है।*

यहीं दूसरी बात आती है — माध्यमों की। आज हमारे सामने जन-संचार के अनेक माध्यम मौजूद हैं। इन माध्यमों की सीमा भी राज्य या देश तक सीमित न रहकर पूरी दुनिया होती जा रही है। ऐसी स्थिति मे अब 'कोस-कोस पर पानी बदले, दस कोस पर बानी'' वाली कहावत पुराने दिनो की बात बनती जा रही है। भापाओ की जहा सीमाए टूट रही हैं, वहीं उनके बीच मे तेजी से आदान-प्रदान भी हो रहा है। मैं समझता हूँ कि इस आदान-प्रदान में भी एक नई भापा की सम्भावना के बीज पल रहे हैं। खैर। यह तो है कि इस नई भापा के बनने में काफी वर्प लग जाए। हो सकता है कि यह बने भी न। लेकिन इतना तो निश्चित है कि इसका दबाव पडे बिना नही रहेगा। अब हमे देखना यह है कि हम कैसे इन प्रभावों को सकारात्मक रूप मे स्वीकार कर पाते हे, उन्हें पचा पाते हे, और अपने व्याकरणिक स्वरूप को बचाते हुए इसके साथ अपना तालमेल बैठा पाते है।

इसी से जुड़ी हुई बात है — विज्ञान और तकनीकी के भापा की। सांस्कृतिक पहचानों से जुड़ी भापा अलग-अलग हो सकती है। क्योकि प्रत्येक संस्कृति अपनी ऐतिहासिक परम्परा, अपने वातावरण और अपने जीवन-मूल्यों से अपना जीवन-रस लेती है। लेकिन जहा तक विज्ञान और तकनीकी का सवाल है, ये न तो किसी विशेप सांस्कृतिक समूह से जुडे होते हैं, और न ही किसी वर्ग विशेप से। भले ही विज्ञान का जन्म किसी एक सांस्कृतिक समूह में ही क्यों न हुआ हो, लेकिन अपनी उपयोगिता के कारण वह धीरे-धीरे अखिल विश्व का रूप

ले लेता है। ऐसी स्थिति मे हमें देखना यह होगा कि हमारे विज्ञान और तकनीकी की भापा किस तरह की भापा हो। मुझे लगता है कि विज्ञान और तकनीकी की भापा तैयार करने में हमें अपेक्षाकृत अधिक उदारता से काम लेना चाहिए। क्योंकि एक ओर तो उसके सामने विदेशी शब्दावली है, और दूसरी ओर उसके सामने अपने देश के लोग हैं, उनकी जन भापाएं हैं। यहां धर्मसंकट यह खड़ा होगा कि इस विदेशी शब्दावली और देशज शब्दावली के बीच सतुलन कैसे बनाया जाए। निश्चित रूप से यह काम आसान नहीं है। लेकिन असम्भव भी नहीं है। क्योंकि हमारी भापाएं पूर्णत· समर्थ भापाएं है। उनके पास विज्ञान भण्डार भी है। जरूरत है उस ऐतिहासिक विरासत से, और उस शब्द-भण्डार से उपयुक्त शब्दों की तलाश करके उन्हे मान्यता प्रदान करने की। मुझे लगता है कि ऐसा करके हम अपनी राजभापा को सही मायने मे व्यावहारिक भापा बना सकेंगे। हमें यह नही भूलना चाहिए कि अभी भी हमारे देश के आधे से अधिक लोग निरक्षर हैं।

इस अवसर पर मैं एक बात और कहना चाहूंगा। यह बात अनुवाद के बारे मे है। मुझे यह कहने मे कोई संकोच नहीं कि सरकारी काम-काज की हिन्दी ज्यादातर मौलिक न होकर अनुवाद की हिन्दी है। यह भी एक कारण है कि राजभापा आम लोगो से इतनी नही जुड़ पा रही है, जितनी कि उसे अभी तक जुड़ जाना चाहिए था। जब तक सरकारी काम-काज मौलिक हिन्दी में नहीं होगा, तब तक उस भापा में वह लालित्य और रस नहीं आ सकेगा, जो कि सचमुच उसका अपना विशेप गुण है। और यह मौलिक काम तब तक नहीं हो सकता, जब तक कि राज-काज करने वाले हिन्दी को आत्मसात नहीं करेंगे। मेरा मतलब यह कतई नहीं है कि अनुवाद नही होना चाहिए। यह तो बहुत जरूरी है। मैं हमेशा से ही इस बात पर जोर देता रहा हूँ कि अन्य भापाओ के साहित्य का अधिक-से-अधिक अनुवाद हिन्दी भापा मे होना चाहिए, ताकि यदि कोई व्यक्ति देश की किसी भी भापा का साहित्य जानना चाहे, तो वह उसे हिन्दी के माध्यम से जान सके। जहां तक राजभापा का संबध है, वहा अनुवाद की अपेक्षा मौलिकता को प्राथमिकता दी जानी चाहिए। हर भापा का अपना मुहावरा होता है। अनुवाद में वह मुहावरा नहीं आ पाता। कुछ लोगों की यह शिकायत रहती है कि मौलिक हिन्दी में काम नहीं किया जा सकता। पता नही क्यों मुझे उनकी यह शिकायत जायज नहीं लगती। मै जब मध्य प्रदेश सरकार में मत्री था, मुझे याद है कि तब मेरे जो सचिव थे, वे दक्षिण भारतीय थे। वे फाइल पर अपनी टिप्पणियां हिन्दी

में लिखा करते थे। उन टिप्पणियों को लेकर कभी भी न तो विवाद हुआ, और न भ्रम पैदा हुआ। यदि एक बार शुरुआत हो जाएगी, तो निश्चित रूप से काम आगे बढ़ता चला जाएगा। मैं इस अवसर पर सभी से यह कहना चाहूंगा कि वे मौलिकता को अधिक महत्व दें।

यहीं पर बात आती है — हिन्दी में मौलिक पुस्तकें लिखने की। कोशिश यह होनी चाहिए कि विभिन्न विषयों पर हिन्दी में केवल पुस्तकें ही न आएं, बल्कि मौलिक हिन्दी में लिखी पुस्तकें आएं। इससे इन पुस्तकों की भाषा में प्रवाह आ सकेगा, प्रभाव आ सकेगा, सहजता आ सकेगी। इससे हिन्दी की शब्द-शक्ति बढ़ सकेगी, और उसका शब्द-भंडार समृद्ध हो सकेगा। और ऐसी ही भाषा को लोग सरलता के साथ अपना भी सकेंगे।

सेवा का सुख

मैं हर साल आपके बीच आता हूँ, और आप लोगों से कुछ बाते करता हूँ। यह मुझे बहुत अच्छा लगता है। मुझे आप लोगो को पुरस्कार देने में खुशी होती है। मैं बधाई देता हूँ, आप उन सबको जिन्हें अभी पुरस्कार दिए गये हैं। मेरा विश्वास है कि इससे आप सबका हौसला बढ़ेगा।

यहां आप सब अलग-अलग राज्यो से आए हैं। यह इस बात का सबूत है कि हमारे पूरे देश के लोगों के मन में एक-सी भावना है। उसमें जबर्दस्त एकता है। हमारे देश की विशेपता रही है — विविधता मे एकता की। और हमारे देश की यह विशेपता आज से ही नहीं है, बल्कि प्राचीन काल से है — 'ऋग्वेद' के समय से। हम यह मानते रहे हैं कि लोग अलग-अलग तरह से सोच सकते है। लोग अलग-अलग तरह का भोजन कर सकते है। इसी तरह लोग अलग-अलग अपनी भापा बोल सकते हैं। लेकिन मन से सभी एक हैं। सभी का एक ही लक्ष्य है। और वह लक्ष्य है — सेवा का। यह बात प्राचीनकाल से रही है। 'महाभारत' मे धर्मराज युधिष्टिर ने कहा था —

न त्वहं कामये राज्य न स्वर्गम् नापुनर्भवम्।
कामये दु.खतप्तानां प्राणिनामार्तिनाशनम्॥

यह बात बापू को बहुत पसद थी। इस श्लोक का अर्थ है— "मुझे राज्य की कामना नही है। मुझे राज्य न मिले, तो भी कोई बात नहीं। मुझे स्वर्ग भी न मिले। मुझे जीवन में मुक्ति भी न मिले। हे ईश्वर! मेरी तो कामना यही है कि जो लोग दु खी हैं, मैं उनकी सेवा करूँ।" कितनी महान भावना है यह। इसी मे मानव-जाति का कल्याण है। इसी मे सच्चा सुख भी मिलता है। आप चाहे कितना भी कुछ पा ले, चाह बढती ही जाएगी। लेकिन यदि आपके मन मे दूसरों के कष्ट दूर करने की भावना है, तो उससे जो सुख मिलता है, वही सच्चा सुख है।

मुझे अभी बताया गया कि आप लोगो को कुष्ठ रोग के बारे मे भी बताया जाता है। इसके बारे में बहुत गलत धारणाएँ फैली हुई हैं। कुष्ठ रोग पूर्व जन्मों

भारत स्काउट व गाइड रैली मे, नई दिल्ली, 24 नवम्बर, 1994

के पापों से नहीं होता। यह एक–दूसरे के छूत से भी नही होता। जो बात एक–दूसरे को एक–दूसरे से अलग करती है, उससे अधिक बुरा काम और क्या हो सकता है ? बापू ने कुष्ठ रोग के बारे में अपने वर्धा आश्रम में काम करके दिखाया था। वर्धा आश्रम मे परचुरे शास्त्री थे। उन्हें कुष्ठ रोग था। लेकिन बापू खुद अपने हाथों से उनकी सेवा करते थे।

आप यह मत समझिए कि सेवा का काम केवल तब तक के लिए है, जब तक आप स्काउट गाइड हैं। बल्कि यह काम आपको जीवन भर जारी रखना है। मेरा आप लोगों से कहना है कि दूसरों के जो कष्ट हैं, उनको दूर करने में बराबर लगे रहिए। अपने लाभ की बात हर कोई सोचता है। लेकिन सवाल यह है कि हम ऐसे भी काम करे, जिससे दूसरों को भी लाभ हो। बापू का एक प्रिय भजन था —

''वैष्णव जन तो तेने कहिए, जे पीड पराई जाणे रे।''

वैष्णव वह नहीं है, जो नारायण–नारायण कहता रहे। बल्कि सच्चा वैष्णव वह है, जो दूसरो की पीड़ा समझकर उसे दूर करने की कोशिश करता है। यह जो अभी आपका स्काउट गाइड का समय है, उसमें आपको इस तरह की आदत डालनी चाहिए। यदि आप अपने जीवन में चाहते है कि आपको सच्चा आनंद मिले, तो वह आनद आपको मानव की पीड़ा को दूर करने से मिलेगा। आज दुनिया में कई ऐसे देश हैं, जहा सभी प्रकार के संसाधन हैं, रहने की अच्छी जगह है, और खाने को भी भरपूर है। लेकिन उन लोगो के मन में शांति नहीं है। शांति तो तभी मिल सकती है, जब आप अपने सुख को दूसरों के साथ बांटें, और दूसरों का दु ख दूर करने की कोशिश करे।

आज हमारे देश में जो गरीबी है, जो परेशानियां हैं, उन सबको दूर करने में आप हाथ बटा सकते हैं। हमारे देश के पास क्षमता है। आप में भी क्षमता है। आखिर देश क्या है ? देश आप लोगों से ही है। देश की क्षमता आप लोगों की क्षमता है। आप लोगो के मन मे देश के लिए कुछ कर गुजरने की भावना होनी चाहिए। आजादी की लड़ाई के समय में एक कविता बहुत लोकप्रिय थी। उस कविता की पहली लाइन थी —

अपनी ताकत तौल सिपाही, बलिदानो के अरमानो से

आपको देखना है कि आप दूसरों के लिए क्या कर सकते हैं। उसके लिए आपके दिल में क्या अरमान हैं, और वही भावना आपको ताकत देती है। जो काम सच्चे मन से किए जाते हैं, उसमें सफलता भी निश्चित रूप से मिलती है।

एम. टी. जवाहरलाल नेहरू तेल टैंकर के जलावतरण के अवसर पर, कोचीन, 29 अक्तूबर, 1992
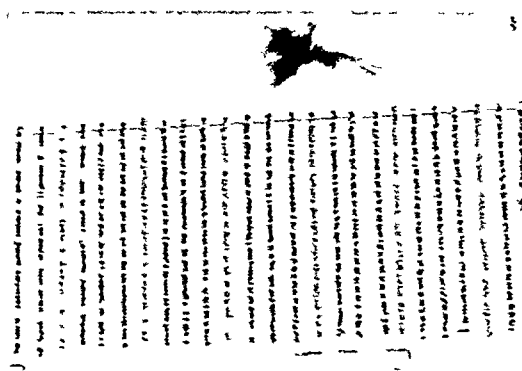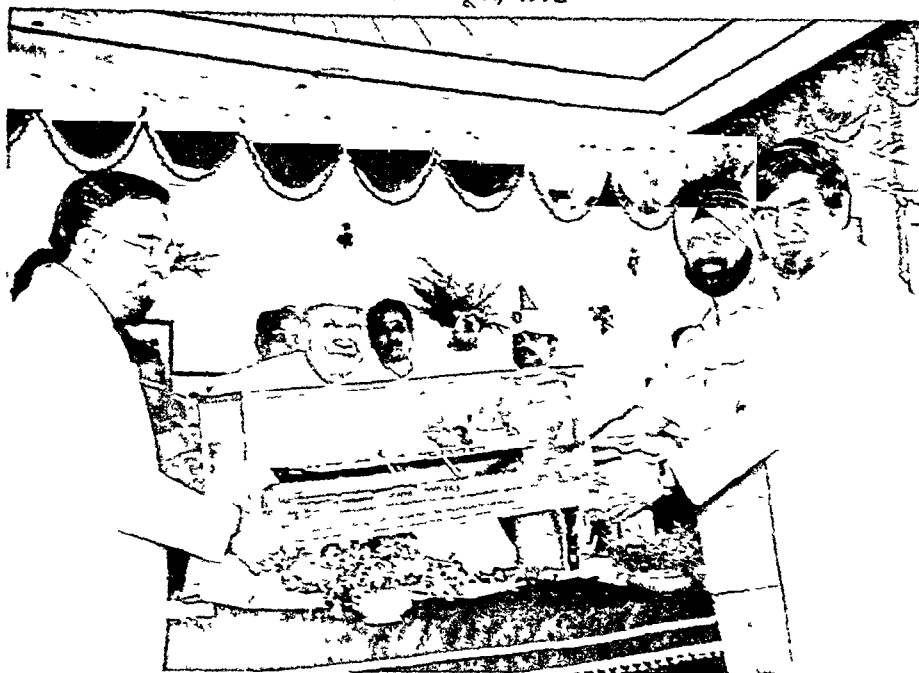
भारतीय अंतर्राष्ट्रीय व्यापार मेले का उद्घाटन करते हुए, नई दिल्ली, 14 नवंबर, 1992

बारहवे सहकारिता सम्मेलन के उद्घाटन के अवसर पर, नई दिल्ली, 18 मार्च, 1993
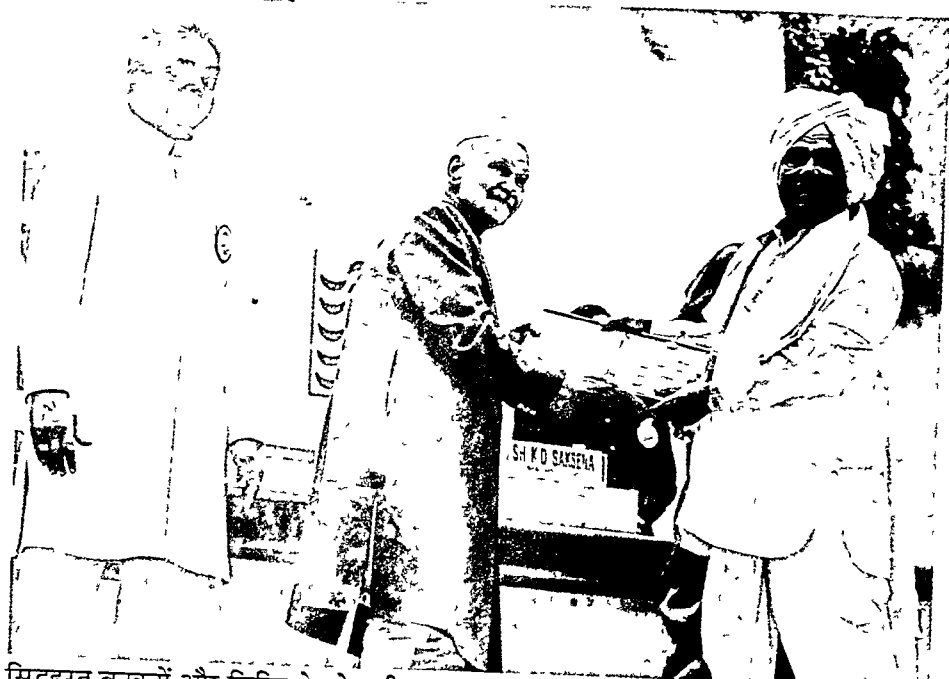
सिद्धहस्त बुनकरों और शिल्पियो को राष्ट्रीय पुरस्कार प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 5 मार्च, 1994

राष्ट्रीय निर्यात पुरस्कार (1991-92) प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 17 अक्तूबर, 1994
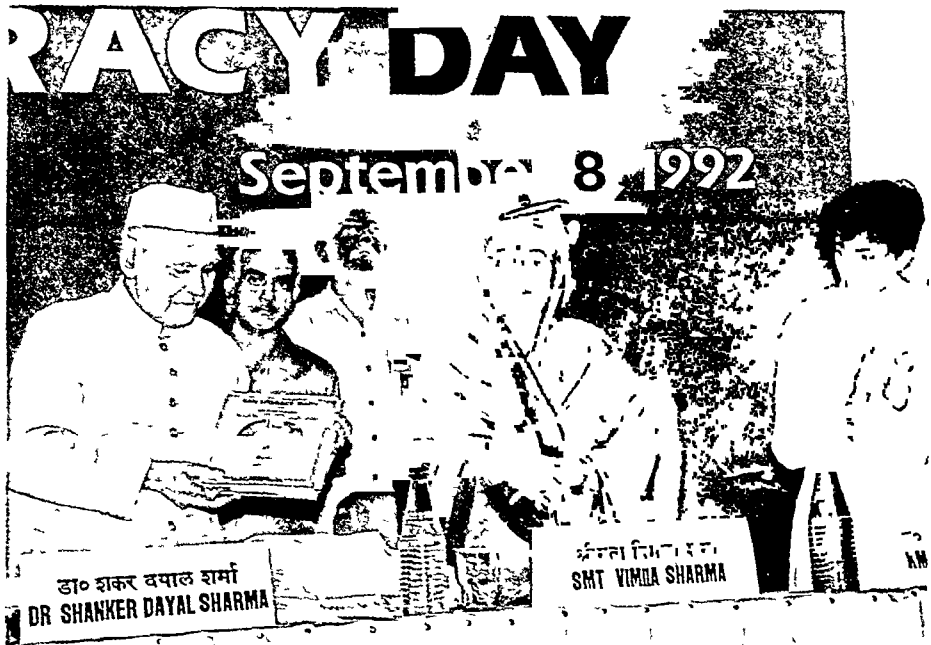
26वें अंतर्राष्ट्रीय साक्षरता दिवस के अवसर पर पुस्तक का विमोचन करते हुए,
नई दिल्ली, 8 सितंबर, 1992

शासकीय गीतांजलि कन्या महाविद्यालय के सभागृह का शिलान्यास करते हुए,
भोपाल, 20 अक्तूबर, 1992
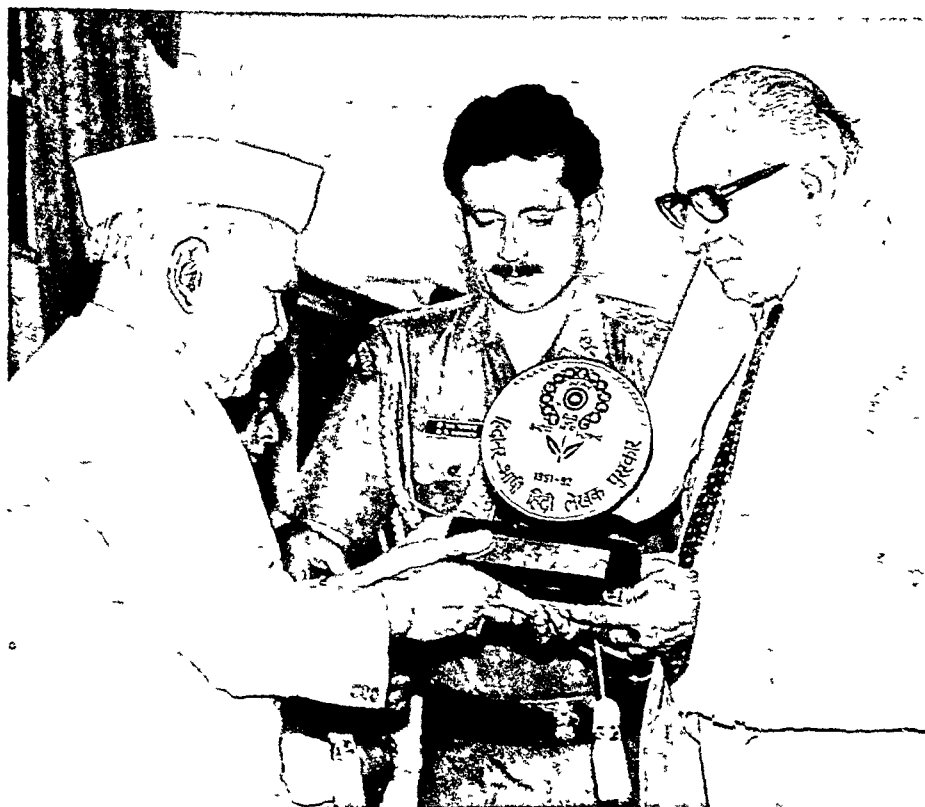
केंद्रीय निदेशालय द्वारा आयोजित राष्ट्रीय पुरस्कार समारोह (1991-92) में पुरस्कार वितरण करते हुए, दिल्ली, 22 मार्च, 1993

शिक्षक दिवस के अवसर पर राष्ट्रीय पुरस्कार वितरण करते हुए, नई दिल्ली, 5 सितंबर, 1993

शिक्षक दिवस के अवसर पर राष्ट्रीय पुरस्कार वितरण करते हुए, नई दिल्ली, 5 सितंबर, 1993

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय सस्कृत विद्यापीठ के प्रथम दीक्षात समारोह मे,
नई दिल्ली, 15 फरवरी, 1994

श्री लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय संस्कृत विद्यापीठ में चित्र प्रदर्शनी देखते हुए,
नई दिल्ली, 15 फरवरी, 1994

कबीर पुरस्कार प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 13 अगस्त, 1994
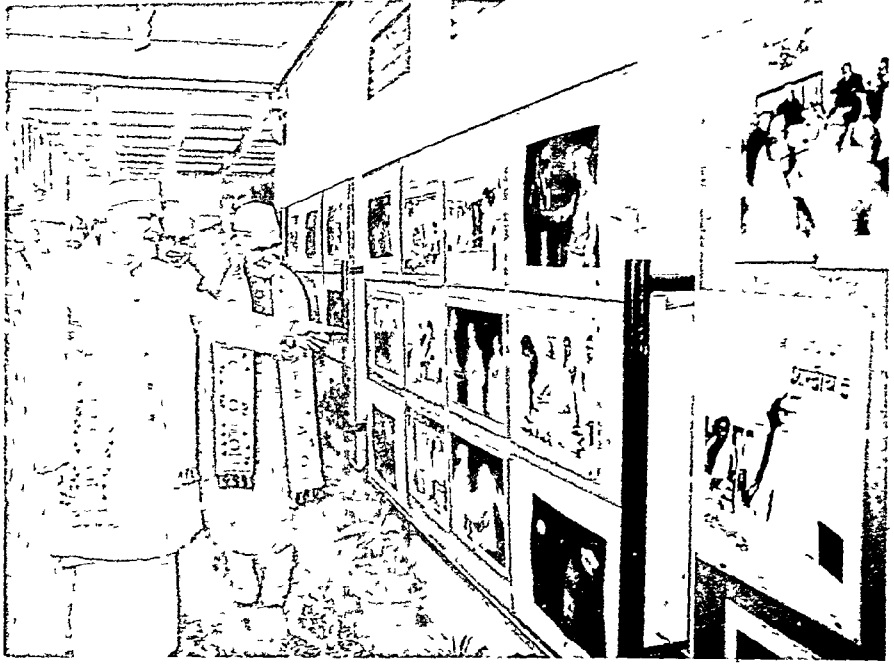
भारत स्काउट और गाइड रैली मे प्रदर्शनी देखते हुए, 24 नवंबर, 1994
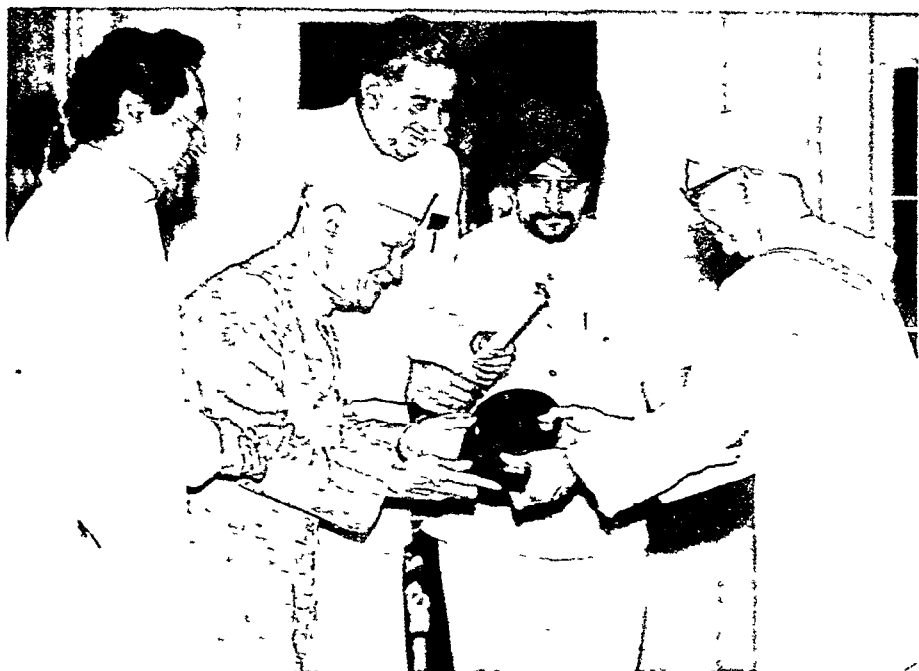
इंदिरा गांधी पर्यावरण पुरस्कार और राष्ट्रीय प्रदूषण निवारण पुरस्कार प्रदान करते हुए
नई दिल्ली, 6 अगस्त, 1994

राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद, कलकत्ता की केंद्रीय अनुसंधान और प्रशिक्षण प्रयोगशाला के लोकार्पण समारोह मे ग्रंथों का अवलोकन करते हुए, 13 मार्च, 1993

पैराट्रूपर्स ट्रेनिंग स्कूल और भारतीय वायुसेना के 14वें स्क्वैड्रन को स्टैन्डर्स प्रदान करते हुए,
अम्बाला, 11 नवंबर, 1994
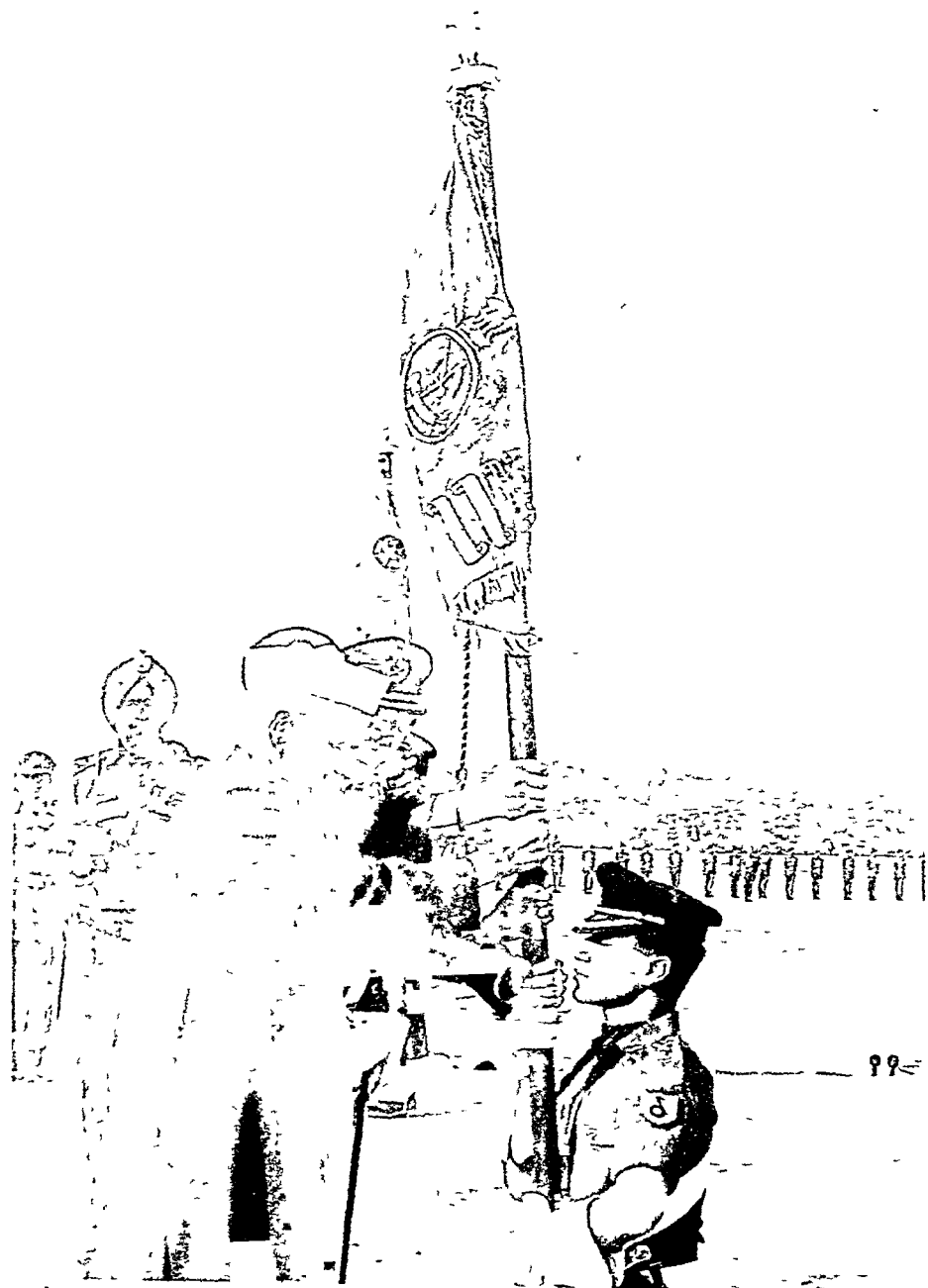
71वें एवं 72 वें आर्मर्ड रेजीमेंट को अलंकृत-ध्वज प्रदान करते हुए, सूरतगढ़, 16 दिसंबर, 1994

भाग 4

जन संचार

प्रेस की राष्ट्रीय भूमिका

नेशनल प्रेस इंडिया के इस स्वर्ण जयंती सम्मान समारोह मे उपस्थित होकर मुझे अत्यंत प्रसन्नता है। यह समारोह 'नेशनल प्रेस इंडिया' के संस्थापक श्री फिरोज गांधी की 80वी जयंती के अवसर पर आयोजित किया गया है, और इसमे मुझे आमंत्रित किया गया, इसके लिए मैं आप सबका आभारी हूँ।

सर्वप्रथम मैं आज सम्मानित किए गए सभी बंधुओ को अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ। मेरा विश्वास है कि आप सब अपने कार्यो द्वारा समाज के सामने और भी श्रेष्ठ मानदंड स्थापित करेंगे जो नयी पीढ़ी के लिए प्रेरणा का काम करेगी।

मैं इस अवसर पर स्वतंत्रता सेनानी, प्रखर सासद और निर्भीक पत्रकार श्री फिरोज गांधी जी के प्रति अपनी श्रद्धाजलि अर्पित करता हूँ। यह हमारे देश का दुर्भाग्य था कि वे बहुत कम उम्र मे हमारे बीच से चले गए। लेकिन सेवा-भाव तथा तटस्थ दृष्टिकोण आदि के जो स्तुत्य उदाहरण उन्होंने अपने कार्यो और विचारो द्वारा प्रस्तुत किए है वे आने वाली पीढ़ी के लिए अनुकरणीय हैं। मैं आशा करता हूं कि 'नेशनल प्रेस इंडिया', जो प्रतिवर्ष उनके जन्मदिवस पर सम्मान समारोह आयोजित करती है फिरोज जी के जीवन-मूल्यो को हमारे देश के लोगों तक पहुँचाने का काम बखूबी करेगी।

मैं इस बात को अत्यत महत्वपूर्ण मानता हूँ कि हमारे देश का प्रेस अपने जन्म से ही राष्ट्रीय-हितो से जुड़ा रहा है। स्वतत्रता आदोलन में प्रेस ने एक 'धारदार हथियार' की भूमिका निभाई थी। स्वतत्रता आदोलन के दौरान हमारे राष्ट्रीय नेताओ ने लगातार प्रेस के माध्यम से अपने विचार लोगों तक पहुँचाकर उनमे जबर्दस्त राजनैतिक और सामाजिक चेतना जगाई थी। मै यहाँ यह बात विशेष रूप से कहना चाहूँगा कि प्रेस की यह महत्वपूर्ण भूमिका हमारे देश के किसी क्षेत्र विशेष या भाषा विशेष तक सीमित नहीं रही, बल्कि सपूर्ण देश विभिन्न भाषाओं के माध्यम से एक जैसे विचारो से आंदोलित होता रहा था। हिन्दी मे 'भारत मित्र', 'प्रताप', उर्दू में 'तहजीब-उल-इखलाक', बंगला मे 'सजीवनी', 'हितबादी', मराठी का

नेशनल प्रेस इंडिया के स्वर्ण जयती सम्मान समारोह मे, नई दिल्ली, 12 सितम्बर, 1992

'केसरी' गुजराती का 'देशमित्र', कन्नड़ का 'कन्नड़ केसरी', मलयालम का 'स्वदेशाभिमानी', तेलुगु का 'रवि', तमिल का 'देशभक्तन' तथा उड़ीया का 'प्रजातंत्र' जैसे अनेक पत्र-पत्रिकाओं ने अपने समय की चेतना को जबरदस्त रूप से प्रभावित किया था। महत्वपूर्ण बात यह है कि विभिन्न भाषाओं के इन पत्रों के शीर्षक देखने मात्र से ही राष्ट्रीय आज़ादी के प्रति उनकी प्रतिबद्धता का पता चल जाता है। हम लोग, जो उस समय युवा थे और ऐसे पत्रों की भावनाओं से प्रेरणा पाते थे, अपने स्तर पर जो कुछ भी संभव हो सकता था करने के लिए प्रयत्न होते थे। मुझे याद है कि लखनऊ विश्वविद्यालय की पत्रिका में उस समय राष्ट्रभक्ति के अनेक लेख तथा गीत प्रकाशित किए जाते थे।

मुझे यह बात भी विशेष महत्वपूर्ण लगती है कि उस समय के हमारे सभी महान नेता प्रत्यक्ष रूप से पत्रकारिता से जुड़े हुए थे। राजा राममोहनराय, केशव चंद्र सेन, गोविंद रानडे, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी, रवींद्र नाथ टैगोर, सुब्रह्मण्यम भारती, लोकमान्य तिलक, गोपाल कृष्ण गोखले, राष्ट्रपिता महात्मा गांधी, मदन मोहन मालवीय, सी.वाय. चिंतामन, चक्रवर्ती राजगोपालाचारी, गणेश शंकर विद्यार्थी, पंडित नेहरू और हरे कृष्ण महताब आदि अनेक ऐसे नाम हैं, जिन्होंने पत्रकारिता को भी देशसेवा का माध्यम बनाया था।

यहां मैं स्वतंत्रता आंदोलन में प्रेस की भूमिका की थोड़ी-सी चर्चा इस उद्देश्य से कर रहा हूँ, ताकि इससे जुड़े हमारे राष्ट्रीय मूल्यों का हम स्मरण कर सकें और यह समझ सके कि किस प्रकार प्रेस राष्ट्रीय हितों से जुडा रहा है। 'आज' के संपादक बाबू राव विष्णु पराड़कर ने अपने संपादक बनने के उद्देश्य के बारे में स्पष्ट रूप से कहा था कि —

> मैं कलकत्ता पत्रकार होने नहीं, बल्कि देश को शीघ्र स्वतंत्र देखने और क्रांतिकारी समितियों के साथ कार्य करने के उद्देश्य से गया था।

उस समय की पत्रकारिता राष्ट्रीय हितों के लिए किस प्रकार संघर्ष एव कष्टों को स्वीकार करती थी, इस दृष्टि से मैं लोकमान्य तिलक के उन शब्दों को दोहराना चाहूँगा, जो उन पर चलाये गए मुकदमे के अंत में छह साल कारावास की सजा मिलने पर कहे थे। उन्होंने पूरे आत्मविश्वास और परिपूर्ण देशप्रेम के साथ कहा था कि —

> जूरी के इस फैसले के बावजूद मैं कहता हूँ कि मैं निरपराध

> हूँ। संसार में ऐसी बड़ी शक्तियाँ भी है, जो सारे जगत का व्यवहार चलाती हैं, और सभव है कि ईश्वरीय इच्छा यही हो कि जो ध्येय मुझे प्रिय है, वह मेरे आजाद रहने की अपेक्षा मेरे कष्ट सहने से अधिक फले-फूले।

स्वतंत्रता-संग्राम के दौरान राष्ट्रप्रेम, सत्य, निश्चयशीलता, त्याग, अनुराग की ऐसी भावना-शक्ति से हमारे देश की प्रेस की परंपरा बनी थी, और इसे याद रखना, समझना आवश्यक है।

यह प्रसन्नता की वात है कि आजादी के बाद से हमारे यहां भापाई पत्रकारिता व्यापक हुई है और मजबूत भी हुई है। हालांकि संचार माध्यमो के अन्य रूपों के प्रभाव और प्रसार को देखते हुए समाचार-पत्रो के भविष्य के प्रति आशंका भी व्यक्त की जाती रही है। लेकिन मैं इस आशका से सहमत नहीं हो पाता हूँ। मैं यह मानता हूँ कि छपे हुए अक्षर का अलग प्रभाव होता है, जिसकी कोई भी शिक्षित, सजग और सतर्क समाज उपेक्षा नहीं कर सकता है। इसके साथ ही हमारे देश में जैसे-जैसे साक्षरता का प्रतिशत बढ़ता जाएगा, वैसे-वैसे पत्र-पत्रिकाओं की संख्या भी बढ़ती जाएगी। इसलिए मेरा यह मानना है कि आप सभी जो इस माध्यम से जुड़े हुए हैं, उनके सामने एक अच्छा और उज्ज्वल भविष्य है। हॉ, यह अवश्य है कि अन्य माध्यमो ने आपके सामने चुनौती प्रस्तुत की है। और इसमें कोई दो राय नही कि आप अपनी दक्षता, समाचारो को विस्तृत एवं विश्लेपणात्मक रूप से प्रस्तुत करने के कौशल द्वारा इस चुनौती का सामना कर सक्ते हैं।

मे प्रेस से जुड़े आप सबसे एक वार विशेप रूप से कहना चाहूँगा कि जिस प्रकार प्रेस ने स्वतत्रता आंदोलन के दौरान अपनी भूमिका निभाई थी, वही भूमिका आज राष्ट्र-पुनर्निर्माण के दौर मे निभानी है। आजादी के बाद आज हमारा देश अपने निर्माण की प्रक्रिया से गुजर रहा है, और ऐसे समय में एक साथ दो शक्तियॉ विपरीत दिशाओ में काम कर रही है। आतंकवाद और सांप्रदायिक जैसी विघ्रटनकारी शक्तियाँ, अशिक्षा और जनसख्या वृद्धि जैसी सामाजिक समस्याएं तथा अनेक सामंतवादी प्रवृत्तियां है, जो राष्ट्र-विकास के कार्य में न केवल वाधा बन रही हैं, बल्कि हमारी उपलब्धियों को पीछे ले जाने की कोशिश कर रही हैं। मुझे लगता है कि प्रेस इन नकारात्मक शक्तियों के चेहरों को वेनकाब करे, उनका विश्लेपण करके जनता के सामने ऐसे तथ्य प्रस्तुत करें, जिससे लोग इन्हें सही रूप मे पहचान सकें और उनके विरुद्ध संघर्प कर सके।

इसके साथ-ही-साथ लोकतांत्रिक समाजवाद, सर्वधर्मसमभाव, अपनी संस्कृति के प्रति आस्था तथा स्वतंत्रता आंदोलन के मूल्यों के प्रति हमारा लगाव इत्यादि ऐसी सकारात्मक शक्तियॉ है, जो हमारी अनेक उपलब्धियों की प्राप्ति में सहायक रही है। मुझे लगता है कि प्रेस इन मूल्यों के व्यावहारिक रूप को समाज के सामने रखकर उनके विस्तार में अपना महत्वपूर्ण योगदान कर सकता है।

मै हिदी, उर्दू और अग्रेजी पत्रकारिता से सबद्ध रहा हूँ। मैंने यह अनुभव किया है कि बुराइयो का ज्ञान, बुराई को रोकने में मदद तो करता है, लेकिन वह उसे अच्छाई मे नहीं वदल सकता। अच्छाई के लिए जरूरी है कि वैसा वातावरण बने। मे समझता हूँ कि ऐसे वातावरण के निर्माण मे प्रेस की न केवल महत्वपूर्ण ही वल्कि प्रधान भूमिका है। हमारे विशाल देश मे अनेक स्थानों पर अनेक व्यक्ति और सस्थाएं राष्ट्रसेवा के महत्वपूर्ण कार्यो में लगी हुई हैं। मैं ऐसे कार्यो को टिमटिमाती हुई रोशनी मानता हूँ और यह चाहता हूँ कि आप उनकी इस रचनात्मकता को समाज और देश के सामने लाएँ। यदि ऐसा होता है तो यह टिमटिमाती हुई रोशनी ही लोगों की प्रेरणा के लिए एक मशाल बन सकती है।

यह एक महत्वपूर्ण राष्ट्रीय कार्य है, और इसे आपको करना ही है, चाहे इसके लिए आप लोगो को कितनी ही तकलीफ़े क्यो न उठानी पड़े। इस दृष्टि से मैं 'नेशनल प्रेस इडिया' के सस्थापक फिरोज गांधी जी के शव्दो का स्मरण कराना चाहूगा, जो उन्होने 'नेशनल हैरल्ड' के 27 फरवरी, 1956 के अक में लिखे थे। उन्होने लिखा था कि —

> नेशनल प्रेस के लिए सबसे अहम कार्य होना चाहिए — अपनी राष्ट्रीय अभिव्यक्ति की पहचान बनाना। उस पहचान को कायम और सुरक्षित रखने के लिए कितनी ही बार अग्निपरीक्षा देनी पडे, न सकोच करना चाहिए, न हिम्मत हारनी चाहिए, न कष्टो और दवावो से विचलित होना चाहिए। यह समझ लेना भी जरूरी है कि सपूर्णता, सार्थकता और निर्भीकता से जुडी हुई राष्ट्रीय अभिव्यक्ति हमारी राष्ट्रीयता का दूसरा नाम है।

इसी संदर्भ में मैं बापू के शव्दो का स्मरण दिलाना चाहूगा, जो उन्होंने अपनी आत्मकथा के अध्याय 23 मे लिखे हैं। उन्होने लिखा है कि —

> 1914 तक के 'इडियन ओपीनियन' का शायद ही कोई अंक ऐसा गया होगा, जिसमें मैंने एक भी शव्द बिना विचारे, बिना

> तोले लिखा हो। यह अखबार मेरे लिए संयम की तालीम का काम देता था। मैं जानता हूँ कि उसके लेखों की बदौलत टीकाकारों को भी अपनी कलम पर अकुश रखना पड़ता था। यदि यह अखबार न होता, तो सत्याग्रह-सग्राम न चल सकता। पाठक इसे अपना पत्र समझते थे।''

बापू के इस कथन मे पत्रकार का दायित्व, प्रेस की शक्ति तथा लोगो से उसके सीधे जुड़ाव की बड़ी उपयोगी बातें कही गई हैं। इसमें 'संयम की तालीम' की बात तो बहुत ही महत्वपूर्ण है। मैं यह मानता हूँ कि प्रेस के पास अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता है, और उसे किसी भी कार्य की समीक्षा करने का पवित्र अधिकार भी है; बल्कि यह कहना ठीक होगा कि यह उसका पवित्र कार्य है। लेकिन इसके साथ ही मैं यह भी मानता हूँ कि उसका दृष्टिकोण रचनात्मक होना चाहिए। आप सब जो फिरोज जी को जानते हैं या उनके बारे में पढ़े हैं, देखा होगा कि वे किसी भी अनुचित कार्य की तीखी आलोचना करते हुए हमेशा रचनात्मक दृष्टिकोण अपनाते थे। मुझे लगता है कि आलोचना और रचनात्मकता के बीच संतुलन रखकर ही प्रेस सही राष्ट्रीय भूमिका निभा सकता है। इसीलिए आजादी की लड़ाई में प्रेस ने निरंतर अपनी स्वतंत्रता के लिए संघर्ष किया और आजादी के बाद इसके महत्व को समझते हुए हमारे संविधान-निर्माताओं ने संविधान के अनुच्छेद 19 में अभिव्यक्ति की स्वतत्रता को मौलिक अधिकारों के अंतर्गत रखा। पंडित नेहरू ने नई दिल्ली में 3 दिसबर, 1950 को 'अखिल भारतीय समाचार संपादक सम्मेलन' का उद्‌घाटन करते हुए जो शब्द कहे थे, मैं उन्हें उद्‌धृत करना चाहूंगा। पंडित नेहरू ने कहा था कि —

> अखबार की आजादी में दखल देना ग़लत होगा। दबाव डालकर आप किसी चीज को बदल नहीं सकते, इससे आप केवल कुछ चीजों के बारे में जनता की आवाज को दबा सकते हैं, और इस प्रकार उन आदर्श और विचारों को आगे बढ़ने से रोक सकते हैं। . . . लेकिन जो आजादी उनके पास है, जो उन्हें मिली हुई है, यदि उनमे गैर-जिम्मेदारी बढ़ती है, तो इससे न केवल हर ओर से उनकी अपनी आजादी खतरे मे पड़ती है, बल्कि उनकी अपनी साख को भी नुकसान पहुँचता है। हमारे पास हर तरह की आजादी होनी चाहिए लेकिन इसके साथ ही अपने

सामाजिक कार्यो में कुछ मूल्यों के प्रति प्रतिवद्धता भी होनी जरूरी है। इसमें हमारा प्रेस भी शामिल है।

मैं समझता हूँ कि अधिकारो और कर्तव्यों के प्रति व्यक्त किए गए पंडित नेहरू के ये अमूल्य शव्द अत्यंत महत्व के हैं, जो हमारे देश के नागरिकों और प्रेस की रचनात्मक भूमिका के लिए आवश्यक है। यहीं पर तथ्य और दिचारों की वात आती है। आजादी की लड़ाई में हालांकि हमारा प्रेस एक उपनिवेशवादी हुकूमत के विरुद्ध लड़ रहा था, और उसकी तीखी आलोचना भी करता था, लेकिन उसने तथ्यों के प्रति अपनी कटिवद्धता को कभी नहीं छोड़ा। मैं समझता हूँ कि तथ्यो के प्रति ईमानदारी की भावना वह सबसे बड़ी बात थी, जिसके कारण प्रेस की विश्वसनीयता वनी, वढ़ी और उसका लोगों पर ज़वर्दस्त असर भी हुआ। इसलिये मुझे प्रेस के लिए यह आवश्यक लगता है कि वे तथ्यों को तटस्थ दृष्टिकोण से देखें, और उसे अपने-अपने विचारों के अनुसार प्रस्तुत करें। मैं मानता हूँ कि 'फेक्ट्स आर सेक्रोसेन्ट, कमेन्ट इज़ फ्री'। तथ्यों की पवित्रता वनाये रखी जानी चाहिए। हॉ, उसका विश्लेपण करने, उस पर टीका-टिप्पणी करने का अधिकार प्रेस को, लेखकों को तथा देश के हर नागरिक को होना चाहिए, और यह हमारे यहां है। जो बातें तथ्यहीन हैं, उन्हें तथ्य युक्त दिखाकर प्रस्तुत करना हमारे प्रेस की महान परपरा के विपरीत है, और प्रेस के लिये भी हितकारी नहीं है। ऐसी मर्यादाओ के औचित्य को ध्यान में न रखने से न केवल लिखने वाले की और उस पत्र की विश्वसनीयता घटती है, बल्कि पूरे प्रेस की विश्वसनीयता पर ऑच आती है, और जनता पर उसका प्रभाव भी कम होता है। प्रेस में छपे शव्दों के वारे में लोगों की धारणा क्या होती है, इसे बताने के लिए मैं वापू के शव्द उद्धृत करना चाहूंगा। उन्होने 'माई पिक्चर ऑफ फ्री इंडिया' के पृष्ठ 211 पर लिखा है कि —

लोगों के बीच समाचार-पत्रों ने गीता, वाइविल और कुरान का स्थान वना लिया है। उनके लिये छपे हुए पृष्ठ धार्मिक उपदेश की तरह सत्य हैं।

मैं समझता हूँ कि तथ्यों के प्रति तटस्थ और सत्यगत भावना रखकर ही लोगों के इस पवित्र भाव की रक्षा की जा सकती है।

यह प्रसन्नता की वात है कि नेशनल प्रेस इंडिया पिछले 50 वर्षो से समाचार-जगत से जुड़े लोगों के हितों के लिए काम कर रही है। इसके साथ-ही-साथ राष्ट्रीय एकता, साम्प्रदायिक सद्भाव, ग्रामोत्थान, पर्यावरण एवं विज्ञान विपयों पर फीचर एजेन्सी का संचालन कर रही है। निश्चित रूप से इससे हमारे देश की चेतना को एक प्रगतिशील एवं संरचनात्मक दिशा मिल सकेगी।

दूरदर्शन और राष्ट्रीय पुनर्निर्माण

भोपाल से और मध्य प्रदेश से मेरा बहुत गहरा और लंबा संवंध रहा है। राज्य सरकार में मत्री के रूप में मैंने इस पूरे प्रदेश का भ्रमण किया है। यहां की ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक विरासत तथा यहां की लोक-संस्कृति से मैं अच्छी तरह वाकिफ हूॅं। वर्तमान समय मे भी सास्कृतिक गतिविधियों के क्षेत्र मे भोपाल आगे है। इस बात को देखते हुए मुझे भोपाल में दूरदर्शन केंद्र का शुरू किया जाना महत्वपूर्ण मालूम पड़ता है।

मैं समझता हूॅं कि यह बात भारतीय दूरदर्शन के अधिकारियों व कार्यकर्ताओं तथा राज्य की आम जनता को भी जानना जरूरी है कि इस प्रदेश का सांस्कृतिक ख़ज़ाना कितना समृद्ध है।

साहित्य, स्थापत्य, सगीत तथा चित्रकला आदि क्षेत्रो में मध्य प्रदेश आज ही नहीं, बल्कि शताब्दियो से हमारे देश के सामने अनेक गौरवमयी उपलब्धियां प्रस्तुत करता रहा है। यहॉ करुणा का संदेश देने वाला सांची का स्तूप है, हमारे देश के पदार्थ-विज्ञान के क्षेत्र मे आश्चर्यजनक वैज्ञानिक उपलब्धियो को प्रस्तुत करने वाला हेलियोडोरस का लौह स्तंभ है, आध्यात्मिकता और भौतिकता का समन्वय करने वाला खजुराहो का विशाल मंदिर है, कभी न मिटनेवाले रंगो से सजी भीमबेटका एवं बाघ की विश्व प्रसिद्ध गुफाएॅं हैं, उदयगिरी की भव्य प्रतिमाएं हैं, सफेद संगम्मरमर के बीच बहती और झरती हुई नर्मदा नदी है। यहीं वह ऐतिहासिक नगरी उज्जयिनी है, जहा विश्वप्रसिद्ध महाकवि कालिदास ने 'अभिज्ञान शांकुलतम्' और 'मेघदूत' जैसे महान ग्रंथों की रचना की थी। इस उज्जयिनी नगरी क बारे में 'मेघदूत' में एक बहुत ही सुंदर श्लोक है। कालिदास लिखते हे—

> वक्रः पन्था यदपि भवतः प्रस्थितस्योत्तराशां
> सौधोत्सगप्रणयविमुखो मा स्म भूरुज्जयिन्याः ॥

मेघदूत-28

भोपाल दूरदर्शन केन्द्र का उद्घाटन करते हुए, भोपाल, 20 अक्तूबर, 1992

इस श्लोक में यक्ष मेघ से कहते हैं, कि "यद्यपि उत्तर दिशा की ओर जाते हुए तुमको यह मार्ग कुछ टेढ़ा अवश्य पड़ेगा, किंतु फिर भी तुम उज्जयिनी के महलों के अनुराग से विमुख न होना, अर्थात् वहां अवश्य रुकना।" कालिदास को उज्जयिनी नगरी इतनी अधिक प्रिय थी।

इसी प्रदेश में अहिल्यावाई और रानी दुर्गावती जैसी वीरांगनाएं और कुशल पालिका हुई। तानसेन और वैजूवावरा जैसे महान संगीतकार हुए, जिनकी गूंज सदियो वाद हमे मैहर के उस्ताद अलाउद्दीन खॉ साहव तथा देवास के कुमार गन्धर्वजी की आवाज में मिलती थी। संगीत के क्षेत्र में ग्वालियर घराना आज भी अपनी तान से देश को ही नहीं, विदेश को भी गुंजाए हुए है। खैरागढ का संगीत महाविद्यालय प्रदेश की इस महान परपरा को संजोकर आगे की पीढ़ी को सौंप रहा है।

साहित्य और कला के शास्त्रीय रूप के साथ-ही-साथ इस प्रदेश की लोकसस्कृति भी वहुत ही समृद्ध और विविधवर्णी है। इस एक ही प्रदेश में बुंदेली, वघेली, मालवी, निमाड़ी, और छत्तीसगढी जैसी वोलियां वोली जाती हैं, और उनका अपना साहित्य भी है। यहॉ उर्दू भी बोली और समझी जाती है। इकवाल साहव का यहा से सवध रहा हे। भूपण और छत्रसाल के वीर रस से भरा साहित्य इसी प्रदेश की धरती पर रचा गया। लोकजीवन में आज भी 'आल्हा-ऊदल' पूरी तन्मयता से गाए और सुने जाते है। यहां रंगमंच के अनेक रूप प्रचलित हैं, जिन्हे हवीव तनवीर जेसे नाटककार राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय मंचों पर प्रस्तुत करने में सफल रहे हैं। महाभारत की कथाएं जहां पण्डवानी के रूप मे गाई जाती है, वहीं रामायण की कथा लक्ष्मणजती के रूप मे गूंजती है। तीजन वाई ने अपने गायन से पण्डवानी को लोकप्रिय वनाया है। नाचा, गम्मत और सैला जैसे नृत्य यहां के लोकजीवन की जीवंतता और उनकी कला के उत्कृष्ट नमूने प्रस्तुत करते हैं।

मध्य प्रदेश प्राकृतिक दृष्टि से भी विभिन्नता लिए हुए है। एक ओर सरगुजा, वस्तर और झावुआ जिले हैं, जहा घने जंगल हैं, वहीं दूसरी तरफ हैं — नर्मदा तथा अन्य बड़ी-वड़ी नदियों के जल प्रपात और तीसरी ओर पंचमढी की सुरम्य पहाड़ियॉ भी हैं।

मैंने इन वातों का कुछ विस्तार से उल्लेख इसलिए किया है, क्योंकि मैं समझता हूॅ कि यह जो दूरदर्शन केंद्र शुरू होने जा रहा है, उसके लिए ये सब वे आदर्श स्थितियॉ हें, जो आपके कार्यक्रमों के लिए निश्चय ही सहायक होंगी।

इतना ही नही, ये वे महत्वपूर्ण स्तभ है, जिनके आधार पर यहा के दूरदर्शन के कार्यक्रम तैयार किए जाने चाहिए।

मुझे यह बात बहुत जरूरी लगती है कि हमारे राज्यो के जो दूरदर्शन केन्द्र है, वे स्थानीय कला एवं सस्कृति के सरक्षण और सवर्द्धन में अपनी मुख्य भूमिका निभाएं। आज हम देख रहे है कि दूरदर्शन के कार्यक्रमो के क्षेत्र में हमारे सामने अंतर्राष्ट्रीय चुनौतियॉ खड़ी हैं। उपग्रह ने दूरदर्शन के पर्दे पर सारी दुनिया को समेट दिया है। यह विज्ञान की बहुत बडी तकनीकी उपलब्धि है। हमें भी चाहिए कि इस तकनीकी उपलब्धि का अपने देश के लोगो के हित मे प्रयोग करे। मै समझता हूँ कि यदि हमारे क्षेत्रीय दूरदर्शन केंद्र अपनी लोक सस्कृति को मुख्य आधार बनाकर अपने कार्यक्रमों का निर्माण करें, तो ऐसे कार्यक्रम अतर्राष्ट्रीय चुनौतियों का सामना कर सकते है। मुझे लगता है, और मै यह महसूस भी करता हूँ कि लोग अपने आसपास के वातावरण, अपनी भापा और सस्कृति के प्रति स्वाभाविक रूप से लगाव रखते है और यदि उन्हे अपना वह रूप पर्दे पर दिखाई देगा, तो वे अवश्य ही इसको प्रधानता देंगे। इससे हमारे स्थानीय कलाकारो को भी बढ़ावा मिल सकेगा और वे इसके माध्यम से राष्ट्रीय और अतर्राष्ट्रीय मचो पर अपनी पहचान बना सकेगे।

इस मौके पर मैं इस बात का विशेप रूप से उल्लेख करना चाहूॅगा कि हमारे दूरदर्शन के कार्यक्रम ऐसे होने चाहिए जो राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्यो के लिए सभी नागरिकों को प्रेरित कर सकें। आप लोगों को मालूम ही है कि स्वतत्रता आंदोलन के समय सांस्कृतिक पुनर्जागरण हमारी आजादी की लड़ाई का एक शक्तिशाली अस्त्र था। लोकमान्य तिलक जैसे महान राष्ट्रीय नेताओं ने अपनी सस्कृति के तत्वों को लोगो को जागृत करने का आधार बनाया था। मै समझता हूॅ कि आज भी यह काम किया जा सकता है। हमारी राष्ट्रीय संस्कृति तथा लोक सस्कृति के तत्वो को राष्ट्रीय पुनर्निर्माण का धारदार हथियार बनाया जा सकता है। मैने यह देखा है कि हमारी लोक कथाओ और लोकगीतो में सबसे अधिक प्रधानता नैतिक मूल्यों की होती है। हमारी लोक सस्कृति आदर्शवादी जीवन-मूल्यो से ओतप्रोत है। हमें चाहिए कि हम अपनी लोक सस्कृति में छिपी इस ऊर्जा को दूरदर्शन के माध्यम से लोगो तक पहुंचाए और उन्हें उनके अर्थो को आज के सदर्भ मे समझाए। ऐसा करके दूरदर्शन अपनी सार्थकता सिद्ध कर सकेगा।

आप सभी दूरदर्शन के उद्देश्यों से वाकिफ़ हैं। शिक्षा देना इसका पहला काम है, सूचना देना दूसरा, और तीसरा काम है मनोरंजन करना। कार्यक्रमों के निर्माण के दौरान इस बात का ध्यान रखा जाना जरूरी है कि तीनों उद्देश्यों का तालमेल बना रहे। कहीं ऐसा न हो कि दूरदर्शन केवल मनोरंजन का माध्यम बन कर रह जाए। इसमें संदेह नहीं कि मनोरंजन के द्वारा भी हमारे लोगों को शिक्षा देने का काम किया जा सकता है।

लोगों को साक्षर बनाने तथा उनमें जागृति पैदा करने का काम हमारे दूरदर्शन का करना है। कृषि के क्षेत्र में रोज नई–नई खोजें हो रही हैं, खाद, बीज, कीटनाशक दवाइयाँ तथा कृषि उपकरणों के नये–नये रूप आ रहे हैं। दूरदर्शन हमारे किसानों को कृषि से संबंधित ऐसी जानकारियाँ दे सकता है, जिससे उनकी उत्पादक क्षमता बढ़ेगी। मुझे लगता है कि इस प्रकार यह संचार माध्यम हमरे देश के आर्थिक उत्थान में अपना योगदान दे सकेगा।

मैं समझता हूँ कि दूरदर्शन अपने कार्यक्रमों के माध्यम से लोगों में प्रेम, करुणा, त्याग, सेवा तथा उदारता जैसे महान, मानवीय गुणों का संचार कर सकता है। इसी प्रकार वह दहेज, बाल–विवाह, नारी शोषण, नशाखोरी तथा अस्पृश्यता जैसी सामाजिक कुरीतियों को भी दूर करने के काम में सहयोग कर सकता है। ये सब आपके सामने वर्तमान चुनौतियाँ हैं। अब यह आपको देखना है कि आप इन चुनौतियों का सामना किस प्रकार करते हैं।

इसके साथ ही आज हमारे राष्ट्र के सामने कुछ ऐसी समस्याएं हैं, जो मुझे मनोवैज्ञानिक अधिक लगती हैं। सांप्रदायिकता की समस्या इस तरह की एक बड़ी समस्या है। हमारी संस्कृति समन्वयवादी रही है। आज भी हमारे देश के कस्बों और गांवों में विभिन्न धर्मों और जाति के लोग एक–दूसरे के साथ मिल–जुलकर रहते हैं, और एक–दूसरे की सहायता करते हैं। उनके निजी जीवन में बहुत–सी ऐसी अनुकरणीय घटनाएं घटती हैं, जिन्हें यदि दूरदर्शन के माध्यम से लोगों के सामने रखा जाए, तो उनके दिलो–दिमाग की जकड़न टूटेगी, और इससे एक मुश्किल समस्या के समाधान का रास्ता मिल सकेगा।

एक दूसरी बड़ी समस्या जनसंख्या की है। इसके साथ ही नारी के प्रति सम्मान की भावना, अधिकार और कर्तव्यों के प्रति जागरूकता तथा विधि के शासन के प्रति पूर्ण सम्मान की भावना भी वे बातें हैं, जिन्हें हमारे लोगों को बताया जाना चाहिए। यह ऐसा काम है, जिसे संस्थाओं, संचार–माध्यमों और सांस्कृतिक

केंद्रों को अपने-अपने स्तर पर करना चाहिए। मुझे लगता है कि यदि ऐसा हो सका, तो यह हमारे देश के लोगों के जीवन की बेहतरी के लिये वहुत ही सहायक सिद्ध होगा।

मैंने अभी आप के सामने दूरदर्शन के माध्यम से लोकजीवन के प्रगतिशील और मानवतावादी मूल्यों को उभारने की बात कही है। इसके अतिरिक्त मैं यह भी कहना चाहूँगा कि हमें यहीं तक सीमित नहीं रहना है। बाहर के भी ऐसे तत्वों को, जो हमारे जीवन-मूल्यों के अनुकूल हैं, और हमारे लिए एहमियत रखते हैं, उन्हें अपनाने में हमे हिचकना नहीं चाहिए। इस संदर्भ में मैं आपको महात्मा गाधी जी के उन शब्दों की आज याद दिलाना चाहूँगा, जो उन्होने 'यंग इंडिया' के दिनांक 1 जून, 1921 के अंक में लिखे थे, जो कि नई दिल्ली के प्रसारण भवन के मुख्य द्वार पर लिखे हुए हैं —

गांधी जी ने लिखा था —

> मैं नहीं चाहता कि मेरे घर में सभी दिशाओं में (वंदीगृह की-सी) दीवारें हो और मेरी खिड़कियां बंद रखी जाएं। मैं चाहता हूँ कि सास्कृतिक हवाएँ मेरे घर के अदर मुक्त रूप में प्रवेश और विचरण करें। लेकिन मुझे यह कतई स्वीकार नहीं कि उनके प्रभाव से मेरे पैर ही अपनी धुरी से उखड़ जाएं। . . मेरा ऐसा धर्म नहीं, जो मेरे घर को कैदखाना बना दे।

हमारे देश के प्रथम प्रधानमंत्री पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भी समन्वयात्मक सस्कृति की वात कही थी। मैं उनकी पुस्तक 'भारत की खोज' को इस समन्वयवादिता की ही खोज मानता हूँ। मैं समझता हूँ कि हमारे राष्ट्रीय नेताओं और चितकों द्वारा दिखाए गए ऐसे समन्वय के प्रकाश में यदि हमारे संचार माध्यम अपनी राह तलाशें, तो वे अपनी सही मजिल तक पहुँच सकेंगे। मुझे लगता है कि इससे न केवल हमारी संस्कृति समृद्ध होगी, वल्कि राष्ट्रीय एकता भी निश्चित रूप से और मजबूत होगी।

आज दूरदर्शन के कार्यक्रम हमारे देश की करीब तीन चौथाई आवादी तक पहुँच गए हैं। मुझे बताया गया है कि भोपाल का यह दूरदर्शन केंद्र भारतवर्ष का 22वां तथा देश के सबसे बड़े प्रदेश का पहला ऐसा केद्र है, जो अपने कार्यक्रम खुद तैयार करेगा। मैं आशा करता हूँ कि इस प्रदेश की विशालता को देखते हुए

ऐसे निर्माण केंद्र और भी खुलेगे। कार्यक्रम निर्माण केंद्रों की स्थापना का होना महत्वपूर्ण होता है, क्योंकि ऐसे केन्द्र लोगो की कलात्मक क्षमता को उभार कर उनकी आकांक्षाओं को पूरा कर सकते हैं। इस केंद्र से भी ऐसी ही आशा है।

मैं आशा करता हूँ कि भोपाल का यह दूरदर्शन केंद्र आने वाले समय में अपनी उच्च कल्पनाशक्ति और सृजनात्मक क्षमता के द्वारा मध्य देश की कला और सस्कृति के विकास में महत्वपूर्ण योगदान दे सकेगा। इसके साथ ही यह अपने शिक्षाप्रद एव सूचनापरक कार्यक्रमों के माध्यम से देश के सामाजिक और आर्थिक विकास में सहायक सिद्ध होगा।

पत्रकारिता का सही कार्य

जाने माने स्वतंत्रता सेनानी, गाधीवादी विद्वचारक, साहित्यकार और पत्रकार श्री अनन्त गोपाल शेवडे जी की स्मृति मे स्थापित ये पुरस्कार देते हुए मुझे प्रसन्नता हो रही है। मै आज पुरस्कृत किये गए सभी विद्वानो को बधाई देता हूँ। साथ ही यह कामना करता हूँ कि वे अपनी रचनात्मक सोच और लेखन द्वारा हमारे समाज मे नित नया जोड़ते रहेगे।

स्वर्गीय अनंत गोपाल शेवड़े जी से मैं परिचित रहा हूँ। उनके अन्दर देश प्रेम और साहित्य सेवा का एक जज़्बा था। स्वतंत्रता सेनानी के रूप में भारत छोड़ो आन्दोलन में उन्होंने सक्रिय रूप से भाग लिया था। देश को जल्दी से जल्दी आजाद देखने, तथा बाद में स्वतंत्र राष्ट्र का पुनर्निमार्ण करने के उद्देश्य से उन्होने कलम थामी थी। वे लगातार साहित्य और पत्रकारिता के माध्यम से अपने विचारो को व्यक्त करके समाज को एक रास्ता दिखाते रहे। 'भारत छोड़ो आदोलन' की पृष्ठभूमि पर आधारित उनके उपन्यास 'ज्वालामुखी' ने अपने समय के अनेक देशभक्तो को आंदोलित किया था।

हिन्दी भाषा के प्रति उनके मन में जो स्नेह था, उससे सारा देश परिचित है। अभी, जबकि कुछ ही दिन पूर्व मारिशस में चौथा विश्व हिन्दी सम्मेलन सम्पन्न हुआ है, शेवडे जी की याद आना स्वाभाविक है। सन् 1975 में प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन की परिकल्पना और आयोजन में उनका बहुत बड़ा हाथ था। यह एक सुखद सयोग रहा कि पहला सम्मेलन इसी नगर में हुआ था, और शेवडे जी उसके महासचिव थे। वे मराठी भाषी थे। किन्तु हिन्दी के प्रति उनमें गहरा अनुराग था। यह इस बात का प्रमाण है कि उनके दृष्टिकोण में राष्ट्रीय आवश्यकता और राष्ट्रीय हित सर्वोपरि था।

वैसे भी जहां तक मराठी भाषा का हिन्दी भाषा के साथ संबंध का सवाल है, यह काफी पुराना, गहरा और घनिष्ठ रहा है। महाराष्ट्र के नामदेव और एकनाथ जैसे संत कवियों ने मराठी के साथ-साथ हिन्दी मे भी पद लिखे थे। बाद में

श्री अनत गोपाल शेवडे स्मृति पुरस्कार प्रदान करते हुए, नागपुर, 11 दिसवर, 1993

जब भक्ति के स्थान पर वीर रस की कविताएं लिखी जाने लगीं, तब पोवाड़े लिखने वाले मराठी कवियों ने हिन्दी में कई युद्ध गीत लिखे। काका कालेलकर, पेडस्कर, धुलेकर, गोविन्दराव हार्डिकर, मुक्तिबोध, रामचन्द्र कानड़े, विनायक कृष्ण जोशी, डॉ प्रभाकर माचवे तथा रामकृष्ण लेले जैसे मराठी भाषियों ने हिन्दी में लेखन किया। खुशी की बात है कि यह परम्परा आज भी जारी है।

हिन्दी पत्रकारिता के क्षेत्र में तो मराठी भाषियों का बहुत ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। हिन्दी पत्रकारिता के 'भीष्मपितामह' कहे जाने वाले बाबूराव विष्णु पराड़कर मराठी भाषी थे। गोविन्द शास्त्री दुगवेकर, लक्ष्मीनारायण गर्दे तथा माधव राव सप्रे जैसे विद्वानों ने हिन्दी में पत्रकारिता की।

इतना ही नहीं बल्कि महाराष्ट्र में शुरू से लेकर आज तक हिन्दी पत्रों का प्रकाशन हो रहा है। प वामन बलीराम लाखे, पं. माधव राव सप्रे तथा पं. रामराव चिंचोलकर को नागपुर मे हिन्दी पत्रकारिता की नींव रखने का श्रेय प्राप्त है। नागपुर, वर्धा और पुणे तो शुरू से ही हिन्दी भाषा के प्रचार एवं प्रसार के केन्द्र रहे हैं। बापू ने राष्ट्रभाषा के काम को वर्धा से संचालित किया था।

मैंने इन बातों का उल्लेख केवल यह बताने के लिए किया है कि, विशेषकर महाराष्ट्र ने मराठी भाषा के विकास के साथ-साथ हिन्दी भाषा के राष्ट्रीय महत्व को बहुत अच्छी तरह समझा था, और उसमें अपना पूरा योगदान दिया। हमारे स्वतत्रता आन्दोलन के 'अग्नि पुरुष' लोकमान्य तिलक का मानना था कि राष्ट्रीय स्वाभिमान की दृष्टि से हिन्दी ही सबसे उपयुक्त सम्पर्क भाषा है। विनोबा जी कहते थे कि उनका सर्वोदय का आन्दोलन हिन्दी भाषा के कारण ही सफल हो सका।

इसलिए यह विशेष रूप से प्रसन्नता की बात है कि 'नागपुर टाइम्स' ने अहिन्दी भाषी साहित्यकारों को हिन्दी मे रचनाएं करने के लिए सम्मानित करने का निर्णय लिया है। इसे मैं महाराष्ट्र की परम्परा के सम्मान का प्रतीक मानता हूँ, और राष्ट्रीय हित के लिए किया गया एक ऐसा प्रयास मानता हूँ, जो शेवडे जी के चिंतन के अनुकूल है।

बापू, स्वामी दयानन्द सरस्वती, गुरुदेव रवीन्द्रनाथ टैगोर, सुभाषचन्द्र बोस तथा सुब्रह्मण्य भारती जैसे नाम इस बात के प्रमाण हैं कि हिंदी के प्रचार-प्रसार में अहिन्दी भाषियों का बहुत बड़ा योगदान रहा है। दक्षिण भारत के नवाबों के समय भी उसे प्रोत्साहन मिला था, जिसे 'दक्खिनी हिन्दी' कहा जाता है। इस परम्परा को निरंतर आगे बढ़ाने की जरूरत है। हिन्दी पूरे देश के लोगों को एक-

दूसरे से जोड़ने वाली भाषा है। इसलिए इसे मैं देश के प्रत्येक नागरिक का कर्तव्य मानता हूँ कि वे हिन्दी के विकास में अपना-अपना योगदान करें।

आज जिन विषयो के लिए ये पांचो पुरस्कार दिए गए हैं, हालांकि ऊपर से देखने पर वे अलग-अलग जरूर दिखाई पड़ते हैं, लेकिन अन्दर से वे सब एक मालूम पड़ते हैं। अपनी इस बात को मैं इस रूप मे रखना चाहूँगा कि भाषा से साहित्य का सृजन होता है, और व्यापक रूप में साहित्य के द्वारा विचार व्यक्त किए जाते हैं। वैसे भी जो हमारा प्राचीनतम् साहित्य है, वह मूलत: राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विचार ही है। यदि आचार्य कौटिल्य की बात ली जाए, तो हमे उनमें आश्चर्य-जनक रूप से एक अखण्डित सम्पूर्ण दृष्टि दिखाई पड़ती है। इसे मैं उनकी महान, समन्वित और दूरदृष्टि का परिणाम मानता हूँ कि उन्होंने राजनीति पर जो पुस्तक लिखी, उसे 'अर्थशास्त्र' का नाम दिया। केवल इतना ही नहीं, बल्कि इसे साहित्य के रूप में लिखा। यही है हमरी अखण्डित दृष्टि। इसी की झलक मुझे इन पुरस्कारों मे दिखाई पड़ती है।

मेरी तो यह मान्यता रही है कि जीवन का चाहे कोई भी क्षेत्र हो, हमारे पास विचारों की समृद्ध ऐतिहासिक विरासत है। चूंकि उसमे हमारे संस्कारों की जड़ें हैं, चूंकि उसमे हमारे विद्वानो का अखण्ड चिन्तन है, तथा चूंकि उसमें हमारे समाज के हजारों वर्षो का अनुभव छिपा हुआ है, इसलिए उसे वर्तमान में व्यवस्थित रूप से सामने लाया जाना चाहिए। इसके बाद यह देखा जाना चाहिए कि हमारे ये प्राचीनतम् मूल्य किस प्रकार से आज के लिए उपयोगी हो सकते हैं। मेरा यह मानना है कि प्राचीन और नवीन के मिश्रण से ही हमे सही दिशा मिल सकता है। वैसे भी 'नागपुर टाइम्स' और 'नागपुर पत्रिका' का आदर्श वाक्य ऋग्वेद की यह पंक्ति है— 'आ नो भद्रा. कृतवो यन्तु विश्वत·।' इसका अर्थ है 'अच्छे विचार चारों ओर से आने दो।' यह आदर्श वाक्य इस बात का प्रमाण है कि हमारे विचारको ने, और हमारी संस्कृति ने कभी भी अपने दिमाग और अपने घर के दरवाजे बन्द नहीं रखे। उनकी खिड़कियां हमेशा खुली रही थीं। मैं इसे एक बहुत बड़ा कारण मानता हूँ, जिसके कारण हमारे चिंतन और संस्कृति की हजारों वर्ष पुरानी परंपरा बिना किसी अवरोध के, अनेक दबावो के बावजूद लगातार, बनी रही है। हमें अपने विचारों की इस ताकत को पहचानना है। 'नागपुर टाइम्स' इस बात के लिए बधाई का पात्र है कि वह पुरस्कारों के माध्यम से राजनीतिक एव अर्थशास्त्र के

क्षेत्र मे हमारे प्राचीन एवं मौलिक चिंतन को प्रोत्साहित करने के लिए पुरस्कार दे रहा है।

स्वतत्रता आंदोलन मे पत्रकारिता हमारे नेताओ के लिए जनता तक अपनी बात पहुचाने का एक बड़ा जरिया थी। मुझे यह बात कहने में गर्व का अनुभव होता है कि हमारी भाषाई पत्रकारिता ने एक धारदार हथियार की तरह उपनिवेशवादी शक्ति का मुकाबला करके हमें आजादी दिलाने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हमारे राष्ट्रीय नेता पत्रकारिता की इस शक्ति से परिचित थे, और इसीलिए इस पर आश्चर्य नहीं किया जाना चाहिए कि उस समय के प्रमुख नेता पत्रकार भी थे, जो केवल पत्रकार थे, उनका भी मुख्य उद्देश्य देश को आजाद कराना ही था। बाबूराव विष्णु पराड़कर ने यह स्वीकार किया था कि ''मै कलकत्ता पत्रकार होने नही, देश को शीघ्र स्वतत्र देखने और क्रातिकारी समितियों के साथ कार्य करने के उद्देश्य से गया था।''

हमारे राष्ट्रीय नेता पत्रकारिता की शक्ति और उसकी उपयोगिता से अच्छी तरह परिचित थे। इसलिए आजादी के बाद जब संविधान बनाया गया, तो उसमें बिना किसी हिचक के सभी ने पत्रकारिता की स्वतत्रता की वकालत की, जिसके कारण संविधान के अनुच्छेद 19 में अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता को मौलिक अधिकारों के अतर्गत रखा गया। बाद में पं नेहरू ने तो अनेक बार पत्रकारिता के दायित्व और उसकी स्वतत्रता के महत्व का जिक्र किया है। तीन दिसम्बर, 1960 को अखिल भारतीय समाचार-पत्र सम्पादक सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए उन्होंने कहा था ''अखबारों की आजादी में दख़ल देना गलत होगा। दबाव डालकर आप किसी चीज को बदल नहीं सकते।'' पत्रकारिता की इस शक्ति की चर्चा करने के साथ ही पं नेहरू ने उसके दायित्व के बारे में बताया। इसी अवसर पर उन्होंने कहा — ''लेकिन जो आज़ादी उनके पास है, जो उन्हें मिली हुई है, यदि उनमें गैर-जिम्मेदारी बढ़ती है, तो इससे न केवल हर ओर से उनकी अपनी आजादी खतरे में पड़ती है, बल्कि उनकी अपनी साख को भी नुकसान पहुँचता है। हमारे पास हर तरह की आजादी होनी चाहिए, लेकिन इसके साथ ही अपने सामाजिक कार्यो मे कुछ मूल्यो के प्रति प्रतिबद्धता भी होनी चाहिए। इसमें हमारा प्रेस भी शामिल है।''

मैं समझता हूँ कि यह बहुत बड़ी बात पं नेहरू ने कही थी। आज जबकि हम आजाद हैं, और हम खुद ही अपने भाग्य के निर्माता हैं, तो यह जरूरी है

कि देश का प्रत्येक नागरिक रचनात्मक दृष्टिकोण के साथ राष्ट्रीय हित की भावना से काम करे। लोगों में यह चेतना पैदा करने की दृष्टि से हमारी पत्रकारिता महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है। इस बारे में बापू ने कहा था — ''पत्रकारिता का सही कार्य लोक चेतना को शिक्षित करना है, न कि उसे वांछित—अवांछित प्रभावों से भर देना। इसलिए पत्रकारों को स्वविवेक का उपयोग करना पड़ता है कि वे क्या रिपोर्ट करे और कब रिपोर्ट करें। इस प्रकार पत्रकार केवल सत्य तक सीमित नहीं रह सकता। पत्रकारिता 'घटनाओ का बुद्धिमत्तापूर्ण पूर्वानुमान' करने की कला बन गई है।''

बापू की इसी बात के साथ 'सत्यम् शिवम् सुन्दरम्' की बात जुड़ जाती है, जो हमारे कार्यो का मुख्य आधार रहा है। हमारी पत्रकारिता को और हमारे साहित्य को केवल सत्य ही नही लिखना है, बल्कि उसे इस तरह लिखना है, जो सुन्दर हो तथा लोगों के हित में भी हो। मैं समझता हूॅ कि यदि पत्रकारिता केवल शक्ति की भावना से प्रेरित होकर काम करेगी, तो उसमें कल्याण की भावना दब सकती है। लेकिन यदि वह इसके साथ-ही-साथ सेवा की भावना से प्रेरित होकर काम करेगी, तो उसमें शिवम् और सुन्दरम् की बात अपने आप आ जाएगी।

पत्रकारिता एवं लेखन का कुछ मुझे भी अनुभव है। मै तो यह मानता रहा हूँ कि यह शक्ति है तो सेवा भी है, स्वाभिमान है तो समर्पण भी है। इन दोनों के समन्वय से बना रास्ता ही सही रास्ता हो सकता है, जिस पर चल कर राष्ट्रीय पुनर्निर्माण की मंजिल तक पहुंचा जा सकता है। सन् 1975 मे इसी नगर में आयोजित प्रथम विश्व हिन्दी सम्मेलन के महासचिव के रूप में हिन्दी भापा के बारे में बोलते हुए श्री अनत गोपाल शेवडे ने कहा था — ''उसकी शक्ति का स्रोत आक्रमण नही समर्पण है, और जो शक्ति, भापा या संस्कृति समर्पण से काम करती है, उसके लिए क्षय नहीं, ह्रास नहीं, पराजय नहीं।' मैं समझता हूॅ कि यह एक महत्वपूर्ण बात शेवडे जी ने कही थी। इसे याद रखने की जरूरत है, और उसी भावना से काम करने की जरूरत है। मेरा विश्वास है कि भापा, साहित्य, पत्रकारिता और चिन्तन से जुड़े हुए लोग समाज कल्याण की भावना से प्रेरित होकर अपना-अपना बहुमूल्य योगदान करेंगे।

सिनेमा से सामाजिक परिवर्तन

41वें राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार वितरण समारोह में उपस्थित होकर मुझे प्रसन्नता है। सबसे पहले मैं आज उन सभी पुरस्कार विजेताओं को अपनी बधाई देता हूं जिन्होंने फिल्म के क्षेत्र में उल्लेखनीय काम किया है।

हमारे जीवन में फिल्म का महत्वपूर्ण स्थान है। इसमें कोई संदेह नहीं कि फिल्म मनोरंजन का सबसे बड़ा और लोकप्रिय माध्यम है। इसके साथ ही यह शिक्षा का प्रभावशाली माध्यम है, सामाजिक परिवर्तन का शक्तिशाली कारक है तथा जन संचार का महत्वपूर्ण उपकरण है। जैसे-जैसे हमारे देश में इलैक्ट्रानिक माध्यम फैल रहा है, वैसे-वैसे फिल्म का महत्व भी बढ़ रहा है।

मनोरंजन और सामाजिक सरोकार के बीच एक संतुलन बनाए रखना फिल्म उद्योग के लिए बहुत पहले से एक चुनौती रहा है। बिना सामाजिक सम्बद्धता के मनोरंजन व्यर्थ है। इसी प्रकार यदि बिना मनोरंजन के सामाजिक संदेश दिया जाता है, तो उस पर भी थोड़े से लोग ही ध्यान देंगे। सच तो यह है कि इन दोनों के बीच नाजुक संतुलन को बनाए रखना कोई सरल काम नहीं है। लेकिन यह समाज के हित के लिए बहुत जरूरी भी है।

किसी भी देश में फिल्म सामाजिक परिवर्तन को व्यक्त करता है। साथ ही समाज में परिवर्तन भी लाता है। फिल्म ने हमारे जीवन के पांच दशकों में राष्ट्रीय विकास में अपना योगदान दिया है। जैसे ही हम दुनिया के लिए अपनी खिड़कियाँ खोलते हैं, वैसे ही इसकी भूमिका और भी महत्वपूर्ण हो जाती है। आजकल हम अक्सर यह बहस सुनते हैं कि संचार माध्यमों का और मनोरंजन का अपने देश की संस्कृति से समुचित लगाव होना चाहिए। इस विषय पर अनेक दृष्टिकोणों के बीच यह बात साफ लगती है कि इस बारे में कोई भी धारणा बनाना आसान नहीं है।

हमारी फिल्मों से जुड़े लोग तकनीकी के विकास तथा अन्य संस्कृतियों से जुड़े फिल्म निर्माताओं के साथ काम करके लाभ उठा रहे हैं। आज उद्योगों

41वें राष्ट्रीय फिल्म पुरस्कार वितरण समारोह में, नई दिल्ली, 30 सितम्बर, 1994

में भी, और निजी जीवन में भी प्रतियोगिता बढ़ रही है तथा चुनाव करने के विकल्प भी बढ़ रहे हैं। इसी के साथ ही इस बात के प्रति भी चिन्ता व्यक्त की जा रही है कि फिल्मो मे वैसे जीवन मूल्यो को दिखाया जा रहा है, जो हमारी जीवन पद्धति से बिल्कुल अलग-थलग हैं। इन पर प्रतिबध लगाना इनकी बुराइयों से भी बदतर होगा। इसलिए एक परिपक्व फिल्म उद्योग को चाहिए कि वह अपनी इस सस्या को अपने आप पर नियंत्रण लगाकर हल करे। संतुलन और आत्म-नियंत्रण बहुवाद की सहज प्रवृत्ति होती है। एक ऐसा उद्योग जो कि लाखों लोगों की सोच को प्रभावित करता है, उसे चाहिए कि वह अपनी शक्ति और उत्तरदायित्व के बीच संतुलन स्थापित करे।

हमारा फिल्म उद्योग विभिन्न समाज और सस्कृति के साथ हमारे जुड़ाव को मजबूत करता है। इसीलिए विदेश में हमारी छवि दिखाने के लिए इसकी महत्वपूर्ण भूमिका बढ़ती जा रही है। फिल्म हमारे जीवन मूल्यो को दिखाता है, हमारी उपलब्धियों और कमियों को दिखाता है, तथा हमारी समस्याओं और गौरव को दिखाता है। यह माध्यम अपनी एक छोटी-सी झलक से स्थाई छाप छोड़ता है। इसलिए फिल्म निर्माताओं को यह सोचना चाहिए कि वे किस प्रकार भारत की समन्वयात्मक संस्कृति को अभिव्यक्त करने में अपना योगदान कर सकते हैं। हमारे यहां सस्कृति, भापा, क्षेत्र और जातियों की विविधता है, जो एक-दूसरे से मिलकर भारत को मजबूत बनाते हैं। आज फिल्म राष्ट्रीय एकता की सबसे जीवन्त शक्ति है। एक भापा में वनी फिल्म को सामान्यत· दूसरी भापाओं के दर्शकों द्वारा भी देखा जाता है। अभिनेता और अभिनेत्रियाँ अपनी भापा से हटकर दूसरी भाषा की फिल्मो मे भी अभिनय करते हैं। फिल्म संगीत ने हर तरह के संकीर्ण विभाजनों को पाट दिया है। हमारे फिल्म उद्योग में विभिन्न सस्कृति के लोग एक-दूसरे से मिलते हैं, और इस प्रकार भारत की एकता के चरित्र को व्यक्त करते हैं।

इस वर्प ये पुरस्कार देते हुए मुझे इस बात की विशेप रूप से प्रसन्नता है कि फिल्म का सर्वोच्च सम्मान दादा साहब फाल्के पुरस्कार श्री मजरूह सुल्तानपुरी को दिया गया है। मजरूह साहब हमारी समन्वयात्मक सस्कृति के मूर्त रूप हैं। वे पहले गीतकार हैं, जिन्हें यह पुरस्कार दिया गया है। उन्होने करीब 50 वर्ष पूर्व 'शाहजहॉ' फिल्म में अपने गीत लिखे थे। इसके बाद उन्होंने अनेक प्रभावशाली भजन, कव्वाली, लोरी, गजल और प्रेम-गीत लिखे। एक प्रतिष्ठित कवि के रूप में उन्होने फिल्म जगत की विभिन्न मांगों को ध्यान में रखते हुए अपनी गुणवत्ता

को बनाए रखा। अपनी संस्कृति से रस ग्रहण करके उन्होंने इस लोकप्रिय माध्यम को आधुनिक बनाने में सहायता दी। सचमुच उनका काम आने वाले गीतकारों के लिए एक उदाहरण है।

भाग 5

विज्ञान एवं टेक्नोलॉजी

विज्ञान मनुष्य की खुशहाली के लिए

इस अवसर पर मैं सी एस.आई आर के महानिदेशक तथा इस महान संस्थान से जुड़े सभी अन्य लोगो को अपनी बधाई देता हूं [illegible] मैं आज [illegible] परिपद् द्वारा पिछले 50 वर्षों से किए गए अमूल्य [illegible] की ओर से अपना आभार व्यक्त करता हू ।

वैज्ञानिक एवं औद्योगिक अनुसधान परिपद् [illegible] में बहुत बड़ी सहायता की है। यहा जिस तरह से प्रति [illegible] किया गया, कार्यक्रमों की योजना वनाकर उसे ला[illegible] प्राप्त किया गया, उससे हमारा देश भौतिक, बोद्धि[illegible] मजबूत हुआ है। इस वात को पूरी तरह से पहचानना [illegible] जरूरी है। मैं समझता हूं कि यह बात सबके लिए [illegible] के सदस्यों के लिए याद रखना आवश्यक है, क्योंकि इसा [illegible] मूल्य, लक्ष्य और सेवा उपयोगी और अर्थपूर्ण बनते है।

50 वर्प पूर्व 1942 में महाद्वीपीय सकट के दौरान ज[illegible] विज्ञान एवं तकनीक की शक्ति विध्वसात्मक थी, एक ऐसे स[illegible] गांधी द्वारा मानवाधिकार और गरिमा की रक्षा के लिए श[illegible] आंदोलन को बुरी तरह से कुचला जा रहा था, ऐसे कष्ट [illegible] में इस परिपद् की स्थापना हुई थी। उस समय यह एक छो[illegible] [illegible]का प्रकाश बढ़ता गया और देश को आगे ले जाने मे काम[illegible] इसकी स्थापना इस आशा के साथ की गई थी कि विज्ञान का [illegible]ारे देश को शाति-सम्पन्नता और सुख की दिशा मे आगे ले जाएगा

पंडित जवाहर लाल नेहरू के नेतृत्व तथा उन[illegible]पना और राष्ट्रीय आवश्यकताओ की उनकी संवेदनशील समझ के का[illegible] एस आई आर की भूमिका पर दूरगामी नीति अपनाई गई। परिपद् के रज[illegible]ती समारोह के समय

वैज्ञानिक एव औद्योगिक अनुसधान परिपद् के स्वर्ण जयती समारोह म, नई दिल्ली, 26 दिसम्बर, 1[illegible]

1968 में श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा था कि–

"आजादी की प्राप्ति के वाद मेरे पिता.... ने इसमें एक नई जान डाली और इसे राष्ट्रीय ऊर्जा और प्रगति का एक उपकरण वनाया।" पंडित जी ने स्वयं कहा था कि–"सरकार से जुड़ने के वाद से ही मैंने वैज्ञानिक कार्यों और अनुसंधान को प्रोत्साहन दिए जाने की आवश्यकता का अनुभव किया।... मेरी इच्छा हमेशा भारतीय लोगों तथा भारत सरकार की चेतना को वैज्ञानिक कार्यों के अनुकूल वनाने में रही है।" 'साइंटिफिक मैनपावर कमेटी' के गठन का उल्लेख करते हुए संविधान सभा में 17 फरवरी, 1948 को पंडित नेहरू ने कहा था कि

"हमें अपने यहां उपलब्ध वैज्ञानिक शक्तियों को महत्व देना होगा ताकि इसमें तेजी लाई जा सके। यह भविष्य की प्रगति की नींव के लिए सच्चा आधार है।" वे अपने–आपको 'विज्ञान का भक्त' ... थे। पंडित जी ने भारत सरकार द्वारा तैयार की गई वैज्ञानिक ... प्रस्ताव में अपनी इस कल्पना को व्यक्त किया था। उन्होंने ... कि इस ... सनसामयिक दस्तावेज को उन हर व्यक्तियों को ... पढ़ना चाहिए, जो राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के कार्य में लगे हुए ... उन्होंने कहा था कि–

केवल वैज्ञानिक समझ, और वैज्ञानिक ज्ञान द्वारा ही देश के हर आदमी की आवश्यकता के अनुसार भौतिक, सांस्कृतिक और आवश्यक सुविधाएं मुहैया कराई जा सकती हैं, और इसी के द्वारा कल्याणकारी राज्य के आदर्श को मूर्त रूप दिया जा सकता है।"

श्रीमती इंदिरा गांधी के विचार भी पंडित नेहरू से मेल खाते थे। थुम्बा के राकेट लांचिंग स्टेशन पर श्रीमती इंदिरा गांधी ने कहा था कि–

"देश के पुनर्निर्माण के लिए, गरीवी और अज्ञानता की जंजीरों से मुक्ति के लिए लोगों की वेहतरी के लिए वैज्ञानिक और टेक्नोलॉजी का प्रयोग किया जाना चाहिए। उन्होंने पूछा था कि विभिन्न लोगों के लिए विज्ञान का मतलव क्या है? उन्होंने वताया था कि–

"उद्योगपति के लिए विज्ञान का अर्थ है-उत्पादन में बढ़ोत्तरी। किसान इसे अपनी पैदावार में वृद्धि के उपकरण के रूप में देखता है, सामान्य नागरिक सोचता है कि विज्ञान उनके जीवन की कठिनाईयों को आसान बनाएगा।..मेरे लिए विज्ञान जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में गहरी समझ पैदा करने वाला है।"

हमारे देश के महान नेताओ के ये विचार महान वैज्ञानिकों के विचारो से मिलते हैं, जिन्होंने विज्ञान के क्षेत्र में इस अन्तर्राष्ट्रीय महत्व के सस्थान को विकसित किया है। पंडित नेहरू और इंदिरा गांधी के अतिरिक्त सर रामास्वामी मुदलियार, मौलाना अबुल कलाम आजाद, श्रीयुत श्री प्रकाश श्री लाल बहादुर शास्त्री जैसे महत्वपूर्ण लोग इससे सम्बद्ध रहे हैं। इसके अतिरिक्त महान वैज्ञानिक डॉ. शांतिस्वरूप भटनागर, डॉ के.एस कृष्णन नेशनल बॉटानिकल गार्डन, लखनऊ के डॉ. के.एन. कौल, डॉ हुसैन जहीर, डॉ आत्माराम आदि ख्याति प्राप्त वैज्ञानिक इससे जुड़े रहे हैं। इसके अतिरिक्त भी अनेक लोगो ने परिषद् के निर्माण में अपने-आपको लगाया। राजनेताओं तथा विज्ञान के क्षेत्र मे नेतृत्व करने वालों के बीच के अंतर्संबंधों को सर सी वी. रमन ने 'नेहरू-भटनागर प्रभाव' कहा था। सचमुच में सी.एस.आई आर के प्रथम निदेशक शांति स्वरूप भटनागर ने मौलाना आजाद के इन शब्दों को सिद्ध किया था कि-"प्रतिष्ठित वैज्ञानिक उसी क्षमता के साथ एक प्रशासक की भूमिका निभा सकता है।" विज्ञान के इस महान व्यक्ति ने इस क्षेत्र में ऐसे महत्वपूर्ण साधन जुटाए, जिसके कारण बाद में रामानुजम, जे.सी. बोस, एन.एन बोस, मेघनाद साहा और बीरबल साहनी जैसो ने अपना काम किया।

राष्ट्रीय महत्व के कार्यो को समर्पित यह परिषद् लगातार व्यापक और मजबूत होती रही है। परिषद् की शुरूआत 1947 मे दिल्ली विश्वविद्यालय कैम्पस में 'नेशनल कैमिकल' और 'नेशनल फिजीकल लैबोरेटरी' नामक केवल दो संस्थाओं की स्थापना से हुई थी। और आज इसी परिषद् के देश भर में फैले हुए 39 बड़ी प्रयोगशालाएं तथा 80 क्षेत्रीय केन्द्र हैं। अब इसका विस्तार क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला की तिरुअंनतपुरम से सी एस एन.सी.आर.आई., भावनगर तथा क्षेत्रीय अनुसंधान प्रयोगशाला, जम्मू से क्षेत्रीय प्रयोगशाला जोरहाट तक है। यहां इन प्रयोगशालाओं के नामों का विशेष उल्लेख इसीलिए किया गया है ताकि यह समझा जा सके कि इस परिषद् की राष्ट्रीय पहुंच कितनी है, और यह देश के सभी भागों में अपना कार्य कर रही है। यह गर्व की बात है कि आज इस संस्थान में वैज्ञानिक-

टेकनालॉजी के विभिन्न क्षेत्रों के करीब 7000 वैज्ञानिक काम कर रहे हैं। मैं अक्सर वैज्ञानिक क्षेत्रों में इन अनुसधानों की बात करता हूं, जिससे कि भविष्य के विकास की तकनीक प्राप्त हो सके। ये क्षेत्र सी एस आई.आर द्वारा ध्यान की माग करते है। ये क्षेत्र है–सुपर कंडक्टिविटी, जिससे ऊर्जा और परिवहन उद्योग मे क्रांति सकती है, पर्यावरण से जुड़ी समस्याएं, इकोलाजिकल संतुलन, हिन्द महासागर तलहटी से पौली–मैटालिक मोड्यूल्स निकाले जाने, अटार्कटिका अभियान, र और मोलेक्युलर बॉयलाजिकल अनुसंधान, दवाइयां, विशेपकर जीवन-दवाइयां, पैट्रोलियम पदार्थो के शोधन से जुड़ी प्रक्रिया, कृपि–रासायनिक, प्रसस्करण, आकाशीय तथा पदार्थ विज्ञान।

हमे इन उपलब्धियों और इन कार्यो पर गर्व है तथा ये हमारे देश के भौतिक त्र के विकास एवं आत्मनिर्भरता प्राप्त करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाएंगे। इसके साथ ही मानव की सेवा में लगे हुए भारत के वैज्ञानिकों को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर भी एक पहचान मिलेगी।

मुझे मालूम है कि सी एस आई आर अन्य ऐसे बहुत महत्वपूर्ण कामो मे लगा हुआ है, जिनका सबध भारत के लोगों के जीवन–स्तर का ऊचा उठाने, राष्ट्र संसाधनों का उपयोग करने, सूर्य, महासागर की धारा और लहरों से ऊर्जा उत्प करने, तथा बीमारी, गरीबी एवं अज्ञानता को समाप्त करने से है।

कन इसके अतिरिक्त हमारे देश के लोगों की बौद्धिक क्षमता तथा उनके वाताव से जुडे अन्य महत्वपूर्ण क्षेत्र हैं जिसमें आप अपनी बौद्धिकता के द्वारा महत्वपू योगदान कर सकते है। मेरा मतलब हमारे देश के बच्चों, युवाओ, विश्वविद्या तथा अन्य सभी लोगो में वैज्ञानिक चेतना पैदा करने से है। परिषद् के कार्यो का इस दिशा में सकारात्मक प्रभाव रहा है, लेकिन अभी और भी किए जाने की गुंजाइश है। पडित जी ने जिसे 'वैज्ञानिक चेतना' कहा था, वह अत्यत महत्वपूर्ण है। वे इस बात का अक्सर उल्लेख करते थे कि–"जीवन की समस्याओं के प्रति वैज्ञानिक समझ और वैज्ञानिक चेतना पैदा की जाए।" उन्होंने कहा था कि–"जब तक हम धीरे–धीरे वैज्ञानिक समझ के साथ काम करना शुरू नहीं करेंगे, तब तक चाहे जितनी भी तरक्की कर ले, वह पूरी तरह सही नही होगी। विज्ञान का मतलब किसी काम को करने का प्रशिक्षण प्राप्त कर लेना भर नही है, बल्कि सोचने के एक तरीके से भी है। यह अधिक महत्वपूर्ण है। यह असामान्य बात नही है कि एक कुशल वैज्ञानिक अपने ज्ञान के क्षेत्र से बाहर उतना अधिक

वैज्ञानिक न हो और अपने जीवन के अन्य पहलुओं मे वैज्ञानिक समझ का इस्तेमाल न कर रहा हो।"

मैं आप सबका ध्यान इस सच्चाई की ओर आकर्पित करना चाहूंगा कि इस बारे में भारत के संविधान के भाग-4 (ए) · अनुच्छेद 51-ए में प्रावधान है। इसके अर्न्तगत प्रत्येक नागरिक के मौलिक कर्त्तव्यो का उल्लेख करते हुए लोगों में वैज्ञानिक सोच, मानवता तथा सुधार की आत्मा पैदा करने की वात कही गई है। भारतीय लोगो मे वैज्ञानिक समझ पैदा करने के लिए सी एस आई आर द्वारा किए गए काम को कम करके नहीं आका जा सकता और मैं समझता हू आने वाले वर्षो में यह अपना और महत्त्वपूर्ण योगदान कर सकता है। लोगो मे वैज्ञानिक समझ पैदा करने, उनको उत्साहित करने तथा उन्हें वैज्ञानिक समझ के योग्य बनाने के प्रयास किए जाने चाहिए। यह भी कोशिश की जानी चाहिए कि उद्योग, कृपि, शिक्षा संस्थान आदि वैज्ञानिक चेतना, वैज्ञानिक समझ, वैज्ञानिक दृष्टिकोण तथा वैज्ञानिक साधनो को अपनाए और ये सब कार्य निजी, सामाजिक और राष्ट्रीय हित के लिए हो।

इस संदर्भ मे मुझे सी एस आई आर के भविष्य के उद्देश्य से जुड़ी अन्य उपलब्धियो का स्मरण हो रहा है। यह क्षेत्र आध्यात्म का है। मै उन लोगों में हूं, जो यह विश्वास करते है कि विज्ञान और आध्यात्मिकता एक-दूसरे से शुद्ध रूप से जुडे हुए हैं और मूलत दोनो के तत्व एक ही हैं। हमारे पास प्राचीन सोच की विरासत है, जिसमे इस परिकल्पना को बहुत सुन्दर तरीके से कहा गया है कि-"ज्ञानं विज्ञान च।" हमारी यह विचारधारा शताब्दियों से रही है और आदि शंकराचार्य और उनसे भी बहुत पहले महान विचारको द्वारा इसकी अभिव्यक्ति होती रही है। हमने विज्ञान को सत्य की खोज करने वाले के रूप में देखा है। हमारे यहा कहा गया है कि -"शास्त्र प्रयोजनम् तत्व दर्शनम।" और यह माना गया कि आत्मा और पदार्थ एक ही दिशा की ओर अग्रसर होते है। हमारे यहां विज्ञान के इस युग मे भी आध्यात्म की आतरिक शक्ति को महत्व दिया जाता है और विज्ञान पर मानवता की आध्यात्मिक चेतना के प्रभाव को स्वीकार किया जाता है। यह देखा जा सकता है कि जब कोई उच्च स्तर पर पहुंचकर मानवता की खुशहाली की भावना से परिचालित होने लगता है, तो उसे एक प्रकार का आत्मिक संतोप मिलता है। मै समझता हूं कि महान वैज्ञानिकों ने भी इस प्रकार के आश्चर्य का अनुभव किया है कि किस प्रकार प्रकृति के नियम अस्तित्व में

आते हैं, वे किस प्रकार काम करते हें, पदार्थ और शक्ति का रहस्य क्या है, जिनके कारण पदार्थ परिवर्तित होते है और उनका अस्तित्व बनता है। भारत का वैज्ञानिक समुदाय और वैज्ञानिक संस्थानो को आने वाले वर्पो में विज्ञान का मनुष्य की खुशहाली के लिए उपयोग किए जाने की दिशा मे महत्वपूर्ण भूमिका निभाना है।

इस प्रकार यहा तीन महत्वपूर्ण क्षेत्र हुए। ये क्षेत्र हैं-भौतिक, बौद्धिक और आध्यात्मिक। इन क्षेत्रों मे सी एस आई आर ने तथा वैज्ञानिक समुदाय ने महत्वपूर्ण योगदान किया है। ओर स्वाभाविक रूप से राष्ट्र भविष्य में उनसे और भी अधिक योगदान की अपेक्षा करता है।

मै आज यहां पुरस्कृत प्रत्येक वैज्ञानिक को अपनी बधाई देना चाहूगा। आप सबके सामने चुनौती से भरा काम है और मैं जानता हूं कि आप अपना कार्य सेवा भाव से करेंगे तथा अपनी क्षमता, ससाधन और ऊर्जा का उपयोग उन उद्देश्यों को प्राप्त करने मे करेंगे, जो हमे प्रिय हैं तथा हमारे राष्ट्रीय मूल्य तथा ऐतिहासिक सोच से प्रदीप्त हें।

हमे याद रखना चाहिए कि हमारे देश के लोगों की आवश्यकताओ, उनकी चिंताओं तथा इच्छाओ को पूरा करना है और सी एस आई आर जो भी कार्य करता है उसका केन्द्र बिन्दु यह ही होना चाहिए।

इस समय मुझे राष्ट्रपिता महात्मा गाधी द्वारा कहे गए शब्द याद आ रहे है। सन् 1947 के विज्ञान काग्रेस अधिवेशन में बापू ने कहा था कि-

''भूखे पुरुप और स्त्री के लिए सत्य का कोई अर्थ नहीं है। उसे भोजन चाहिए। भारत एक भूखा देश है और भूखे लाखो लोगों के सामने सत्य, ईश्वर तथा जीवन की अन्य अच्छी चीजो के बारे में बात करना उनका मजाक उडाना है। इसलिए विज्ञान को इन लाखो लोगों के बारे में सोचना है।''

यह 40 साल पहले उस समय की बात है जब कि देश उपनिवेशवाद से निकलकर जीवन की स्वतंत्रता की दहलीज पर खड़ा था, लेकिन उनके इन विचारो का महत्व आज भी उतना ही है। उनके इन शब्दों का मुझ पर बड़ा गहरा प्रभाव पड़ा था। इसलिए मैंने अनुभव किया था कि मुझे इस अवसर पर ये विचार आप सबके सामने रखने चाहिएं।

वैज्ञानिक और औद्योगिक अनुसंधान परिपद् तथा इससे जुड़े वैज्ञानिकों ने पचास वर्पो तक देश की उल्लेखनीय सेवा की है। मैं आने वाले वर्पो में उनकी लगातार सफलता के लिए प्रार्थना करता हूं।

आर्थिक विकास के लिए टेक्नोलॉजी

मुझे यह जानकर बड़ी खुशी हुई है कि राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् ने पिछले चार वर्षो में देश के विभिन्न भागो में 15 विज्ञान केन्द्र स्थापित किए हैं। मैं उन सभी को बधाई देता हूं जिन्होंने इस कार्य मे अपना योगदान किया है। इस प्रयोगशाला को चालू करने में आपको जो पूर्ण सफलता मिली है वह प्रशंसनीय है। आशा है इससे विज्ञान शिक्षा के औपचारिक तथा अनौपचारिक प्रयासों में मदद मिलेगी।

मुझे इस बात की भी बड़ी खुशी है कि राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् चार स्तरों-राष्ट्रीय, क्षेत्रीय, जिला और स्कूल स्तर पर कार्य कर रही है। कलकत्ता, बंगलौर, बम्बई और दिल्ली के राष्ट्रीय स्तर के केन्द्रों का उद्देश्य भारी इंजीनियरी, ऊर्जा, विश्व पर्यावरण, परमाणु विज्ञान, अंतरिक्ष अनुप्रयोग, माइक्रो इलैक्ट्रोनिक्स और बायो-टेक्नोलॉजी जैसे व्यापक और अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य वाले विषयो पर ध्यान केन्द्रित करते हैं। दूसरी ओर क्षेत्रीय और जिला स्तर के केन्द्रों का ध्यान कृषि, फसल विज्ञान, जन-स्वास्थ्य, पौष्टिक आहार, लघु उद्योग और पर्यावरण प्रबंध जैसी स्थानीय महत्व की दिन-प्रतिदिन की समस्याओं पर लगा रहता है। स्कूलों के विज्ञान केन्द्रों के दो उद्देश्य हैं-स्कूलो में विज्ञान शिक्षा के स्तर में सुधार करना और जन जागरण अभियान के अंग के रूप में समुदायिक विकास कार्यक्रम प्रारम्भ करना।

परिषद् अपने प्रसार कार्यक्रम को विज्ञान संग्रहालयों और केन्द्रों की चारदीवारी से बाहर निकालने के प्रयासों पर जो बल दे रही है वह निश्चय ही सराहनीय है। मुझे पता चला है कि बड़े आकार की बसों में चलते-फिरते संग्रहालय बनाए गए हैं जो दूर-दराज के गांवों में जाकर रोजमर्रा की देहाती जिंदगी से संबंध रखने वाले विषयों पर प्रदर्शनियां आयोजित कर रहे हैं। किसानों, भूमिहीन जनजातीय लोगों, गांवों की गृहणियों, स्कूली शिक्षा छोड़ चुके बच्चों, विकलांगों और कुटीर उद्योगों में काम करने वालों को जानकारी देने के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम चलाए

राष्ट्रीय विज्ञान संग्रहालय परिषद् कलकत्ता की केन्द्रीय अनुसंधान और प्रशिक्षण प्रयोगशाला का लोकार्पण करते हुए, कलकत्ता, 13 मार्च, 1993

जा रहे हैं। स्कूली बच्चो और विज्ञान अध्यापकों के लिए विज्ञान मेलों, विज्ञान-गोष्ठियों, प्राकृतिक-अध्ययन शिविरों, औद्योगिक प्रदर्शन, कम्प्यूटर प्रशिक्षण और [illegible] निर्माण व आकाश के अध्ययन जैसी रचनात्मक गतिविधियां संचालित की [illegible] है। इसके अलावा चलते-फिरते तारा मडलों से खगोल विज्ञान की जानकारी [illegible] प्रतियोगिता जैसे अनेक कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। दूसरी ओर [illegible]ओं, विज्ञान-नाटकों, लोकप्रिय प्रदर्शनियों तथा फिल्म और वीडियो [illegible] प्रदर्शन से जनता में विज्ञान आदोलन को बढ़ावा दिया जाता है। कुल [illegible] कहा जा सकता है कि इन प्रयासों से विज्ञान केन्द्रों के शैक्षिक कार्यक्रमों [illegible] कार्य क्षेत्र और दायरे को देशभर में बढ़ाने में मदद मिलेगी।

देश के आर्थिक विकास मे विज्ञान और टेक्नोलोजी की महत्वपूर्ण भूमिका [illegible]म सब भली-भाति परिचित हैं। इसके लिए शैक्षिक संस्थाओं, अनुसंधान तथा [illegible]नायन प्रयोगशालाओं, उद्योगों और क्षेत्रीय संगठनो को आपसी सहयोग से कार्य करना होगा। तभी जीवन-स्तर में सुधार और समाज में बदलाव लाने के लिए विज्ञान और टेक्नोलोजी का समुचित उपयोग सुनिश्चित हो सकेगा। विज्ञान सग्रहालय इस तरह की सभी संस्थाओं को सीधे जनता से जोड़कर समग्र विकास में योगदान करते हैं।

मुझे इस समय पंडित जवाहर लाल नेहरू की वह बात याद आ रही है जो उन्होंने जुलाई 1962 मे बगलौर मे विश्वेश्वरैया औद्योगिक और प्रौद्योगिकीय सग्रहालय के उद्घाटन के अवसर पर कही थी। उन्होने कहा था : "संग्रहालय को एक ऐसी जीवंत वस्तु होना चाहिए जो अतीत, वर्तमान और भविष्य के चित्र हमारी आखो के सामने उपस्थित कर दे। मैं ऐसे संग्रहालय को पसंद करूगा जो विज्ञान और टेक्नोलॉजी परिवहन, संचार और आधुनिक जीवन के लिए महत्वपूर्ण कई अन्य चीजो के विकास को प्रदर्शित करे।"

हमारे महान राष्ट्रीय नेताओ को देश के विकास के साधन के रूप में विज्ञान और टेक्नोलॉजी की भूमिका पर पूरा भरोसा था। उन्होंने भारत की भावी पीढ़ियो की सुरक्षा, प्रगति और खुशहाली की खातिर स्वतंत्रता आंदोलन के दौरान बेड़ियां पहन जेलों में दिन बिताए। वे चाहते थे कि भारत के बच्चों और नौजवानों का जीवन सुखी रहे।

देश के विज्ञान सग्रहालयों और विज्ञान केन्द्रो से नई पीढ़ी को वैज्ञानिक मनोवृत्ति और जिज्ञासा की भावना का विकास कर प्रगति के लिए आवश्यक संबल

जुटाने में मदद मिलती है। माता-पिता और अध्यापकों को चाहिए कि वे बच्चो को इन संग्रहालयों में अवश्य ले जाएं। पंडितजी ने 1961 में कहा था "मुझे इस बात की ज्यादा परवाह नहीं है कि कोई वयस्क संग्रहालयों को देखने आता है या नहीं, क्योंकि उसके मन में धारणाएं पहले ही बन चुकी होती हैं। कुछ और सीखने के काबिल भी वह हमेशा नहीं रहता, लेकिन बचपन और नौजवानी के दौर में जब व्यक्तित्व का विकास हो रहा होता है संग्रहालयों में जाकर सीखना बहुत जरूरी है। वहां वे जो चीजें देखेंगे उनका असर उनके मन पर पड़ेगा। मैं चाहता हूं कि संग्रहालयो के माध्यम से शिक्षा के इस पहलू का विकास किया जाना चाहिए।

लोग अक्सर वैज्ञानिक मनोवृत्ति का जिक्र करते हैं। हमें इसका पूरा मतलब जानना जरूरी है न सिर्फ आर्थिक विकास के लिए बल्कि सामाजिक विकास और भौतिक तथा आत्मिक उत्थान के लिए भी वैज्ञानिक मनोवृत्ति बहुत आवश्यक है।

वैज्ञानिक मनोवृत्ति का उपयोग प्रयोगशालाओ और तकनीकी संस्थाओं तक सीमित नहीं रहना चाहिए। हम जो वैज्ञानिक मनोवृत्ति और सूझबूझ उत्पन्न करना चाहते हैं उससे जीवन के हर क्षेत्र मे तर्क और युक्ति से कार्य लेना सीख सकेंगें इससे मानवीय समस्याओं, विशेप रूप से हमारे सोचने जीवन-जीने और समाज से संबंध बनाने में वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने में भी मदद मिलेगी।

जो अनिष्टकारी शक्तिया सकीर्ण दृष्टिकोण और दुर्भावना फैलाने की कोशिश कर रहीं हो तो समाज में संतुलन और सद्भाव की रक्षा के लिए विवेक और युक्ति से काम लेना जरूरी है। मजबूत और प्रगतिशील समाज को सुखी और खुशहाल बनाने के लिए वैज्ञानिक सोच का होना अनिवार्य है।

इस दृष्टि से विज्ञान और टेक्नोलोजी को समाज के सबसे निचले स्तर तक पहुंचाने के आप के प्रयास अत्यंत महत्वपूर्ण हैं। आप के संग्रहालय विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र मे समसामयिक उपलब्धियों की जानकारी युवा तथा वृद्ध सभी लोगों को देने के साथ-साथ भविष्य का चित्र भी प्रस्तुत करते हैं। वैज्ञानिक संस्थाओं और व्यापक जन समुदाय के बीच में संग्रहालय जीवंत सम्पर्क कायम करते हैं। इनके माध्यम से वैज्ञानिक अनुसंधान के फायदों को प्रयोगशालाओं से खेतों तथा ग्रामीण क्षेत्रों के लाखों गांवों में पहुंचाया जा सकता है। लेकिन आपके प्रयासों से एक और भी बड़ा फायदा हो रहा है, इनसे देश में वैज्ञानिक जानकारी के प्रसार, समाज में वैज्ञानिक मनोवृत्ति के निर्माण और युवा पीढ़ी के मन में

सृजनशीलता बढ़ाने मे भी सहायता मिलती है। नई–नई तरह की सहभागिता वाली प्रदर्शनियों तथा प्रस्तुतियो से आप नई पीढी को विज्ञान की राह में आगे बढ़ाने को प्रेरित कर सकते हैं। इससे विज्ञान एक जन आंदोलन बनेगा और हमारे समाज में तर्कबुद्धि तथा रचनात्मकता आएगी। यही हमारा लक्ष्य भी होना चाहिए।

अपने इन्हीं विचारो के साथ केन्द्रीय अनुसंधान और प्रशिक्षण प्रयोगशाला को राष्ट्र को समर्पित करते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। मुझे पूरा विश्वास है कि इस प्रयोगशाला से विज्ञान केन्द्र अभियान को तेज करने, विज्ञान साक्षरता बढ़ाने, देश में वैज्ञानिक मनोवृत्ति के व्यापक प्रसार और करोड़ों लोगों मे बेहतर भविष्य के लिए कार्य करने की प्रेरणा जगाने मे बड़ी मदद मिलेगी।

तकनीकी शिक्षा के खर्च में बढ़ोत्तरी

आपके संस्थान के वार्षिक दीक्षांत समारोह के इस विशेष अवसर पर यहा उपस्थित होकर मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। खड़गपुर आते हुए मुझे पंडित जी के वे शब्द याद आ रहे थे जो वह तकनीकी संस्थानो के लिए इस्तेमाल करते थे। इन्हे वह "नए जमाने के मंदिर" कहते थे, जो मुझे भी भारतीय प्रोद्योगिकी संस्थान के लिए वड़ा ही उपयुक्त नाम लगता है। ये संस्थान, इनके प्राध्यापक और विद्यार्थी तथा उनकी उपलब्धियां और योगदान आधुनिकता के प्रति राष्ट्र की ललक और उत्कृष्टता की दिशा में उसके प्रयासों का प्रतीक है। ये टेक्नोलॉजी संवंधी हमारी आकांक्षाओं को प्रतिविम्वित करते हैं। राष्ट्र को प्रगति की दिशा में अग्रसर करने के लिए प्रतिभाशाली लोगों को तैयार करने का उत्तरदायित्व इन पर है।

आज जो विद्यार्थी उपाधिया प्राप्त कर रहे हैं उनके सामने चुनौती भरे व्यवसाय की शानदार सम्भावनाए है। आपने आवश्यक योग्यता और क्षमता प्राप्त करने के साथ-साथ देश के अग्रणी प्रौद्योगिकी संस्थान मे शिक्षा प्राप्त करने का सौभाग्य भी प्राप्त किया है। आपने जिस तरह की उत्कृष्ट शिक्षा ग्रहण की है और आप पर जो संसाधन खर्च किए गए हैं, उसकी वरावरी देश में और किसी संस्थान से नहीं की जा सकती। इसलिए आपके लिए यही उचित होगा कि उत्कृष्ट शिक्षा ग्रहण करने का गौरव प्राप्त करने के वाद आप समाज के प्रति अधिक जिम्मेदारी भी निभाएं क्योंकि उसी की वजह से आपको यह उपाधि मिली है।

आज के युवा इंजीनियरों और प्रौद्योगिकी विदों को यह बात हमेशा अपने मन में रखनी चाहिए कि वे आदि काल से चली आ रही ज्ञान की गौरवशाली परम्परा के उत्तराधिकारी हैं। अनेक स्थानों पर खुदाई से पता चला है कि हजारों साल पहले हमारे पूर्वजो को स्थापत्य से लेकर तांवे और कांसे के इस्तेमाल तथा पहिएदार गाड़िया बनाने की जानकारी थी। चार हजार वर्ष पूर्व हमारे पूर्वज जहाज बनाने के लिए गोदियां बनाना जान चुके थे। हमारा प्राचीन साहित्य वहुत ऊंचे

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान खड़गपुर के दीक्षांत समारोह के अवसर पर, खड़गपुर, 16 जुलाई, 1994

दर्जे की वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक अवधारणों से भरा पड़ा है। उनके खगोल शास्त्रीय सिद्धांत, प्रकृति के नियम, पर्यावरण संबंधी सोच, तत्व की परमाणु सरंचना और दशमलव प्रणाली इसके कुछ उदाहरण हैं। वराहमिहिर, आर्य भट्ट और भास्कराचार्य ने गणित के क्षेत्र में जो योगदान किया है उससे उस जमाने में ज्ञान के विकास का पता चलता है। इतिहास की इस यात्रा में टेक्नोलॉजी का विकास भी स्वाभाविक रूप से होता रहा है। भारत ने इस क्षेत्र मे भरपूर योगदान किया है। वास्तुशिल्प और भवन निर्माण के क्षेत्र में प्रगति के साथ-साथ भारत सभ्य समाज के विकास में सहायक अन्य गतिविधियों के लिए भी प्रसिद्ध रहा है। यहां मेरा उद्देश्य अतीत का गुणगान करना नहीं है बल्कि मैं उस विरासत की याद दिलाना चाहता हूं जिसमें ज्ञान और जीवन में ज्ञान के उपयोग को समग्र रूप में देखने की परम्परा रही है। इसीलिए विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में भारत की देन किसी से कम नहीं है।

इसी बौद्धिक विरासत के बारे में प्राचीन सूक्तियो मे संक्षेप में बड़े सुन्दर शव्दों में कहा गया है कि :

विद्या वही है जो मनुष्य को गरीबी,
अज्ञानता और पूर्वाग्रहों से मुक्त करे।

राष्ट्रीय विज्ञान नीति वनाते समय स्वतत्र भारत के नेताओं ने इससे प्रेरणा ली। इस सवंध में पडितजी ने अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे वैज्ञानिक और शैक्षिक संस्थाओ की स्थापना को जनाकांक्षाओं के प्रति संवेदनशील समाज के निर्माण का आधार मानते थे। उनका यह भी विचार था कि इनके माध्यम से वे सामाजिक परिवर्तन लाए जा सकते हैं जिनकी लम्वे समय से प्रतीक्षा की जा रही है। 'भारत की खोज' में इन्होंने भारत को एक ऐसा देश माना है ''जहां वे सब चीजें इफरात में हैं जिनसे कोई देश समृद्ध वनता है। मगर इसके वावजूद यहां के लोग बेहद गरीव हैं।'' वे कहते हैं : ''भारत में संसाधनों के साथ-साथ ज्ञान, कौशल और तेजी से विकास की क्षमता भी मौजूद है। उसके पास सदियों से संचित आध्यात्मिक और सांस्कृतिक अनुभव है। वह वैज्ञानिक सिद्धातों तथा विज्ञान के अनुप्रयोग दोनों ही क्षेत्रो मे प्रगति कर सकता है और महान औद्योगिक राष्ट्र वन सकता है।'

पंडित जी की नजर मे भारत की समस्याओं का समाधान हमारी वैज्ञानिक क्षमताओं के विकास में निहित है क्योंकि ''अगर विज्ञान को विकास का मौका

दिया जाए तो इसकी प्रगति की कोई सीमा नहीं है।'' हमारे स्वाधीनता सेनानियों ने न सिर्फ ज्ञान के लिए देश को विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र मे आगे बढ़ाने का सपना देखा था बल्कि वे इसके व्यापक परिणामों को भी समझते थे। यह भारतीय प्रौद्योगिकी स्थान उस स्थान पर बनाया गया है जो कभी हमारे स्वाधीनता सेनानियों को नजरबंद करने का कैम्प हुआ करता था, इसलिए यह भारत के भविष्य की उनकी आशाओं और आकांक्षाओं का विशेप रूप से प्रतिनिधित्व करता है।

विज्ञान का नैतिक आधार होता है और इसका मूल्यांकन उस साध्य की कसौटी पर होना चाहिए जो इसका अभिप्रेत है। भारत मे हमे करोड़ों देशवासियो के जीवन-स्तर को ऊचा उठाने का काम पूरा करना है। मुझे विश्वास है कि इस गौरवशाली संस्था से निकलने के बाद आप मे से प्रत्येक, इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए उसी तरह के उत्साह और लगन से आगे बढ़ेगा जिससे इस प्रौद्योगिकी सस्थान की स्थापना हुई थी।

सौभाग्य से आपकी पीढ़ी अनेक बातों को बड़े सहज भाव से स्वीकार कर सकती है, जबकि हम ऐसा नहीं कर सकते, लेकिन आधुनिक भारत का निर्माण कठिन प्रयासो और भारी कीमत चुकाने के बाद ही सम्भव हो पाया है। दो शताब्दियो के औपनिवेशिक शासन और देश के विभाजन की मर्मातक पीड़ा झेलकर इस राष्ट्र ने जन्म लिया है।

हमने भारत को लोकतात्रिक आदर्शो पर आधारित एक ऐसा देश बनाने का संकल्प लिया है जो सामाजिक न्याय के प्रति वचनबद्ध हो और विभिन्न सांस्कृतियों के बीच मेलजोल और सद्भाव को प्रदर्शित करे। इसमें पृथकतावाद, अलगाववाद और कट्टरपन के लिए कोई स्थान नही है। इसी संदर्भ में पडित जी वैज्ञानिक मनोवृत्ति यानी जीवन की समस्याओं के प्रति वैज्ञानिक दृष्टिकोण अपनाने की बात करते थे। 1957 मे कलकत्ता में आयोजित विज्ञान काग्रेस मे दिए अपने भापण में उन्होंने इसकी परिभापा देते हुए कहा था :— ''बुनियादी तौर पर सहिण्णुता, विनम्रता और यह अहसास कि औरों के पास भी सत्य का कुछ अंश हो सकता है'' वैज्ञानिक मनोवृत्ति है। आज जब हमारे सामाजिक ताने-बाने पर संकीर्णता और असहष्णुता का जबरदस्त दबाव पड रहा है जो ऐसे मे आपकी जिम्मेदारी है कि आप ऐसी उदार दृष्टिकोण और व्यापक विचारधारा का विकास करे जो हमारे राष्ट्र की विविधतापूर्ण संस्कृति का आधार बने।

समाज में प्रवेश करने वाले विद्यार्थियों की हर पीढ़ी को नई समस्याओं से जूझना पड़ता है और उनका समाधान भी खोजना पड़ता है। भारत में चुनौतियो की कोई कमी नहीं है। वैज्ञानिक, दार्शनिक, वौद्धिक और टेक्नोलॉजी सबंधी अनेक चुनौतियां हमारे सामने हैं। इन चुनौतियों का स्वरूप राष्ट्र की स्थिति पर तो निर्भर रहता ही है, विश्व की घटनाओं का प्रभाव भी इन पर बढ़ता जा रहा है। विश्व में टेक्नोलॉजी सबधी बदलाव की रफ्तार इतनी तेज हो गई है कि आज कोई भी देश राजनीतिक या आर्थिक संरक्षणवाद की आड़ लेकर अपने आप को अलग-थलग नहीं रख सकता। हमें इस तथ्य से समझौता करना ही होगा। यूरोप में इस दशक के आरम्भ में हुए व्यापक राजनीतिक परिवर्तनों में सूचना टेक्नोलॉजी की जो भूमिका रही है उससे वढकर इसका कोई और उदाहरण नहीं हो सकता। आज हमारी दुनिया सिमट रही है, यह कहने के पीछे वास्तविक आधार है और आपके व्यवसाय पर तो यह वात खासतौर पर लागू होती है। अगर भारत विश्व मे टेक्नोलॉजी सबधी प्रगति का फायदा उठाना चाहता है और इस क्षेत्र में अपना योगदान करना चाहता है तो यह तभी सम्भव होगा, जब हम विश्व अर्थव्यवस्था और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र मे पूरे जोश और उत्साह से भागीदार वने।

विश्व अर्थव्यवस्था मे और भी बड़े पैमाने पर भागीदार बनने के बारे में हमारा फैसला एक ऐसा मुद्दा है जिस पर हल्के-फुल्के तरीके से विचार नहीं किया जाना चाहिए क्योकि यह करोड़ो लोगों की जिन्दगी और रोजी-रोटी का सवाल है। हमे अपनी क्षमताओ और कमजोरियो का निष्पक्ष मूल्यांकन करना होगा और समस्याओ के समूचित समाधान के लिए इनका पता लगाना होगा। चार दशक से लगातार जारी औद्योगिकरण और आर्थिक आयोजन के फलस्वरूप हमारी राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था ऐसी स्थिति में पहुंच गई है जिससे हम अपने पांवों पर खड़े हो सकते हैं। आज हम अन्य देशों से बराबरी के आधार पर सम्पर्क कायम कर सकते है। हमने बुनियादी उद्योग लगाए हैं और आवश्यक आधारभूत ढांचा विकसित किया है। निजी क्षेत्र को हमने इतना सुदृढ़ कर लिया है कि यह अधिक जिम्मेदारियां उठाने में सक्षम हो गया है। विदेश व्यापार में हम अपेक्षाकृत बेहतर स्थिति में हैं और इसका पूरा फायदा उटाया जाना चाहिए। प्रशिक्षित वैज्ञानिक श्रम शक्ति की दृष्टि से भारत विश्व का तीसरा देश है, जहां विज्ञान और टेक्नोलॉजी का रोजमर्रा की जिन्दगी पर प्रभाव बढ़ता जा रहा है। आज राष्ट्र में इतनी क्षमता, प्रतिभा और आत्मविश्वास है कि वह विश्व स्तर पर स्पर्धा में सक्षम है। हम इस क्षेत्र मे अपने

लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए चरणबद्ध तरीके से कदम उठा रहे हैं। आर्थिक उदारीकरण और सुधार की जिस नीति पर हम चल रहे हैं वह दरअसल इसी बात का उदाहरण है कि हम अब अपनी क्षमताओं को समझने लगे हैं। इस तरह हम आर्थिक, औद्योगिक और टेक्नोलॉजी की दृष्टि से परिपक्व हो चुके हैं और हमें इस तथ्य को स्वीकर करने को कोई झिझक नहीं होनी चाहिए। भारत अब और देशों का मोहताज नहीं है बल्कि वह दूसरो की मदद करने की स्थिति में है। आपको यह स्थिति विरासत मे मिली है और आप इसका बेहतरीन इस्तेमाल किस तरह करते है यह आपकी चुनौती है।

इसमें कोई सदेह नही कि प्रभुसत्ता सम्पन्न राष्ट्रों और प्रतिस्पर्धा हितो वाले इस विश्व में भूमंडलीकरण और वैज्ञानिक प्रगति के फायदो में सबकी बराबरी की भागीदारी एक आदर्श स्थिति है। लेकिन वैज्ञानिक और टेक्नोलॉजी का उपयोग आर्थिक और व्यवसायिक फायदो को ध्यान में रखकर ही किया जाता है। ऐसे मे इसके उपयोग से कुछ को फायदा और कुछ को नुकसान होना स्वाभाविक है। इसके अलावा टेक्नोलॉजी के सुरक्षा सबंधी पहलू भी होते है, जिससे इसके प्रसार और इसके फायदो के बंटवारे में भेदभाव हो सकता है। अपने पिछले अनुभवों से हमे पता है कि किस तरह अंतरिक्ष टेक्नोलॉजी, परमाणु ऊर्जा, संचार और कम्प्यूटर टेक्नोलॉजी के प्रसार को रोकने के लिए विश्व स्तर पर बाधाएं खड़ी करने की कोशिशें की गई हैं। इसका उद्देश्य दुनिया के अधिकाश देशो को इनके फायदो से वचित रखना है।

हमें इसी तरह की समस्याओं का सामना करना ही होगा। हालाकि हम विश्व के आर्थिक मामलों मे अपनी भागीदारी बढ़ाने को प्रयत्नशील हैं, लेकिन राष्ट्रीय स्तर पर विज्ञान और टेक्नोलॉजी के आधार को सुदृढ़ करने के हमारे संकल्प में जरा भी कमी नहीं आई है। इसी तरह,टेक्नोलॉजी सबंधी प्रतिबंधों की भेदभावपूर्ण व्यवस्था का विरोध करके अपनी राष्ट्रीय सुरक्षा को अक्षुण्ण रखने के लिए भी हम कृत संकल्प हैं। निश्चय ही, अपनी राष्ट्रीय क्षमताओं का विकास करके ही भारत विश्व मे अपनी आवाज बुलद कर सकेगा और अपने आदर्शो तथा सिद्धांतो के अनुरूप सबके लिए अच्छे भविष्य का निर्माण कर सकेगा।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान को देश के सामने उपस्थित भूमंडलीकरण की चुनौती का सामना करने में अग्रणी भूमिका निभानी चाहिए। आपका आदर्श वाक्य-''योग: कर्मसु कौशलम्''-राष्ट्रीय लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिए पूरी क्षमता से

काम करने के संकल्प का द्योतक है। प्रत्येक सस्थान अपने खास तरीके से विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग के फायदो को प्रदर्शित करता है। इन संस्थानो ने शैक्षिक सम्पर्क और आदान-प्रदान के लिए एक प्रणाली विकसित कर ली है। इनसे शिक्षा प्राप्त छात्र दुनिया के विभिन्न भागों में फैले हुए हैं और वे अपने संस्थानों से घनिष्ट संबंध बनाए रखते हैं। आज के बदले हुए हालात में इन सबंधों को और मजबूत करना बहुत जरूरी है तभी ये सस्थान दुनिया मे हो रही टेक्नोलॉजी संबंधी प्रगति के साथ कदम से कदम मिलाकर आगे बढ़ सकेगे। खुली अर्थव्यवस्था और अधिक स्पर्धा से वैज्ञानिक और प्रौद्योगिक संस्थानों के मूल्याकन के बेहतर मानदड कायम होंगे। नए ज्ञान के विकास मे उनका योगदान, नई खोज और आविष्कार की उनकी क्षमता और अपने समय की महत्वपूर्ण समस्याओं के समाधान में उनकी सार्थकता से ही इन संस्थानों की प्रतिष्ठा बढ़ेगी। विभिन्न विपयों के अध्ययन की सुविधा वाले भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थानों से शिक्षा प्राप्त विद्यार्थियों से इस संबंध में बड़ी आशाएं हैं। हमारे महान संत तिरुवल्लुवर ने अपने विश्व प्रसिद्ध ग्रंथ 'तिरुकुराल' में दो हजार साल से भी पहले जो कुछ कहा था आप लोगो को उसे हमेशा याद रखना चाहिए।

तिरुकुराल मे कहा गया है

''वे लोग महान है जो असाधारण उपलब्धियां प्राप्त करते हैं और जो नहीं कर पाते वे भी कम महान नहीं हैं।''

अनुसंधान और उत्पादन के बीच संबध आधुनिक अर्थव्यवस्था की विशेपता है। देश में टेक्नोलॉजी के क्षेत्र मे प्रगति से हमारी प्रतिस्पर्धा करने की क्षमता और बढ़ सकती है। उद्योगों को शैक्षिक सस्थाओं के विकास, विशेप रूप से इनके लिए धन जुटाने में मदद करनी चाहिए। भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान, वैज्ञानिक प्रयोगशालाओं और विश्वविद्यालयों को चदा देने वालो को करो मे 125 प्रतिशत तक की भारी छूट देने की हाल की नीति एक स्वागत योग्य कदम है। मुझे आशा है कि इससे देश में तकनीकी शिक्षा और अनुसंधान के क्षेत्र में और अधिक निवेश को बढ़ावा मिलेगा।

दीक्षांत समारोह के अवसर पर मै आधुनिक भारत के निर्माण में इस संस्थान और इसके उत्कृष्ट प्राध्यापको के योगदान की सराहना करता हूं। आज उपाधियां प्राप्त करने वालों को मैं शुभकामनाएं देता हू। आशा है कि अपने जीवन और व्यवसाय में वे इस संस्थान के आदर्शो के अनुरूप सिद्ध होंगे। मुझे यह भी विश्वास है कि प्रशिक्षित व्यवसायी के रूप में वे समाज के प्रति अपने दायित्व को पूरा करने

में कोई कसर नहीं छोड़ेंगे और अच्छे नागरिक बनने का प्रयास करेंगे। 35 वर्ष पूर्व आज ही की तरह के एक दीक्षांत समारोह मे मेरे पूर्ववर्ती डॉ. राजेन्द्र प्रसाद ने जो कुछ सलाह दी थी उसे यहां दोहराना बहुत ही उपयुक्त होगा। उन्होंने कहा था :

''यह नहीं भूलना चाहिए कि कर्त्तव्यों को ठीक से
पूरा करके ही अधिकार प्राप्त किए जा सकते हैं।''

अगर आप इसे जीवन का मार्गदर्शक सिद्धात वना लें तो बेहतर भारत के निर्माण में सफल हो सकेगे और आपको अपना कर्त्तव्य भली-भाति पूरा करने का संतोप भी मिलेगा।

स्वामी विवेकानंद के इस उद्बोध को हमेशा याद रखें :

''अपने ऊपर, अपने देश पर और ईश्वर पर विश्वास करो।''

पर्यावरण की रक्षा का आह्वान

आज हम उन व्यक्तियों और संगठनो को सम्मानित कर रहे हैं जिन्होंने देश में पर्यावरण में सुधार, वन लगाने और प्रदूषण नियंत्रण के क्षेत्र में महत्वपूर्ण योगदान किया है। इनमे से दो पुरस्कार इंदिरा जी के सम्मान में उनके नाम पर है। इदिरा जी ने देश-विदेश में पर्यावरण के बारे में जागरुकता बढ़ाने के लिए काफी कार्य किया। वृक्षारोपण को बढ़ावा देने और देश के कुछ गिने-चुने वर्षा वनो में से एक को बचाने के उद्देश्य से साइलेंट वैली परियोजना को बद कराने में उन्होने जो योगदान किया उसके बारे में हम सब भली-भांति जानते हैं। 1972 में स्टाकहोम में मानव विकास सम्मेलन मे इंदिरा जी ने पर्यावरण और विकास के संबंध के बारे में दुनिया का ध्यान आकृष्ट कराया था। पर्यावरण सरक्षण का गरीबी उन्मूलन तथा प्राकृतिक ससाधनो के उपयोग में दुनिया में पाई जाने वाली असमानताओ और पर्यावरण प्रदूषण से जो संबध है उसे उन्होंने रेखांकित किया। स्टाकहोम सम्मेलन के दो दशक बाद 1992 में रिओ के पृथ्वी सम्मेलन मे उनके दृष्टिकोण की प्रासगिकता सिद्ध हो गई। इसमें गरीबी उन्मूलन के कार्य को पर्यावरण सरक्षण की किसी भी नीति का महत्वपूर्ण पहलू बताया गया।

प्रदूषण नियत्रण के लिए राष्ट्रीय पुरस्कार उन औद्योगिक इकाइयो के प्रयासों को मान्यता देने और उन्हे प्रोत्साहित करने के लिए है जो प्रदूषण का स्तर सरकार द्वारा निर्धारित अनिवार्य न्यूनतम सीमा से भी कम कर लेती हैं। ऐसे स्वैच्छिक प्रयासों का प्रचार किया जाना चाहिए तथा औरों को इसका अनुसरण करना चाहिए।

पर्यावरण मे बिगाड़ अल्पविकसित होने की सबसे बड़ी निशानी है। भारत जैसे देश में जहा आबादी बहुत ज्यादा है और गरीबी की समस्या भी बड़ी गम्भीर है, अपने सीमित ससाधनो का इस्तेमाल करके अच्छे से अच्छे नतीजे निकालना हमारी सबसे बड़ी चुनौती हैं। विकास के मॉडल की तलाश करते वक्त हमें यह भी सीखना चाहिए कि प्राकृतिक संसाधनो को विनाश से कैसे बचाए। ऐसा करके ही हम खुशहाल समाज का निर्माण कर पाएंगे। हमारे देश के करोड़ों लोगो की

इदिरा गाधी पर्यावरण पुरस्कार और राष्ट्रीय प्रदूषण निवारण पुरस्कार प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 6 अगस्त, 1994

जीवन शैली सरल और पर्यावरण सरक्षण की दृष्टि से उपयुक्त रही है। आज जब हम आधुनिकता की ओर कदम बढ़ा रहे हैं तो हमें चाहिए कि अपनी परम्परा की इस अच्छाई को बरकरार रखे।

पर्यावरण संरक्षण के लिहाज से उपयुक्त, टिकाऊ विकास प्रक्रिया लोगों और उनकी भागीदारी पर आधारित है। इसमे दीर्घकालिक आधार पर उत्पादकता बढ़ाने और स्थानीय तथा विश्व दोनों ही स्तरों पर पर्यावरण के संरक्षण को बढ़ावा देने के लिए प्राकृतिक संसाधनों का आधार बढ़ाने की आवश्यकता पर जोर दिया गया है। इसमें आम लोगों, विशेष रूप से गरीबों को सबसे अधिक महत्त्व दिया जाता है और उनकी बुनियादी जरूरतों को पूरा करना इसका लक्ष्य होता है। यह लक्ष्य जनता की व्यापक स्तर पर भागीदारी से ही पूरा किया जा सकता है।

कहने का मतलब यह है कि पर्यावरण के बारे में चेतना समाज के सबसे निचले स्तर तक पहुंचनी चाहिए। इसे रोजमर्रा की जिंदगी का हिस्सा बनाने के लिए इसके आर्थिक लाभ भी दिखाई देने जरूरी हैं। एक नारे की बजाय, पर्यावरण संरक्षण हमारी आदत का एक भाग बन जाना चाहिए। पर्यावरण और वन मंत्रालय की जिम्मेदारी है कि वह लोगों मे पर्यावरण के बारे में जागरुकता पैदा करे। लेकिन मंत्रालय तो सिर्फ एक उत्प्रेरक ही है। सफलता प्राप्त करने के लिए इस महत्वपूर्ण कार्य में गैर-सरकारी संगठनों और प्रबुद्ध लोगों का सहयोग बहुत जरूरी है। गैर सरकारी संगठन और व्यक्ति जनता तक अधिक कारगर तरीके से पहुंच सकते हैं और साथ ही सरकारी कर्मचारियों व एजेंसियों के मुकाबले उनके माध्यम से पर्यावरण संरक्षण का सदेश पहुंचाने में कम लागत आती है।

पर्यावरण के बारे मे मनुष्य की चिता उतनी ही पुरानी है जितना स्वयं उसका अस्तित्व। 'अर्थववेद' के 'पृथ्वी सूक्त' में कहा गया है :

हे पवित्र पृथ्वी ! हम तुम्हारी भूमि का सही उपयोग करे।

तुम्हें बिना कोई क्षति पहुंचाए,

तुम्हारे किसी तत्व को अस्त-व्यस्त किए बिना।

मित्रों, हमे प्रगति की मृगमरीचिका का अंधानुकरण नहीं करना चाहिए क्योंकि इससे हमे अपूरणीय क्षति हो सकती है। हमें अपने राष्ट्रीय चरित्र के अनुसार ही विकास की रूपरेखा तैयार करनी होगी। ऐसा करके हम स्वयं अपने ऊपर विश्वास की पुष्टि करेंगे और अपने हितों की भी रक्षा कर पाएंगे।

बायो टेक्नोलॉजी का समुचित उपयोग

अंतर्राष्ट्रीय जैव-रसायन और आणविक जीव विज्ञान संघ के सोलहवें सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है। विश्व के विभिन्न भागो से आए सभी शीर्षस्थ वैज्ञानिकों का आज मैं अभिनंदन करता हूं। भारत मे इस सम्मेलन के आयोजन से देश में किए जा रहे वैज्ञानिक कार्यो की श्रेष्ठता को मान्यता मिली हैं। इससे स्वास्थ्य और बीमारी, खाद्यान्न और पोषाहार तथा टेक्नोलॉजी और पर्यावरण जैसी जटिल समस्याओं के समाधान के भारतीय वैज्ञानिकों के प्रयासों को निश्चित रूप से प्रोत्साहन मिलेगा।

भारतीय विज्ञान ज्ञान की हजारों वर्षो की समृद्ध परम्परा का उत्तराधिकारी है। दुनिया की प्राचीनतम सभ्यताओं में से एक होने के कारण हमारे लोगों ने कई टेक्नोलॉजी विकसित की है। गणित, धातुकर्म, औषधि और खगोली विज्ञान जैसे विभिन्न क्षेत्रों मे हमारे पूर्वजों ने सैद्धांतिक और व्यावहारिक दोनों ही रूप में जो व्यापक योगदान किया है वह आज भी प्रासंगिक बना हुआ है। लेकिन इतिहास के उतार-चढ़ाव में हम निष्क्रियता के एक ऐसे दौर में पहुंच गए थे जहा हमारी तंद्रा सिर्फ आधी सदी पहले भंग हुई। हमारे लिए इतिहास की नई शुरूआत हुई और हमने अपने आपको फिर से खोज निकाला। आजादी के समय गरीबी, निरक्षरता और बीमारी जैसी समस्याएं अत्यत जटिल थीं, लेकिन विज्ञान और टेक्नोलॉजी के क्षेत्र में निवेश के बारे में पूरी राष्ट्रीय सहमति थी। यह महसूस किया गया कि विज्ञान और टेक्नोलॉजी से ही विरासत में मिली समस्याओं को सुलझाया जा सकता है और भीषण गरीबी में फसे इस देश को खुशहाल बनाया जा सकता हे। आजादी के तुरन्त बाद का समय बड़ा ही स्फूर्तिदायी समय था जब अनेक महत्वकाक्षी कार्यक्रम शुरू किए गए। पंडित जवाहरलाल नेहरू ने भारत के भविष्य का जो सपना देखा था, उसमें हमें आगे बढ़ने की प्रेरणा दी। वैज्ञानिक और तकनीकी संस्थाओ के चहुंमुखी विकास के लिए भारत हमेशा उनका ऋणी रहेगा।

अन्तर्राष्ट्रीय जैव-रसायन और आणविक जीव विज्ञान सत्र के सोलहवे सम्मेलन का उद्घाटन करते हुए, नई दिल्ली, 18 सितम्बर, 1994

मार्च 1958 मे पंडित नेहरू द्वारा संसद में प्रस्तुत वैज्ञानिक नीति संबंधी प्रस्ताव में जो लक्ष्य निर्धारित किए गए थे उनका सारांश यह है : विज्ञान और वैज्ञानिक अनुसंधान के विकास को बढ़ावा देने वाली गतिविधियों को प्रोत्साहित करना, अनुसंधान में लगे वैज्ञानिकों को राष्ट्र की शक्ति के महत्वपूर्ण स्तम्भ के रूप में मान्यता देना, विज्ञान और शिक्षा तथा कृषि और उद्योग के क्षेत्र में देश की आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए वैज्ञानिक कार्यक्रमों को बढ़ावा देना, विज्ञान के क्षेत्र में प्रतिभावान लोगो को वैज्ञानिक गतिविधियों के लिए पूरा अवसर देना और यह सुनिश्चित करना कि देशवासियों को वैज्ञानिक जानकारी के जीवन में उपयोग का पूरा फायदा मिले।

आजादी के बाद के दशकों मे हमारी वैज्ञानिक और टेक्नोलॉजी संबंधी क्षमता का लगातार विकास हुआ है। देश के लोगों के कल्याण के क्षेत्र में इसका असर स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। हमने जो प्रगति की है उसका अनुमान देशवासियों की औसत आयु, साक्षरता और स्वास्थ्य के स्तर में हुए सुधार से लगाया जा सकता है। सबसे बड़ी बात तो यह है कि आज हम आजादी के समय के मुकाबले ढाई गुनी आबादी का भरण पोषण कर रहे हैं। आज विज्ञान और टेक्नोलॉजी के फायदों से लोगों को वंचित नहीं किया जा सकता। यही नहीं, अब यह बात और भी स्पष्ट होती जा रही है कि आर्थिक विकास और खुशहाली के लिए टेक्नोलॉजी ही असली ताकत है।

मानवता के कल्याण के लिए विज्ञान के उपयोग में बायो टेक्नोलॉजी की भूमिका लगातार बढ़ती जा रही है। जीन-टेक्नोलॉजी और उत्तक संवर्द्धन जैसी विधियों के जरिए आर्थिक और सामाजिक दृष्टि से उपयोगी उत्पाद प्राप्त हुए हैं। जीव कोशिकाओं के बारे में हमारे ज्ञान मे जो वृद्धि हुई है उससे मनुष्यों, पशुओं और पेड़-पौधों की बीमारियों के निदान, उपचार और रोकथाम की आधुनिक विधियों के विकास में सहायता ली जा रही है। ऐसे पेड़-पौधों का पता लगाया जा चुका है जो क्षारीय भूमि अथवा कम वर्षा वाले इलाकों में भी उगाए जा सकते हैं। महामारियों से अपनी रक्षा के लिए खुद ही जीवनाशक पदार्थ बायोसाइड बनाने वाले पौधो की हमें जानकारी है। कुछ ऐसे पेड़-पौधों और सूक्ष्म-जीवधारियों का भी पता लग चुका है जो वायुमंडल से नाइट्रोजन लेकर रासायनिक उर्वरकों की आवश्यकता कम कर सकते हैं। अब तो ऐसे सूक्ष्म जीवधारियों की बात सोची जाने लगी है जो मानव हारमोन इंसुलिन बना सकते हैं। इसी तरह आनुवंशिक

इंजीनियरी का इस्तेमाल करके रक्त से उपयोगी पदार्थ बनाना सम्भव हो गया है। अधिक दूध देने वाले दुधारु पशुओं की नस्ल के विकास मे भ्रूण-प्रतिरोपण टेक्नोलॉजी का सहारा लिया जा रहा है। आनुवंशिक इंजीनियरी से ऐसे सूक्ष्म जीवाणुओं का विकास किया जा चुका है जो जल-मल को साफ कर सकते हैं, समुद्र मे हुए तेल रिसाव को दूर कर सकते है और खनिज पदार्थो मे से धातु निकालने में मदद कर सकते हैं।

मानवता के सामने आज जो प्रमुख चुनौतियां हैं, उनमें से कई जैसे कृषि का विस्तार, औपधियों का विकास और पर्यावरण-सरक्षण आदि से निपटने के लिए बायो टेक्नोलॉजी बडी उपयोगी है। भारत जैसे देश के लिए ये राष्ट्रीय प्राथमिकताए है। जैव-रसायन और आणविक जीव विज्ञान से इनसे निपटने मे बडी मदद मिल सकती है।

अपने तीन दशक के अनुभव से हम कह सकते है कि बायो टेक्नोलॉजी से कृषि उत्पादन के क्षेत्र मे क्राति लाई जा सकती है। इसकी मदद से मनचाहे गुणो वाले ऐसे सकर बीजों का विकास किया जा सकता है जिन पर फसलों की बीमारियों और जलवायु का कोई प्रतिकूल असर नहीं होता और साथ ही पैदावार भी अधिक होती है। हमारे देश में जो हरित क्राति हुई है उससे परम्परागत उत्पादन प्रणालियो को सुदृढ करने और कृषि मे विविधता लाने में मदद मिली है। कीडे-मकोडो से सम्बन्धित जीव-रसायन शास्त्र की मदद से टिड्डियों, फलों के कीड़ो, और धान की फसल को नुकसान पहुचाने वाले कीडे-मकोड़ो की रोकथाम की सम्भावना बढ गई है। जीव रसायन शास्त्र के विकास के खाद्य पदार्थो जैसे बहु-उद्देश्यीय खाद्य पदार्थो से सम्बन्धित अनुसंधान पर भी महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ा है। आयुवैज्ञानिक जैव प्रौद्योगिकी ने भी अच्छी प्रगति की है, हालाकि जन सामान्य के जीवन में इसका प्रभाव इतना नाटकीय नहीं रहा है। कालाजार, हैजा, तपेदिक, पीलिया और मलेरिया के इलाज में नई सफलताएं मिली हैं। जहां तक पर्यावरण सबधी बायो टेक्नोलॉजी का सवाल है जीवाणु नाशकों और जैव उर्वरको के उत्पादन, कचरे के शोधन, औद्योगिक प्रदूपण की रोकथाम, उत्तक संवर्धन तकनीक से तेजी से बढने वाले वृक्ष तैयार करने और जैव विधि से खनिजों से धातुए निकालने में महत्वपूर्ण सफलताए मिली है।

टेक्नोलॉजी के फायदो के बारे मे हमारी जानकारी बढने के साथ ही इस क्षेत्र मे हुई प्रगति से यह जागरुकता भी आई है कि अगर पर्यावरण को हो रहे

नुकसान को रोकने के लिए उचित कदम नहीं उठाए गए तो इसे स्थायी नुकसान पहुंच सकता है। आर्थिक विकास और पर्यावरण संरक्षण अंततः एक-दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हैं। आज जब हम समाज के विकास की उपयुक्त नीति की बात करते हैं तो आमतौर पर यह बात स्वीकार की जाने लगी है कि इसे तकनीकी दृष्टि से मजबूत, सांस्कृतिक दृष्टि से अनुकूल तथा पर्यावरण की दृष्टि से उपयोगी होना चाहिए। वस्तुतः स्थायी विकास की धारणा में टेक्नोलॉजी के उपयोग की इन शर्तो को मान्यता दी गई है। बायो-टेक्नोलॉजी की विशेषता ही यही है कि यह उन शर्तो का पालन करती है जो हमारे अस्तित्व के लिए अनुकूल हैं। इसके साथ ही हमें भी जैव विविधता के समाप्त होने के खतरे और नई टेक्नोलॉजी के बड़े पैमाने पर इस्तेमाल के सामाजिक-आर्थिक परिणामो के प्रति संवेदनशील बनना चाहिए।

आप सब इस बात से सहमत होंगे कि हम धरती की इस विरासत के थोड़े समय के संरक्षक हैं। अगर हमारी गतिविधियां विवेकपूर्ण होंगी तो न सिर्फ इस विरासत की सुरक्षा होगी, बल्कि यह और समृद्ध होगी और अगर हमने विवेकपूर्ण तरीके से काम नहीं किया तो हम इसके विनाश का कारण बनेंगे। 'पृथ्वी सूक्त' मे, जो मनुष्य की प्राचीनतम रचनाओं में से एक माना जाता है, कामना की गई है।

ऊंचे-नीचे पहाड़ों और तरह-तरह के अनेक
पेड़-पौधों और वनस्पतियों से सम्पन्न यह पृथ्वी
समस्त मानवता और उसकी सम्पूर्ण विविधता का
इस तरह पोषण करे, जिससे वे एक-दूसरे के
विकास में सहायक बनकर पूर्ण तादात्म्य से समृद्धि की ओर बढ़े।

विविधता और सामंजस्य प्रकृति के लिए भी उतने ही आवश्यक हैं जितने इस धरती पर रहने वाले लोगों के लिए। हमारे दीर्घकालीन हितों की दृष्टि से दोनो को बढ़ावा दिया जाना चाहिए।

जीव रसायन शास्त्र से भारत का संबंध 1921 से रहा है जब बंगलौर के भारतीय विज्ञान संस्थान में इस विषय का विभाग खोला गया था। इस छोटी-सी शुरूआत के बाद से आज मेरे ख्याल से अस्सी विश्वविद्यालय और संस्थान जीव रसायन शास्त्र के विभिन्न पहलुओं पर अध्ययन और अनुसंधान कर रहे हैं और

करीव पचास प्रयोगशालाओं में आणविक जीव विज्ञान पर अनुसधान चल रहा है। नि·सदेह हमने मजवूत नींव तो डाल दी हैं, लेकिन इस पर भवन के निर्माण के लिए और वड़े पैमाने पर ससाधन लगाने होगे। हमारे जीवन को सुधारने में वायो-टेक्नोलॉजी की जबरदस्त सम्भावना को देखते हुए भारतीय उद्योगो को चाहिए कि वे इसे इस्तेमाल के वारे में विचार करें और मौलिक अनुसंधान में अधिक उदारता से निवेश करें। इसके साथ ही इस टेक्नोलॉजी के महत्त्व को देखते हुए सार्वजनिक नीति के तहत इसकी समीक्षा होती रहनी चाहिए और समुचित उपयोग के दिशा-निर्देश दिए जाने चाहिएं। बौद्धिक सम्पदा ओर पेटेंट संवंधी अधिकार वायो-टेक्नोलॉजी के प्रसार मे वाधक बन सकते है। मानवता के लिए वायो-टेक्नोलॉजी के इतने अधिक लाभ हैं कि इसे सकीर्ण व्यावसायिकता का शिकार नहीं होने दिया जाना चाहिए। इसलिए यह देखना हम सव की यह जिम्मेदारी है कि सदियों के विकास से प्राप्त ज्ञान का फायदा कुछ लोगो तक सीमित न रह जाए। इस सम्मेलन में आप वैज्ञानिक, आर्थिक, समाज शास्त्रीय और पर्यावरण सवधी पहलुओं सहित ऐसे अनेक विपयों पर विचार करेंगे, जिसका मानवता के कल्याण से घनिष्ट संवंध है। आप लोगों ने जो ज्ञान हासिल कर लिया है और जो आप आगे प्राप्त करना चाहते हे, उसमें मानवता के भविष्य को नया रूप देने की पूरी क्षमता है। प्रयासों के अपने ही फायदे हैं और इस संवंध में कुछ जिम्मेदारिया भी आप पर हैं। नि सदेह इन्हीं जिम्मेदारियों का अहसास आपको अपने भावी अनुसंधान मे दिशा-निर्देश देगा।

प्रकृति के साथ तालमेल

पहले राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण सम्मेलन के उद्‌घाटन और इंदिरा गांधी पर्यावरण संरक्षण निगरानी केन्द्र को राष्ट्र को समर्पित करने के लिए आपके बीच उपस्थित होकर आज मुझे बड़ी प्रसन्नता हो रही है।

प्रकृति के साथ तादात्म्य बनाकर जीने की आवश्यकता हमारे पूर्वजो ने अपनी अंत: चेतना से ही अनुभव कर ली थी। जब मनुष्य ने बस्तिया बसा कर रहना शुरू किया तो मन में उठने वाले विचारो को साज के रूप मे सचित किया जाने लगा। मानव के विकास मे पर्यावरण के महत्व के बारे मे उसकी चेतना का पता 'यजुर्वेद' से चलता है। इसके श्लोकों में मनुष्य के ब्रह्माड, आकाश, पृथ्वी, जल और वनस्पतियों से तालमेल बनाने की आवश्यकता का उल्लेख किया गया है।

पृथ्वी के संसाधनों पर मनुष्य का अधिकार अस्थायी है यह अहसास भी उसे बहुत पहले ही हो चुका था। इसी अहसास ने मानवीय गतिविधियो से धरती पर पड़ने वाले दुष्प्रभाव के बारे मे चिताओं को जन्म दिया। प्रकृति के बारे मे इस प्रारम्भिक संवेदनशीलता को हम आज की भापा में 'टिकाऊ जीवन शैली' कह सकते हैं। लेकिन औद्योगिक युग में विकास की ऐसी प्रक्रिया को बढ़ावा मिला जिससे हमारे पर्यावरण को जबरदस्त नुकसान पहुचा। यह माना जाने लगा कि श्रम शक्ति और प्राकृतिक संसाधन कभी खत्म होने वाले नहीं है। ससाधनों के अंधाधुंध इस्तेमाल से भारी बर्बादी हुई। इससे दुनिया दो हिस्सों में बंट गई। एक ओर धनी थे जिन्हें अपनी जीवन शैली से हो रहे नुकसान की जरा भी परवाह नहीं थी, तो दूसरी ओर निर्धन गरीबी के दलदल में इतने फंस चुके थे कि उन्हें अपने अस्तित्व की रक्षा की तात्कालिक आवश्यकता के अलावा और कुछ भी नहीं सूझता था। मगर हाल के दशकों मे पर्यावरण को हुए नुकसान को दुरस्त करने के बारे में जागरुकता बढ़ी है। धरती का तापमान बढने ओजोन परत के छीजन, जैव विविधता के कम होने और खत्म होते जा रहे वनो की वजह से मनुष्य को स्थिति की गम्भीरता का अहसास होने लगा है। 1972 का स्टाकहोम

प्रथम राष्ट्रीय पर्यावरण सरक्षण सम्मेलन के उद्‌घाटन के अवमर पर, नई दिल्ली, 21 नवम्बर, 1994

सम्मेलन और 1992 का रियो सम्मेलन इस संबध में जागरुकता बढ़ने की दिशा में मील के पत्थर साबित हुए हैं। आज पर्यावरण-संरक्षण और प्राकृतिक ससाधनों की रक्षा, विश्व की कार्यसूची के महत्वपूर्ण मुद्दे बन गए हैं। इस समस्या की ओर ध्यान आकृष्ट हो चुका है।, वक्त की पुकार यही है कि इसके उचित समाधान के लिए कार्यवाही की जाए।

1972 मे स्टाकहोम मे श्रीमती इदिरा गाधी ने अपने भाषण मे जो सवाल उठाया था वह इसी मुद्दे पर अन्तर्राष्ट्रीय बहस में छाया रहा। उन्होने पूछा था · "क्या गरीबी और अभाव प्रदूषण का सबसे बडा कारण नही है?" जनजातीय लोगो की दिन-प्रतिदिन की आवश्यकताओं का जिक्र करते हुए उन्होंने कहा था इन्हीं से मजबूर होकर वे जगली जानवरो का अवैध रूप से शिकार करते हैं और प्रकृति से छेड़छाड़ करते है।

"जब वे खुद को ही उपेक्षित मानते हैं तो ऐसे में हम उनसे वन्य जीवो के सरक्षण का आग्रह कैसे कर सकते है। गावो और झोपडपट्टियो मे रहने वालों से समुद्रो, नदियो और हवा को साफ रहने की बात कैसे कही जा सकती है, क्योकि उनकी तो खुद की जिन्दगी स्रोत पर ही प्रदूपित हो गई है।"

दुनिया को पर्यावरण सबधी समस्याओ के समाधान के लिए स्थायी विकास की धारणा को मन मे बिठाने मे स्टाकहोम सम्मेलन के बाद दो दशक लगे है। यह बात अब महसूस की जाने लगी है कि पर्यावरण की समस्या विश्व स्तर की समस्या है और इसके समाधान के छुट-पुट प्रयास निरर्थक हैं। जब तक पर्यावरण संबंधी जागरुकता विकास के बारे में हमारी सोच नही बन जाती, दुनिया के ससाधन छीजते रहेगे और दुनिया इस समस्या के समाधान के लिए व्यर्थ हाथ-पाव मारती रहेगी।

रियो शिखर सम्मेलन मे इन महत्वपूर्ण मसलो को हल करने के लिए दुनिया के सभी देशो के लिए साझा मगर अपनी अलग-अलग जिम्मेदारिया सौपने की आवश्यकता महसूस की गई। तभी से हम पर्याप्त संसाधन उपलब्ध कराए जाने के वायदे के पूरा होने की आशा लगाए हैं। प्रदूपण फैलाने की जिम्मेदारी तय करने के हमारे प्रयास जारी हैं। हम विकसित देशों को जो हमारे संसाधनों में से अधिकतर को हड़प जाते हैं। इन प्रतिबधों को स्वीकार करने को राजी कर रहे हैं। हम पर्यावरण की दृष्टि से उपयुक्त टेक्नोलॉजी तक पहुच आसान बनाने की आवश्यकता पर भी जोर दे रहे है। हालाकि इनमे से कोई भी लक्ष्य ऐसा

नहीं है जिसे आसानी से हासिल किया जा सके। फिर भी हमे अपनी खुद की हालत ठीक करनी होगी। ताकि विश्व के पर्यावरण को सुधारने का हमारा सकल्प पूरा हो सके।

लुप्तप्राय संसाधनों को फिर से उत्पन्न करने के उपाय करने के साथ ही हमारे पास जो कुछ बचा है उसकी सुरक्षा करना हमारी प्राथमिकता है। भारत जैसे विविधताओं वाले देश में इस काम के कई पहलू हैं। हमें जीव-जंतुओं और वनस्पतियों के व्यापक संरक्षण से शुरू करके लुप्तप्राय प्रजातियो की पहचान, वनों के मानचित्रण, सुरक्षित जीवमडलों के निर्माण और आर्दभूमि, कच्छीय वनस्पति और मूगे की चट्टानो के सरक्षण, वन्य जीवो को बचाने, प्रदूषण कम करने तथा जल ससाधनो की सफाई जैसे कार्य करने होगे।

ये लक्ष्य इस बात के प्रमाण हैं कि हमारे देश में मनुष्य के नाजुक अस्तित्व के बारे मे चेतना बढ रही है। इस जागरुकता से एक बहस उठ खडी हुई है और इस बहस से नई नीतियों और कार्यक्रमो को जन्म दिया है। राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण नीति, वन नीति मे परिवर्तन और प्रदूषण कम करने की योजना इस बात के गवाह हैं कि हम सही दिशा में आगे बढ़ रहे हैं। लेकिन हमने एक ऐसा काम हाथ मे लिया है जो बहुत ही जटिल और चुनौती भरा है। इसे पूरा करने के लिए हमें अपनी पूरी क्षमता, ससाधनों और संकल्प का उपयोग करना होगा। केवल सरकार के प्रयास इसके लिए काफी नहीं हैं।

पर्यावरण सरक्षण का लक्ष्य प्राप्त करने के लिए समाज के सभी वर्गो को इस कार्य मे भागीदार बनाना जरूरी है। टिकाऊ विकास को हमे अपनी जीवन शैली का अग बनाना होगा। प्रदूषण को न्यूनतम करना, बरबादी रोकना और फिर से काम न आ सकने वाले संसाधनो का सरक्षण न सिर्फ निजी बल्कि सार्वजनिक लक्ष्य बन जाने चाहिए। इस सदेश को जनता तक पहुचाने के लिए जनमत जुटाने की आवश्यकता है। भावी पीढ़ी मे इस बारे मे जागरुकता पैदा करने के लिए शिक्षा मे इसे

शामिल किया जाना चाहिए। जो कुछ किया जा सकता है उसके बारे मे लोगो को बताने के लिए इसे प्रदर्शन परियोजनाओ का रूप देना होगा जागरूकता बढ़ाने के लिए सार्वजनिक बहस भी जरूरी है। विभिन्न क्षेत्रों के विशेपज्ञों को उनकी अपनी-अपनी विशेपताओं के माध्यम से पर्यावरण सरक्षण के समग्र लक्ष्य प्राप्त करने के लिए प्रेरित किया जाना चाहिए। हमें अपने उद्योगो को भी

प्रदूषण के दुष्प्रभावो के बारे में जानकारी देनी होगी। उन्हें इस कार्य को सफल बनाने में ससाधन जुटाने के सामाजिक दायित्व को भी पूरा करना होगा। नगर नियोजकों को इसे अपने प्रयासों में शामिल करना चाहिए। हमारे गावों में स्वच्छता, गरीबी उन्मूलन और पर्यावरण संरक्षण के संबंधों पर जोर देने की आवश्यकता है। ऊर्जा के फिर से काम आ सकने वाले स्रोतों के इस्तेमाल को हमें अपनी आदत बना लेना चाहिए। हमारे देश में रेडियो और टेलीविजन प्रसारण का दायरा जिस तरह से वढ़ रहा है उसे देखते हुए इन माध्यमों का अधिक से अधिक उपयोग करना जरूरी है। गैर-सरकारी संगठनों की भूमिका भी अत्यंत महत्वपूर्ण है क्योंकि पर्यावरण संरक्षण का संदेश फैलाने के लिए जिस विश्वसनीयता, पहुँच और संकल्प की जरूरत है वह उनके पास है।

मुझे इस वात की विशेष खुशी है कि राष्ट्रीय पर्यावरण संरक्षण सम्मेलन का आयोजन पर्यावरण निगरानी केन्द्र को राष्ट्र को समर्पित करने के साथ-साथ ही किया है। मेरा विचार है कि यह केन्द्र पर्यावरण संरक्षण के विभिन्न कार्यक्रमो के लिए महत्वपूर्ण सूचनाएं उपलब्ध कराएगा। विभिन्न क्षेत्रों से सम्बन्धित आंकड़े एकत्र करके इसके पर्यावरण के क्षेत्र में एक प्रमुख राष्ट्रीय सेवा बन जाने की सम्भावना है। पर्यावरण-प्रबंध में सुधार, पर्यावरण-सरक्षण नीति को आधुनिक बनाने और पर्यावरण पर पड़ रहे प्रभाव के अध्ययन मे यह काफी महत्वपूर्ण सिद्ध होगा। इस केन्द्र का नाम इदिरा गाधी के नाम पर रखा गया है जो बहुत सही है। इंदिरा जी ने देश मे पर्यावरण सरक्षण के बारे में जागरुकता वढ़ाने के लिए बहुत कुछ किया।

पर्यावरण संरक्षण और इसकी सुरक्षा के कई पहलू हैं। मानव के विकास की दिशा में आगे बढ़े हर कदम से इसमें मदद मिल सकती है। जीवन स्तर में सुधार, स्वच्छ जल और सफाई की पक्की व्यवस्था, शिक्षा-प्रसार, स्वास्थ्य में सुधार और सूचनाओ तक पहुच वढ़ाने जैसे उपायों से पर्यावरण के बारे में हमारी संवेदनशीलता वढ़ सकती है और हमारे मानसिक क्षितिज का विस्तार हो सकता है।

इस साल हमने महात्मा गांधी की 125वीं जयंती मनाकर उनका स्मरण किया। उनके वहु आयामी व्यक्तित्व का जो एक पक्ष आपको प्रभावित करेगा वह है प्रकृति के प्रति उनका गहरा लगाव। बापू ने हमें औद्योगिकरण की संस्कृति के बारे में पहले ही आगाह कर दिया था। उन्होंने अप्रत्यक्ष उपयोग के बारे में भी चेतावनी

दे दी थी। उन्होंने ऊर्जा के फिर से काम में लाए जा सकने वाले स्रोतो, जैसे बायो गैस और कार्बनिक खाद के उपयोग का समर्थन किया। वह कागज का इस्तेमाल बहुत कम करते थे क्योकि वे जानते थे कि इससे हमारे वनों का बहुत विनाश होता है। उनकी सरल जीवन-शैली की हिमायत ही संरक्षण का आज का संदेश है।

भाग 6

रक्षा

वायुसेना : शांति की रक्षा का प्रतीक

मैं भारतीय वायुसेना के उन सभी जवानों को अपनी हार्दिक बधाई देता हू, जिन्होने हमारे देश की सुरक्षा प्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

यह हम सबके लिए स्वाभाविक ही है कि हम भारतीय वायुसेना के उन वीर देशभक्तों को पूरे सम्मान और श्रद्धा के साथ याद करे, जिन्होने हमारे देश की सेवा के लिए अपना सब कुछ कुर्बान कर दिया। उनके समर्पण, वीरता और कर्त्तव्य के प्रति निष्ठा ने भारतीय वायुसेना के लिए प्रेरणादायी परम्परा को बनाने मे सहायता की है, तथा अपनी क्षमता की पहचान भी प्राप्त की है।

शक्ति, कार्य-परायणता, शौर्य और समर्पण भारतीय वायुसेना की मुख्य पहचान है, जिसकी प्रशंसा हमारे लोग करते हैं तथा जिसे इस क्षेत्र के अन्य देशों में भी माना गया है।

भारत शाति का पक्षधर है, शांति के लिए कटिबद्ध है। शाति भारत के लि[illegible] आवश्यक है, हमारे क्षेत्र के अन्य देशो के लिए आवश्यक है, और सही तो [illegible] है कि यह विश्व के सभी देश के लोगो के लिए आवश्यक है।

भारतीय वायुसेना शांति की रक्षा और उसके पोपण के हमारे सकल्प प्रतीक है। यह हमारे राष्ट्र पर, हमारे मूल्य एवं राष्ट्रीय पुनर्निर्माण के उद्देश[illegible] जुड़े हमारे प्रयासों पर आने वाले बाहरी खतरों को रोकने तथा जरूरत [illegible] उसे समाप्त करने का भी प्रतीक है।

भारतीय वायुसेना का हमारे देश के आदर्शो की रक्षा एवं वि[illegible] शति और समझदारी के लिए हमारे सतत् प्रयासों मे बहुत बडा [illegible]

पिछले साठ वर्पो में, विशेपकर आजादी के बाद भारतीय [illegible]ुसना एक शिशु से दक्ष शक्ति के रूप में उभरी है। इसमें भारत के वे युवा शामिल है, जो शातिकाल में प्रशिक्षित किए गए है, तथा युद्धों में जिनका परीक्षण भी हो चुका है, जिसमें वे सफल रहे हैं। हमें अपनी रक्षा-प्रणाली और उपकरणो के संदर्भ में तकनीकी

भारतीय वायु सेना के हीरक जयती समारोह मे, नई दिल्ली 8 अक्तूबर, 1992

विकास के महत्व को समझना है तथा उसकी कार्यक्षमता को लगातार उन्नत बनाए रखना है। नई तकनीकी का अविष्कार अपने अनुरूप स्वीकारना, सन्निवेश तथा आत्मसातीकरण हमारी मूल आवश्यकताएं हैं। इसलिए संसद हमारे लोगों के जीवन की गुणवत्ता में सुधार के लिए राष्ट्रीय विकास के अन्य क्षेत्रों के साथ-ही-साथ भी जरूरत के अनुसार सोच-समझकर संसाधन उपलब्ध कराती है।

विदेशी कुप्रयासों के जरिए बार-बार आए संघर्ष के समय में भारतीय वायुसेना ने कार्यक्षमता को सिद्ध किया है, जिसके लिए वायुसेना के प्रति राष्ट्र कृतज्ञ ... उसने उसकी प्रशंसा की है। प्राकृतिक विपदा के समय में भी प्रभावित ... लोगों तक राहत पहुचाने के सरकार के प्रयासों में भारतीय वायुसेना ... अत्यत प्रशसनीय रहा है। सम्पूर्ण एकाग्रभाव से कर्त्तव्य का परिपूर्ण निर्वाह ... भारतीय वायुसेना से सीखा जा सकता है।

'... यत्कर्म नियतं क्रियतेर्जुन'

भ... वायुसेना का हीरक जयती राष्ट्र के लिए एक ऐसा अवसर है, जबकि उसके द्वा... गई तथा की जा रही सेवाओ के प्रति कृतज्ञता व्यक्त की जानी चाहिए। य... ऐसा अवसर भी है, जबकि इस महान सेना का प्रत्येक सदस्य उन पवित्र ... प्रति अपने आपको फिर से समर्पित करे, जो इसे दिए गए हैं, जो कार्य ... इसके विशेषाधिकार हैं, जो कार्य भारतीय वायुसेना करती रही है, और जिन्हे ... निपुणता के साथ करने के लिए इसे सुसज्जित किया गया है।

इस प्रभावश... परेड का निरीक्षण करके मुझे अत्यंत संतोष मिला है। जिस तालमेल और कौशल के साथ इस उच्च स्तरीय परेड का प्रदर्शन किया गया, उसके लिए मैं सभी सम्बद्ध जवानो को बधाई देता हूं।

मैं एक बार फिर से भारतीय वायुसेना के सभी सदस्यो तथा उनके परिवारो के प्रति अपनी बधाई और शुभकामनाएं व्यक्त करता हू। भारतीय वायुसेना दिन-प्रतिदिन और मजबूत हो, उसका शौर्य बढ़े, उसकी कार्य संचालन की क्षमता के स्तर में वृद्धि हो, राष्ट्र की सुरक्षा के प्रति वह और भी जागरूक हो, भारत के लोगों के विश्वास, प्रशंसा तथा महान परम्परा, एव उस महान कर्त्तव्य को हमेशा याद रखे, जो इसके मजबूत कधो पर है।

चौकसी जारी रहे

सिल्वर ट्रम्पेट और ट्रेम्पेट बैनर प्रदान करने के इस महत्वपूर्ण अवसर पर आपसे मुलाकात करके मुझे बड़ी खुशी हो रही है। इस परेड में सैनिको की आकर्षक वेशभूषा में उपस्थित होने के लिए मै आपको शुभकामनाए देता हू। हमारी सेना की वरिष्ठतम इकाई होने के कारण आपको महान परम्पराएं कायम रखने के लिए महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। साथ ही आपको मातृभूमि की सेवा मे व्यावसायिक योग्यता और कर्त्तव्यनिष्ठा के उच्चतम मानदंड कायम करने हैं।

इस यूनिट ने अपने साहस और शौर्य, देशभक्ति और धैर्य तथा आत्म-बलिदान और अनुशासन जैसे गुणो के लिए जो उत्कृष्टता हासिल की है उसकी यह सही हकदार है। यह दुनिया की एकमात्र यूनिट है जिसमे घुड़सवार, पैराट्रूपर, टैंकमैन और रस्मी ड्यूटी के लिए पूर्ण प्रशिक्षण दिया जाता है। महारथ हासिल करने की अपनी कोशिश में राष्ट्रपति के अंगरक्षकों ने एक खास दर्जा हासिल कर लिया है। देश की रक्षा के लिए यह यूनिट हमेशा मुस्तैद रही है। इस समय जब मैं आपसे बात कर रहा हूं तो शस्त्रों से सुसज्जित आपके कुछ बहादुर साथी कठिन और विपरीत परिस्थितियों में सीमाओ की रक्षा कर रहे है।

आपने अपनी देशभक्ति और वीरता से भारत राष्ट्र का स्नेह, आभार और सम्मान अर्जित कर लिया है। आपने हर परिस्थिति मे साहस का अपूर्व उदाहरण पेश किया है। जैसा कि पडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा है ·

"बहादुर बनो, बाकी सब कुछ आपको खुद मिल जाएगा।"

साहस, जो कई अन्य गुणो का आधार है और देश की एकता और शक्ति में पूर्ण निष्ठा, ऐसी खूबिया हैं जिनके हमारी सशस्त्र सेनाओं के प्रत्येक सैनिक में पाए जाने का देशवासियों को पूरा भरोसा है। मुझे पूरा यकीन है कि रणक्षेत्र में आपकी बहादुरी और दृढनिष्ठा से उन सबको प्रेरणा देता रहेगा जो आने वाले वर्षो में इस यूनिट में शामिल होगे।

राष्ट्रपति के अगरक्षको को सिल्वर ट्रम्पेट प्रदान करते हुए, नई दिल्ली, 10 अक्तूबर, 1993

शुरू से ही हमने शांतिपूर्ण सहअस्तित्व, आपसी सद्भाव और अपने पड़ोसियों तथा दुनिया के तमाम लोगों से सच्ची मित्रता जैसे मूल्यों को अपनाया है, लेकिन हम बड़े कठिन समय से गुजर रहे हैं और ऐसे में आपको अपने देश के सम्मान तथा क्षेत्रीय अखंडता की रक्षा के लिए हमेशा चौकस रहना होगा। आप में से प्रत्येक के लिए यह आवश्यक है कि आप अपनी व्यवसायिक क्षमता का विकास करें और उत्कृष्टता के ऊंचे से ऊंचे मानक कायम करने के अनवरत प्रयास में किसी को आड़े न आने दें।

मैं इसे अपना सौभाग्य मानता हूं कि मुझे अपने अंगरक्षकों के रूप में ऐसे शानदार लोगों वाली संस्था मिली है। आज आपको सिल्वर ट्रम्पेट और ट्रम्पेट बेनर प्रदान करते हुए मैं आने वाले समय में आपके सौभाग्य और सफलता की कामना करता हूं।

भारतीय वायुसेना की दक्षता

अम्वाला का हमारी सैन्य शक्ति के साथ लम्वा संवंध रहा है। मुझे वताया गया है कि यहा का हवाई केन्द्र देश का सवसे पुराना केन्द्र है। सन् 1965 और 1971 में अम्वाला पर आक्रमण हुए थे, जिनका सफलतापूर्वक जवाव दिया गया। आज यहां इन इकाइयों का सम्मान करके हम अम्वाला की आत्म-शक्ति और संकल्प-शक्ति का सम्मान कर रहे है।

पैराट्रूपर्स ट्रैनिंग स्कूल ने पिछले 53 वर्षो में युद्ध के समय और शांति के समय हमारे देश की महत्वपूर्ण सेवा की है। इसने अव तक पचास हजार से भी अधिक पैराट्रूपर्स को प्रशिक्षित किया हे। इससे करीव दस लाख वार लोग उतर चुके है। आजादी के वाद अनेक कामो में इस स्कूल ने प्रभावशाली कीर्तिमान वनाए हैं। इसने सन् 1965 मे वायु सुरक्षा सवधी अत्यत आवश्यक वस्तुए जोधपुर और जामनगर क्षेत्र में पहुंचाई थी। सन् 1971 मे इस ट्रेनिग स्कूल द्वारा प्रशिक्षित किए गए हमारे नौजवानों ने टंगेल पर आश्चर्यजनक आक्रमण का प्रदर्शन किया था। श्रीलंका में भी वहां भारतीय शांतिरक्षक सेना को लगातार संभार-तंत्र संबंधी सहयोग दिया था। इसने सन् 1988 में मालदीव की सरकार को सही समय पर दी गई सहायता में भाग लिया था।

आज पैराड्रोपिंग को सैन्य प्रशिक्षण का एक महत्वपूर्ण भाग माना जाता है। राष्ट्रपति के सभी अंगरक्षको के लिए इसमें सफलता प्राप्त करना अनिवार्य है।

पैराट्रूपर्स ट्रैनिंग स्कूल के लिए यह गौरव की वात है कि इसे अव तक दो शौर्य चक्र, 17 वायुसेना पदक, तीन विशिष्ट सेवा पदक और एयर स्टाफ के प्रमुख से 51 प्रशंसा-पत्र प्राप्त हुए हैं। इसने जहां युद्ध के समय अपनी वीरता का प्रदर्शन किया है, वहीं शाति के समय भी प्रशासन को अपना महत्वपूर्ण सहयोग दिया है। भोपाल मे गैस-दुर्घटना के समय तथा असम और बिहार में बाढ़ के समय भी इसने वचाव का महत्वपूर्ण काम किया था। विश्व के सबसे ऊंचे ड्रोपिंग

पैराट्रूपर्स ट्रेनिग स्कूल और भारतीय वायुसेना के 14वे स्क्वेड्रन को स्टैंडर्स प्रदान करते हुए, अम्वाला, 11 नवम्वर, 1994

जोन में पैराट्रूपर्स उतारना इसकी उत्कृष्टता की खोज का परिचायक है। इस इकाई ने आकाश गंगा स्काई डाइविंग टीम के रूप में रोमांचकारी खेलों को भी बढ़ावा दिया है। मैं समझता हूं कि इस पैराट्रूपर्स ट्रैनिंग स्कूल की जो भी साहसिक गतिविधियां हैं, वे इसके आदर्श वाक्य के अनुकूल हैं। इसका आदर्श वाक्य है- "महत्त्व कौशलं बलम्"

वायुसेना के 14वें स्क्वेड्रन की स्थापना सन् 1951 में इसी नगर में बिलकुल उपयुक्त स्वतन्त्रता दिवस को हुई थी। इसकी शुरूआत 'स्पिटफायर्स' विमान से हुई। बाद में सन् 1979 में इसमें जगुआर को शामिल किया गया। इसकी प्रथम पंक्ति स्क्वेड्रन हमारी वायुसेना की मारक क्षमता को दर्शाती है। 'फाइटिंग फोर्टीन' ने सन् 1962 में लद्दाख में सामान पहुंचाने से सुरक्षा संबंधी काम शुरू किया था। सन् 1965 में इसने वायु रक्षा के क्षेत्र में उल्लेखनीय काम किया। सन् 1971 में महत्वपूर्ण स्थानों पर हमला करके इसने पूर्वी क्षेत्र की रक्षा में प्रशंसनीय योगदान किया। बंगलादेश के जेस्सोर वायु क्षेत्र से उड़ान भरकर इसने एक नया इतिहास बनाया।

इस स्क्वेड्रन को अब तक अनेक सम्मान और पुरस्कार प्राप्त हुए हैं। इसे अब तक चार वीर चक्र, दो वायुसेना पदक और एयर स्टाफ के प्रमुख से 17 प्रशंसा-पत्र प्राप्त हुए हैं। यह इसके परिश्रम और शौर्य का प्रमाण है। इसकी दक्षता का अंदाजा इसी बात से लगाया जा सकता है कि तीन वर्षों तक लगातार इसे सर्वोत्तम लड़ाकू स्क्वेड्रन तथा उसके बाद इसे सूपरसोनिक लड़ाकू बमवर्षक स्क्वेड्रन माना गया। इनको जो प्रशिक्षण दिया जाता है, और इसकी जो क्षमता है, दोनों बातें इनके आदर्श वाक्य-"बलं जयाय", में दिखाई पड़ती हैं।

हमारी सेना की इन दोनों इकाइयों का सेवा और साहस का एक लम्बा इतिहास रहा है। इन्होंने कर्त्तव्यपरायणता और दक्षता के उच्च प्रतिमान स्थापित किए हैं। इनकी बढ़ती हुई क्षमता और इस बात का प्रमाण है कि पिछले वर्षों में हमारी सैन्य शक्ति कितनी अधिक कुशल हुई है। प्रथम पंक्ति की इकाई के रूप में इन दोनों ने अपना कर्त्तव्य अच्छी तरह निभाया है। इसी प्रकार इन्हें पूरी दक्षता और कुशलता के साथ तैयार रहना है।

आज हमारा देश समृद्धि और विकास की ओर आगे बढ़ रहा है। देश का आर्थिक विकास करना हमारी राष्ट्रीय प्राथमिकता है, लेकिन यह विकास तभी सम्भव

है, जबकि हम अपनी सुरक्षा के प्रति निश्चिंत हों। भारत शांति के लिए कटिबद्ध है। लेकिन यह शांति शक्ति और संकल्प पर आधारित है। राष्ट्रीय एकता को बढ़ाना और उसकी रक्षा करना, ये दोनों शाति के अभिन्न अंग हैं। हमारे रक्षा सैनिकों की जो क्षमता है, और उनमें जो उत्साह है, वह इस बात का प्रमाण है कि हम अपने हितों की रक्षा के लिए कृतसकल्प हैं। हम यह नही चाहते कि कोई हमारे इस संकल्प की परीक्षा ले। लेकिन यदि कभी जरूरत पडी, तो मुझे विश्वास है कि जैसा कि पहले हुआ है, ये इकाइयॉ तथा हमारी अन्य सेनाएं अपने देश के गौरव को बढ़ाएंगी।

आज स्टैंडर्स प्रदान किए जाने के इस अवसर पर मैं पैराट्रूपर्स ट्रेनिग स्कूल तथा 14 स्क्वेड्रन के सभी लोगों को अपनी बधाई देता हू। मैं आप सभी के परिवार के सदस्यों के प्रति अपनी शुभकामनाए व्यक्त करता हू, जिन्होने आप लोगों के सभी कामों में आपका साथ दिया है। आपने देश की जो सेवा की है, जो त्याग किए है, उसके लिए राष्ट्र आपका कृतज्ञ है।

चुनौतियों के राही

यह व्यवसाय देश की सेवा के प्रति समर्पण का व्यवसाय है। इसका निष्कर्ष राष्ट्रीय रक्षा अकादमी के आदर्श वाक्य 'सेवा परमोधर्म ' में निहित है। भारत रक्षा का महान दायित्व अब आपके कधों पर है। आप हमारी आस्था और ास हैं और देश को आपसे बड़ा स्नेह है।

तीन दिसम्बर का दिन हमारे सैन्य इतिहास मे बड़ा महत्वपूर्ण है। 23 साल हले आज के दिन भारत पर अकारण हमला हुआ था। हमारी सेनाओं ने इसके जवाब में बडी फुर्ती से निर्णायक कदम उठाया। उस दिन कई ऐसी घटनाएं हुई जिनसे हमारे उपमहाद्वीप का नक्शा ही बदल सकता था। हमारी सशस्त्र सेनाओं की तत्परता, क्षमता और हौसला भविष्य में किसी भी हमले के खिलाफ सबसे बड़ी सुरक्षा है।

19 मे अकादमी की आधारशिला रखते हुए पंडित नेहरू ने कहा था "अगर हा न हमे मजबूर करेगे तो हम तलवार भी उठा सकते है क्योकि ऐसा करने के अ ा कोई चारा नहीं है।" हमारी नीति आत्मरक्षा की है। हम शांति के लिए वच द्ध है मगर हम अपने महत्वपूर्ण हितों की रक्षा के सकल्प के बारे में कोई का उत्पन्न नहीं होने देंगे। जो हमारे सकल्प की परीक्षा करना चाहेगा, उसे ी ओर से बहुत बड़ी कीमत चुकानी होगी।

सैन्य अ नो मे अब सेना के तीनों अंगों का तालमेल बढता जा रहा है। दरअसल 19 मे हमे जो सफलता मिली थी वह तीनो सेनाओं के बीच कारगर तालमेल का ही नतीजा थी। यहा आपको एक साथ जो प्रशिक्षण दिया जाता है वह भाइचारे की शुरूआत है, जो आने वाले समय मे आपके बडे काम आएगा। इस संबध को ओर विस्तृत तथा सुदृढ़ बनाए।

भविष्य मे होने वाले युद्ध सैन्य टेक्नोलॉजी के कारगर इस्तेमाल पर निर्भर करेगे। राष्ट्रीय रक्षा अकादमी मे आपको जो प्रशिक्षण दिया गया है उसमें इस बात का ध्यान रखा गया है। साथ ही सैन्य टेक्नोलॉजी को आधुनिकतम बनाने के प्रयास

राष्ट्रीय रक्षा अकादमी खडगवासला के दीक्षात समारोह मे, खडगवासला, 3 दिसम्बर, 1994

भी किए जा रहे हैं। एक बार फिर मैं पडित जी के शब्द दोहराता हू : "किसी भी जीवंत राष्ट्र के लिए उत्साह और साहस का होना अनिवार्य है, लेकिन प्रशिक्षण, जानकारी और तकनीकी क्षमता भी आज की दुनिया में बड़ी जरूरी है।" हमारी शक्ति का दारोमदार आप पर है। इसलिए टेक्नोलॉजी में आपकी महारथ बड़ी जरुरी है।

अब सुरक्षा के लिए खतरे भी परम्परागत तरीके के नहीं रह गए हैं। हम भारत के लोग तो विदेशी उकसावे से फैले आतकवाद का लम्बे समय से सामना कर रहे हैं। सशस्त्र सेनाओ ने इस चुनौती का जो मुंहतोड़ जवाब दिया है वह सराहनीय है। ऐसा करके उन्होंने देश की अखडता की रक्षा के लिए राष्ट्र की कृतज्ञता अर्जित की है।

आप देश के विभिन्न भागों से इस अकादमी में आए हैं जो भारत की विविधता का एक उदाहरण है। इस पाठ्यक्रम को पूरा करने के बाद आप में से हर एक, अनुशासित प्रतिरक्षा सेना का अभिन्न भाग बन जाएगा। आपको जो प्रशिक्षण दिया गया है वह हमारी सशस्त्र सेनाओं की सबसे बडी खूबी राष्ट्रीय एकता की मिसाल है।

आप चुनौतियों और नए अवसरो वाले व्यवसाय की शुरूआत करने जा रहे हैं, ऐसे में, मैं आपको सारे देश के सहयोग और स्नेह का भरोसा दिलाता हूं। मेरी कामना है कि भगवान आपको सौभाग्यशाली बनाए और आपके सभी प्रयासों, सफलताओं और विजय अभियानो मे आपके साथ रहे।

देश की रक्षा में सेना

आज 16 दिसंबर का दिन हमारी सेना के इतिहास का एक महत्वपूर्ण दिन है। 23 साल पहले आज ही के दिन हम पर किए गए आक्रमण का सफलतापूर्वक अत हुआ था। और इस युद्ध की समाप्ति दूसरे विश्वयुद्ध के बाद से सबसे बडे शत्रु-सेना द्वारा समर्पण के साथ हुई थी।

71वे और 72वें आर्मर्ड रेजीमेंटो ने उस युद्ध में वीरतापूर्वक भाग लिया था। हालांकि उस समय दोनों का गठन हुए क्रमश· केवल 11 महीने और 5 महीने ही हुए थे, फिर भी युद्ध में उनका प्रदर्शन अत्यंत प्रशंसनीय रहा था।

71वें आर्मर्ड रेजीमेंट ने सफलतापूर्वक आक्रमण करके डेरा बाबा नानक एक्लेव पर कब्ज़ा किया था। ऐसा करके उसने हमारे शत्रु को अमृतसर और गुरुदासपुर की तरफ से आक्रमण करने की उनकी क्षमता को समाप्त कर दिया था। 72वे आर्मर्ड रेजीमेट ने गोलीबारी के मुठभेड में छब क्षेत्र में शत्रु के 32 टैंक नष्ट कर दिए थे।

हमारी मातृभूमि की रक्षा के लिए दोनों रेजीमेटो के अनेक जवानों ने अपना सर्वोच्च बलिदान किया। इन रेजीमेंटों ने बेटल और थियेटर ऑनर प्राप्त किये। इनके अधिकारियो और नौजवानो ने अनेक वीरता पुरस्कार प्राप्त किए, और उनका सैन्य-अभिलेख में उल्लेख हुआ। उनके प्रयास हमारी सेना के इतिहास में पूरे आदरभाव मे प्रतिष्ठित है।

अभी हमने जो परेड देखी, वह बहुत प्रभावशाली थी। आपको बेहतरीन सैन्य-वेशभूषा, ड्रिल की निपुणता तथा टैंको की परेड आपके रेजीमेंटों के दृढ़ आत्मविश्वास को दर्शाती है। इससे यह भी पता चलता है कि शाति या युद्ध के समय किसी भी दिए हुए काम को करने मे आप कितने सक्षम हैं। इन इकाइयों की उल्लेखनीय सेवा के लिए ये जो स्टेंडर्ड दिए जा रहे हैं, वे आप लोगों को

71वे एव 72वे आर्मर्ड रेजीमेंट को अलकृत- ध्वज प्रदान किये जाने के अवसर पर, सूरतगढ (राजस्थान) 16 दिसम्बर, 1994

यश की नई उचाईयों को प्राप्त करने, तथा अपने-अपने आदर्श वाक्यो शत्रुनाश एव 'विवेक वीरता विजय' के अनुकूल कार्य करने को प्रेरित करेंगे।

भारत शांति का देश है। यह अपने सभी पड़ोसी देशो के साथ मित्रता का हाथ बढ़ाता है। यह शांति हमारी राष्ट्रीय अखडता तथा महत्वपूर्ण हितो की रक्षा के लिए हमारे दृढ संकल्प पर आधारित है। हमारे विरुद्ध एक अलग तरह का युद्ध छेड़ा गया है। यह युद्ध आतंकवाद का है। इसके प्रति हमारा रुख कठोर और दृढ़ होना चाहिए। यह जरूरी है कि हमारी रक्षा सेनाएँ, विशेपकर इस क्षेत्र की टुकड़ियॉ हमेशा सतर्क रहे। मुझे पूरा विश्वास है कि जब कर्तव्य की पुकार होगी, तब 71वे और 72वें आर्मर्ड रेजीमेंट पथ प्रदर्शन करेगी।

भाग 7

भारत और विश्व

स्थापना के लिए प्रयत्नरत्त है, जहा कि विकास का लाभ बिना किसी जाति, धर्म और नस्ल के भेदभाव के सभी को स्वतत्र रूप से मिल सके। हम इन आदर्शो और उद्देश्यो को प्राप्त करने मे ब्रूनेई दारुस्सलाम के रचनात्मक सहयोग की अपेक्षा करते हैं। यहां इस समय हमारे भूतपूर्व प्रधानमत्री स्व राजीव गाधी तथा महामहिम ... नासाउ (1985) में हुए कॉमनवेल्थ सम्मेलन तथा ओमान (1986) और ... (1987) में हुई वार्ता को याद करना प्रासंगिक होगा।

इस प्रकार के बहुक्षेत्रीय सभाओं के साथ-साथ दोनो देशों के बीच पारस्परिक ... भी अनेक अच्छे अवसर हैं। ब्रूनेई दारुस्सलाम विश्व में तेजी से आगे ... गतिशील देशो मे से एक है।

... कि आप जानते हैं भारत का हमेशा से ही एशियन क्षेत्र के देशों से ... संबध रहा हे। एशियन ग्रुप के देशो के साथ "क्षेत्रीय सवाद सहयोगी" के ... का औपचारिक सबंध रहा है और इसलिए उसमे उत्साहपूर्ण उ... हमारा विश्वास है कि इस प्रकार के सवादो से भारत और ब्रूनेई दारुस्सलाम ... नजदीकी संबंधों में वृद्धि होगी।

... ज्ञानिक तथा औद्योगिक-तकनीक के क्षेत्र में उच्च विशेपज्ञता प्राप्त की है। ... विभिन्न क्षेत्रो में दक्ष एव कुशल लोग है। हमारे तकनीकी विशेपज्ञ ... इंडोनेशिया, थाईलैंड और फिलीपीन्स जैसे दक्षिण-पूर्वी एशियाई देशों मे सम् ... के प्रवध मे लगे हुए हैं। आपके निर्देशन में ब्रूनेई दारुस्सलाम मे चल रही विकास की प्रक्रिया में हमें अपने ऐसे अनुभवो का योगदान करके प्रसन्नता होगी। ऐसा सहयोग की भावना तथा उन पारम्परिक संबंधों के आधार पर होगा, जो दोनो देशो के लोगो को जोड़ते हैं।

भारत सरकार द्वारा ..., उद्योग तथा विदेशी निवेश के क्षेत्र में हाल ही में किए गये सुधारों ने भारत और ब्रूनेई दारुस्सलाम के बीच आर्थिक सहयोग के क्षेत्र में नये द्वार खोले है। हमे आशा है कि केवल सरकारी सस्थाए ही नहीं बल्कि दोनों देशों के निजी ... भी इन प्राप्त अवसरो में भाग लेंगे, और इस प्रकार दोनों देशों के आर्थिक सहयोग को अर्थपूर्ण और महत्वपूर्ण बनाएगे।

हम दोनों देशो के लोग ... क लाभ के लिए सहयोग के क्षेत्र को विकसित करेंगे एवं नये क्षेत्रो की तलाश करेंगे। हम चाहते हैं कि पारस्परिक हितों से संबधित अंतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय महत्व के प्रश्नो पर अंतर्सबंध एवं संवाद बढ़े तथा हम इस क्षेत्र में संपन्नता, उन्नति, शाति और स्थिरता के लिए काम करें।

श्रीलंका के राष्ट्रपति श्री रणसिंघे प्रेमदासा के सम्मान मे आयोजित रात्रि भोज मे,
नई दिल्ली, 1 अक्तूबर, 1992

भूटान नरेश श्री जिग्मे सिंघे वांगचुक का स्वागत करते हुए, नई दिल्ली, 4 जनवरी, 1993

रूसी परिसंघ के राष्ट्रपति बोरिस निकोलेविच येलत्सिन, श्रीमती नैना येलत्सिन के साथ प्रसन्न मुद्रा मे, नई दिल्ली, 28 जनवरी, 1993

माल्दोवा गणराज्य के राष्ट्रपति श्री मिर्च्या योन स्नेगुर के साथ, नई दिल्ली, 17 मार्च, 1993

मारीशस गणराज्य के राष्ट्रपति श्री कासम उतीम तथा श्रीमती उतीम के साथ,
नई दिल्ली, 2 अप्रैल, 1993
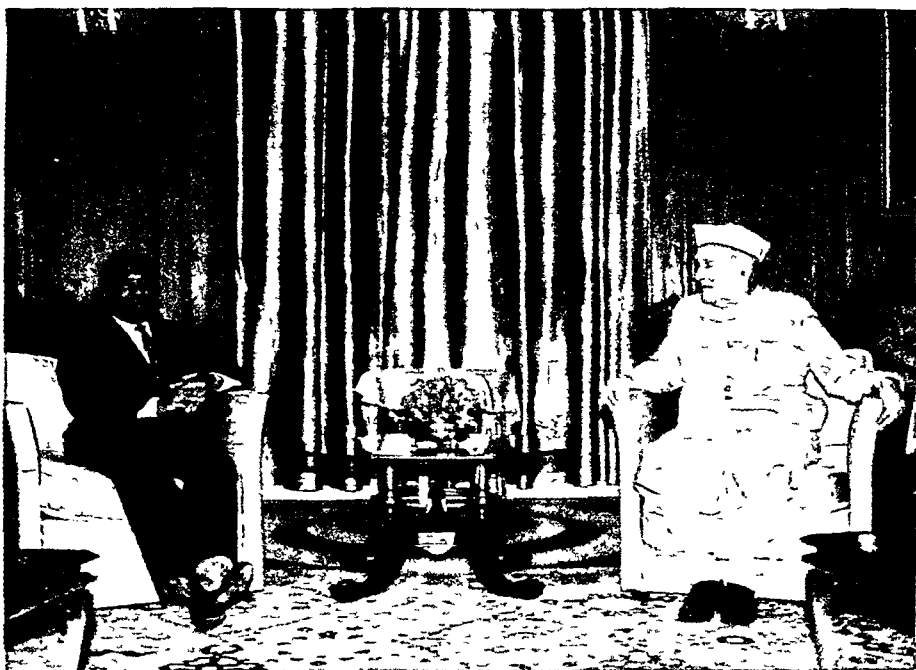
तंजानिया संयुक्त गणराज्य के राष्ट्रपति श्री अली हसन मुवीनी से बातचीत करते हुए,
नई दिल्ली, 10 मई, 1993

बुर्कीना फासो के राष्ट्रपति श्री ब्लेस कमपाउरे का स्वागत करते हुए, नई दिल्ली, 31 मई, 1993

उक्रेन के राष्ट्रपति श्री लियोनिद एम. क्रावचुक के साथ प्रसन्न मुद्रा में, कीव, 13 जुलाई, 1993

कीव विश्वविद्यालय द्वारा डॉक्टरेट की मानद उपाधि ग्रहण करते हुए,
कीव, 14 जुलाई, 1993

हंगरी गणराज्य के राष्ट्रपति श्री अरपद गोज से भेंट करते हुए, बुडापेस्ट, 20 जुलाई, 1993

तुर्की की यात्रा के समय 'गार्ड ऑफ ऑनर' लेते हुए,
अंकारा, 17 जुलाई, 1993

आयरलैंड की राष्ट्रपति श्रीमती मैरी राबिसन के साथ, नई दिल्ली, 27 सितंबर, 1993
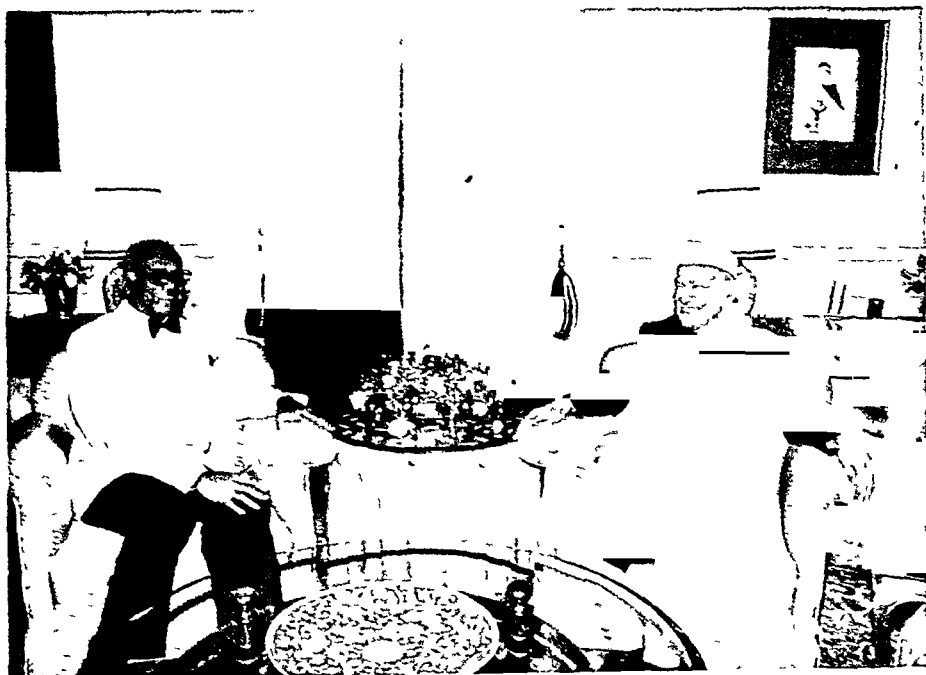
गुयाना सहकारी गणराज्य के राष्ट्रपति डॉ० छेदी बेरेट जगन के साथ,
नई दिल्ली, 27 दिसंबर, 1993

उजबेकिस्तान गणराज्य के राष्ट्रपति श्री इस्लाम अब्दुगनियेविच करीमोफ का स्वागत करते हुए,
नई दिल्ली, 3 जनवरी, 1994
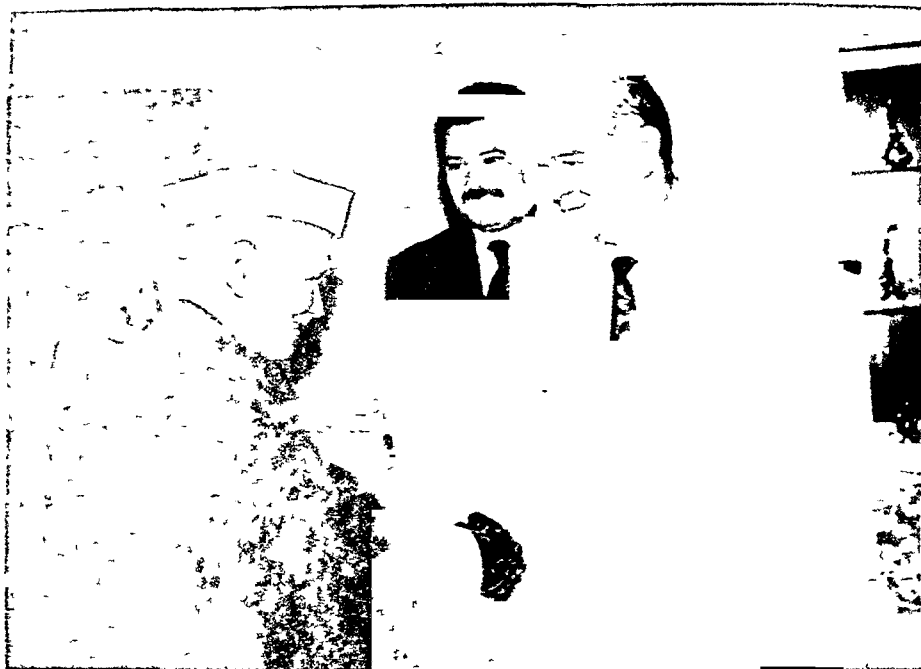
चेक गणराज्य के राष्ट्रपति श्री वात्सलाव हावेल तथा श्रीमती हावलोवा से मुलाकात करते हुए,
नई दिल्ली, 7 फरवरी, 1994
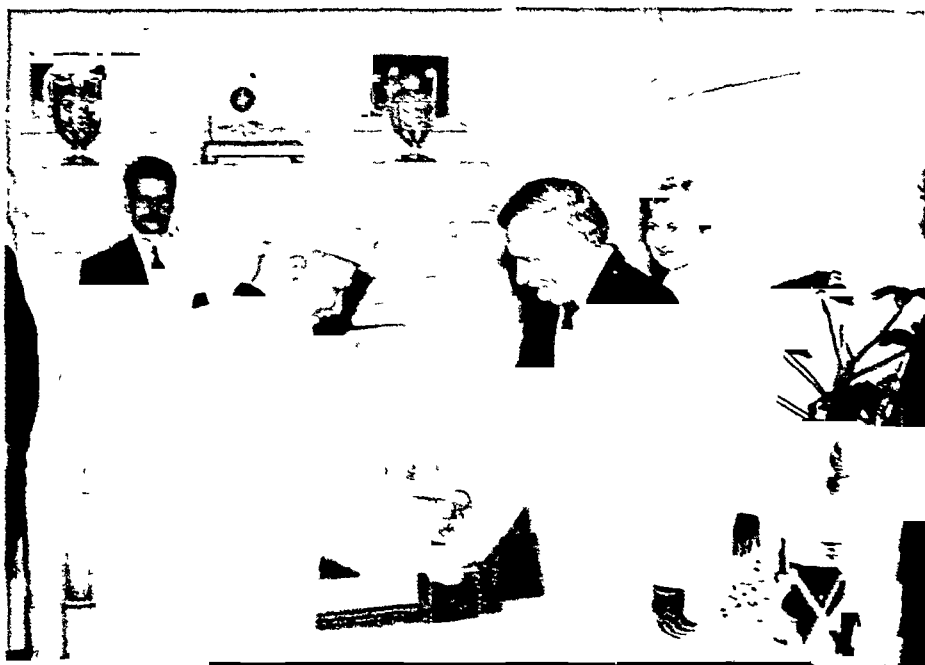
अर्जेंटीना गणराज्य के राष्ट्रपति डॉ कार्लोस साउल मेनेम से वार्तालाप करते हुए,
नई दिल्ली, 31 मार्च, 1993

बल्गारिया के राष्ट्रपति श्री जेलेव एवं श्रीमती जेलेव के साथ भेट करते हुए, सोफिया,
26 मई, 1994

सोफिया विश्वविद्यालय (बल्गारिया) की पुस्तिका मे लिखते हुए डॉ० शंकर दयाल शर्मा,
27 मई, 1994

सोफिया विश्वविद्यालय (बल्गारिया) को भारत की ओर से पुस्तकें प्रदान करने के अवसर पर,
27 मई, 1994

बुखारेस्ट विश्वविद्यालय से डाक्टरेट की मानद उपाधि प्राप्त करने के पश्चात् संबोधित करते हुए,
1 जून, 1994

टोगो के राष्ट्रपति जनरल नासिंगबे यादमा के साथ, नई दिल्ली, 27 सितंबर, 1994

मैं भारत सरकार, अपने देश के लोगो तथा अपनी ओर से आज आपकी यहाँ उपस्थिति पर धन्यवाद देता हूँ। मै विश्वास करता हूँ कि हमारे देश मे आपका यह थोड़े समय का प्रवास प्रीतिकर और लाभकर होगा। अब मैं आप सब गणमान्य अतिथियों से अनुरोध करता हूँ कि मेरे साथ मिलकर, ब्रूनेई दारुस्सलाम के सुलतान और राजकुलमान्या पेगिरन ईस्तरी के स्वास्थ्य और उनकी खुशहाली तथा ब्रूनेई दारुस्सलाम की जनता और भारत-ब्रूनेई सहयोग के लिए मंगल कामना करे।

गुटनिरपेक्षता की प्रासंगिकता

दक्षिण एशिया के दो देशों के रूप मे हमारे संबंध मात्र भौगोलिक समीपता से अधिक के रहे हैं। हमारी एक-सी विरासत है। हमारे ऐतिहासिक अनुभव एक-दूसरे से गुथे हुए हैं। आम लोगों की चेतना से उपजे हमारे मूल्य मोटे तौर पर एक-से रहे हैं। हमारे रीति-रिवाज़ और सामाजिक संरचना में भी समरूपता है। हमारे दो देशों के धार्मिक विश्वास और व्यवहार काफी सीमा तक एक-दूसरे से मिलते हैं। करीब-करीब सभी क्षेत्रों में हमारे देश के लोगों के बीच विभिन्नता की अपेक्षा समानता अधिक है।

बौद्ध धर्म का प्रकाश दोनों देशों में है। भगवान बुद्ध का संदेश हमारे लोगो को एक-दूसरे के नजदीक लाता है। महान् मौर्य सम्राट अशोक पियदसी ने बुद्ध के विचार और दर्शन को इस उपमहाद्वीप और उससे भी आगे, दूर के देशों में पहुँचाया। उनके पुत्र राजकुमार महेंद्र और राजकुमारी संघमित्रा ने इस महान् दार्शनिक के विचार, सदेश और जीवन-मूल्यों के प्रचार के लिए बौद्ध वृक्ष की टहनी के साथ श्रीलका की यात्रा की थी।

हमारी सभ्यता एक-दूसरे से बहुत अधिक प्रभावित और प्रेरित रही है। सांस्कृतिक संबध, विचार और आदर्श के सतत् आदान-प्रदान, जनांदोलन, वाणिज्य और व्यापार आदि ऐसे अनेक अंतर्संबध रहे हैं, जो दोनों देशों के बीच सदियों से लगातार चले आ रहे हैं, और उनसे जो संबंध विकसित हुए हैं, वे अनेक मामलो में विशिष्ट हैं। दोनो देशों के बीच अनेक ऐसे क्षेत्र हैं, जिसमें पारम्परिक संबंधों को मजबूत किया जा सकता है, विशेषकर पड़ोसी देशों के बीच एक ऐसे समय में, जबकि अधिक-से-अधिक राष्ट्र क्षेत्रीय अंतर्संबंधो के सिद्धांत को महत्व दे रहे हैं। इसे एक मूल सिद्धात के रूप में स्वीकार किया जाना है।

हमारे आर्थिक सबध बहुत पुराने रहे हैं। हम सचमुच इस क्षेत्र में सहयोग को मजबूत करना चाहते है, ताकि आज के विश्व में इसकी पूरी क्षमता का दोहन किया जा सके। सौभाग्यवश पिछले दो वर्षो में हमारे व्यापार में उल्लेखनीय वृद्धि

श्रीलका के राष्ट्रपति श्री रणसिंघे प्रेमदासा एव श्रीमती प्रेमदासा के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 1 अक्तूबर, 1992

हुई है। ऐसे क्षेत्रों की पहचान की जा रही है, जिससे दोनों देशों को पर्याप्त लाभ मिल सके। हम अपने देशों में हो रहे आर्थिक परिवर्तनों की गति को तेज करने के लिए एक-दूसरे के अनुभव का लाभ उठा सकते हैं।

विविधताओं वाला देश भारत एक बहुत बड़ा देश है। हम अनेक भाषाएं बोलते हैं और विभिन्न रीति-रिवाजों वाले है तथा हमारी मान्यताएं भी अनेक हैं। ये समृद्ध विविधताए हमारी राष्ट्रीय एकता को और अधिक मजबूत करती हैं। हम इसका अनेक कारणों से पोषण करते है, क्योंकि यह भारतीयता के महत्वपूर्ण गुण को प्रतिभासित करती हैं और हमारे देश के विभिन्न लोग एक जीवंत संस्कृति के निर्माण में शामिल है।

भारत ने अपने सहिष्णुता के गुण के कारण विभिन्न क्षेत्र के मूल्यों को गले से लगाया और उन्हें एक-सा मानकर अपने में समाहित किया। आजादी प्राप्त करने के बाद भारत की नींव रखने वाले हमारे महान् नेताओ ने भारत में सदियों से चली आ रही इस सम्मानीय चेतना को ध्यान में रखते हुए यह सुनिश्चित किया कि वे उस संविधान द्वारा निर्देशित होंगे, जो कि सभी नागरिको के लिए एक-से व्यवहार की गारंटी देता है।

श्रीलंका में भी इसी प्रकार की विविधता की समृद्धि है। हम समझते हैं कि विविधता के अंदर छिपी इस महत्वपूर्ण एकता को और तेज किया जाना है, ताकि सभी वर्ग के लोगो की इच्छाओं को पूरा किया जा सके। हम जातिगत विवादों के समाधान के लिए लाए जाने वाले प्रस्ताव के शीघ्र प्रस्तुत किया जाने की आशा रखते है, क्योंकि इस विवाद ने आपके सुन्दर देश की एकता और अखंडता के लिए एक चुनौती खड़ी कर दी है तथा वहा के सामान्य जीवन को निरतर अव्यवस्थित किया है। भारत-श्रीलंका समझौता इस जाति-विवाद के हल का एक गभीर प्रयास था। यह विवाद करीब एक दशक से दुखदायक बना हुआ है। आवश्यकता इस बात की है कि संयुक्त श्रीलंका के ढांचे में शक्ति का प्रभावशाली ढंग से बंटवारा किया जाए, ताकि देश के सभी लोग समान नागरिक की तरह सुरक्षित, सम्मानजनक एवं गरिमापूर्ण जीवन जी सके।

दक्षिण एशिया सहयोग संगठन सातो सदस्य राष्ट्रो की विदेश-नीति के एक महत्वपूर्ण आधार के रूप मे उभरा है। हमारे समूह के सभी देश विकाशील देश हैं, जहां बड़ी संख्या में लोग अत्यधिक गरीबी मे रह रहे हैं। इसलिए हम अपने सीमित साधनों को लुटते हुए नहीं देख सकते। हमें हमारे क्षेत्र के आम लोगों

को उत्पादकता से पूर्ण रोजगार उपलब्ध कराना है। विकास का समानता और सामाजिक न्याय से संबंध होना चाहिए। हम गरीबी के विरूद्ध अपनी लड़ाई में तथा उन क्षेत्रों में नयी टेक्नोलॉजी का उपयोग करना चाहते हैं, जिनका सबध सीधे गरीब लोगों से है, जैसे कृषि तथा ग्रामीण-उत्पाद आदि।

हम पारस्परिक संबंधों को मजबूत बनाने के लिए क्षेत्रीय स्तर पर सहयोग की अपेक्षा रखते हैं। हमारा विश्वास है कि इस तरह के क्षेत्रीय सहयोग आपसी सबधो को और बढ़ायेंगे। यह आवश्यक है कि सार्क संगठन के देश आर्थिक गतिविधियो वाले महत्वपूर्ण क्षेत्रों में सहयोग करें, ताकि वहां के लोगो का जीवन हमेशा नीचा न रहे। जनसख्या और क्षमता की दृष्टि से सार्क संगटन विश्व का सबसे बडा क्षेत्रीय समूह है। हम इस बात से उत्साहित हैं कि इसके सदस्य राष्ट्रो के बीच आपसी सहयोग बढ़ाने के लिए सस्थाओ का गटन किया गया है। भारत इस सबध में किए जाने वाले सहयोग को आगे बढ़ाने के लिए उस रूप में प्रतिबद्ध है, जो कि सगटन के सभी राष्ट्रों को स्वीकार्य हो।

विश्व मे क्षेत्रीय समूह बनाने की भावना बढ़ रही है। इसलिए हमारे क्षेत्र को पीछे नहीं छोड़ा जा सकता। महाद्वीपीय दृष्टि से हमारी मजबूती हमारी संयुक्त कार्यो की क्षमता पर बहुत कुछ निर्भर करती है। इसलिए हमें इसके रास्ते में आने वाली रूकावटों को देखना और समझना चाहिए तथा सामूहिक सहयोग की भावना से उन्हे हल करना चाहिए।

पिछले कुछ वर्षो मे करीब-करीब भ्रमात्मक रूप से परिवर्तन हुए हैं। हालाकि भारत ओर श्रीलंका जैसे विकासशील देशों के लिये स्वागत योग्य उसमें बहुत कुछ है, लेकिन मुख्य चिताएं अभी समाप्त नहीं हुई है। कुछ लोग, जो पहले गुटनिरपेक्ष आंदोलन के निरतर प्रासंगिकता पर संदेह करते थे, अब वे ही यह मानने लगे हैं कि इस आदोलन की प्रासगिकता अनेक अर्थो में बढ़ी है। राष्ट्र की स्वतंत्रता तथा निर्णय लेने में लोकतात्रिक भावना की अत्यंत आवश्यकता है, ताकि राष्ट्र अंतर्राष्ट्रीय मामलों पर उसकी गुणवत्ता के आधार पर निर्णय ले सकें। यही कारण है कि गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों ने हाल ही मे हुए जकार्ता सम्मेलन मे इसके सिद्धातों के प्रति अपनी वचनबद्धता दोहराई है। गुटनिरपेक्षता आज भी हमारी विदेश नीति का मार्गदर्शक है।

मैं अंत में यह कहते हुए अपनी बात समाप्त करना चाहूंगा कि हमारे दो देशों के बीच मित्रता, इतिहास, संस्कृति तथा सभ्यता पारस्परिक संबंधों की सदियों

से चले आ रहे संबंधो की उपज है। यह एक ऐसी अमूल्य धरोहर है, जिसे पोषित किये जाने की आवश्यकता है। मित्रता की हमारी इस धरोहर को गतिशीलता, ऊर्जा एवं नये क्षितिज प्राप्त करने चाहिएं, ताकि संबंधों को लगातार नया जीवन मिलता रहे और उसमें नयी चमक आती रहे।

दक्षिण-दक्षिण सहयोग

भारत और युगांडा के संवंध पिछली शताव्दियों से उस समय से हैं, जव भारतीयों ने वहां की कठिन परिस्थितियों में रेलवे लाइन विछाने के लिए पूर्वी अफ्रीका के लिए अपना समुद्र-तट छोड़ा था। उसके वाद उनमें से कुछ लोग वहीं वस गए और उन्होंने युगांडा को अपना घर समझा। भारतीय मूल के युगांडावासियों ने वहा के लोगों के साथ मिलकर उपनिवेशवादी शासक के विरुद्ध स्वतंत्रता आंदोलन मे संघर्ष किया था। इसके वाद से वे युगांडा के लोगों के साथ मिलकर वहा के आर्थिक विकास के लिए काम कर रहे हैं और आपके देश को 'अफ्रीका का मोती' वनाने में अपना योगदान दे रहे हैं।

हम भारतीय आपके उस निर्णय की प्रशंसा करते हैं, जिसमें आपने युगांडा के एशियाई नागरिकों को लौटने के लिए प्रोत्साहित किया है। मुझे इसमें कोई संदेह नहीं कि इससे आपके देश के आर्थिक पुनर्वास की प्रक्रिया में सहायता मिलेगी। यह एक ऐसा काम है, जिसे आपने व्यक्तिगत दृढ़ता के साथ शुरू किया है।

आपके वुद्धिमत्तापूर्ण नेतृत्व में युगांडा में एक वार फिर से शांति, सद्भावना और राजनीतिक स्थिरता स्थापित हुई है। अव कृपि क्षेत्र के साथ-साथ ग्रामीण एवं छोटे उद्योगों के दृष्टिकोण पर आधारित औद्योगिक संस्कृति को आधार वनाकर आप अपने देश की अर्थव्यवस्था को आत्मनिर्भर बनाने के लिए संघर्प कर रहे हैं। भारत हमेशा से ही आत्मनिर्भरता पर विश्वास करने वाला देश रहा है। आपके शुभचिंतक के रूप में भारत को इस चुनौतीपूर्ण कार्य मे हाथ वटाने में प्रसन्नता होगी। दक्षिण-दक्षिण सहयोग की आत्मा को ध्यान में रखते हुए हम अपने युगांडा भाइयों से अपने अनुभव, ज्ञान और मानव संसाधनों की भागीदारी करने के लिए तैयार हें। आर्थिक, वैज्ञानिक और तकनीकी क्षेत्र में सहयोग करने के लिए अनेक संभावनाएँ हैं। हमारी ऐसी भारतीय फर्मे और दक्ष व्यक्ति हैं, जो आपके देश के आर्थिक विकास के प्रति कटिवद्ध हैं। मुझे कोई संदेह नहीं है कि आपकी यात्रा राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में पारस्परिक संवंधों को एक नया उत्साह देगी।

युगांडा गणराज्य के राष्ट्रपति श्री योवेरी के मुसेवेनी एव श्रीमती मुसेवेनी के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 12 अक्तूवर, 1992

गुटनिरपेक्ष आन्दोलन के सदस्य के रूप में हमारे दोनो देश इसके नये सिद्धांतों और दिशाओं के प्रति पूरी तरह वचनबद्ध हैं। भारत और युगांडा जैसे देश नयी विकसित हो रही अतर्राष्ट्रीय स्थिति और बिगड़ती क्षेत्रीय आर्थिक परिस्थितियों में नयी चुनौतियों का सामना कर रहे हैं। मुझे कोई संदेह नहीं है कि इंडोनेशिया की अध्यक्षता में गुटनिरपेक्ष आंदोलन और अधिक मजबूत होगा तथा वह अंतर्राष्ट्रीय संबंधों की व्यवस्था एव विश्व के घटनाक्रमों पर अधिक प्रभाव डाल सकेगा।

हाल के वर्षो में विश्व के परिदृश्य में परिवर्तन आए है। विश्व समुदाय एक प्रजातांत्रिक, अविभाजित तथा अरंगभेदी दक्षिण अफ्रीका के उदय की प्रतीक्षा कर रहा है। मध्य पूर्व मे शाति वार्ता जारी है। 21वीं सदी की पूर्व संध्या पर खड़े हम आशा करते है कि विकासशील विश्व के प्रत्येक घर में शाति और सम्पन्नता पहुँचेगी।

हमारी मित्रता के ऐतिहासिक संबधों और अंतर्राष्ट्रीय घटनाओं पर समान दृष्टिकोण को देखते हुए मुझे विश्वास है कि भारतीय नेताओं के साथ आपकी बातचीत हमारे दोनों देशो के बीच के पारस्परिक सबधों को और निकट लाने में सहायक होगी।

भारत-भूटान के बीच अंतरंग संबंध

भारत और भूटान की सहज मित्रता उनके अपनेपन की भावना से युक्त है। हिमालय हमारा पोपण करता है। शताब्दियों के अनुभव हमें जोड़ते है। बुद्ध के संदेश का आलोक दोनों देशों को प्रकाशित करता है। महान गुरू रिम्पाचे या पद्म संभव द्वारा 1300 वर्ष से भी पूर्व भूटान को दिया भगवान गौतम बुद्ध का संदेश हमारे लोगों को एक-दूसरे के नजदीक लाता है। भूटान से हजारों नागरिक प्रतिवर्ष तीर्थयात्री के रूप मे भारत आते हैं। इसी प्रकार भूटान जाने वाला हर भारतीय भी तीर्थयात्री ही है, जो वहां की प्रकृति के मनमोहक सौंदर्य, मठो, समृद्ध सस्कृति तथा वहां के लोगो की गर्मजोशी एव उदारता को गहराई से अनुभव करता है। हमारे दोनों पडोसी देशो के बीच की खुली सीमा हमारे सबधों का मुखर उदाहरण है। यह हमारे आध्यात्मिक रिश्ते, सास्कृतिक आदान-प्रदान, तकनीकी और आर्थिक सहयोग तथा हमारे लोगों के सामान्य हितों के लिए मित्रता एवं बेहतर विश्व का प्रतीक है।

आपके पिता स्वर्गीय नरेश जिग्मे दोरजी वांगचुक द्वारा करीब दो दशक पूर्व कहे गए शब्द मुझे याद आ रहे हैं। उन्होंने कहा था, "दोनो देशों को जोडने वाले सबध ऐतिहासिक तथ्य है। हमारी आध्यात्मिक विरासत भारत के महान् सपूत भगवान गौतम बुद्ध की शिक्षाओ से निकली हुई है। समझदारी और मित्रता के इस बधन को दोनों देशो के बीच आर्थिक और तकनीकी सहयोग के द्वारा और भी मजबूत किया जाना है।"

दो महान् राष्ट्रनिर्माताओं-स्वर्गीय नरेश जिग्मे दोरजी वांगचुक एवं प्रधानमत्री पंडित जवाहर लाल नेहरू ने पारस्परिक लाभकारी मित्रता को बढ़ाया, समृद्ध किया और उसको नया जीवन प्रदान किया उसके बाद से दोनों देशों के संबध दोनों राष्ट्र के नेताओ की दूरदर्शिता तथा ज्ञान के द्वारा लगातार उद्देश्यपूर्ण ढंग से फलते-फूलते रहे है।

भूटान नरेश श्री जिग्मे सिंग्ये वागचुक के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 4 जनवरी, 1993

आपने भारत और भूटान की मित्रता एवं सहयोग को और आगे बढ़ाने में महान् योगदान किया है तथा आज हमारे संबध मानवीय प्रयासों के सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों तक फैलकर बहुपक्षीय हो गए हैं। भारत और भूटान के सबंध हमारे दोनों देश के लोगों के हितों को प्रत्यक्ष रूप से बढ़ाने वाले है, जो पारस्परिक विश्वास और समझदारी पर आधारित हैं तथा जिन्हे समय की कसौटी पर परखा जा चुका है। अपने भारत प्रवास के दौरान आप यहां के विभिन्न नेताओं और लोगों से मिलेंगे। आप पाएंगे कि भूटान के साथ मित्रता और सहयोग की भारतीय प्रतिबद्धता यहा के लोगों के दिल और दिमाग मे झलकती है।

आपकी दृष्टि, ज्ञान और नेतृत्व ने इस सहयोग को मूर्त रूप देने में बड़ा काम किया है और इससे पारस्परिक सहयोग के द्वारा विकास के नए महान् परिदृश्य सामने आए हैं।

आज ही इससे पहले हमारी सरकार ने जल-ससाधन के विकास के लिए एक उल्लेखनीय समझौते को स्वीकार किया हैं। 'सकोप परियोजना' दोनो देश के लोगों के जीवन को सुधारने मे अर्थपूर्ण योगदान करेगी। यह परियोजना हमारी मित्रता के लाभ तथा हमारे लोगो के हितों के लिए हमारी प्रतिबद्धता का एक अन्य उदाहरण है।

हम लोग विज्ञान और तकनीकी के इस युग में भूटान के विकास में अपना सहयोग देकर अत्यत प्रसन्नता का अनुभव करते है। चाहे वह आधुनिक सड़को का निर्माण हो, या कि माइक्रोवेव लिक, सीमेट परियोजना अथवा चुखा हाइड्रोइलेक्ट्रिक जैसी महान् परियोजना, भारत और भूटान के सहयोग द्वारा प्राप्त ये उपलब्धिया हमारे लिए विशेप संतोप का विपय है। विज्ञान, तकनीकी और उद्योग के क्षेत्र मे पर्यावरण संतुलन, अपनी समृद्ध सांस्कृतिक विरासत के सार्वकालिक-सम्मानजनक मूल्यो के साथ तालमेल रखते हुए भूटान द्वारा किए गए प्रभावशाली विकास से हम प्रफुल्लित हैं। आपके दूरदर्शी नेतृत्व में लोगो के लिए 'सम्पूर्ण राष्ट्रीय खुशहाली' में वृद्धि के लिए किए गए भूटान के प्रयासों को भारत में हम लोग प्रसन्नता की दृष्टि से देखते है।

हमारे क्षेत्र एवं विश्व-इतिहास के महत्वपूर्ण संक्रमण काल मे आप हमारे साथ हैं। आज विश्व के विकास तथा हमारे अपने समाज एवं अर्थव्यवस्था मे अपूर्व परिवर्तन की स्थिति है। विश्व में एक-दूसरे पर बढ़ती हुई निर्भरता ने भारत और भूटान के बीच के संबंधों को अंतरग रूप से और मजबूत बनाया है तथा पारस्परिक

सहयोग द्वारा और अधिक उपलब्धियां प्राप्त करने की सम्भावनाए बढ़ाई है। हमारे एक से अनुभव, समझदारी तथा विश्वास हमारे महान् आत्मविश्वास के स्रोत है और ये बातें हमारे दोनों देश के लोगो, हमारे क्षेत्र तथा पूरे विश्व के बेहतर भविष्य के लिए किए जा रहे हमारे कार्यो हेतु महत्वपूर्ण है।

भारत-रूस संबंधों में नए अध्याय की शुरुआत

आपकी यात्रा भारत-रूस संबंधों मे एक नये अध्याय की शुरूआत है।

आपका निजी साहस, धैर्य, राजनैतिक सूझबूझ तथा लोकतात्रिक आदर्शों के प्रति वचनबद्धता आपका मार्ग प्रशस्त करते है। हम आपका अपने बीच ऐसे समय में स्वागत कर रहें हैं, जबकि आप रूसी परिसघ की सामाजिक, आर्थिक और राजनीति मे गुणात्मक रूप से मूलभूत परिवर्तन लाने मे लगे हुए हैं। ये परिवर्तन ऐसे हैं, जो रूस के लोगो के इतिहास मे एक नयी यात्रा की शुरूआत करेगे। हमें पूरा विश्वास है कि रूस अपने सामने उपस्थित वर्तमान सभी कठिनाईयों और बाधाओं से उबरेगा तथा यूरेशियाई क्षेत्र मे स्थायित्व और शाति की स्थापना के लिए महत्वपूर्ण राजनैतिक योगदान करने वाले राष्ट्र के रूप में उभरेगा।

भारत में हम लोग आपके देश मे हो रहे सवैधानिक परिवर्तनो को ध्यान से देखते रहे हैं। हम भी इस प्रक्रिया से गुजरे है। हम आपके इस सबसे अधिक निर्णायक प्रयास की सफलता की कामना करते हैं।

हम भारत में आपकी उस ऊर्जा की सराहना करते हैं, जिसके द्वारा आप आंतरिक शासन तथा अतर्राष्ट्रीय सबधों को बनाए रखने के जटिल कर्तव्य को निभा रहे है। उत्तर-शीतयुद्ध युग ने नयी कठिन चुनौतिया पैदा की हैं। इसी समय हम लोगों के सामने अपने अतर्देशीय संबंधों को नया रूप देने का अपूर्व एवं ऐतिहासिक अवसर उपलब्ध है। ऐसे सबधो पर आधारित नयी सरचना इतनी सक्षम होनी चाहिए, जो क्षेत्रीय चुनौतियों का सामना कर सके और आकस्मिक समस्याओं का समाधान भी। मै यहा गरीबी निवारण, पर्यावरण विनाश, सहारक हथियार, सीमांत आतंकवाद तथा मादक पदार्थो की तस्करी आदि का उल्लेख करना चाहूगा। शोपण-रहित एक ऐसे अंतर्राष्ट्रीय समुदाय की स्थापना के लिए हम लोगों के संयुक्त प्रयास होने चाहिए, जो व्यापक अर्थो में समानता को सुनिश्चित करे।

रूसी परिसघ के राष्ट्रपति श्री बोरिस निकोलेविच येलत्सिन के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 28 जनवरी, 1993

हम दोनों देशो के बीच अंतर्राष्ट्रीय सबंधो के क्षेत्र में सहयोग करने की परंपरा रही है, और हम अतर्राष्ट्रीय सबधों को एक नया रूप देने के लिए साथ मिलकर काम करने को तैयार हैं।

भारत और रूस एक-से अनेक मूल्य और आकांक्षाएं रखते है। हम दोनों के समाज वैविध्यपूर्ण हें और वे लोकतंत्र तथा धर्मनिरपेक्षता पर विश्वास करते हैं। हम शांति और लोकतत्र के शाश्वत मूल्यो से बंधे हुए हैं। गुटनिरपेक्ष विदेश-नीति का अनुसरण करना पहले की अपेक्षा आज कही अधिक सामयिक है। आज आमसहमति से निर्णय लेना तथा आमसहमति से ही परिवर्तनों को स्वीकार करना कल के टकराव को रोकने के लिए ही जरूरी नहीं है, बल्कि आर्थिक, राजनीतिक, तकनीकी और सैन्य-यथार्थ के उन समायोजनों के लिए भी जरूरी है, जो शीत-युद्ध की समाप्ति के बाद उभरे है। इसलिए मुझे यह देखकर प्रसन्नता है कि आपके नेतृत्व में रूस ने न केवल गुटनिरपेक्ष आंदोलन के देशों से रचनात्मक बातचीत करने में ही रूचि ली है, वल्कि सभी स्तरों पर बातचीत को विस्तृत करने मे भी रूचि ली हैं।

आपकी भारत की यह पहली यात्रा परिवर्तनों के बीच भी निरन्तरता का प्रतीक है। यह हमारे दोनो देशो के वीच उच्च राजनीतिक स्तर पर संबंधो की परपरा को फिर से स्थापित करती है। यह पारस्परिक सहयोग की परंपरा और महत्व पर भी जोर देती है। रूस की स्थिति और प्रणालियां व्यापक परिवर्तनों के दौर से गुजर रही है। हमने भी भारत मे कई क्षेत्रों में परिवर्तन किए हैं। लेकिन ये परिवर्तन दोनों देशों के पीढीगत समान हितों तथा विभिन्न क्षेत्रों में पारस्परिक लाभ के लिए आपसी सहयोग के अवसरो की प्राप्ति से हमें अलग नहीं करते। इसमें कोई सदेह नही कि दोनो देशो के बीच हो रहे परिवर्तनो को देखते हुए ऐसे सहयोग के रूपों मे समायोजन और परिवर्तन की जरूरत है।

आज ही कुछ महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर हुए हैं। ये समझौते सफल पारस्परिक सहयोग के लिए मजबूत नींव का काम करेगे। और हमारा प्रयास होगा कि हम इस नींव पर सावधानीपूर्वक एव व्यापक तरीके से ईमारत बनाए।

आप थोड़े समय के लिए ही भारत की यात्रा पर आये है। फिर भी यह हमें आपके प्रति वह हार्दिक स्नेह व्यक्त करने का अवसर देती है, जो भारत में रूस के लिए है। हम आपकी इस यात्रा को आपसी सबंधो के लिए एक नये सिरे के रूप मे देखते हैं। आपसी एव अतर्राष्ट्रीय क्षेत्र में एक उद्देश्यपूर्ण सहयोग

की यात्रा के रूप में देखते हैं। हम आपकी इस यात्रा को सभी देशों तथा मानवता के सभी वर्गो के लिए न्यायपूर्ण, सुरक्षित और शांतियुक्त भविष्य के समान उद्‌देश्यों की प्राप्ति में सहायक के रूप मे देखते हैं।

अंतर्राष्ट्रीय संबंधों के क्षेत्र में सहयोग

भारत द्वारा 26 दिसंवर, 1991 को माल्दोवा को एक स्वतंत्र देश के रूप में मान्यता प्रदान के बाद से माल्दोवा के साथ स्क्तत्र आधार पर संबंधों की स्थापना हुई है। दोनों देशों के पारस्परिक संवंधों के विकास के संदर्भ में आपकी यह यात्रा अत्यन्त महत्वपूर्ण है।

एक स्वाधीन राष्ट्र के रूप में माल्दोवा के उदय से हम दोनों देशों के मध्य सरकारी, संस्थागत, आर्थिक तथा लोगों के स्तर पर अन्तर्सवंध स्थापित करने के अधिक नए अवसर मिले हैं। हमारे दोनों देशों के वीच राजनयिक संवधो की स्थापना तो पहले ही हो चुकी है। हमारे दोनो देशो के बीच परसों कई महत्वपूर्ण समझौतों पर हस्ताक्षर होने हैं। इनसे दोनों देशों के बीच वहुआयामी संवंधों के बनाने तथा पारस्परिक लाभ हेतु सहयोग की आवश्यक रूपरेखा बन सकेगी।

आप माल्दोवा के बहुजातीय स्वरूप को स्थायित्व प्रदान करने, अपने देश की आर्थिक सरचना का पुनर्गठन करने तथा अपनी अर्थव्यवस्था को विश्व अर्थव्यवस्था के और अधिक निकट लाने का चुनौतीपूर्ण कार्य कर रहे हैं। जैसा कि आप जानते है, स्वतन्त्रता प्राप्ति के वाद हम भारतवासियों को मिश्रित अर्थव्यवस्था के सचालन मे व्यापक अनुभव प्राप्त हुआ है, जिसमें निजी क्षेत्र ने प्रमुख भूमिका निभाई है। हमने अपनी अर्थव्यवस्था मे निजी उद्यमो पर नियत्रण कम करने के लिए कृतसंकल्प होकर निश्चित उपाय किए हैं और इन सभी उपायों का उद्देश्य भारत को विश्व अर्थव्यवस्था में भाग लेने के लिए पूर्णत: समर्थ बनाना है। हमारे पास आधुनिक सेवा क्षेत्र के अतिरिक्त अंतर्राष्ट्रीय वित्तीय संस्थाओं के साथ कार्य करने का व्यापक अनुभव है। हमें माल्दोवा की मित्र सरकार तथा वहां के लोगो को अपना अनुभव तथा विशेपज्ञता देने में अत्यंत प्रसन्नता होगी।

भारत और माल्दोवा के अनेक मूल्य और आकांक्षाएं एक-सी हैं। हमारे दोनों देशों के समाज वहुविध हैं, जो शाति, लोकतत्र तथा विवादों के शांतिपूर्ण समाधान के सार्वभौमिक मूल्यो के प्रति प्रतिबद्ध हैं। शीत युद्ध की समाप्ति तथा

माल्दोवा गणराज्य के राष्ट्रपति श्री मिर्च्या योन स्नेगुर तथा श्रीमती स्नेगुर के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 17 मार्च, 1993

पूर्व सोवियत संघ के विघटन से अंतर-राज्यीय संबंधों में एक नई स्थिति उत्पन्न हुई है। आज हमारे सामने नई चुनौतिया और अवसर है, जिसके लिए साहस तथा नये तरीकों की आवश्यकता है। यह बात और भी अधिक महत्वपूर्ण है कि परिवर्तन शांतिपूर्ण तथा सर्वसम्मत तरीके से किया जाए ताकि हम न्यायपूर्ण तथा स्थायी अतर-राज्यीय संरचना की स्थापना करने के अपने लक्ष्यों को पा सकें। हम मानते है कि संबंधित प्राधिकारियों को चाहिए कि पूर्व सोवियत सघ के विघटन से जो मुद्दे उठे हैं, उनका समाधान सकारात्मक, शांतिपूर्ण तथा संरचनात्मकता की भावना से करें।

हमारे दोनों देशों के बीच अंतर्राष्ट्रीय संबंधो के क्षेत्र मे सहयोग की परम्परा रही है, और हमारा प्रयास होगा कि इस सहयोग को जारी रखा जाए। इस संदर्भ में केवल हमारे दोनो देशों द्वारा ही नहीं, वल्कि विश्व समुदाय के द्वारा सामना की जा रही चुनौतियों के शीघ्र समाधान के लिए अन्तर-राज्यीय संवधो का पुनर्गठन किया जाना है। गरीबी हटाना, पर्यावरण सरक्षण, सामान्य तथा पूर्ण निरस्त्रीकरण के सम्पूर्ण संदर्भ में सामूहिक विनाश के हथियारों को नप्ट करना, सीमा पार का आतंकवाद तथा नशीले पदार्थो के गैर-कानूनी व्यापार की समस्या इन चुनौतियों में शामिल हैं।

आपकी इस यात्रा से भारत और माल्दोवा के संवंधों मे एक नए युग की शुरूआत हुई है। हमें विश्वास है कि हमारे सवध आपसी लाभ तथा हमारे लोगो के हित के लिए सुदृढ होगे।

पारस्परिक आर्थिक हितों की वृद्धि

विगत वर्षो में दोनो ओर की कई उच्चस्तरीय यात्राओं से भारत और मारीशस के सबध सुदृढ हुए हैं। पिछले वर्ष हमें मारीशस गणराज्य के राष्ट्रपति सर वीरासामी रिंगाडू और श्रीमती रिंगाडू का भारत में स्वागत करने का सौभाग्य प्राप्त हुआ था। पिछले वर्ष ही मार्च में हमारे प्रधान मत्री श्री पी वी नरसिह राव मारीशस गए थे। पिछले एक वर्ष मे भारत और मारीशस के बीच मंत्रियों के स्तर पर भी सक्रिय यात्राएं हुई हैं। नवबर, 1991 मे आप स्वय उद्योग मंत्री के रूप में भारत आए थे।

भारत के उप-राष्ट्रपति की अपनी पूर्व हैसियत से मैने भी सन् 1988 और सन् 1991 मे आपके सुन्दर देश की यात्रा की थी, जिसकी सुखद स्मृतियां आज भी मेरे मानस पटल पर अकित हैं। मैने मारीशस के कोने-कोने मे भारत का रग देखा था और भारत के स्वर की अनुगूज सुनी थी। भारत की संस्कृति में अफ्रीका और यूरोप की समृद्ध सस्कृति ने मिलकर मारीशस को बहुसास्कृतिक एव बहुजातिय सहअस्तित्व का एक उल्लेखनीय उदाहरण बनाया है। आज आपका देश बुद्धिमत्तापूर्ण एव उदार आर्थिक नीतियो के कारण तेजी से आर्थिक प्रगति करने वाले राष्ट्र के रूप मे विश्व का ध्यान आकर्पित कर रहा है। हमें आपकी उपलब्धियो से अत्यंत प्रसन्नता है।

मारीशस के साथ भारत के संबध हितों की समानता तथा पारस्परिक विश्वास एवं भरोसे पर आधारित है। हमारा सहयोग बहुमुखी है, जिसमें सस्कृति और भाषा जैसे क्षेत्रों के साथ-साथ सेटेलाइट ट्रेकिग, रेडियो टैलीस्कोप और कम्प्यूटर टेक्नोलॉजी जैसे ज्ञान के अग्रणी क्षेत्र भी शामिल है। भारत आपके देश की आर्थिक सफलता के लिए अपना तकनीकी और आर्थिक सहयोग देकर प्रसन्नता का अनुभव करता है।

द्विपक्षीय संयुक्त आयोग और सास्कृतिक कार्यक्रमो के आदान-प्रदान द्वारा हमारे दोनों देशों के लोगो के बीच निकट के सबध स्थापित हुए है। हम अपने

मारीशस गणराज्य के राष्ट्रपति श्री कासम उतीम तथा श्रीमती उतीम के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 2 अप्रैल, 1993

इन संबंधों को बनाए रखने तथा उन्हे और अधिक सुदृढ करने की अपनी वचनबद्धता की पुन पुष्टि करते हैं।

आज, जबकि भारत विश्व अर्थव्यवस्था में और अधिक भागीदारी की कोशिश कर रहा है, मारीशस के साथ लाभप्रद आर्थिक साझेदारी के नए-नए अवसर उत्पन्न हो रहे हैं। मुझे प्रसन्नता है कि भारत के उद्यमी अव मारीशस में संयुक्त उद्यमों, पूजी-निवेश तथा तकनीकी सहयोग के प्रस्तावों पर सक्रिय रूप से विचार कर रहे हैं। हाल ही मे दोनो देशों के बीच व्यापारिक प्रतिनिधिमंडलो का सक्रिय आदान-प्रदान हुआ है। भारत सरकार द्वारा भारत-मारीशस संयुक्त उद्यमों के सवर्धन के लिए 20 करोड़ रुपए के परिक्रामी कोप की स्थापना का निर्णय भी अत्यत समयानुकूल तथा आगे बढता हुआ महत्वपूर्ण कदम है।

हम ऐतिहासिक परिवर्तनो एवं अवसरों की उपलब्धता के साक्षी है। ससार मे कुल मिलाकर तनाव कम हुए हैं, लेकिन विकासशील विश्व के देशो के वीच प्रभावकारी आर्थिक सहयोग को मूर्त रूप देना अभी वाकी है। हमें पारस्परिक आर्थिक हितों की वृद्धि के लिए नई नीतिया बनानी होगी।

भारत और मारीशस दोनों गुट-निरपेक्ष के आदर्शों के अनुयायी है। हम निरस्त्रीकरण, शांति, सुरक्षा तथा आर्थिक विकास जैसे सार्वभौम मसलो पर भी अन्य अंतर्राष्ट्रीय मंचो पर आपका निरन्तर सहयोग चाहेंगे।

हमारे दोनों देशों के लोग गहरे भाईचारे एव समान मूल्यों के बंधन में वंधे हुए हैं। हमारे संबंधों की विशेपता हमारे सहयोग की भावना है, जो अधिकाश अतर्राष्ट्रीय और क्षेत्रीय विपयों पर हमारे दृष्टिकोण की समानता तथा दोनों देश के लोगों के एक-दूसरे के निकट आने की इच्छा पर आधारित है। हमें पूरा विश्वास है कि आपकी इस यात्रा से हमारे संवंध और प्रगाढ़ होंगे।

नेपाल के विकास में सहयोग

ईसा से ढाई सौ वर्ष पूर्व अर्थात् 2200 वर्षो से भी पहले मौर्य सम्राट अशोक लुम्बिनी गए थे और वहां उन्होंने बुद्ध पूर्णिमा को भगवान गौतम बुद्ध के जन्म की स्मृति में एक स्तम्भ का निर्माण कराया था जो आज भी विद्यमान हैं। हम भारत के लोग आपकी भारत यात्रा की उत्सुकता से प्रतीक्षा कर रहे थे और यह सुखद सयोग है कि यह यात्रा बुद्ध पूर्णिमा से प्रारंभ हुई है। हम कामना करते हैं कि हमारे देश में आपका आगमन सुखद और सफल हो।

हमारे दोनों देश रक्त और सजातीयता से संवद्ध हैं। हमारे जीवन-मूल्य, आध्यात्मिक विश्वास तथा हमारा इतिहास एव भूगोल मिलते हैं। अपनी जनता की खुशहाली तथा समस्त मानवता के हित के लिए अनेक क्षेत्रों में सहयोग के विपय में भी हम एक दूसरे से जुड़े हुए है।

अत्यंत प्राचीन काल से भारत के लोग भगवान पशुपतिनाथ की भूमि नेपाल के साथ आत्मीयता और एकात्मकता की भावना से बंधे रहे हैं। इलाहाबाद में समुद्रगुप्त की "प्रयाग प्रशस्ति" मे विशिष्ट रूप से यह उल्लेख किया गया है कि नेपाल नरेश एक पड़ोसी देश के "सार्वभौम शासक" हैं जिसके साथ भारत के भ्रातृभावपूर्ण संवंध हैं।

अनेक शताव्दियों से हमारे दोनों देशों के पारस्परिक संबंध उत्तरोत्तर अधिकाधिक सुदृढ़ और प्रगाढ़ होते रहे हैं। वस्तुत. विश्व में कुछ ही ऐसे भाग्यशाली राष्ट्र होगे जिनके द्विपक्षीय संवंध भाईचारे, मित्रता और पारस्परिक हितकारी सहयोग की भावना से इतने ओतप्रोत हैं।

महान प्रतिभाशाली साहित्यकार कालिदास ने "कुमार संभव" के प्रथम श्लोक में हिमालय का इस प्रकार वर्णन किया है .

" देवात्मा हिमालयो नाम नगाधिराज:
स्थित: पृथिव्या इव मानदण्ड: ॥"

नेपाल के नरेश श्री वीरेन्द्र वीर विक्रम शाह देव एव महारानी ऐश्वर्य राज्यलक्ष्मी देवी शाह के मम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 6 मई, 1993

"अर्थात् हिमालय नामक पर्वत, जिसका आंतरिक तत्व ज्ञान का प्रकाश है, उन्नति की आकाक्षा करने वाले सभी व्यक्तियों के लिए एक मार्गनिर्देशक मानदंड के रूप में प्रतिष्ठित है।"

मैं यह कहना चाहूंगा कि इसी प्रकार नेपाल और भारत के पारस्परिक सबंध हमारे क्षेत्र के राष्ट्रो के लिए एक अनुकरणीय आदर्श प्रस्तुत करते हैं।

सभी राष्ट्रों की प्रभुसत्ता और समान स्थिति के आधार पर आगे बढ़ते हुए हमारे लिए, जो "दक्षेस" के सदस्य राष्ट्र हैं, यह संभव होना चाहिए कि वे अपने पारस्परिक हित के संवर्धन के लिए उसी प्रकार सार्थक रूप से सहयोग करें जिस प्रकार भारत और नेपाल ने पारस्परिक हित के लिए एक दूसरे के साथ किया है।

भारत को इस पर गर्व है कि वह नेपाल के विकास में एक सहयोगी के रूप में अंशदान कर रहा है। भारत नेपाल के सर्वतोमुखी विकास के प्रति दृढ़ता के साथ प्रतिबद्ध है। जैसा कि भारत के प्रथम राष्ट्रपति डॉ राजेन्द्र प्रसाद ने 1956 मे अपनी काठमांडू यात्रा के दौरान आपके पुण्यश्लोक पिता श्री महेन्द्र बीर बिक्रम शाह द्वारा दिए गए प्रीतिभोज के अवसर पर कहा था : "हम एक ही उपमहाद्वीप के अंग हैं और मित्रता तथा सौहार्द के शाश्वत बंधनों से बंधकर हम एक साथ खड़े हैं। भारत नेपाल की शाति और सम्पन्नता में हृदय से रूचि रखता है।"

आज हम दोनों देश शांति के प्रति तथा नैतिकता और आध्यात्मिकता के शाश्वत मूल्यो के प्रति समान रूप से प्रतिबद्ध हैं। नेपाल की जनता के साथ हमारी सुदृढ़ मित्रता का एक और महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि हम अपनी जनता के जीवन-स्तर को श्रेष्ठतर बनाने के लिए विज्ञान तथा प्रौद्योगिकी के लाभो को आत्मसात् करने और उनका विकास करने के लिए कृतसंकल्प हैं।

भारत और नेपाल के मित्रता और सहयोगपूर्ण संबंधों को और सुदृढ़ करने के हेतु दोनों देशों के लिए सभी परिस्थितियां अनुकूल हैं। इससे हमारे दोनों देशों की जनता की आकांक्षाएं और हमारी सरकारों की प्रतिबद्धता परिलक्षित होती है।

आपकी यात्रा भारत और नेपाल के बीच प्रगाढ़ सद्भाव और मित्रता के साथ-साथ हमारे सभी लोगों के लिए तथा वस्तुत: समस्त मानवता के हेतु शांति, संपन्नता और खुशहाली लाने के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए हमारे सम्मिलित प्रयासों का एक अत्यंत स्पष्ट और सार्थक प्रतीक है।

भारत का तंजानिया के आर्थिक विकास में सहयोग

भारतीय उपमहाद्वीप के अफ्रीका और विशेपकर पूर्वी अफ्रीका के साथ बहुआयामी सबंध हैं। 1947 में अपनी स्वाधीनता के बाद हमने अन्तर्राष्ट्रीय सौजन्य से अन्यत्र भी उपनिवेशवाद का मुकाबला करने और उसे समाप्त करने का प्रयास किया है। ये वर्प एकजुट संघर्प, पुनरुत्थित, आशा, संयुक्त प्रयास के वर्प थे। हलचल भरी इस अवधि में हमारे बीच चिरस्थायी संबंध बने और साथ ही गहरी मित्रता ने जन्म लिया जो आज भारत और तंजानिया की पारस्परिक घनिष्ठता में परिलक्षित होती है। 1946 में, भारत पहला देश था जिसने दक्षिण अफ्रीका में पृथग्वासन की घिनौनी प्रथा के खिलाफ संयुक्त राष्ट्र महासभा में अपनी आवाज उठायी थी। तबसे लेकर अब तक हमने पृथग्वासन के गढ़ों को एक-एक करके गिरते देखा है, और आज हम यह उम्मीद कर सकते हैं कि वह दिन दूर नहीं जब एक लोकतात्रिक तथा सगठित दक्षिण अफ्रीका उभर कर हमारे सामने आएगा।

भारतीय मूल के लोगों ने वड़ी संख्या में तंजानिया को अपने घर के रूप में अपनाया है। हमे बहुत खुशी है कि तंजानिया ने उन्हें पूर्ण एवं समान नागरिकों के रूप में स्वीकार किया है। हमें इस बात की खुशी है कि वे तंजानिया के आर्थिक विकास के विभिन्न क्षेत्रों में तंजानिया की सुचारु रूप से सेवा कर रहे हैं। हमारे सबंधों को और मजवूत बनाने और उन्हें समृद्ध करने में बहुत से भारतीय राष्ट्रिकों के साथ भारतीय मूल के तंजानियाई नागरिक भारत और तंजानिया के बीच एक महत्वपूर्ण कड़ी वने हुए हैं।

तंजानिया द्वारा बहुदलीय लोकतात्रिक व्यवस्था की ओर अग्रसर होने तथा उसके आर्थिक पुनरूत्थान तथा उसके उदारीकरण के मामलों में भारत ने रुचि ली है। आपने स्वयं इस दिशा में, एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

स्वयं हमने भी आर्थिक सुधार तथा उदारीकरण की प्रक्रिया शुरू की है। इस दिशा में जो कदम उठाए गए हैं उसके फलस्वरूप अतर्राष्ट्रीय प्रतिक्रिया

तजानिया सयुक्त गणराज्य के राष्ट्रपति श्री अली हसन म्वीनी एव श्रीमती म्वीनी के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 10 मई, 1993

उत्साहवर्धक रही है। इससे भारत-तजानिया आर्थिक सहयोग को भी बहुत लाभ पहुंचेगा। हमारे दोनो देशों के बीच, हमारे पास प्रचुर संसाधन हैं और हमें परस्पर लाभ के लिए सहयोग बढ़ाने के लिए इन सभावनाओ का प्रभावकारी ढग से उपयोग करना चाहिए।

पिछले कुछ वर्षो मे विश्व बहुत बदल गया है। शीतयुद्ध के समाप्त होने से विश्व भर के देशों में नई आशाएं और आकाक्षाए उत्पन्न हुई है। आज हम दक्षिण के देशो के लिए सकारात्मक परिवर्तन के एक नए युग की दहलीज पर खड़े है। भारत और तजानिया जैसे विकासशील देशो के विश्व अर्थव्यवस्था में भाग लेने के लिए अपने प्रयासों को और तेज करना चाहिए। अर्थपूर्ण आर्थिक प्रगति हासिल करने के लिए हमारी क्षमता में दक्षिण के देशों के बीच सहयोग एक प्रमुख निर्धारक तत्व रहेगा।

दक्षिण के देश म्वालिमू न्यरेरे के बहुत ऋणी है, अतर्राष्ट्रीय राजनीति एवं आर्थिक मुद्दो पर जिनकी जोरदार आवाज सदैव ही बहुत आदरपूर्वक सुनी गई हैं। उनकी अध्यक्षता मे दक्षिण आयोग ने दक्षिण के विकास के लिए और उत्तर के देशो के साथ परस्पर सबंध स्थापित करने के लिए एक रणनीति तैयार करने मे सराहनीय पहल की है। दक्षिण केन्द्र इस परम्परा को बनाए हुए है। अब यह हमारा उत्तरदायित्व है कि हम इन पहलकदमियों पर और काम करे ओर उन्हें पूरा करें।

आज की नई विश्वसंरचना मे राष्ट्रीय स्तर पर लोकतत्रीकरण सार्वभौमिक स्तर पर लोकतंत्रीकरण में भी प्रतिबिम्बित होना चाहिए। पिछले वर्प जकार्ता मे हुए गुटनिरपेक्ष शिखर सम्मेलन में यह एक महत्वपूर्ण विपय था। हमारा उद्देश्य एक नई विश्व व्यवस्था का निर्माण करना है, एक ऐसी व्यवस्था जो युक्ति सगत, न्यायसंगत और लोकतात्रिक हो और जो समस्त मानवजाति के कल्याण के लिए हो। भारत और तंजानिया एक साथ मिलकर काम करके अभी तक हासिल उपलब्धियो को और आगे ले जाकर तथा मैत्री, सहयोग एव प्रगति के क्षितिज का विस्तार करके इस सबंध में एक बहुमूल्य योगदान दे सकते है।

मैं एक बार फिर आपके यहां आने पर अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। आपकी यात्रा भारत-तंजानिया के संबधों मे एक महत्वपूर्ण मील का पत्थर है। मैं आशा करता हू कि आपका तथा आपके साथ आए लोगों का प्रवास सुखद एव लाभप्रद होगा।

भारत सहयोग के लिए तत्पर

भारत की अफ्रीका में हमेशा से रुचि रही है। जैसा कि पडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था, भारत और अफ्रीका "समुद्र पार के पड़ोस" हैं। वर्तमान शताब्दी में हमारे लोग आजाद हुए हैं, तथा हम सबके सामने राष्ट्र-पुनर्निर्माण एवं सबके लिए बेहतर भविष्य बनाने का काम है। हमें परस्पर लाभदायक आर्थिक, तकनीकी और सास्कृतिक सहयोग के लिए दक्षिण के देशों के मध्य परम्परागत सद्भाव पर यह निर्माण करना होगा।

हम लोगो के मध्य भौगोलिक दूरी के बावजूद भारत और बुर्कीना फासो ने मित्रता की कड़ियों को बनाए रखा है, तथा हमारे देशों के संबंध सदैव सौहार्दपूर्ण रहे हैं। हमारे दोनों देशों के पारस्परिक सहयोग दक्षिण-दक्षिण सहयोग की सच्ची भावना पर आधारित हैं।

आजादी के बाद भारत ने कृपि, उद्योग, विज्ञान और तकनीकी तथा मानवीय शक्ति के विकास आदि अनेक क्षेत्रों में तकनीकी विशेपज्ञता और सूक्ष्मता प्राप्त की है। आपको हमारी कुछ ऐसी सस्थाओं और उत्पादक सुविधाओ को देखने का अवसर मिलेगा। मैं इस अवसर पर दोहराना चाहूंगा कि भारत अपनी अर्जित तकनीकी विशेपज्ञता और अनुभव का लाभ बर्कीना फासो को देने के लिए हमेशा तैयार हैं।

हमने रुचि के साथ बुर्कीना फासो को कृपि तथा मध्यम एव लघु उद्योग के विकास पर जोर देते देखा है। इससे आम लोगों को विकास का लाभ सुनिश्चित हो सकेगा। हम बुर्कीना फासो के कृपि-उपकरण, वाहन तथा उससे सबंधित मशीनरी में सहायता देने के क्षेत्र में सहयोग कर सकते हैं। हम मानव ससाधन विकास के क्षेत्र में भी आपके साथ सहयोग करने को तैयार है। हम सहयोग के नए क्षेत्रों के बारे मे सुझाव का सम्मान करेगे।

हमने रुचि के साथ देखा है कि बुर्कीना फासो बहुदलीय लोकतंत्र की ओर बढ़ रहा है। आपने इसमें महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हमारे लिए लोकतत्र हमारे

बुर्कीना फासो के राष्ट्रपति श्री ब्लेस कमपाउरे तथा श्रीमती कमपाउरे के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 31 मई, 1993

राष्ट्रीय जीवन की आधारशिला है, और हमें प्रसन्नता है कि फ्रेंकोफोन देशों में बुर्कीना फासो इस दिशा में सबसे आगे है।

हमने पश्चिमी अफ्रीकी देशों के बीच क्षेत्रीय सहयोग की बढ़ती हुई प्रवृत्ति की सफलता को देखा है। पश्चिमी अफ्रीकी देशों का आर्थिक समुदाय अपने क्षेत्र में स्थायित्व तथा विकास को सुनिश्चित करने के एक महत्वपूर्ण घटक के रूप में उभरा है। हम मानते हैं कि यदि विकासशील देशों को सम्भव प्रगति का पूरा-पूरा लाभ उठाना है, तो इस तरह के क्षेत्रीय सहयोग आवश्यक हैं।

हम सार्क देशों की प्रगति के लिए दृढ़ता से प्रतिवद्ध हैं, जो दक्षिण एशिया के देशों को नजदीक लाता है। इस तरह के क्षेत्रीय सहयोग विकासशील देशों के बीच सार्वभौम स्तर पर सहयोग की प्रक्रिया को मजबूत और तीव्र कर सकते हैं।

पिछले कुछ वर्ष विश्व में अप्रत्याशित परिवर्तनों के वर्ष रहे हैं। अब नई दिशा और सम्भावनाएं हैं। हम आज उस दहलीज पर खड़े हैं, जो दक्षिण के देशों में सकारात्मक परिवर्तन का युग बन सकता है। बशर्ते कि विकसित हो रहे विश्व में हम लोग दूरदृष्टि, बुद्धिमत्ता तथा एकता से काम लें, और शांतिपूर्ण एवं लोकतांत्रिक विश्व व्यवस्था के निर्माण के लिए प्रयास करें।

लोकतांत्रिकरण को उभरती हुई विश्व-व्यवस्था को एक दिशा देनी होगी। यह पिछले गुटनिरपेक्ष सम्मेलन का महत्वपूर्ण विषय था। हमारा विश्वास है कि भारत और बुर्कीना फासो अन्य कई गुटनिरपेक्ष राष्ट्रों के साथ मिलकर उस न्यायसंगत एवं प्रजातांत्रिक नवीन अन्तर्राष्ट्रीय व्यवस्था की रचना करेंगे, जो समस्त मानवता के हित में हो।

मैं इस अवसर पर आपको अपने बीच पाकर फिर से हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करता हूं। हम आशा करते हैं कि आपका और आपके प्रतिनिधिमंडल का प्रवास लाभप्रद एवं सुखद होगा। हमें विश्वास है कि आपकी यात्रा के दौरान हमारे दोनों देशों के संबंधों की परिधि एवं परिदृश्य को व्यापक बनाने का अवसर मिलेगा।

संसाधनों एवं अनुभवों का आदान-प्रदान

कीव अपनी सांस्कृतिक और आध्यात्मिक विकास के लिए प्रसिद्ध है। आपके महान कवि तारस शेवचेंकों के इन शब्दों में इसका भौगौलिक सौदर्य उत्तम रूप में व्यक्त हुआ है।

बताओ मुझे, कि किस प्रकार
रक्तवर्ण आकाश मे सूरज चमकता है
और पर्वतों के उस पार जाकर छिप जाता है
दूर 'डनाइपर' में इन्द्रधनुप किस प्रकार
डुबकी लगाकर जल भर लाता है
और किस प्रकार चिनार के लम्बे सुन्दर वृक्ष
अपनी हरी भरी शाखों को फैलाकर
देते हैं सुन्दरता को एक नया जन्म।

सचमुच मैं उक्रेन की यात्रा करने को अत्यंत उत्सुक था ताकि मै यहां के सूर्यास्त एवं चिनार के वृक्षों के उस प्रसिद्ध सौंदर्य को स्वयं देख सकूं, जिसका इतना प्रभावशाली वर्णन कवि ने किया है। मुझे थोड़ा सा यह खेद अवश्य है कि मै उस समय नहीं आ सका, जब अखरोट के वृक्ष पुष्पित होते हैं। अन्यथा कीव उतना ही सुन्दर है, जितनी की कोई कल्पना कर सकता है। इसलिए मुझे आपका आमंत्रण स्वीकार करने में तनिक भी हिचक नही हुई।

एक वर्प से कुछ ही अधिक पहले हमे आपका तथा आपके सहयोगियो का भारत में स्वागत करके प्रसन्नता हुई थी। वस्तुत: वह हमारे दोनों देशो के लोगों के बीच के संबंधों का एक महत्वपूर्ण चिह्न था। इसलिए यह हमारे दोनों देशों के लिए महत्वपूर्ण है कि आपकी उस यात्रा के दौरान सम्पन्न करारों तथा बाद में हुए उच्च स्तरीय सम्पर्को के आधार पर हम अपने सबंधों को जारी रखें। हमने एक स्वतंत्र गणराज्य के रूप में उक्रेन के लोगों की बढ़ती हुई आकांक्षाओं को

उक्रेन के राष्ट्रपति श्री लियोनिद एम क्रावचुक द्वारा आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, कीव, 13 जुलाई, 1993

रुचि के साथ देखा है। स्वतंत्रता आवश्यक है, क्योंकि यह समृद्ध समाज के निर्माण को सुदृढ़ करती है।

शीत युद्ध की समाप्ति एक ऐसी घटना है, जिससे दोनो देश तथा हमारे लोग लाभ उठा सकते हैं। सिद्धांत पर आधारित अप्राकृतिक विभाजन एव सैन्य समझौतो को शुरू से ही गुट निरपेक्ष आदोलन ने अस्वीकार्य मानकर निरस्त कर दिया था। पूर्व और पश्चिम के टकराव का अत हो गया है तथा लोकतंत्र की स्थापना की बात विश्व के नए युग मे होने लगी है। फिर भी यह बराबर स्पष्ट है कि विश्व के सामने अब नई चुनौतियां हैं, जो हमे सुलझानी हैं।

प्रथम एवं अंततः हमें यह सुनिश्चित करना होगा कि पिछले मतभेदो और विभाजन को दूर करने की प्रक्रिया हमें सभी देशों के बीच समानता और परस्पर लाभ के आधार पर अधिक सहयोगपूर्ण सबंधों की ओर ले जाए। विश्व तकनीकी एवं आर्थिक प्रबंधन की क्रांति के कगार पर पहुच गया है और यह एक ऐतिहासिक असफलता होगी कि इन उपलब्धियो का लाभ बिना किसी भेदभाव के सबको बराबर न मिले। भारत इस दृष्टिकोण के प्रति प्रतिबद्ध है और वह स्वतत्र आर्थिक सहयोग को तीव्र करने के लिए अपने आर्थिक ढांचे में परिवर्तन करने के उद्देश्य से नए उपाय कर रहा है। इस विश्वास के साथ कि हम गरीबी और असमानता की चुनौतियों का सामना करने मे सक्षम होगे, हमने अपने यहां अनेक आर्थिक सुधार किए हैं तथ नीतियो को उदार बनाया है।

हमारे प्रथम प्रधानमंत्री जवाहर लाल नेहरू ने स्वतत्रता की सध्या पर सविधान सभा में कहा था कि "स्वतत्रता को अविभाज्य कहा जाता है। इसी प्रकार समृद्धि भी अविभाज्य है, इसी प्रकार विनाश भी। इस एक विश्व को अलग-अलग टुकड़ो मे लम्बे समय तक विभाजित नहीं रखा जा सकता।" यह स्पष्ट है कि आज हम सब अपने विश्व की इस परस्पर निर्भरता को पहचान रहे हैं और यह स्वीकार करते हैं कि आज के तेजी से सिमट रहे विश्व मे दूसरे देशों के कल्याण और समृद्धि में वृद्धि करना प्रत्येक देश के हित में है।

हम उक्रेन द्वारा राजनीति एवं आर्थिक कार्य में संतुलन की खोज को रुचि के साथ देख रहे हैं और अपनी सीमाओं के अन्तर्गत संसाधनों एव अनुभवों का आदान-प्रदान करके प्रसन्नता हैं। भारत के लोग आपके हित की कामना करते हैं तथा उक्रेन की अर्थव्यवस्था में सतत् स्थायित्व एव विकास की आशा करते हैं।

शीतयुद्धोत्तर काल में संसार की व्यवस्था को लोकतांत्रिक बनाने के अवसर दिए हैं, तथा चुनौतिया भी पेश की हैं। चाहे संयुक्त राष्ट्र हो, या कोई भी अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठन हो, या निरस्त्रीकरण का प्रश्न हो, भारत किसी भी तरह के भेदभाव का हमेशा विरोधी रहा है। भारत हमेशा से सामान्य एवं सम्पूर्ण निरस्त्रीकरण के पक्ष में रहा है। हमने विश्व के सभी परमाणु अस्त्रों को एक निश्चित समयावधि में समाप्त करने के लिए एक ठोस कार्य योजना भी प्रस्तुत की है।

पिछले कुछ समय में विश्व में असहिष्णुता तथा धार्मिक, जातिगत एवं नस्लवादी हिसाए बढ़ी है। जैसा कि महात्मा गांधी ने कहा था "हिसा को प्रतिहिसा स समाप्त नहीं किया जा सकता। मानव जाति को केवल अहिसा के द्वारा ही हिसा पे मुक्ति मिल सकती है।" यहां तक कि जब हम विश्व के विभिन्न भागों में उदित हो रही स्वतत्रता का स्वागत करते हैं, तब हमें मनुष्य एवं मनुष्य तथा राष्ट्र एवं राष्ट्र के बीच शाति, समझदारी एवं सहयोग के प्रति अपनी प्रतिबद्धता एवं अहिसा में अपने विश्वास को बनाए रखना है। हमे उन तत्वों की दुष्प्रवृत्ति से बचना है, जो अपने सकीर्ण स्वार्थो के लिए मानव अधिकारों तथा व्यक्तिगत स्वतत्रता पर आधारित व्यवस्था का शोपण करते हैं। अपने पड़ोस में हम उग्रवादी विश्वासों को देख रहे हैं, जो आतकवाद को बढ़ावा दे रहा है, जो हमारे क्षेत्र की स्थिरता के साथ-साथ भारतीय शासन व्यवस्था के धर्मनिरपेक्ष आधार के लिए भी चुनौती है। मुझे पक्का विश्वास है कि शताब्दियो मे बनी भारतीय चेतना इस चुनौती पर विजय प्राप्त करेगी तथा हमारे नम्र, धर्म निरपेक्ष एव सहनशील समाज की शक्ति को प्रगट करेगी।

हम जानते हैं कि बहुजातीय एवं बहुभापी समाज वाला देश उक्रेन भी चुनौतियों का सामना कर रहा है, जिसे केवल सामजस्य एव सह अस्त्वि के द्वारा ही समाप्त किया जा सकता है। उक्रेन को प्रकृति ने उपजाऊ मिट्टी, अच्छी जलवायु और प्रतिभाशाली लोगों का वरदान दिया है। उद्योग, विज्ञान और टेक्नोलॉजी तथा कला और संस्कृति के क्षेत्र में प्राप्त उपलब्धियां प्रभावशाली हैं तथा भविष्य में भी काफी सम्भावनाएं हैं। हम उक्रेन की सामाजिक-आर्थिक समस्याओं को जानते है तथा आपको यह आश्वासन देना चाहते हैं कि भारत आपका मित्र है। आपके लोगो की भावना तथा विश्व को देखने की आशावादिता के कारण मुझे यह विश्वास है कि आपके ये कष्ट अस्थायी हैं तथा उक्रेन शीघ्र ही विश्व के महान राष्ट्रों के बीच अपना स्थान बना लेगा।

भारत और उक्रेन, ये दोनो महान देश विश्व को निजी स्तर पर तथा साथ मिलकर बहुत कुछ दे सकते हैं। भगवान बुद्ध के शब्दो में, ''वास्तविक विजय वह विजय है जिसमे सभी समान रूप से विजयी हो और कोई भी पराजित न हो।'' इस दृष्टि से हमारी मित्रता, पारस्परिक समझदारी और सहयोग में वहुत क्षमता है। पिछले वर्प की आपकी यात्रा के वाद से हमारे संवंध संतोपजनक रूप में वढ़े हैं, और राजनीतिक, आर्थिक, सांस्कृतिक तथा अन्य क्षेत्रों में वढ़ रहे आदान-प्रदान को देखकर हम प्रसन्न है। इनसे हमारे लोग और निकट आ रहे हैं। भारत उक्रेन के साथ अपनी घनिष्ट समझदारी को और अधिक वढाने के लिए प्रतिवद्ध है, तथा इससे हमे वहुत हर्प हुआ है कि उक्रेन भी यही भावना रखता है। यह संवंधो को वढ़ाने के लिए उत्साहवर्धक आधार है, और मैं यहां उपस्थित सभी लोगों को इस संकल्प तथा क्षमता को मूर्त रूप देने के लिए मिलकर काम करने हेतु आमंत्रित करता हू।

भारत की उक्रेन को मान्यता

उक्रेन और भारत के वीच मैत्री और सहयोग के संवंध काफी मजवूत, व्यापक तथा समय की कसौटी पर खरे उतरे हैं।

उक्रेन के लोगों द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त करना और आजाद प्रजातांत्रिक मैत्री के आदर्श को समर्पित एक सार्वभौमिक राष्ट्र के रूप में उक्रेन के उदय पर भारत सरकार और भारत के लोगों ने हर्ष का अनुभव किया था। भारत उन पहले देशों मे था, जिन्होंने स्वतंत्र उक्रेन को अपनी मान्यता प्रदान की।

भारत की यात्रा पर मार्च, 1992 में आए राष्ट्रपति लियोनिद क्रावचुक के साथ अपने व्यक्तिगत संवंधों को ताजा करने और उक्रेन के नेतृत्व के अन्य सदस्यों से मिलने की इच्छा से मैं अपनी उक्रेन यात्रा की उत्सुकता के साथ प्रतीक्षा कर रहा था। मेरी इस यात्रा के दौरान अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों और हमारे उल्लेखनीय द्विपक्षीय सवंधो से सम्वधित अनेक महत्वपूर्ण मुद्दों पर विचार-विमर्श होगा।

हम अपने दोनो देशो के लोगों के परस्पर हित के लिए अपनी मित्रता और सहयोग को गहरे, मजवूत तथा व्यापक वनाने और वास्तव मे सभी के लिए एक वेहतर भविष्य की कामना रखते हैं। इस संदर्भ मे कहना चाहूंगा कि पिछले वर्ष जुलाई मे भारत के राष्ट्रपति का पद ग्रहण करने के बाद मेरी आपके महान देश उक्रेन की यात्रा, मेरी पहली विदेश यात्रा है। उक्रेन आने वाले भारत के पहले राष्ट्रपति के रूप मे मैं एक वार फिर उक्रेन के मैत्रीपूर्ण लोगों के लिए अपनी हार्दिक वधाई और शुभकामनाएं देने में अपार प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूं।

कीव (उक्रेन) पहुचने पर राष्ट्रपति का वक्तव्य, कीव, 13 जुलाई, 1993

भारत-उक्रेन मित्रता

अनेक विस्तृत मसलों पर हम लोगों की बातचीत महत्वपूर्ण तथा सुखद रही। उक्रेन के लोगों के बेहतर भविष्य के लिए आपके दृढ़ प्रयास तथा दोनों देश के लोगों एवं सभी के हित के लिए किए जाने वाले भारत-उक्रेन संबंधों की दृढ़ता के प्रयासों से मैं बड़ा प्रभावित हुआ हूं। हम आपको भारत का एक अच्छा मित्र मानते हैं।

हम भारत में अपने वर्तमान के सबसे महत्वपूर्ण क्षेत्र के विकास के लिए पारस्परिक औद्योगिक सहयोग को अत्यंत महत्वपूर्ण मानते हैं। आपके सहयोग से हम इस क्षेत्र में और भी अधिक सक्रिय आदान-प्रदान की अपेक्षा करते हैं।

हम भी उक्रेन के समाज और विशेषकर उक्रेन की अर्थव्यवस्था द्वारा सामना की जा रही चुनौतियों के स्वरूप को स्वीकार करते हैं।

चार दशक की आजादी के बाद हमने अपनी अर्थव्यवस्था के क्षेत्र और इसके तकनीकी आधार को खड़ा करने एवं मजबूत बनाने में सफलता पाई है। हमने भारत को विश्व अर्थव्यवस्था मे पूरी तरह से भागीदार बनाने की दृष्टि से कुछ महत्वपूर्ण कदम उठाए हैं।

हम अपने उन अनुभवों और क्षमताओं को उक्रेन को देने को तैयार हैं, जो उक्रेन के लिए उपयोगी हो सकते हैं। मैं आपको इस बात से आश्वस्त करना चाहता हूं कि उक्रेन के लोगों को यथासम्भव सहायता पहुंचाने की भारत के लागों की सद्भावना और इच्छाशक्ति पर आप पूरी तरह सुनिश्चित रह सकते हैं। हम लम्बे समय से भागीदार रहे हैं, तथा हम इस समय-परीक्षित संबंधों को आगे बढ़ाने के लिए प्रतिबद्ध हैं।

उक्रेन के प्रधानमंत्री श्री लियोनिद डी. कुचमा द्वारा आयोजित मध्याह्न भोज के अवसर पर, कीव, 14 जुलाई, 1993

उक्रेन से शैक्षिक आदान-प्रदान

बौद्धिक क्षेत्र मे मेरी उपलब्धियो को मान्यता प्रदान करके जो सम्मान आपने मुझे दिया है, उससे मैं काफी अभिभूत हूं। मैं नम्रतापूर्वक इस सम्मान को प्रसन्नता के साथ स्वीकार करते हुए यह मानता हूं कि इसके जरिए आपने भारत की बोद्धिक परम्परा और आज के विश्व में उसके बढ़ते महत्व को अपनी मान्यता प्रदान की है। यह प्राचीन परम्परा सत्य, शाति और सभी की एकता और भलाई के लिए अनवरत खोज की परम्परा है। वेद और हमारे अन्य प्राचीन ग्रंथ तथा हमारी दार्शनिक विरासत-इन सभी में मानव के इस प्रयास का उल्लेख है। आवश्यकता इस बात की है कि हममें से प्रत्येक व्यक्ति इस दिशा में पूरे मनोयोग के साथ अपना योगदान करे।

आधुनिक भारत के इतिहास मे हमारे नेताओं ने इसी परम्परा को नींव के रूप मे माना है और इसके दिखाए मूल्यो पर चलने का प्रयास किया है। महात्मा गांधी का जीवन और उसका बलिदान पूरी मानव जाति को एक महत्वपूर्ण संदेश है। असाधारण राजनेता और चितक पं जवाहर लाल नेहरू न केवल भारतीयों बल्कि पूरी मानव मात्र की सच्ची भलाई और प्रसन्नता के लिए कृत-संकल्प थे।

पडित नेहरू शिक्षा और सही मानसिक प्रवृत्तियों के विकास को महत्वपूर्ण मानते थे। वे अक्सर उस लयबद्ध समन्वय की बात किया करते थे, जो मानवता के मुख्य तत्वो के आधार पर विज्ञान और वैज्ञानिक प्रवृत्तियों का उपयोग करके प्राप्त किया जा सकता है। उनका कहना है:-

"बड़े पेमाने पर विज्ञान के गहन विकास ने न केवल मनुष्य के भौतिक वातावरण को तेजी से बदला है, बल्कि जो इससे भी महत्त्वपूर्ण है वह यह है कि इसने चिंतन के नए उपकरण उपलब्ध कराए हैं और मनुष्य के मानसिक क्षितिज का विस्तार किया है। इस प्रकार इसने जीवन के आधारभूत मूल्यों को प्रभावित किया है और हमारी सभ्यता को एक नई शक्ति और गतिशीलता प्रदान की है।"

मेरा मत है कि भारत की बौद्धिक और आध्यात्मिक विरासत सम्पूर्ण मानव

कीव स्टेट विश्वविद्यालय मे, कीव (उक्रेन), 14 जुलाई, 1993

जाति की विरासत है। इसी प्रकार, मेरा विचार है कि यह सम्मान भारतीय चिंतन के केन्द्रीय मूल्यों के प्रति आदर की भावना से आज मुझे दिया गया है-यह वह मूल्य है जो वास्तव में सम्पूर्ण मानव जाति के सामूहिक अस्तित्व के केन्द्र में है।

पिछले 150 वर्षों का कीव विश्वविद्यालय का इतिहास बौद्धिक उपलब्धियों और शैक्षिक प्रतिभा का इतिहास रहा है। हमारे दोनों देशों के बीच मैत्री संबंध बनाने तथा इसे अभिव्यक्ति प्रदान करने मे इस विश्वविद्यालय का महत्वपूर्ण स्थान है।

हमें आज इस बात का स्मरण करके प्रसन्नता का अनुभव हो रहा है कि इससे पहले 1982 में श्रीमती इंदिरा गांधी को उनकी यात्रा के दौरान कीव विश्वविद्यालय ने मानद डिग्री प्रदान करके सम्मानित किया था। विदेशी विद्यार्थियों, विशेषकर भारत से आए विद्यार्थियों, का जिस खुले मन से यहां स्वागत होता है, उसकी हर जगह प्रशंसा हुई है।

भारतीय दर्शन और विचार के प्रति उक्रेन में काफी रुचि है। इवान फ्रांको और लेस्या उक्रेन्का के लेखन में वेद, महाभारत और रामायण जैसे प्राचीन ग्रंथों का गहन अध्ययन परिलक्षित होता है। इवान फ्रांको ने अपने लेखन में एक स्थान पर कहा है कि भारतीय संस्कृति और दर्शन ने, देश की सीमाओं से बाहर भी अपनी छाप छोड़ी है:-

"धर्म और साहित्य के विकास की दृष्टि से हमें पड़ोसी देशों के लोगों पर पड़े भारतीय प्रभाव को ध्यान में रखना होगा। यह स्पष्ट है कि भारतीय साहित्य का अध्ययन करते समय यदि हम चीन, तिब्बत, मंगोलिया, फारस, अरब, इतर-एशिया और यहां तक कि सुदूर यूरोप और अन्य क्षेत्रों में प्रारम्भ हुई शाखाओं पर भारत के आध्यात्मिक प्रभाव को ध्यान में न रखें, तो यह ऐसा ही होगा कि हम किसी वृक्ष का अध्ययन करते समय केवल उसके जड़ों और तनों पर ही दृष्टि रखें और उसकी शाखाओं, पत्तियों, फूल और फलों को भूल जाए।

भारत और लगभग विश्व के हरेक हिस्से के बीच हुए वैचारिक आदान-प्रदान ने उक्रेन पर भी अपना असर डाला है। हमें जो काम अब करना है वह यह है कि इस बौद्धिक आदान-प्रदान को आधार बनाकर उन समस्याओं का हल खोजें जो आज हमारे सामने हैं। शीत युद्ध समाप्त हो गया है और हमारे सामने नए अवसर हैं, तो नई चुनौतियां भी हैं। गुट निरपेक्ष आंदोलन के एक संस्थापक के रूप में हमने हमेशा शांति, सहयोग और मैत्री पर आधारित एक विश्व के

प्रति अपनी प्रतिबद्धता व्यक्त की है। पहले से कहीं अधिक अब इस बात की गम्भीर आवश्यकता है कि हम एक बेहतर दुनिया के निर्माण का प्रयास करें- जिसमे राष्ट्रो की समानता के साथ-साथ सभी लोगों और देशों के बीच सच्ची पारस्परिक निर्भरता और आपसी सम्मान को महत्व मिले।

भारत और उक्रेन जैसे देशो को समानता पर आधारित नई विश्व व्यवस्था के निर्माण मे एक महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है। इस चुनौतीपूर्ण कार्य में अपनी बौद्धिक शक्तियां के वेहतर उपयोग के लिए दोनों देशो के समाज-वैज्ञानिको के बीच और करीवी सबंधो का मैं स्वागत करता हू।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद नए देशो के उदय के तथ्य को हमें ध्यान मे रखना होगा। भारत उक्रेन की स्वतत्रता को मान्यता प्रदान करने वाले पहले देशो मे है। हम बहुदलीय प्रजातांत्रिक समाज के निर्माण के आपके प्रयासों को काफी रुचिपूर्वक देख रहे हैं। प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण और प्रजातांत्रिक प्रक्रिया बहुजातीय, बहु-धार्मिक और बहुभापी राष्ट्रों की समृद्धि और सफलता की कुजी है।

लेकिन लगता है कि हरेक व्यक्ति प्रजातांत्रिक दृष्टिकोण, पारस्परिक सामंजस्य और अहिसा में विश्वास के गुणों से सहमत नहीं है। जातीय, छद्‌म धार्मिक भावनाए और सकीर्ण राष्ट्रीय अतिवाद की अभिव्यक्ति शीत युद्ध की समाप्ति के बाद की एक चिताजनक प्रवृत्ति है। आज विश्व के अधिकांश देश अनिवार्य रूप से बहुजातीय यहा तक कि वहुप्रजातीय हैं। ऐसा होना भी चाहिए क्योंकि 20वीं शताब्दी के अत मे तकनीकी और आर्थिक प्रगति ने एक देश से दूसरे देश में लोगों के आवागमन को काफी सुलभ बना दिया है। विभिन्न पृष्ठभूमि और प्रदेशों के लोगों के बीच पारस्परिक वैचारिक आदान-प्रदान के हमेशा ही सकारात्मक परिणाम रहे है। अत. हम हमेशा ही विश्व के सभी लोगों के वीच विचारो के स्वतंत्र आदान-प्रदान के अपने पूर्ण सकल्प के साथ पक्षधर रहे है। इस विश्व व्यवस्था में अतिवाद के लिए कोई स्थान नही है, तथा भारत और उक्रेन जैसे समन्वय, धर्म निरपेक्षता और मानवतावाद के लिए शक्तिशाली ताकतों का रूप ले सकते हैं, इस समय, इतिहास की शिक्षाओं को नजर अदाज करने का अर्थ उन सभी लाभों को खतरे में डालना होगा, जिनकी आशा हमने शीत युद्ध की समाप्ति के फलस्वरूप की है। विशेपकर बुद्धिजीवियों को इस दिशा में एक अत्यंत महत्वपूर्ण भूमिका निभानी है और मैं बुद्धिजीवियों की इस विशिष्ट सभा से यह आशा करता हूं कि वे इस चुनौती को स्वीकार करें।

विश्व एक आर्थिक और वैज्ञानिक क्राति के दौर से गुजर रहा है। वैज्ञानिक, सामाजिक और व्यक्तिगत तथा सामाजिक जरूरतों मे इसके उपयोग के पिछले दशक पर काफी विकास हुआ है। इस क्राति मे भाग लेने और विश्व अर्थव्यवस्था में और अधिक् पूर्ण रूप से भाग लेने के लिए मेरा देश इच्छुक है। हमने अपनी आर्थिक नीतियों का उदारीकरण करके व्यापार की शर्तो को और आसान बनाया है तथा पूजी-निवेश की प्रक्रियाओं के उदारीकरण की दिशा में देश के उद्यमियों को और जिम्मेदारी सौंपी है। हालांकि जो चुनौतियां हमारे सामने हैं उनकी प्रकृति अलग-अलग हो सकती है, लेकिन हमें इस बात का एहसास है कि उक्रेन ने भी आर्थिक सुधारों की प्रक्रिया शुरू की है। जहा तक आपका सबध है आर्थिक सुधार प्रक्रिया नए स्वतत्र राष्ट्र की स्थापना के लिए शुरू हुई है। इनमें से प्रत्येक प्रक्रिया अपने आप में चुनौतीपूर्ण है। लेकिन मुझे विश्वास है कि आपके प्रतिभशाली और उद्यमशील लोग शांति, प्रगति और खुशहाली के आडे आने वाली हर समस्या पर सफलतापूर्वक विजय पा लेगे।

हम इन प्रयासों मे आपकी सफलता की कामना करते हैं और इस दिशा में जो कुछ भी सहयोग हम दे सकते है उसके लिए हम तैयार है। उक्रेन मे जानी-पहचानी परम्परागत भारतीय उपभोक्ता वस्तुओं की आपूर्ति करने की स्थिति में भारत तो है ही साथ ही वह आधुनिक उपकरण और अन्य सुविधाए भी उपलब्ध कराने के लिए तैयार है। मेरा विश्वास है कि ये उपकरण ओर सेवाएं उक्रेन की आर्थिक जरूरतों मे उपयोगी सिद्ध होंगी। भारत उक्रेन मैत्री को सुदृढ़ करने का सबसे अच्छा तरीका दोनों देशों के बीच आपसी लाभ के आधार पर [illegible]पक्षीय सहयोग को बढ़ावा देना होगा।

भारत की जो जानकारी आपको है वह आमतौर पर प्राचीन और [illegible]ओ पर आधारित भारत की है। लेकिन, हम विज्ञान टेक्नोलॉजी और [illegible] के सबसे अधिक सकारात्मक तत्वों को अपनी प्राचीन संस्कृति एवं परम्पराओ से समन्वित करने का प्रयास कर रहे है। सामाजिक, आर्थिक परिवर्तनों के अध्ययन मे लगे भारतीय समाज-शास्त्रियो को यूरोप के केन्द्र मे स्थित [illegible] महत्वपूर्ण देश उक्रेन में हो रहे परिवर्तनों की गतिशीलता का अध्ययन करने के प्रयास करने चाहिए। इस प्रकार भारत में भी हम उक्रेन के साथ और अधिक शैक्षिक आदान-प्रदान का स्वागत करेगे। इस प्रकार के आदान-प्रदान से प्राप्त हुए लाभो के बारे मे जानकारी प्राप्त करके मुझे व्यक्तिगत प्रसन्नता होगी।

संबंधों का विस्तार

अब, जबकि मेरी कीव की यात्रा अंत के करीब है, इस अवसर पर मैं पिछले ो दिनो के दौरान के अपने विचार तथा अनुभव को व्यक्त करना चाहता हूं। मैंने उक्रेन की जमीन पर कदम रखे, आपके द्वारा, आपके सहयोगियों क्रन के लोगो के द्वारा मेरा गर्मजोशी से स्वागत किया गया और मुझे स्नेह । सभी ओर से प्राप्त मित्रता की ये अभिव्यक्तिया हमारे संबधों के विस्तार इच्छा का संकेत करती हैं। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहता हूं कि भारत इसके लिए बहुत अधिक इच्छुक है।

आपकी इस खूबसूरत राजधानी में हमारा प्रवास अत्यंत सुखद रहा। आपके साथ हमारी बातचीत, आपकी सरकार के साथ हुई बैठकें महत्वपूर्ण रहीं। मै कीव विश्वविद्यालय द्वारा दिए गए सम्मान के प्रति भी अपनी शुभेच्छा व्यक्त करना चाहूंगा। कल मै ओडेसा के लिए प्रस्थान कर रहा हूं। मै आपको विश्वास दिलाना चाहता हू कि यह एक सुखद स्मृति रहेगी।

उक्रेन के राष्ट्रपति श्री लियोनिद एम क्रावचुक के सम्मान मे आयोजित रात्रि-भोज के अवसर पर, कीव, 14 जुलाई, 1993

विश्व राजनीति को सही दिशा

अब, जबकि मैं आपकी ऐतिहासिक राजधानी कीव से ओडेसा के लिए प्रस्थान कर रहा हूं, ताकि आपके देश और इसके लोगो को और अधिक-से-अधिक देख-जान सकूं, मैं इस अवसर पर आप लोगों के सामने अपने कुछ विचार एवं अनुभूतियां रखना चाहूंगा। ये पिछले दो दिन मेरे लिए उक्रेन तथा उनके नेताओं से परिचित होने एवं यहां की भूमि एवं लोगों को अनुभव करने के दिन थे। मैं कीव से इस अनुभूति और संतोप के साथ प्रस्थान कर रहा हूं कि इससे दोनो देशों के मित्रतापूर्ण संवंधों को वढ़ाने में योगदान मिलेगा। यहा हम लोगो को जो आतिथ्य-सत्कार मिला है उससे हम अभिभूत हैं तथा अपने हार्दिक स्वागत के लिए मैं उक्रेन की सरकार तथा यहां के लोगों को धन्यवाद देता हूं उक्रेन की स्वाधीनता के बाद भारत के राष्ट्रपति के रूप में मेरी यह प्रथम यात्रा है और इस अवसर पर मैं आपको सबको एक लोकतांत्रिक एव बहुविध गणराज्य की स्थापना के प्रयास के लिए अपनी शुभकामनाएं देता हूं।

आप में से वहुत-से लोग भारत में रहे हैं। मै जानता हूं कि आप में से बहुत लोग भारत की यात्रा करना चाहते हैं। जो मेरे देश में रहे हैं और जिन्होंने हमारे आधारभूत ढांचे, हमारे इस्पात उद्योग तथा हमारे ऊर्जा उत्पादन उद्योग में योगदान किया है, मैं उनकी प्रशंसा करता हूं। आप में से प्रत्येक को हम अपना ऐसा महत्वपूर्ण मित्र मानते हैं जो भारत को जानते हैं और जो उक्रेन के लोगों को भारत के वारे में बता सकते हैं।

भारत उक्रेन के वेहतर भविष्य के लिए किए जा रहे प्रयासों के प्रति अपनी सद्‌भावना रखता है। हम अपनी सर्वोत्तम क्षमता के साथ उक्रेन के विकास के लिए अपना सहयोग देने के लिए तैयार हैं। उद्यम-शीलता और प्रवंधन हमारी पारम्परिक शक्ति रही है और अपने मित्रों के साथ इसमें सहयोग करना हमारे लिए प्रसन्नता की बात होगी। मैं दोनों देशो के संवंधों में वड़ी सम्भावनाएं देखता हूं और आशा करता हूं कि हम दोनों देशो के वीच विभिन्न क्षेत्रो में और सक्रिय

उक्रेन टेलीविजन पर राष्ट्रपति का सवोधन, कीव, 15 जुलाई, 1993

अन्तर्सबंध होंगे। सहयोग के वर्तमान क्षेत्रों के साथ-साथ विज्ञान और टैक्नोलाजी, सूचना, इलैक्ट्रानिक्स जैसे अन्य क्षेत्रो मे भी सहयोग की नई सम्भावनाए तलाशी जानी चाहिए। मुझे विश्वास है कि हमारे व्यवसायी, बुद्धिजीवी और वैज्ञानिक बेहतर विश्व के निर्माण के लिए तथा हमारे लोगों के हित के लिए इन सबधो को बढ़ाने में अपनी क्षमता लगाएंगे।

भारत के लोग प्राचीन धरोहर के उत्तराधिकारी है। हमारी संस्कृति और सभ्यता का संदेश रहा है-शाति, समस्त मानवता की एकता, समझदारी तथा विश्व के राष्ट्रो एव लोगों के बीच सहयोग। भारत समस्त मानवजाति के बेहतर भविष्य तथा इसके उत्तरोत्तर निर्माण से जुड़े कार्य के लिए अपना योगदान करने का इच्छुक है।

राष्ट्रीय पुनर्निर्माण करते हुए हम मानवता के अपने प्राचीनतम मूल्यों को इस वैज्ञानिक युग से समन्वित करने का प्रयास कर रहे है। वह शक्ति, जो हमने विज्ञान, तकनीकी, उद्योग और कृपि के क्षेत्र में पाई है, वह भारत के लोगो के लिए उतनी ही है, जितनी कि बेहतर विश्व के लिए। हमने अपनी आर्थिक सरचना को शक्तिशाली बनाने के लिए अच्छी तरह सोची-समझी कार्य योजना हाथ मे ली है, ताकि वह विश्व की वर्तमान चुनौतियों का सामना करने में सक्षम हो सके। इस दृष्टि से हमने अपनी निजी उद्यमियों पर जिम्मेदारी डाली है और विश्व अर्थव्यवस्था के लिए उनका उत्साहवर्धन किया है। हमें विश्वास है कि इन नीतियों से सामाजिक न्याय के साथ विकास सुनिश्चित होगा।

शीत युद्ध के अत ने हमारी पीढ़ी को विश्व के फिर से निर्माण करने का एक असाधारण अवसर दिया है। अतीत में विश्व व्यवस्ता के निर्माण का कार्य कुछ ही लोगो के लिए सरक्षित था। पिछले कुछ दशकों मे परिवर्तन की हवाओं ने विश्व मे उल्लेखनीय परिवर्तन किया है। आज प्राथमिक कार्य यह है कि नई लोकतात्रिक विश्व व्यवस्था सुनिश्चित की जाए। स्वाभाविक है कि यह लोकतात्रिक साधनो द्वारा ही की जा सकती है। स्पष्ट रूप से इसके लिए सयुक्त राष्ट्र संघ तथा अन्य अन्तर्राष्ट्रीय एजेंसियो का शामिल होना आवश्यक है।

हमारे दोनों ही देश जिम्मेदार राष्ट्र हैं और हमें आज बदल रहे विश्व को गम्भीरता से लेना है और यह निश्चित करना है कि हमें किस दिशा में आगे बढना है। गलत चुनाव हमे विवाद, भेदभाव तथा उन्माद के नीचे रास्ते पर ले जा सकता है, जिससे मानवता त्रस्त होगी। इसलिए यह हमारे लिए अपरिहार्य है कि हम अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय में अपनी आवाज उठाएं तथा विश्व राजनीति को सही दिशा

देने में अपनी भूमिका निभाएं। आज हम पर अपने बच्चो के तथा उनकी संतान के भविष्य की जिम्मेदारी है।

मैं लम्बे समय से उक्रेन तथा वहां के अनेक लोगों की प्रतिभा का प्रशंसक रहा हूं। हालांकि उक्रेन और भारत की भौगोलिक दूरी बहुत ही अधिक है, फिर भी महासागर दोनों देशों को अलग करने के बजाय जोड़ते हैं। हमारे दोनों देशों की संस्कृति की जड़ें वहां की भूमि, ग्रामों और कृषि में है।

अपनी यात्रा तथा आपके नेताओं तथा अन्य लोगों से हुई मेरी चर्चा से मैं इस बात से आश्वस्त हूं कि आपके देश का भविष्य उज्जवल है। अभी जो भी समस्याएं हैं, वे अस्थाई हैं और वे सभी एक नए राष्ट्र के निर्माण के चुनौतीपूर्ण कार्य से जुड़ी हैं। मैं अपने व्यक्तिगत अनुभव से कह सकता हूं कि राष्ट्र-निर्माण के कार्य मे लोगों की आंतरिक शक्ति और संकल्प शक्ति सबसे बड़ी बात होती है।

आपके प्रसिद्ध लेखक, इवान फ्रैंको के शब्दों में-

वह साम्राज्य हमें ईश्वर से नहीं मिलेगा,
न ही वह स्वर्ग के देवताओं के पास से उतरकर आएगा, हमारे पास,
हमारी अपनी बुद्धि करेगी हमारा मार्गदर्शन और अपने दृढ़ संकल्प
के बल पर हम पाएंगे अपनी स्वतंत्रता।

राष्ट्रवादी हुए बिना अंतर्राष्ट्रीय होना असम्भव

भारत में मुस्तफा कमाल अतातुर्क का नाम एक आदरणीय नाम है तथा तुर्की का नाम लेते ही मन मे स्वत: ही स्वजन एव स्नेह का भाव आ जाता है। इसलिए आपके इस सुन्दर देश में आना मेरे लिए सौभाग्य की बात है और यह बात इसे विशेष बनाती है कि मुझे भारत के किसी भी राष्ट्रपति की प्रथम तुर्की यात्रा करने का सम्मान प्राप्त हुआ है।

मुस्तफा कमाल अतातुर्क के नेतृत्व में तुर्की की स्वतंत्रता के संघर्ष तथा तुर्की गणराज्य के आधुनिकीकरण के लिए शुरू किए गए व्यापक सुधारों ने महात्मा गांधी को गहरे रूप में प्रभावित किया था। गाधी जी अतातुर्क के लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता तथा राष्ट्रवाद के सिद्धातो से सहमत थे तथा वे तुर्की की इन बातो को विश्व में परिवर्तन के लिए आवश्यक प्रक्रिया का एक अंग मानते थे। राष्ट्रपति जी, यह आपके तथा आपके महान देश के लोगों के लिए गर्व की बात है कि तुर्की मे स्थायी लोकतंत्र है तथा यह वैसा ही आधुनिक राष्ट्र है, जैसी कल्पना इसके संस्थापक ने की थी।

"देश में शांति तथा देश से बाहर शांति" अतातुर्क का सिद्धांत वाक्य था। गांधी जी भी अपने इस वाक्य द्वारा यही बात कहते थे-"राष्ट्रवादी हुऐ बिना अन्तर्राष्ट्रवादी होना असम्भव है। अन्तर्राष्ट्रवाद तभी सम्भव है, जब राष्ट्रवाद मूर्त रूप ले तथा विभिन्न देश के लोग अपने को सगठित करके एक मनुष्य की तरह काम करने में सक्षम हो जाएं।"

गांधी जी सच्चे रूप मे मानव जाति की एकता मे विश्वास करते थे, तथा उन्होंने खुले रूप में कहा था कि ईश्वर कोई भेदभाव नहीं करता,। चूकि हम दोनों ही देश लोकतंत्र, धर्मनिरपेक्षता, अपने देश में स्वतंत्र बाजार अर्थव्यवस्था तथा शाति एवं अन्तर्राष्ट्रीय मित्रता के प्रति कटिबद्ध रहे है। इसलिए हम लोगों के बीच गहरे मैत्रीपूर्ण संबंध होना स्वाभाविक है।

मै आपके साथ उपयोगी विचार-विमर्श की आशा करता हूं और मुझे विश्वास है कि हमारे दोनों देश और अधिक मित्रता एवं सहयोग के गहरे संबंध बनाएंगे।

एसेन्बोग हवाई अड्डे (अंकारा) पर पहुचने पर भाषण, अकारा, 16 जुलाई, 1993

विभिन्न क्षेत्रों में सहयोग की व्यापक सम्भावनाएं

पर्वत श्रेणियों, ऊंचे पठारों और उपजाऊ नदी-घाटियों का यह सुन्दर प्रदेश अनंतकाल से पूर्व और पश्चिम के बीच एक महान सेतु रहा है। यूफ्रेट्स और टीग्रीस जिन दो नदियों ने उपजाऊ धरती की महान सभ्यता को अपने हाथों पाला-पोसा है, वे दोनो का ही उद्गम पूर्वी अनातोलिया के पहाडों से हुआ है। तुर्की में पहुंचकर हम उस सेतु पर अपने आपको पाते हैं जिस पर होकर पूर्व की बौद्धिक, आध्यात्मिक और भौतिक सम्पदा पश्चिम तक पहुची है। यह वही सेतु है जिसने पश्चिम के चिंतन और टैक्नोलॉजी को दूर-दूर तक पहुंचने का मार्ग सुगम बनाया है।

हमारे दो देशों के बीच पारम्परिक मित्रता 1912 मे उस समय परिलक्षित हुई थी, जब भारत के जाने--माने स्वतत्रता सेनानी डा. एम ए अंसारी बालकन युद्ध के समय चिकित्सा-दल को लेकर तुर्की आए थे। अगस्त, 1922 में आफियम काराहीसर लड़ाई में अतातुर्क की विजय की खबर जब भारत पहुची, भारतीय स्वतंत्रता सेनानियों ने किस तरह उसका स्वागत किया, इसका वर्णन हमें पडित जवाहर लाल नेहरू के एक पत्र से मिलता है जो उन्होंने श्रीमती इंदिरा गाधी को लिखा था जो उस समय 15 साल की थीं-

"हममें से बहुत से लोग उस समय लखनऊ की जिला जेल में थे। तुर्की की विजय का जश्न मनाने के लिए हमने अपनी जेल की बैरक को सजाने के लिए तरह-तरह की अजीबोगरीब चीजें जो हमें मिली हमने इकट्ठी कीं। यहां तक कि उस शाम को बैरक में रोशनी की जगमगाहट करने की भी कोशिश हमने की।"

महात्मा गांधी और जवाहर लाल नेहरू, दोनों ने अतातुर्क की साहस, दूरदर्शिता तथा आपके देश को आजाद कराने और उसे आधुनिक बनाने में उनकी भूमिका की प्रशंसा की। 1923 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के दिल्ली में आयोजित विशेष अधिवेशन ने एक प्रस्ताव पारित करके कमाल पाशा को उनके विजयी नेतृत्व

तुर्की गणराज्य के राष्ट्रपति श्री सुलेमान दीमीरिल द्वारा आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, अकारा, 16 जुलाई, 1993

के लिए बधाई दी और इसे ''पूर्व के सभी राष्ट्रों की आजादी के लिए शुभ शगुन बताया।''

तुर्की की राजधानी अकारा भविष्य के लिए अतातुर्क की आशाओं का जीवत प्रतीक है। यह स्वाभाविक है कि आज की इस मुलाकात में हम इतिहास के प्रति अभिभूत होकर मैत्री के अपने बधनों को और मजबूत बनाने के लिए उत्साहित महसूस करे।

भारत और तुर्की दोनों ही धर्मनिरपेक्षता और प्रजातत्र के सिद्दात पर आधारित है। भारत मे प्रत्येक नागरिक चाहे वह किसी भी धर्म मे विश्वास रखता हो समान स्वतत्रता और अधिकारो का उपयोग करता है। हम सभी धर्मो के प्रति समान आदर भाव रखते हैं। यही भावना हमारे चितन में कितने गहरे रूप मे समाहित है कि हमारी धर्मनिरपेक्षता अपने ऊपर हुए सभी हमलो का सफलतापूर्वक सामना करने मे सक्षम सिद्ध हुई है। हमारे प्रजातात्रिक तौर-तरीके सुदृढ़तापूर्वक स्थापित है। बाहरी ताकतों की शह पाकर आतंकवाद और हिसात्मक घटनाए हमे परेशानी मे डालती रही है। हिसा ने हमे परेशानी में डालने की कोशिश की है, लेकिन हमने अपने उच्च राष्ट्रीय मूल्यो पर पुन विश्वास जताते हुए उनका मुकाबला किया। बम्बई मे आतकवाद की घटना के शिकार हुए लोगो के प्रति तुर्की ने जो शोक-सवेदनाए भेजी और आपने हिसा और आतकवाद के सभी रूपो की जिस प्रकार निदा की, उसके प्रति हम आभार व्यक्त करते है।

शीत युद्ध की समाप्ति और परस्पर प्रतिस्पर्धा में लगे गुटो के बीच सैद्धांतिक सघर्ष के हटने के बाद विश्व में भारी परिवर्तन हो रहे है। लेकिन इनके फलस्वरूप विश्व सघर्ष से पूरी तरह मुक्त नहीं हो पाया है। घाटी युद्ध, बोसनिया-हरजेगोविना, नागोरनो-कारबाख और सामालिया मे चले आ रहे लगातार संघर्ष तथा अगोला, अफगानिस्तान और कम्बोडिया मे खूनखराबा इस बात के द्योतक हैं कि शीतयुद्द के बाद का समय भी दु ख-तकलीफ और उथल-पुथल से मुक्त नहीं है। हालाकि सैद्धातिक मतभेद मिटते जा रहे है, लेकिन मानव समाज में व्याप्त पारम्परिक ग्रंथी के आधार पर आपसी टकराव बढ़ता जा रहा है। धार्मिक अतिवाद, कट्टरवाद और उपराष्ट्रवाद आज के विश्व मे सम्भावित गम्भीर चुनौतियों के रूप में उठ खड़े हुए है। आर्थिक क्षेत्र में भी विश्व की व्यापार प्रणाली दु खद बदलाव के दौर से गुजर रही है, जिसमें मुक्त व्यापार की ताकतें बढ़ते संरक्षणवाद के मुकाबले कमजोर पड़ रही है। साथ-ही-साथ पर्यावरण संरक्षण, ससाधनो मे तेजी से हो रही कमी,

आतकवाद, नशीली दवाओ के अवैध व्यापार जैसी अब तक काफी समय से टाली गई सार्वभौमिक दूसरी समस्याए भी मुह उठा रही है। इनकी ओर हमे अधिक ध्यान देने तथा इनसे निपटने के लिए सम्मिलित प्रयास करने की आवश्यकता है।

हमारे दोनों देशों को आज विश्व के समक्ष उपस्थित नई चुनौतियों का मुकाबला करने के लिए मिलजुल कर काम करना चाहिए।

भौगोलिक, राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण आपका यह क्षेत्र सघर्ष से परिपूर्ण रहा है और इस सघर्ष क्षेत्र में तुर्की ने स्थायित्व के एक द्वीप के रूप मे अपना स्थान बनाया है। बालकन और काकासस क्षेत्र मे आपके देश ने महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। हम आपकी इन कोशिशो के प्रति गहरी उत्सुकता से देख रहे है जो आपने यूनान के नेताओं के साथ अपने दोनो देशों के संबंधों को सुधारने की दिशा में और पहल के रूप में की है। शाति और मित्रता के आपके इन प्रयासों में हम आपकी सफलता की कामना करते हैं। मध्य एशिया के गणराज्य को धर्मनिरपेक्षता, प्रजातंत्र और आत्मनिर्भर बाजार व्यवस्था के आदर्श का अनुकरण करने के लिए उन्हे राजी करने की आपकी कोशिश प्रशसनीय योग्य है और उसमे इस क्षेत्र मे विकास और प्रगति को सुनिश्चित करने के आपके प्रयासों की सफलता की भी कामना करते है। मध्य एशिया के गणराज्यो के साथ भारत के सबधो को मजबूत बनाने में सम्बन्धित पक्षों की आपसी रुचि है, चूंकि आपका भी उद्देश्य यही है। अत इस पूरे क्षेत्र की भलाई के लिए काम करने में हम आपके साथ सहयोग की आशा रखते है,

तुर्की और भारत ने 1951 मे एक मैत्री सधि पर हस्ताक्षर किए थे। भारत के पहले प्रधानमंत्री श्री जवाहर लाल नेहरू ने 1960 मे आपके सुन्दर देश की यात्रा की थी। इस महत्वपूर्ण घटना के 26 वर्षो बाद 1986 मे तुर्की के तत्कालीन प्रधानमंत्री और स्वर्गीय राष्ट्रपति तुर्गुत ओजाल ने भारत की यात्रा की थी। हमें अब भारत और तुर्की के बीच इन उच्चस्तरीय यात्राओं के क्रम को बनाए रखना चाहिए ताकि हम द्विपक्षीय सहयोग को और मजबूत बना सकें। हमें विश्वास है कि हमारे दो देशों के बीच विभिनन क्षेत्रो में सहयोग के विस्तार की व्यापक सम्भावनाए हैं। अत. आपकी अनुमति से मैं यह चाहता हूं कि आप महामहिम तथा मादाम दीमिरिल भारत आए और हमे स्वागत का अवसर प्रदान करे।

मित्रता और सहयोग में बढ़ावा

अकारा मे प्राप्त आतिथ्य-सत्कार एव स्नेह के लिए मैं अपनी पत्नी श्रीमती शर्मा, अपने प्रतिनिधिमंडल तथा अपनी ओर से हार्दिक धन्यवाद देता हूं। आपके स्वागत ने हमे अभिभूत किया है और हमें इस यात्रा की स्मृति हमेशा बनी रहेगी।

जिस गम्भीरता से हमारी आपसी बातचीत हुई, वह इस बात को प्रकट करती कि हमारे दोनो देश पहले से ही स्थित मित्रता और सहयोग से बधे अपने संबंधों को और बढाना चाहते है। चूकि हमारे सबंध समान मूल्यो एव समान आस्थाओ पर आधारित है, मुझे पूरा विश्वास है कि वह गहरी समझ और पारस्परिक सम्मान, जो एक-दूसरे के प्रति है, विकसित होगे।

एसेन्बोग हवाई अड्डा (अकारा) से प्रस्थान करते ममय वक्तव्य, अकारा, 17 जुलाई, 1993

मित्रता और सहयोग की महान विरासत भारत और हगरी के सबधो के लिए परिप्रेक्ष्य प्रदान करती है। मुझे आपके प्रतिभाशाली शोधकर्ता कोरोशी दी चोमा द्वारा हमारे दोनो देशो के लोगो के बीच मित्रता का पुल बनाने के लिए निभाई भूमिका की याद दिलाने की जरूरत नही है। हमारे अग्रणी कवि रविन्द्र नाथ सम्भवत: हगरी मे भी उतने ही माने जाते है, जितने कि भारत मे । इस के बडे समृद्ध कुछ एक उत्तराधिकारियों में से हैं· अमृता शेर गिल, एरवीन शाश और एलिजाबेथ बूनर आदि।

आज के विश्व मे इस प्रकार के सांस्कृतिक दूतों के प्रयास दोनो देशों के विभिन्न क्षेत्रो के आतरिक क्रियाकलापो द्वारा मजबूत हो रहे है। पिछले हमारे परस्परिक सबध अवसर एव चुनौतियो का एक मिश्रण रहे है। शील विश्व मे भारत हगरी के बडे व्यापारिक साझेदारो मे एक रहा है। तकनीकी के क्षेत्र मे हमारे महत्वपूर्ण सबंध रहे है। हमारी सस्थाए एव बुद्धिजीवी विज्ञान, तकनीकी, स्वास्थ्य, सस्कृति एवं ज्ञान की अनेक शाखाओ में सबध बढाते रहे है। हमारे दोनों देशो के लोग एक-दूसरे का किस हद तक सम्मान करते हैं यह बात हगरी मे हाल ही में आयोजित ''डेज ऑफ इडियन कल्चर'' मे मुखरित हुई है। हमारी दोनो सरकारे सहयोग की इस भावना को करन के लिए सचेत है। राष्ट्रपति जी, सन् 1991 मे आपकी भारत की यात्रा तथा अब मेरी इस यात्रा से यह महत्व और स्पष्ट हुआ है जिसे दोनो देश अपने सबधो को मजबूत बनाने से सम्बन्धित मानते हैं।

क्रमश चितक और विश्व भर के नेता ससार की अतर-निर्भरता तथा इस पृथ्वी के नागरिको के समान भविष्य के महत्व को पहचानने लगे है। ऐसे लोगो की सख्या नगण्य है जो यह मानते है कि किसी भी देश के लिए, चाहे वह बडा हो या छोटा, केवल अपनी ही और अपने लोगो की चिता करना व्यवहारिक है। एक की समृद्धता सभी की समृद्धता से जुड़ी हुई है।

भारत मे हम लोगो के ऊपर मानव जाति के छठे भाग के जीवन स्तर को बढ़ाने की प्रत्यक्ष जिम्मेदारी है। आजादी पाने के चार दशक से हम बिना रुके सामाजिक-आर्थिक न्याय सुनिश्चित करते हुए आर्थिक विकास के रास्ते तलाशने में हम लगे हुए हैं। भारत ने अपनी आर्थिक नीति को उदार बनाकर नई शुरूआत की है जो हमारे इस विश्वास का सकेतक है कि विश्व को जितना हमारे कल्याण में योगदान करना है उतना ही हमे भी विश्व के कल्याण मे योगदान करना है।

इस सदर्भ में हमने हंगरी में हुए आर्थिक परिवर्तनों की प्रक्रिया को रुचि के साथ देखा है। मुझे विश्वास है कि हमारे दोनों देशों ने जो नई नीतियां अपनाई हैं, निकट भविष्य में उनके लाभकारी परिणाम दिखाई देंगे।

भले ही धीमी गति से, लेकिन लोकतांत्रिक प्रणाली से होने वाला परिवर्तन मनुष्य के इतिहास में सबसे अधिक स्वीकृति पाता है। जहां तक भारत का सबंध है, इसकी विशेपता लक्ष्य के लिए किए जा रहे केवल बड़े प्रयासो में ही नहीं है, बल्कि इसमें भाग लेने वाले लोगो की विविधता में भी है। हम अपने देश के विभिन्न विचारो, सस्कृति, परम्परा, भापा, साहित्य, रीति-रिवाज और सामाजिक मान्यताओं को अधिक मजबूत सामाजिक बहुविध राप्ट्र बनाने के तत्व के रूप में लेते है। हमारा प्रयास हमारे लोगों के भोतिक हितो के लिए समाज को आधुनिक बनाना है जिसमे अपने परम्परागत मूल्यो के सकारात्मक तत्वो का समन्वय होगा और अब तक के मानवीय ज्ञान द्वारा प्राप्त नए विचारों और आतरिक दृष्टि को स्वीकार करने के भी प्रयास होगे।

भारत और हंगरी वे देश हैं, जिनके समान मानव मूल्य हैं और जिन्होंने इन चुनौतियो का सामना करने के लिए विभिन्न मचो पर मिलकर काम किया है। मुझे विश्वास है कि आने वाले वर्पो में पारस्परिक एवं अन्तर्राष्ट्रीय मामलो पर हमारा सहयोग क्रमश: मजबूत होता जाएगा।

बीस वर्प पूर्व मै हंगरी आया था और मुझे रविन्द्र नाथ टैगोर के स्मारक के बगल में बालातोन फुरेदी मे पौधा लगाने का सौभाग्य मिला था। जिस प्रकार उस पौधे की जड़ें गहरी हो गई और उससे बहुत सी शाखाए निकलीं उसी प्रकार हमारे सबंध भी विकसित हुए हैं। मुझे विश्वास हे कि हमारी इस यात्रा ने हमारी ऐतिहासिक मित्रता को और मजबूती दी है।

यूरोपीय समुदाय से निकट संबंध

भारत और आयरलैंड के लोग स्वतंत्रता, लोकतंत्र तथा विधि के शासन के प्रति समान रूप से प्रतिबद्धता की भावना रखते हैं।

हन दोनों देशों के स्वतंत्रता आंदोलन भी काफी कुछ एक-से रहे हैं। भारत के स्वतंत्रता सेनानियों ने आयरलेंड के स्वतंत्रता-संघर्ष से प्रेरणा ग्रहण की थी। ... बेमट की अजेय भावना ने भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन पर अपनी अमिट छाप ...डी। हमारे देश के राष्ट्रपिता महात्मा गांधी आयरलैंड के प्रख्यात नेता तथा भूतपूर्व ...ट्रपति एमन. डी. वलेरा के अत्यंत प्रशंसक थे। फरवरी, 1936 में आयोजित आयरिश रिपब्लिक कांग्रेस की लंदन शाखा को भेजे अपने संदेश में पंडित जवाहर लाल नेहरू ने कहा था :

"आयरलैंड भारत के दिमाग में वसा रहा है और हम लोगों ने आजादी के लिए लम्बे संघर्ष एव शक्तिशाली साम्राज्यवाद के निर्मम दमन के वावजूद उसकी अदम्य इच्छा से प्रेरणा ली है।"

भारत और आयरलैंड के संवंध केवल राजनीतिक क्षेत्रों तक सीमित नहीं रहे हैं। डब्ल्यू.वी. ईट्स, जेम्स जायस, वर्नाड शॉ, डब्ल्यू.एम. स्यंगे और सैमुअल बेके... जैसे आयरिश साहित्यकारों के काम और प्रतिभा के भारतीय लेखक वड़े प्रशंसक ...रहे हैं। डब्ल्यू.वी. ईट्स पश्चिमी साहित्यकारों में प्रथम थे, जिन्हें रवीन्द्रनाथ टैगोर की ...कविताओं में समान संवेदना मिली और उनके काव्य संकलन 'गीतांजलि' की प्रस्ताव... लिखने की इच्छा जागी। टैगोर ने भी अपनी ओर से आभार स्वरूप अपना नाटक "द गार्डनर" ईट्स को समर्पित किया था। इस प्रकार दोनों देशों की समृद्ध साहित्यिक विरासत ने भी हमारे लोगों के वीच एक जैसी भावना और संवंध विकसित करने में कोई छोटी-मोटी भूमिका नहीं निभाई है।

आजादी के वाद से भारत हमेशा लोकतंत्र एवं धर्मनिरपेक्षता के प्रति कटिबद्ध रहा है। लोकतंत्र भारत के लोगो की राजनीतिक, आर्थिक, सामाजिक और

आयरलैंड की राष्ट्रपति श्रीमती मेरी रॉबिन्सन के सम्मान में आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 27 सितंवर, 1993

सांस्कृतिक इच्छाओं की पूर्ति के लिए पूरे अवसर प्रदान करता है। धर्मनिरपेक्षता हमारे सामाजिक तथा सांस्कृतिक विविधता की एकता एवं हित की सर्वोत्तम गारंटी है। पारस्परिक सम्मान तथा सभी धर्मो मे एकता की भावना हमारी मानवीय परम्पराओं से गुंथी हुई है। हमारी लोक-चेतना में अतर्निहित लचिलापन, हमारे लोगों की सहज बुद्धि तथा लोकतंत्र एव धर्मनिरपेक्ष सिद्धांत के प्रति हमारी प्रतिबद्धता की ताकत हमें सभी बाधाओं को दूर करने मे सक्षम बनाती है।

भारत का संविधान हमारे सभी नागरिको को कानून के समक्ष समानता एवं मौलिक अधिकारो की गारंटी देता है। एक लोकतंत्र के रूप में भारत विधि के शासन तथा मानवीय गरिमा के प्रति गहरे रूप मे प्रतिबद्ध है। मानवीय अधिकारो के प्रति अपनी दृढ़ इच्छा को ध्यान मे रखते हुए हमने इसको और मजबूत तथा संस्थागत रूप देने के लिए राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग बनाने का निर्णय लिया है। इस बारे मे आवश्यक कानून बनाने का प्रस्ताव संसद के पास विचाराधीन है।

हमारी जैसी लोकतांत्रिक जीवन-पद्धति तथा बहुविध समाज वाले देश को उग्र हिसा और आतंकवाद की कड़ी चुनौती का सामना करना पड़ रहा है। यह अन्तर्राष्ट्रीय समुदाय के लिए आवश्यक है आतकवाद के सभी रूपों की चुनौती को दूर करने के लिए सहयोग करे।

यूरोपीय समुदाय के एक सदस्य के रूप मे आयरलैंड ने अपने भविष्य को दृढ़ता केसाथ यूरोपीय एकता की प्रक्रिया से जोड़ लिया है। एक बाजार की स्थापना के साथ-साथ अन्य क्षेत्रों मे एकीकरण स्थापित करने की दिशा में जो प्रगति की गई है, वह इस बात का सबूत है कि इसके सदस्य देश सदियों पुराने विवादों को भूल गए हैं और आपस में निकट के संबध स्थापित कर रहे हैं, ताकि यूरोप मे शाति, समृद्धि, सुरक्षा और समरूपता सुनिश्चित हो सके। भारत ने भी यूरोपीय समुदाय के देशों के साथ निकट के तथा सहयोगपूर्ण उल्लेखनीय सबंध स्थापित किए हैं, जो कि हमारा सबसे बड़ा आर्थिक सांझेदार है। हम यूरोपीय समुदाय के प्रत्येक सदस्य देश के साथ अपने निकट के संबधों को बढ़ाने के इच्छुक हैं। आयरलैड महत्वपूर्ण औद्योगिक देश के रूप में तेजी से उभर रहा है। यह हमारा विश्वास है कि यूरोपीय समुदाय के देशो के साथ व्यापार, पूंजी-निवेश तथा तकनीकी क्षेत्रों में सहयोग बढ़ाने की दृष्टि से आयरलैंड सक्रिय भूमिका निभाएगा।

हमारे देश में आपकी छवि एक प्रतिष्ठित एवं विद्वान महिला के रूप में है। आप अपनी उल्लेखनीय शैक्षणिक एवं राजनैतिक उपलब्धियों के बाद आयरलेंड

के इस महत्वपूर्ण पद के लिए चुनी गई हैं। पिछले वर्ष आप द्वारा सोमालिया की साहसिक यात्रा ने लोगो की वेदना और तकलीफों की विश्व को मार्मिक याद दिलाई थी। हमने मानवता एव नागरिक अधिकारो के प्रति आपके गहरे सरोकार को देखा है, और हम सामाजिक एवं मानवीय चिंताओं के प्रति आपकी प्रतिबद्धता के अत्यत प्रशसक रहे हैं।

भारत के विभिन्न क्षेत्रों की यात्रा से आप हमारे देश की समृद्ध सास्कृतिक विरासत और विभिन्नता से परिचित हो सकेंगी। मुझे प्रसन्नता है कि अपनी कलकत्ता यात्रा के दौरान आप मदर टेरेसा से मिलेगी, जो कि निराश्रित एव अनाथ लोगो के बीच काम करने के लिए पांच दशक से भी अधिक समय पूर्व आयरलैड के एक मठ से भारत आई थीं। साबरमती आश्रम से आप महात्मा गाधी के जीवन तथा भारतीय स्वतत्रता आदोलन के एक उल्लेखनीय अध्याय से परिचित हो सकेगी। बम्बई और बगलोर की यात्रा से आपको औद्योगिक एव तकनीकी रूप से विकसित हमारे दो महत्वपूर्ण केन्द्रों को देखने का अवसर मिलेगा।

लोकतंत्र में अटूट आस्था

भारत और स्वीडन के बीच के ऐतिहासिक सबध
रहे है जब स्वीडन के पहले ज्ञात यात्री निल
इडिया कम्पनी के कर्मचारी के रूप में भारत आए थे
दूसरे के प्रति जागरुकता निरंतर बढती रही है और
प्रगाढ करने में कवियो और चित्रकारों, यात्रियो,
प्रौद्योगिकविदो ने अपना-अपना योगदान दिया है।
गुस्ताव फ्रौडिग, चित्रकार ऐग्रोन लुडग्रैन, अर्थशास्त्री
मायरडाल, फिल्म निशेदक इगमार बर्गमन तथा भा
रवीन्द्रनाथ टैगोर तथा सी वी रमन के नाम सहज

हाल के वर्षो मे हमारे दोनों देशो के बीच निय
हुई हैं, जिनसे हमारे सबंध और प्रगाढ़ एव सुदृढ हुए
पडित जवाहर लाल नेहरू सन् 1957 मे स्वीडन
बाद स्वीडन के प्रधानमत्री तागे अलेंडर सन् 195
तब से हमारे दोनों देश विविध क्षेत्रो मे निकटता
पर अग्रसर होते रहे है। दोनों देशों के निर्वाचित
से उनके बीच व्यक्तिगत स्तर पर जो सवध
स्तरों पर हमारी मित्रता में गुणात्मक वृद्धि हुई
कहना दोनो देशो के लोगों की भावनाओ को
ही देश आने वाले वर्षो मे हमारे द्विपक्षीय स
भी सुदृढ करना चाहते है।

अपनी आजादी के समय ही भारत लो और धर्मनिरपेक्ष
वचनबद्धता पर अडिग रहा है और हमारा दृढ विश्वास है
लोगो का हित सध सकता है तथा विविधता मे एकता की सकती
है। बहुदलीय लोकतत्र में हमारे लोगों की राजनीतिक, आर्थिक सामाजिक और

स्वीडन के नरेश श्री कार्ल योडस गुस्ताव एव महारानी सिल्विया के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 11 अक्तूबर, 1993

सास्कृतिक महत्वाकांक्षाओ को पूरा करने की पर्याप्त गुंजाइश रहती है। हमारी प्रणाली की शक्ति एव स्थायित्व का आधार वस्तुत: हमारी परम्परा और सस्थाओं मे निहित लचीलापन, हमारे लोगों की सहज प्रज्ञा तथा लोकतात्रिक एवं सर्वधर्म सद्‌भाव के सिद्धातो के प्रति हमारी अटूट आस्था है।

अनेक मामलो पर भारत और स्वीडन के दृष्टिकोण और हित चिंताएं एक सी हैं। हम दोनो ही लोकतंत्र, मानवाधिकार तथा विधि के शासन के प्रति कटिबद्ध है। पर्यावरण की रक्षा एवं दीर्घकालिक विकास को बढावा देने में हमारी गहरी रुचि है। हम दोनो ही न्यायोचित विश्व अर्थव्यवस्था की स्थापना चाहते हैं, जिसमें उत्तर और दक्षिण के राष्ट्र पारस्परिक लाभ एव समृद्धि के लिए निकटता के साथ काम करें। हम दोनों ही यह चाहते है कि उरुग्वे दौर की बातचीत का शीघ्र और सफल निष्कर्ष निकले तथा इसके परिणाम समीचीन एव दूरगामी हो।

स्वीडन ने उत्तर-दक्षिण वार्ता को आगे बढ़ाने के सिलसिले में जो प्रयास लिए हे, उनकी हम सराहना करते हें। इस प्रकार की वार्ता से भारत महत्वपूर्ण रूप से जुडा हुआ है, जिसमे विश्व के राष्ट्रों के वीच की आर्थिक असमानता को दूर करने की कोशिश की जा रही है। स्वीडन ने दक्षिण-दक्षिण सहयोग को वढाने में प्रशंसनीय भूमिका निभाई है। भारत को अपनी सामयिक प्रौद्योगिकी एव अपनी कुशल जनशक्ति का प्रयोग करके विकासशील देशों के वीच इस प्रकार का सहयोग बढ़ाने के लिए स्वीडन के साथ मिलकर काम करने में खुशी होगी।

हमने इस वात पर गौर किया है कि स्वीडन ने पश्चिमी यूरोप के साथ निकटता स्थापित करने मे अपनी दिलचस्पी जाहिर की है तथा यूरोपीय समुदाय की सदस्यता के लिए आवेदन किया हे।

इस समुदाय के साथ अनेक क्षेत्रो मे हमारे निकट और सहयोग पूर्ण सवध हैं। हम आशा करते हे कि एकीकृत यूरोप एक ऐसी इकाई के रूप में उभर कर सामने आएगा, जिसकी दृष्टि सामने की ओर होगी और हमें यह पक्का विश्वास है कि स्वीडन इस समुदाय से वाहर के देशो के साथ अपने वर्तमान संबधो को विकसित और संवर्धित करेगा।

स्वीडन की तरह भारत भी निरस्त्रीकरण के लक्ष्य के प्रति वचनवद्ध है। हमने एक सार्वभौम, व्यापक तथा भेदभाव से मुक्त ऐसी व्यवस्था की अपनी इच्छा की वार-वार पुष्टि की है, जो ससार को परमाणु अस्त्रों तथा परमाणु युद्ध के खतरों से हमेशा के लिए छुटकारा दिला सके। इस भावना के साथ हमने "छह राष्ट्र,

पांच महाद्वीप शाति पहल'' में स्वीडन के साथ सहयोग किया था। यद्यपि शीत युद्ध के बाद के युग में परमाणु युद्ध का खतरा कम हो गया है, तथापि अभी भी मानवजाति को परमाणु अस्त्रों के खतरे से अपने-आपको पूरी तरह मुक्त करना शेप है। इस लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में हम दूसरे देशो के साथ मिलकर काम करते रहेगे।

भारत सरकार ने भारत के आर्थिक विकास को प्रोत्साहित करने और अपनी अर्थव्यवस्था मे सार्वभौम दृष्टिकोण लाने के उद्देश्य से आर्थिक सुधारों के क्षेत्र में बड़े कदम उठाए हैं। आर्थिक उदारीकरण के हमारे इस कार्यक्रम से पूजी निवेश, संयुक्त उद्यम और आर्थिक सहयोग के अवसर सामने आए हैं। उन्नत प्रौद्योगिकी एवं विशेपज्ञता के लिए स्वीडन का नाम अत्यत सम्मानपूर्वक लिया जाता है। हम महामहिम के साथ भारत की यात्रा पर आए स्वीडन के प्रौद्योगिक प्रतिनिधिमंडल का स्वागत करते है। मुझे विश्वास है कि अपनी यात्रा के दौरान यह प्रतिनिधिमंडल भारत के आर्थिक विकास के लिए स्वीडन की भागीदारी बढ़ाने वाले अवसरों को पहचानेगा।

महाराष्ट्र राज्य और उसके निकटवर्ती क्षेत्रों में आए विनाशकारी भूकम्प के समय व्यक्त आपके सवेदना सदेश की हम सराहना करते हैं। भारत सरकार द्वारा शुरू किए गए राहत कार्यो में स्वीडन की सरकार की ओर से दी गई उदार सहायता के प्रति हम आभारी हैं। भूकम्प पीड़ित क्षेत्रों में पुनर्वास कार्य के लिए और सहायता देने की स्वीडन की पेशकश को हम ध्यान में रखेंगे।

इस शताब्दी के प्रारम्भ में आपके पितामह युवराज गुस्ताव अदोल्फ की भारत यात्रा भारत में स्वीडन की दिलचस्पी की ज्योति प्रज्जवलित करने की दिशा में एक शिखा के समान थी। हमें पूरा विश्वास है कि आपकी यह यात्रा हमारे दोनो देशों के सबधों को और व्यापक बनाएगी।

तीसरी दुनिया की एकता और सहयोग

गुयाना में भारतीयों के आगमन की 150वीं वर्ष गांठ के राष्ट्रीय समारोहो के अवसर पर सन् 1988 मे मुझे आपके सौंदर्यपूर्ण देश की यात्रा का अवसर मिला था। उस समय आपसे तथा गुयाना के अन्य नेताओं के साथ हुई अपनी मुलाकातो का स्मरण करके मुझे आज बडी प्रसन्नता हो रही है। गुयाना के लोगो में भारत के प्रति अगाध प्रेम और आदर की जो भावना मुझे वहाँ देखने को मिली, उसकी गर्मजोशी आज भी मेरी स्मृति मे ताजा है।

भारत और गुयाना के बीच आपसी सबंध ऐतिहासिक और सास्कृतिक बंधनों और समान अनुभवों के कारण और भी मजबूत हुए हैं। दोनों देशों के बीच मैत्री और सहयोग की एक लम्बी परम्परा रही है। संयुक्त राष्ट्र, राष्ट्रमंडल और गुट-निरपेक्ष आदोलन समेत अनेक अंतर्राष्ट्रीय मचों पर हमने एक-दूसरे के साथ काफी करीबी रूप से मिलजुल कर काम किया है। अतर्राष्ट्रीय महत्व के अधिकतर मुद्दो पर हमारे विचारों मे काफी समानता है तथा दोनो देशों के द्विपक्षीय सम्बन्ध सदैव ही गर्मजोशी, सद्भावना और आपसी समझ-बूझ से परिपूर्ण रहे हैं। मुझे विश्वास है कि आपके सुयोग्य नेतृत्व में हमारे बीच यह सहयोग निरन्तर बढ़ोत्तरी की ओर अग्रसर रहेगा।

आपके देश के आर्थिक और अन्य विकासक्रमों को हम गहन रूचि के साथ देखते रहे हैं। मुझे यह देखकर प्रसन्नता हुई कि गुयाना अपने आर्थिक पुनरुत्थान की ओर तेजी से अग्रसर है। मुझे विश्वास है कि आपके प्राकृतिक संसाधनों की अपार क्षमताओं और सभावनाओं के आधार पर विकास के इस रूख को निरन्तरता मिलेगी और इससे गुयाना के लोगो में खुशहाली बढ़ेगी।

इस सन्दर्भ में, हम भारतीय मूल के व्यक्तियो द्वारा गुयाना की प्रगति में किए गए बहुमूल्य योगदान की सराहना करते हैं।

आपका दीर्घ और शानदार राजनैतिक जीवन और अपने देश के सर्वोच्च पद पर आपका पहुंचना, गुयाना तथा भारत की धरती से दूर अन्य स्थानों पर भारतीय

गुयाना सहकारी गणराज्य के राष्ट्रपति डॉ0 छेदी बेरेट जगन के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 27 दिसंबर, 1993

मूल के लोगों की सेवाओं और त्याग का एक प्रतीक है। भारत में हम सभी के लिए यह एक गौरव का विषय है।

मेरे देश की एक यह सोची-समझी नीति रही है कि विकास प्रक्रिया मे अर्जित अपने अनुभवों को हम, विभिन्न योजनाओं के जरिए, अपने सहयोगी विकासशील देशों के साथ मिलकर बाटे। भारतीय तकनीकी और आर्थिक सहयोग कार्यक्रम (आईटेक) ऐसा ही एक कार्यक्रम है। इस अवसर पर मैं गुयाना के साथ इस कार्यक्रम के अन्तर्गत अपने सहयोग को बनाए रखने तथा उसका विस्तार करने की अपनी प्रबल इच्छा को व्यक्त करना चाहूंगा। इसके साथ ही, मेरी सरकार विकास के प्रति गुयाना के प्रयासों में अन्य उपलब्ध माध्यमों के जरिए भी योगदान करके अत्यन्त प्रसन्नता का अनुभव करेगी।

शीत युद्ध काल की समाप्ति के बाद भी विश्व में तनाव व्याप्त है और कई गम्भीर समस्याएं शांति और विकास के मार्ग में बाधाएं उत्पन्न कर रही हैं। इस परिप्रेक्ष्य में विकासशील देश, विशेष तौर पर, यही चाहते हैं कि न्याय और समानता पर आधारित एक विश्व व्यवस्था की स्थापना हो। विकासशील देशों के अस्तित्व को बनाए रखने के लिए इन देशों के बीच एकजुटता का होना एक अहम् जरूरत है। आज जब कि विकसित देश भी अपने आपसी लाभ के लिए सगठित होने की आवश्यकता को महसूस कर रहे हैं, तो विकासशील देशों के लिए यह और भी आवश्यक हो जाता है कि वे मिलजुल कर खड़े हों और शाति तथा प्रगति की दिशा में एक दूसरे के साथ सहयोग करें। तीसरी दुनिया की एकता और सामूहिक आत्म-सहायता की भावना की आवश्यकता को आज के विश्व में नजरअंदाज नहीं किया जा सकता। भारत और गुयाना दोनों को ही इस दिशा में अपने प्रयासों को दुगुनी गति देनी चाहिए।

भारत ने अपने पड़ोसियों की ओर सदैव ही मित्रता और सहयोग का हाथ बढ़ाया है। इस मामले में कुछ समस्याएं हैं लेकिन हमें इस बात का विश्वास है कि द्विपक्षीय समस्याओं को सुलझाने के लिए शांतिपूर्ण ढंग से आपसी बातचीत ही सबसे अच्छा तरीका है। दक्षिण पूर्व एशियाई क्षेत्रीय सहयोग संगठन-सार्क-दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के बीच सामूहिक समझ-बूझ और मैत्री का मजबूत करने की दिशा में इन देशो की विदेश-नीतियों का एक महत्वपूर्ण आयाम है। आपके क्षेत्र में भी -कैरीकॉम- (Caricom) और अन्य संयुक्त उद्यमो के माध्यमों से आपसी सहयोग का एक सुखदायक रुझान दृष्टिगोचर हो रहा है।

आपकी इस यात्रा में हमें आपके प्रति तथा आपके माध्यम से गुयाना के लोगो के प्रति, अपने उस भ्रातृपूर्ण स्नेह और मैत्री को व्यक्त करने का अवसर मिला जो भारत और गुयाना के बीच विद्यमान है। आपकी यात्रा भारत और गुयाना की मैत्री के इतिहास की एक महत्वपूर्ण घटना है।

एशिया में शांति

स्वतंत्र उजवेकिस्तान के उदय के वाद भारत की आपकी पहली राजकीय यात्रा से हमें भारत और उजबेकिस्तान के बीच प्राचीन काल से चले आ रहे संबंधों को ताजा करने का अवसर मिला है। इमाम अबु अव्दुल्ला इव्न इस्माइल अल-बुखारी, महान् गणितज्ञ अल-ख्वारिजमी और खगोलशास्त्री उलुग वेग जैसे उजवेकी विद्वानों के मानव सभ्यता के प्रति योगदान की हम भारत के लोग निरंतर सराहना करते हैं। उलुग वेग की तो 600 वीं वर्पगाठ इसी वर्प मनायी जा रही है। इतिहास ने मध्य एशिया क्षेत्र को सांस्कृतिक और आर्थिक गतिविधियों के एक ऐसे महत्वपूर्ण संगम के रूप में देखा है जिसने परंपरागत रेशम मार्ग से जुड़े क्षेत्रों पर अपना और सकारात्मक प्रभाव डाला है। हमें आशा है कि मध्य एशिया में स्वतंत्र राष्ट्रों के उदय से एशिया के देशों और उनके लोगों के बीच एक बार फिर सांस्कृतिक पुनर्जागरण तथा रचनात्मक आदान प्रदान का सूत्रपात होगा।

उजवेकिस्तान के साथ विभिन्न क्षेत्रो में व्यापक सहयोग के प्रति भारत वचनवद्ध है। पिछले दो वर्पो में हमने अनेक राजनीतिक, आर्थिक और सांस्कृतिक विपयों पर आपसी हित के लिए सहयोग की दिशा में गहन विचार विनिमय किया है। भारत ने अपनी सीमित क्षमताओं की परिधि में, वड़ी संख्या में, विकासशील देशों में मानव संसाधनो के विकास में अपना यथोचित योगदान किया है, और हमें खुशी है कि राष्ट्र निर्माण का यह महत्वपूर्ण पहलू एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें हमारे दोनो देश करीवी रूप से मिलजुलकर काम कर रहे है। मैं आपको विश्वास दिलाना चाहूँगा कि इस क्षेत्र में सहयोग के वारे मे आपकी सरकार के किसी भी सुझाव पर हमारी ओर से पूरा ध्यान दिया जायेगा। मुझे इस वात पर भी पूर्ण विश्वास है कि मेरी सरकार के मंत्रियों के साथ आपकी वातचीत से हमारे दोनों देशों के बीच सहयोग और वढ़ेगा तथा मजवूत होगा तथा आपसी महत्व के विभिन्न विपयों पर हमारे विचारो मे समानता भी उभर कर सामने आयेगी। हम उजवेकिस्तान की उन अपार संभावनाओ से भली-भांति परिचित हैं, जो उसे एक समृद्धशाली

उजवेकिस्तान गणराज्य के राष्ट्रपति श्री इस्लाम अव्दुगनियेविच करीमोफ के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 3 जनवरी, 1994

देश के रूप में परिवर्तित कर सकती है। हमारा यह प्रयास होगा कि इस दिशा में अपना, मौलिक योगदान करके हम दोनों देशों के लोगों के समान हित के लिये कार्य करें।

आपके सुयोग्य नेतृत्व में उजबेकिस्तान जिस प्रकार अपनी स्वतंत्रता को मजबूती प्रदान करने और लोगों द्वारा निश्चित राजनीतिक और आर्थिक उद्देश्यों की प्राप्ति के महती कार्य में जुटा है, उसकी हम प्रशंसा करते हैं। आपने अपने संविधान में प्रजातंत्र, धर्मनिरपेक्षता तथा सामाजिक न्याय के आदर्शों को प्राप्त करने के प्रति जो प्रतिबद्धता व्यक्त की है, उसकी भी हम सराहना करते हैं। यह हमारा समान प्रयास होना चाहिए कि हम आर्थिक विकास, प्रगति और लोगों की भलाई को सुनिश्चित करने के प्रयासों को अवरुद्ध करने वाले आतंकवाद और संकुचित उग्रवाद के खतरे का सामना करें। इस संघर्ष के लिए समान विचारों वाले देशों को एकजुट होकर सामने आना होगा। हमने इस दिशा में मिलजुलकर कई कदम उठाये भी हैं मुझे विश्वास है कि महामहिम की भारत यात्रा इन महत्वपूर्ण प्रयासों को और अधिक मजबूती प्रदान करेगी।

भारत द्वारा स्वतंत्रता प्राप्त करने के अवसर पर हमारे पहले प्रधान मंत्री श्री जवाहरलाल नेहरू ने एशियाई संबंधों पर एक सेमिनार का आयोजन किया था, जिसमें मध्य एशिया के हमारे पड़ोसी राष्ट्रों ने भी हिस्सा लिया था। सम्मेलन को सम्बोधित करते हुए पंडित नेहरू ने कहा था —

''ऐतिहासिक बदलाव के इस दौर में जो स्वप्न एक साकार रूप ले रहा है, उसके प्रति पूरे एशिया में हम सब अपनी आस्था रखें। अनादिकाल से एशिया जिन मानवीय भावना का प्रतीक रहा है, आइए हम उसके प्रति अपनी पूरी निष्ठा व्यक्त करें।''

अपने संयुक्त प्रयासों द्वारा भारत और उजबेकिस्तान, सभी राष्ट्रों और लोगों की भलाई के उद्देश्य से, एशिया में शांति, मैत्री और सहयोग की प्रक्रिया को मजबूती तथा तेज गति प्रदान कर सकते हैं।

आपकी इस यात्रा में हमें आपके प्रति तथा आपके माध्यम से उजबेकिस्तान के लोगों के प्रति, उस स्नेह और गर्मजोशी को व्यक्त करने का अवसर मिला है जो भारत में अपने उजबेकी भाइयों के लिए मौजूद है। आपकी यात्रा दोनों देशों की सरकारों और लोगों की मैत्री को सुदृढ़ करने के हमारे मिले-जुले प्रयासों की एक महत्वपूर्ण कड़ी है।

न्याय पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था

हम दोनों देशों के संबंध ऐतिहासिक रहे हैं, जबकि मध्यकाल में बोहेमिया साम्राज्य भारत से रत्नों का व्यापार करता था। वर्तमान समय में दोनों देशों के बीच विभिन्न क्षेत्रों में महत्वपूर्ण संबध स्थापित हुए है। मध्य-पूर्वी यूरोप में अविभाजित चेकोस्लोवाकिया भारत का बड़ा व्यापारिक साझेदार था। राजनीतिक रूप से हमने हमेशा एक दूसरे की चिंताओं को समझा और सराहा है। विज्ञान और तकनीकी सबधों के क्षेत्र में सक्रिय आदान-प्रदान सबसे अधिक स्थायी तत्व का प्रतिनिधित्व करता है। यह हम लोगो के लिए संतोप की बात है कि चेक गणराज्य के साथ हमारे ऐसे सबध एक शताब्दी से भी अधिक पुराने है। आपके देश में भारतीय भापाओ, दर्शन, धर्म और संस्कृति मे जो रूचि ली जाती है, वह इस बात का प्रमाण है कि भौगोलिक रूप से दूर होने के बावजूद आपके लोग इस देश को जानना चाहते है, और उनके एक से आधारभूत मूल्य और विश्वास है। रवीद्रनाथ टैगोर और विनसेक लेसनी जैसों के सयुक्त बौद्धिक प्रयासो का इतिहास गर्व की बात है। हमें चाहिए कि हम इस महान परपरा का पोपण करे, और इसे मजबूत बनाएं।

जहॉ यह स्वाभाविक है कि हमें अपने पारस्परिक सबधों के क्षेत्र को बढ़ाने के प्रयास करने चाहिएं, वहीं आपके क्षेत्र मे जो परिवर्तन हुए हैं, उनसे नयी सामान्य भूमिका बनी है। हम भारतीय लोकतांत्रिक तथा जीवन की बहुविधि पद्धति को बहुत महत्व देते हैं। सहिष्णुता की परंपरा और विचारों का खुलापन भारतीय समाज के विकास का ऐतिहासिक गुण रहा है। हमारा समाज विविष्टतापूर्ण विभिन्नता का समाज रहा है, जो एक-सी ऐतिहासिकता, एक जैसी सभ्यता की अवधारणा तथा इन सबसे ऊपर, विभिन्न विचारों और स्तरो के सामंजस्य एव समन्वय के कारण एक-दूसरे से जुड़े हुये हैं। ऐसा है-हमारा देश, इसलिए यह स्वाभाविक है कि हम विश्व के किसी भी भाग में बहुवाद लोकतंत्र के विकास का स्वागत करते हैं, विशेपकर तब, जबकि किसी भी देश में प्रभुत्ववादी शासन के स्थान पर

चेक गणराज्य के राष्ट्रपति श्री वात्सलाव हावेल तथा श्रीमती हावलोवा के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 7 फरवरी, 1994

लोकतांत्रिक जीवन-प्रणाली आती है, और यह परिवर्तन लोकतांत्रिक माध्यमों द्वारा बिना हिंसा और रक्तपात के होता है। आपके देश में आपके प्रेरक नेतृत्व में जो क्रांति आई है, उससे हमारा यह विश्वास फिर से दृढ़ हुआ है कि मार्ग में अनेक कठिनाइयों एवं बाधाओं के बावजूद अंततः सत्य और न्याय ही प्रबल होंगे।

[illegible] अपने लेखों में उस विश्वास को व्यक्त करते रहे हैं कि निराशा के [illegible] में अपने अंदर तथा अपने आसपास के लोगों की ओर देखना चाहिए। आपने [illegible] और संकीर्ण सिद्धांतों को निरस्त किया है। आपकी बौद्धिक और [illegible] गतिविधियाँ आपके इस विश्वास को व्यक्त करती हैं कि "सत्य तभी [illegible] किया जा सकेगा, जबकि उसके पीछे मनुष्यत्व का स्पर्श हो।" आपने [illegible] के सैद्धान्तिक आधार को मूर्तिमान किया है, जिसने आपके क्षेत्र में लोकतंत्र [illegible] की है। गुटनिरपेक्षता, अहिंसा और मानवाधिकार के प्रस्तावक के रूप [illegible] आपके संदेश के महत्व को समझते हैं, जो राजनीतिक और आर्थिक; दोनों [illegible] न्याय पर आधारित अंतर्राष्ट्रीय व्यवस्था की हमारी एक-सी खोज से जुड़े [illegible]

मुझे विश्वास है कि आपकी इस यात्रा के दौरान जो बातचीत होगी, विचारों का [illegible] आदान-प्रदान होगा, वे दोनों के लिए लाभदायक एवं मूल्यवान सिद्ध होंगे। इसमें [illegible] संदेह नहीं कि आपकी यह यात्रा हमारे दोनों के बीच के संबंधों को अ[illegible] करेगी।

कुशल अर्थव्यवस्था का निर्माण

भारत और मंगोलिया के संबंध चिरकाल से सौहार्दपूर्ण एवं मैत्रीपूर्ण रहे हैं।
भारत के लोग अपने सहयोगी एशियाई देश मंगोलिया के साथ एक विशेष प्रकार की निकटता महसूस करते है। यह ऐसा देश है, जिसके अन्तरराष्ट्रीय मामलों पर विचार हमारे विचारों से मिलते हैं भगवान बुद्ध का संदेश भारत से आपके देश में ले जाया गया था। भारत के मुगल वंश ने अपने वश क्रम का आरंभ मंगोल वीर-पुरुषों से होना स्थापित किया है।

भारत और मगोलिया के संबंध हाल के वर्षो में और गहरे एवं विकसित हुए हैं। यह मेरे लिए विशेष संतोष की बात है कि हमारे आर्थिक, व्यापारिक, सांस्कृतिक एवं प्रौद्योगिकीय क्षेत्र में पारस्परिक सहयोग हमारे दोनों देशों द्वारा कई संधियों पर हस्ताक्षर किये जाने से और सुदृढ़ हुए हैं। मैं आपको आश्वस्त करना चाहूंगा कि हम मंगोलिया के साथ अपने परम्परागत राजनीतिक एवं सांस्कृतिक संबंधों को और विकसित करने के लिए प्रयतशील रहेगे, ताकि हमारे सवंधो को नये आयाम मिल सकें एव परस्पर लाभकारी आर्थिक सहयोग वढ़ सकें।

आपकी इस यात्रा के दौरान हम मैत्रीपूर्ण सबधों एव सहयोग से संबधित एक महत्वपूर्ण सधि पर हस्ताक्षर करेंगे, जो हमारे द्विपक्षीय संबधों को और सुदृढ़ करने की दिशा में एक ऐतिहासिक कदम होगा। हम अपने संबंध शातिपूर्ण सह-अस्तित्व के पांच सिद्धातों एक दूसरे की प्रादेशिक अखंडता एवं सम्प्रभुता के प्रति सम्मान, परस्पर, अनाक्रमण, एक दूसरे के आन्तरिक मामलों में हस्तक्षेप न करने, समानता एवं परस्पर लाभ तथा शातिपूर्ण सह-अस्तित्व के आधार पर विकसित करना चाहेंगे। मुझे विश्वास है कि यह संधि समानता एवं परस्पर लाभ के आधार पर सहयोग का एक बहुमुखी ढांचा प्रदान करेगी। एक बहुध्रवीय विश्व में, जिसकी ओर हम अग्रसर है, अन्तरराष्ट्रीय व्यवहार ऐसे ही सिद्धान्तों पर आधारित होना चाहिए।

मगोलिया के राष्ट्रपति श्री पी ओचिरबात तथा श्रीमती औचिरबात के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 21 फरवरी, 1994

भारत और मंगोलिया दोनों ही गुट-निरपेक्ष राष्ट्र हैं, जिनके दृष्टिकोण अनेक विश्व मामलों पर एक समान हैं। हम दोनों की सरकारें संयुक्त राष्ट्र तथा संयुक्त राष्ट्र चार्टर में उल्लिखित उद्देश्यों एवं सिद्धांतों के प्रति वचनबद्ध हैं। हम वर्तमान ... व्यवस्था के स्थान पर एक ऐसी व्यवस्था की स्थापना के प्रति वचनबद्ध ... न्यायोचित हो, न्यायसंगत एवं लोकतांत्रिक हो, तथा जो नाभिकीय अस्त्रों ... से मुक्त हो।

मंगोलिया के लोग आपके कुशल नेतृत्व में आर्थिक पुनर्निर्माण के कार्य ... हुए हैं। मंगोलिया में आपने जो नये विचार और कदम उठाये हैं, उनमें ... गहरी दिलचस्पी रही है, और उनकी हमने सराहना की है। हमने अपने ... आर्थिक सुधार एवं परिवर्तन की नीति लागू की है, जिससे हमें आत्म-निर्भरता ... प्रति अपनी वचनबद्धता से समझौता किए बिना एक कुशल अर्थव्यवस्था का निर्माण करने में सहायता मिलेगी। हमारे दोनों देशों की अर्थव्यवस्थाओं में कुछ अनुपूरक क्षेत्र हैं, जो भारत और मंगोलिया के बीच व्यापार और आर्थिक सहयोग की नई संभावनाएं प्रस्तुत करते हैं। आपकी इस यात्रा के दौरान तथा आज हमारे बीच ... बातचीत के दौरान जिन संभावनाओं का पता लगाया गया है, हम उनके कार्या... की आशा करते हैं।

अंतर्संबंधों के और विकसित होने की आशा

भारत और पोलैण्ड के संबंध हमेशा से ही परम्परागत आपसी समझदारी, सद्भाव और मित्रता के रहे हैं।

भारत के स्वतंत्रता संघर्ष के समय हमारे महान नेताओं, विशेपकर महात्मा गांधी और पं. जवाहर लाल नेहरू ने पोलैण्डवासियों को मानवीय गरिमा और स्वतंत्रता के उन महान उद्देश्यों हेतु, जिनके लिए हमारे दोनों देश प्रतिवद्ध हैं, के लिए सह-संघर्षरत लोगों के रूप मे देखा।

जब फासीवाद की काली शक्तियाँ पोलैण्ड पर छा गई थीं, तव पोलेंड के लोगों द्वारा किए गए साहसपूर्ण प्रतिरोध ने भारत में प्रशंसा का भाव पैदा किया।

इसी प्रकार मानवीय ज्ञान और उपलब्धियों में पोलैण्ड के विशेप योगदान के बारे में मेरे देश में गहरी प्रशंसा का भाव है। आपके गणितज्ञ और वैज्ञानिकों, आपके खगोलशास्त्रियों, जिनमें कॉपरनिकस का नाम सवसे महत्वपूर्ण है, आपके कलाकारों, लेखकों और संगीतज्ञों के प्रति हमारे देश में वहुत सम्मान है। हम पोलैण्ड में भारतीय विद्याओं के अध्ययन की परम्परा का वहुत सम्मान करते हैं। साथ ही भारत के चिन्तकों, प्रवुद्ध लोगों, कवियों और लेखकों का पोलैण्ड के लोगों और संस्थाओं के साथ होने वाले सांस्कृतिक आदान-प्रदान को हम अत्यन्त महत्व देते हैं।

पिछले दशक में पोलैण्ड में जो तेजी से परिवर्तन हुए हैं, उन्होंने न केवल यूरोप का ही स्वरूप बदलने में, बल्कि शीत युद्ध को समाप्त करने, तथा अन्तर्राष्ट्रीय संबंधों के आधारभूत रूपान्तर में उत्प्रेरक का काम किया है। पोलैण्ड की क्रान्ति में आपका व्यक्तिगत योगदान निर्णायक महत्व का रहा है। लोकतंत्र और बहुवाद नए विचार नहीं हैं, और मानवीय गरिमा की आकांक्षा भी उतनी ही पुरानी है, जितनी स्वयं मानवता है। फिर भी आपके प्रेरणास्पद नेतृत्व में इन्हीं मूल्यों के लिए संघर्ष करते हुए पोलैण्ड के लोगो ने इतिहास में नए अध्याय जोड़े हैं। दुनिया

पोलैण्ड गणराज्य के राष्ट्रपति श्री लेख वालेसा तथा श्रीमती वालेसा के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 3 मार्च, 1994

को यह जानकारी हो गयी है कि जब लोग संगठित हो जाते हैं, और जब आम लोग स्वाभाविक रूप से सही एवं गलत तथा न्याय एवं अन्याय में अन्तर करना जानते हैं, तव प्रेरित और सचेत होने पर वे अजेय हो जाते हैं।

अस्मिता और मित्रता की भावना भारत और पोलैण्ड के अनेक क्षेत्रो मे ...मित पारस्परिक संबंधों को जीवन-शक्ति देते हैं। आर्थिक और औद्योगिक ... उन सबधो के महत्वपूर्ण भाग है, जिससे दोनों देशों को लाभ हुआ है। ...बध खनन से लेकर औद्योगिक-मशीनरी, रसायन, धातु-उत्पादन और कृषि ...णों के निर्माण तक फैले हुए हैं। विज्ञान औार तकनीकी के क्षेत्र की सयुक्त ...जनाएं दोनों के लिए लाभदायक रही हैं। पारस्परिक व्यापार पर्याप्त रहा है, हमारे आर्थिक संबंधों को प्रोत्साहित करने के लिए "सयुक्त आयोग" एव ...युक्त व्यापार परिपद" जैसी संस्थाएं स्थापित की गई हैं। हमारे दोनों देशों में ... ही में जो परिवर्तन हुए हैं, उससे अब नए और प्रेरक दृष्टिकोण की जरूरत ... इस बारे में "सयुक्त व्यापार परिपद" ने दोनों देशों के उद्यमियो को निकट ...न मे जो भूमिका निभाई है, उससे हम उत्साहित है।

हम भारत मे खुले समाज के प्रति गहरे रूप से प्रतिबद्ध है। बहुवाद, सामजस्य और एकता की हमारी परम्परा और लोक-चेतना स्वाभाविक रूप से लोकतंत्र के विकास के लिए वातावरण तथा सभी के लिए बेहतर विश्व के निर्माण हेतु शक्ति प्रदान करती है।

जिस प्रकार हमारे दोनों देश जीवन की लोकतांत्रिक प्रणाली के लिए प्रतिबद्ध हैं, उसे देखते हुए यह स्वाभाविक है कि पोलैण्ड मे जो असाधारण परिवर्तन हुए है, वह दोनो देशो के समान मूल्यो एव विश्वासों पर आधारित हम दोनो देशों की मित्रता एव पारस्परिक सहयोग के अन्तर्सबंधों के और विकसित होने की आशा करते हैं। हमे विश्वास है कि आपकी इस यात्रा से भारत और पोलैण्ड के घनिष्ठ और सुदृढ़-मित्रता एव सहयोग के सबधों को नई प्रेरणा मिलेगी।

सांर्क के विकास के लिये मालदीव का योगदान

हमारे दोनों देशों के सम्बन्ध केवल भौगोलिक स्थिति से परे हैं। हमारे ऐतिहासिक सम्बन्ध हाल ही में विकसित हुए पारस्परिक सद्‌भाव, मित्रता और सहयोग के कारण सुदृढ़ होते रहे हैं। यह एक असाधारण बात है, जो मालदीव को दिये गये आपके नेतृत्व का परिणाम है। हमें इसलिए भी प्रसन्नता हो रही है कि आप अपनी जनता के भारी बहुमत से चौथी बार राष्ट्रपति निर्वाचित हुए हैं। आपको निर्वाचित करके मालदीव के लोगों ने सतुलित विकास, सामाजिक सद्‌भाव, शान्ति और हमारे क्षेत्र की स्थिरता के प्रति आपकी दूरदर्शितापूर्ण नीतियो की सराहना की है, और समर्थन किया है।

भारत अपने आसन्न पड़ोसियो से अच्छे सम्बन्ध कायम रखने को उच्च प्राथकिता देता है। भारत और मालदीव के बीच सौहार्दपूर्ण, सद्‌भाव से युक्त तथा समस्याओं से मुक्त पारस्परिक सम्बन्ध हैं, जो दूसरों के लिए अनुकरणीय हो सकते है, हम दोनो राष्ट्र मानवीय प्रयासों के सभी क्षेत्रों के अपने सबधो को और ठोस, मजबूत तथा विविधता प्रदान करने के लिए समान रूप से प्रतिवद्ध हैं। इस सदर्भ मे मुझे खुशी है कि इदिरा गांधी स्मारक चिकित्सालय शीघ्र ही शुरू होने जा रहा है, जिसकी आधारशिला आपने रखी थी। मुझे आशा है कि यह चिकित्सालय हमारे घनिष्ठ तथा पारस्परिक लाभदायक सहयोग का जीवन्त प्रतीक बनेगा।

अपने लोगों की बदलती हुई जरूरतों का मुकाबला करने के लिए आपकी सरकार ने संवैधानिक और सामाजिक-आर्थिक सुधार के जो कदम उठाए हैं, उन्हे हम देखते रहे हैं और उनकी सराहना करते हैं। आपके यह कार्य अपने देश के पारम्परिक मूल्यों और उसकी अद्वितीय प्राकृतिक धरोहर की रक्षा करते हुए किए है। हमारे लक्ष्य और हमारा दृष्टिकोण समान है। भविष्य की सामाजिक, आर्थिक पूंजी निवेश के लिए हमारी ही तरह आपका यह प्राथमिक लक्ष्य है— "आर्थिक रूप से लाभकारी युवा वर्ग तैयार करना।" आपके प्रयासों में यथा-क्षमता सहयोग देकर हम भारतीयों को खुशी होगी।

मालदीव गणराज्य के राष्ट्रपति श्री मामून अब्दुल गयूम एव श्रीमती गयूम के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवसर पर, नई दिल्ली, 21 मार्च, 1994

भारत की लोक-चेतना और संस्कृति सामंजस्य, समन्वय तथा प्रत्येक धर्म, सस्कृति और भापा के लोगों के सम्मान पर आधारित हैं। इन स्वाभाविक और मूलभूत मूल्यो को बढ़ाना और मजबूत करना हमारी राष्ट्रीय प्राथमिकता है। हम मालदीव के लोगो से आपके उस आह्वान का स्वागत करते हैं, जिसमें आपने उनसे कट्टरतावाद के खतरे के प्रति सचेत रहने को कहा है। कट्टरतावाद और आतंकवाद दक्षिण-एशिया की स्थिरता और सुरक्षा के लिए मुख्य चुनौतियाँ हैं।

हमारा उप-महाद्वीप ऐतिहासिक और भौगोलिक रूप से परस्पर गुथा हुआ और अविभाज्य हैं। संघर्ष से नहीं, बल्कि आपसी सहयोग से ही इस क्षेत्र मे शान्ति रह सकती है, और हम प्रगति के रास्ते पर बढ़ सकते हैं। यह संतोष की बात है कि सार्क सगठन दिनोंदिन क्षेत्रीय आर्थिक सहयोग का एक प्रभावकारी वाहन बनता जा रहा है। पारस्परिक हित के विविध क्षेत्रों मे बढ़ रहा आदान-प्रदान तथा सार्क तरजीही व्यापार प्रबध सम्बन्धी रूपरेखागत समझौते पर हस्ताक्षर होना अन्तरक्षेत्रीय सहयोग का एक प्रमुख स्तम्भ है।

सार्क के विकास के लिए अनुकूल वातावरण तैयार करने में मालदीव का बहुत योगदान रहा है। महामहिम, वर्प 1994 को "सार्क वर्प" के रूप मे घोषित करने के आपके प्रस्ताव का बहुत स्वागत हुआ है। यह आपके योगदान और वचनवद्धता के सर्वथा अनुकूल है कि दक्षिण एशियाई युवा संबंधी मंत्री स्तर सम्मेलन इस वर्प मालदीव मे होगा।

भारत सार्क के प्रति प्रतिवद्ध है, और हम इसे सार्क के सदस्य राष्ट्रो के लाभ के लिए और सुदृढ करने की पूरी इच्छा रखते हैं। हम इसे एक उत्साहजनक चिन्ह मानते हैं कि सार्क महत्वपूर्ण मामलों में एक-सी स्थिति लाने का प्रयास कर रहा है। सार्क मे आपकी सतत रूचि हम सबको प्रगति के समान लक्ष्यों की ओर आगे महत्वपूर्ण कदम उठाने को प्रोत्साहित करता रहेगा।

समझौतों का उत्साहपूर्ण कार्यान्वयन

हम लोगो के सम्बन्धों के सूत्र आधुनिक काल में हमारे राष्ट्रीय कवि रविन्द्रनाथ टैगोर द्वारा 70 वर्प पूर्व की गई अर्जेन्टीना की यात्रा मे ढूढे जा सकते हैं। टैगोर ने "पुरबी" की रचना व्यूनस आयर्स के निकट की थी, जो "वि[illegible] को समर्पित है। संस्कृत में इसका अर्थ होता है — जीत। सचमुच [illegible] अर्थो मे भारत को अर्जेन्टीना के निकट ले गए और आपके देश मे [illegible] हमारे सम्वन्धों की उत्तम भावनाओ के लिए पृष्ठभूमि प्रदान [illegible]

हम दोनो देशो की मित्रता और सहयोग के सम्बन्ध भौग[illegible] परे विकसित हुए हैं। विभिन्न रूचियो एवं विश्व व्यवस्था के [illegible] विचार रखने वाले दो वड़े राष्ट्रो के रूप मे भारत और अर्जे[illegible] पर सार्थक आपसी कार्यकलाप और संरचनात्मक सहयोग [illegible] की है। व्यापार, सस्कृति, आर्थिक, वैज्ञानिक और तकनीकी [illegible] से ही मौजूद हैं। मुझे दृढ़ विश्वास है कि इन समझौतों का [illegible] हमारे पारस्परिक सम्वन्धों को सुदृढ़ आधार प्रदान करेगा।

हाल ही के वर्पो मे विकास के विभिन्न क्षेत्रो मे अर्जे[illegible] और उपलब्धियों को हमने देखा और सराहा है। यह प्रभा[illegible] आपकी सरकार की व्यावहारिक नीतियों के निर्भीक अनु[illegible] हमने भारत में मूलभूत आर्थिक परिवर्तन और पुनर्रचना के [illegible] सुधार के कार्यक्रमो को आगे ले जाने के लिए दृढ़-निश्[illegible] है कि भारत और अर्जेन्टीना एक-दूसरे के अनुभवो से म[illegible] [illegible]स्परिक लाभ उठा सकते हे। हमारी विकसित होती हुई आर्थिक क्षम[illegible] [illegible]ग के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान करती है, जिसे हमें गहरा वनाने का [illegible] करना चाहिए।

उत्तर-शीत युद्ध काल की यह मांग है कि सभ[illegible] [illegible]ष्ट्र शाति की सुरक्षा [illegible] अन्तर्राष्ट्रीय सवधों के नए एव अधिक स्थायी आधार को विकसित करने [illegible] प्रयत्न करे। यह सुनिश्चित करना सभी जिम्मेदार राष्ट्रो का कर्तव्य है कि [illegible]

अर्जेन्टीना गणराज्य के राष्ट्रपति डॉ कार्लोम साउल मेनेम के सम्मान मे आयोजित राजकीय [illegible] अवसर पर, नई दिल्ली, 31 मार्च, 1994

इतिहास को इस निर्णायक घडी में नई असुरक्षा के बीच न्यायपूर्ण और शान्तियुक्त विश्व व्यवस्था बनाने के उपाय समाप्त न हो जाएं। छद्म-युद्ध, राष्ट्रों द्वारा प्रायोजित आतंकवाद तथा सकीर्ण कट्टरतावाद अब स्वतंत्रता, लोकतत्र तथा मानव अधिकार के लिए अशुभ चुनौती बन कर उभरे हैं। इन खतरों का सकल्प के साथ मुकाबला किया जाना चाहिए, क्योंकि हम एक बेहतर विश्व बनाने का प्रयास कर रहे हैं।

भारत और अर्जेन्टीना ने "छः राष्ट्र-पांच महाद्वीप" की अपील पर हस्ताक्षर किए हैं, जिसमे घोपणा की गई है — "हमें मानव जाति की क्षमता पर यह विश्वास है कि वह वर्तमान विभाजन से ऊपर उठ जाएगा। . मानव जाति की शक्ति और प्रतिभा का उपयोग विनाश के पूर्ण अस्त्र के रूप मे नही बल्कि धरती के ससाधनों का दोहन करने के लिए किया जाना चाहिए, ताकि सभी लोग एक जैसी अतर्राष्ट्रीय व्यवस्था मे सुरक्षा एवं गरिमा के साथ जीवन जी सके, जो युद्ध से मुक्त हो तथा शान्ति और न्याय पर आधारित हो।" यह हम लोगो द्वारा दस साल पहले उठाया गया एक महत्वपूर्ण कदम था, और आज इसके पहले से भी अधिक जरूरत है।

उत्साहजनक वात है कि यह भावना बढती जा रही है कि सम्पूर्ण मानव जाति, लोग और राष्ट्रो का भविष्य एक दूसरे से जुड़ा हुआ है। हम सबके पास अनेक बडी और आम समस्याएं है। इसी प्रकार हमें उनका एक आम समाधान ढूढ़ना चाहिए, और उन्हे लागू करना चाहिए। आपके महाद्वीप मे, और हमारे यहा भी क्षेत्रीय सहयोग के लाभो को दिन-पर-दिन स्वीकार किया जा रहा है। क्षेत्रीय संगठन और कुछ नहीं, बल्कि एक वृहद विश्व की समझ, मित्रता और सहयोग तक पहुचने के हमारे समान उद्देश्य का ही एक माध्यम है।

जैसा कि विश्व-अन्तर्निर्भरता का तर्क व्यापक रूप से स्वीकार किया जा रहा है, इसी के अनुकूल विश्व अर्थव्यवस्था के स्वरूप और संरचना को पुनर्परिभापित करने के लिए आवश्यक उपाय करने होंगे, ताकि राष्ट्रो के पारस्परिक लाभ, समानता तथा आर्थिक सबधो के क्षेत्र मे आत्म-निर्भिरता की प्रवृत्ति के विकास को सुनिश्चित किया जा सके। यह जरूरी है कि इस प्रकार के आर्थिक विकास की क्षमता को नए अवरोधों द्वारा बाधित करने नहीं दिया जाना चाहिए और इसमें संकीर्ण राजनीतिक विचार नही आने चाहिएं। यह जी-15 का एक महत्वपूर्ण संदेश था, जिसके लिए हम दोनों प्रतिवद्ध हैं।

मुझे अच्छी तरह याद है कि श्रीमती इन्दिरा गाधी ने सन् 1968 की अपनी अर्जेन्टीना यात्रा में कहा था — "मानव जाति केवल तभी प्रगति कर सकती है, जबकि मस्तिष्कों के मेल-मिलाप तथा विचारों के प्रवाह को बोधित करने वाले सभी अवरोधों को हटा दिया जाए, ताकि सम्पूर्ण मानव जाति के विकास मे प्रत्येक राष्ट्र अपना योगदान कर सके।" समान भविष्य वाले इस एक विश्व के आर्दश को स्वीकार किया जाना चाहिए और हम दोनों महान राष्ट्रों को इसे समान उद्देश्य मानकर उसके लिए प्रयास करने चाहिएं।

बल्गारिया के लोगों का अदम्य साहस

हम एशिया से आए हैं, जिसके बाल्कन क्षेत्र से दो हजार वर्ष पुराने संपर्को की विरासत है। हमें इस बात का एहसास है कि हम ऐसी धरती पर पहुँचे हैं जहां स्लोवोनो सभ्यता जन्मी थी।

मानव ज्ञान मे सिरिल और मेथोडियस जैसे संतों का योगदान विश्वमान्य है, जिन्होंने अपनी लिपि के माध्यम से सपूर्ण सस्कृति को एक बौद्धिक आधार प्रदान किया था। प्रेसलाव और टर्नोव की ख्याति आपके देश की सीमाओं को लाधकर दूर-दूर तक फैली हुई है। बल्गारिया का इतिहास वीरो की गाथाओं से भरा हुआ है। साथ ही इसकी कथा उत्थान-पतन की कथा है। यह बल्गारिया के लोगों का अदम्य साहस ही था, जिसके बल पर उन्होने समय-समय पर इन उतार-चढ़ावो का मुकाबला किया। स्वतत्रता और स्वाधीनता के प्रति आपकी ललक को ह्रीस्तो बोतेव ने आह्वानपरक अभिव्यक्ति दी, जिन्होंने मातृभूमि के लिए सर्वोच्च बलिदान किया था। मुझे आज बोतेव की एक भावपूरक कविता याद आ रही है, जिसमे उन्होंने कहा है —

"जो व्यक्ति स्वतत्रता के लिए लड़ता-लड़ता मृत्यु को प्राप्त होता है, वह वास्तव मे कभी नहीं मरता। इसके लिए आकाश और पृथ्वी, पेड़-पौधे और जीव-जन्तु सदा विलाप करेगे, उसकी यश-गाथा के गीत गाये जाएगे।"

उनकी यह प्रार्थना भी मुझे याद आ रही है—

'हे परमात्मा। प्रत्येक व्यक्ति को स्वाधीनता की भावना से सराबोर कर दो।"

आपके राष्ट्रीय पुनरुत्थान को अनुप्रेरित और सुदढ़ करने मे फादर पाइसी, ...वाजोव तथा बल्गारिया के अन्य चिन्तको और लेखको की जो भूमिका रही है, उसकी हम भारतवासी मुक्त कठ से प्रशसा करते है।

महात्मा गांधी और पडित जवाहरलोल नेहरू के नेतृत्व मे अपने स्वाधीनता संग्राम को देखते हुए बल्गारिया के साथ भारत की समानुभूति होना स्वाभाविक

रात्रि-भोज के अवसर पर, सोफिया (बल्गारिया), 26 मई, 1994

है। इस संघर्ष के दौरान स्वाधीनता और लोकतंत्र के मूल्यों को हमने कानून और न्याय पर आधारित समाज के आधारभूत तत्वों के रूप में बनाये रखा।

हाल ही में संसदीय प्रतिनिधि मंडलों का जो आदान-प्रदान हुआ है, वह इस बात का प्रमाण है कि हमारे दोनों देश लोकतत्र और वहुवाद को कितना महत्त्व देते हैं। मेरे प्रतिनिधिमंडल मे प्रतिष्ठित सांसदों की उपस्थिति हमारे इस संवंध को एक बार फिर से बल प्रदान करती है।

हमारे द्विपक्षीय संबंध मैत्री और सहयोग की परंपरा पर आधारित हैं, और वे समय की कसौटी पर खरे उतरे हैं। इस समय मुझे श्रीमती इंदिरा गांधी के वे शब्द याद आ रहे हैं, जो उन्होने वल्गारिया की अपनी यात्रा की पूर्व-संध्या पर कहे थे—

''कुछ मित्र स्वार्थ के लिए बनाये जाते है। लेकिन कुछ मित्र ऐसे भी होते है, जो इस स्वार्थ की भावना से परे होते है। भारत और वल्गारिया की मित्रता इसी तरह की उच्च श्रेणी की है। यह मैत्री केवल अपने लिए ही काम करने की इच्छा से प्रेरित नहीं है, बल्कि ऐसे उद्देश्यो के लिए है, जो हमे प्रिय हैं। ये हैं-शातिपूर्ण विश्व और समरसता से युक्त मानवता की स्थापना।''

संतोप की बात है कि पिछले दो वर्षो से हमने भारत-वल्गारियाई मैत्री और सहयोग को सुदृढ़ और गहन बनाने के लिए कई पहल की हैं। हमारे राजनीतिक संबंधों मे दृष्टिकोण की समानता और आपसी समझ-वूझ है। हाल की यात्राओं से सहयोग के नये क्षेत्रों के द्वार खुले हैं। आज जो समझौता हुआ है, वह हमारे दोनों देशों की इस इच्छा की अभिव्यक्ति है कि दोनों देश पारस्परिक संवंधों के क्षेत्र और दिशा को बढ़ाना और फैलाना चाहते है।

विद्वानों, कवियों और प्राच्य विद्याविदों के प्रयासो से भारत और वल्गारिया के बीच सद्भाव और समझदारी का एक अक्षुण भण्डार वना है। हमारे दोनों देशों के अनेक यशस्वी सांस्कृतिक राजदूतों में रवींद्रनाथ टैगोर एवं कांचो कानेव दो ऐसे नाम है, जिन्होंने हमारे दोनों देशों के बीच हमारे संवंधों के सार-तत्त्व को समृद्ध किया है, तथा हमारे दोनो देशों के लोगों को एक-दूसरे को वेहतर ढग से समझने में मदद मिलेगी, विशेपकर तब, जब एक-दूसरे के अनुभवों की जानकारी प्राप्त करना पारस्परिक रूप से लाभकारी हो। वल्गारिया और भारत में जो परिवर्तन हुए हैं, उनसे हमारी अर्थव्यवस्थाओं के वीच नई संपूरकताओं का सृजन हुआ है, तथा सहयोग के नई संभावनाओं के द्वार खुले हैं। आपके देश में प्रगति की

प्रक्रिया का मार्ग प्रशस्त करने के लिए निजीकरण पर बल दिया जा रहा है, तथा वैयक्तिक ऊर्जा और प्रतिभाओं को प्रोत्साहित किया जा रहा है। पिछले तीन वर्षो मे हमने भी भारत में अपनी अर्थव्यवस्था के मूलभूत पुनर्गठन तथा सुधार के कार्यक्रम लागू किए हें, ताकि उद्यमशीलता की भावना को प्रोत्साहन मिल सके और उत्पादन क्षमता बढ़ सके। हमारे उद्यमियों को चाहिए कि वे द्विपक्षीय परिप्रेक्ष्य और तीसरी दुनिया मे उभर रहे बाजार का पूरा-पूरा लाभ उठाएं। मेरे प्रतिनिधिमंडल में अग्रणी उद्योगपत्तियो की उपस्थिति भारत के इस दृढ़ संकल्प का द्योतक है कि वह बल्गारिया के साथ अपने आर्थिक क्रियाकलापों को विविधता प्रदान करना चाहता है, तथा उन्हे विस्तृत और गतिशील बनाना चाहता है।

इस बात को उत्तरोत्तर स्वीकृति मिल रही है कि आज हम परस्पर-निर्भर विश्व मे रह रहे है। अतः यह सुनिश्चित करना आवश्यक है कि विभिन्न हितों तथा दृष्टिकोणो में न्यायोचित एवं शांतिपूर्ण ढंग से सामंजस्य स्थापित किया जाए। आर्थिक विकास के लिए शाति और स्थायित्व नितात आवश्यक हैं, और विकास अलग-थलग रहकर नहीं हो सकता, बल्कि यह सार्वभौमिक अर्थव्यवस्था में पूर्ण भागीदारी से ही संभव हे।

हम पारस्परिक न्याय, अंतर्राष्ट्रीय शांति एवं विश्व के कल्याण के लिए बल्गारिया के साथ राजनीतिक, आर्थिक सहयोग तथा सांस्कृतिक आदान-प्रदान के एक नए युग का सूत्रपात करना चाहते हैं।

विकास के समान अवसर

आपके नए संविधान के अन्तर्गत निर्वाचित इस प्रथम राष्ट्रीय असेम्बली को सम्बोधित करने का मुझे जो अवसर मिला है, इसे मैं अपना सौभाग्य मानता हूँ। मै सम्माननीय सदस्यों को अपनी ओर से, अपने शिष्टमडल की ओर से तथा भारत की सरकार, संसद तथा लोगों की ओर से हार्दिक शुभकामनाएं देता हूँ, तथा आप सबका अभिनदन करता हूँ।

अनेक वर्षो तक एक सांसद रहने के नाते इस अवसर पर मैं आप सबके साथ एक विशेप प्रकार का लगाव महसूस कर रहा हूँ। मुझे अपने गणराज्य के प्रारंभ के वे दिन याद आ रहे हैं, जब हमारी पहली संसद बनी थी। उस समय यह हमारे नवोदित राष्ट्र का सौभाग्य था कि इसकी बागडोर सभालने वाले प्रथम प्रधानमंत्री पं0 जवाहरलाल नेहरू एक सच्चे लोकतांत्रिक थे। मुझे उनके शब्द अच्छी तरह से याद हैं; जिन्हें मैं उद्धृत करता हूँ —

''लोकतंत्र केवल राजनीतिक ही नहीं है, केवल आर्थिक भी नहीं है, बल्कि यह एक मानसिकता है। इसके मायने है कि जहां तक संभव हो, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में सभी लोगों को समान अवसर मिले, अर्थात् लोगों को अपनी तरक्की करने की तथा अपनी सामर्थ्य और योग्यता के अनुसार काम करने की आज़ादी हो, आपस में सहनशीलता का भाव हो, भले ही आपके विचार एक-दूसरे से मेल न खाते हों।''

आज पं0 जवाहरलाल नेहरू की 30वीं पुण्यतिथि है। मैं इस दूरदर्शी अद्वितीय विश्व नेता को अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ, जिन्होने संसदीय लोकतंत्र की बहुमूल्य सेवा की। पं0 नेहरू भारत की लोकतांत्रिक संस्थानों की शक्ति तथा प्रक्रियाओं मे सदैव विद्यमान हैं।

वास्तव में विश्व भर की राजनीतिक गतिशीलता में उनका योगदान स्थायी महत्व का है।

बल्गारिया गणराज्य की राष्ट्रीय असेम्बली मे, सोफिया (बल्गारिया), 27 मई, 1994

अपने देश में प्रथम बहुदलीय चुनावों के बाद एक लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित संसद के रूप में आप एक नई व्यवस्था के मार्ग-दर्शक हैं। आप अपने लोगो द्वारा अभिव्यक्त की गई आकांक्षा का प्रतिनिधित्व करते हैं, तथा मैं विश्व के सबसे बड़े लोकतंत्र की ओर से आपको सफलता की शुभकामनाएं देता हूँ।

लोकतंत्र के आवश्यक तत्व : इसकी भावना, अवधारणाए, प्रणाली, प्रथाएं तथा परम्पराओं का प्राचीन काल से ही भारत में विकास किया गया है। दूसरों के विचारों और मान्यताओं के प्रति सम्मान तथा विभिन्न समुदायों के सह-अस्तित्व के प्रति वचनबद्धता हमारी राष्ट्रीय विरासत के अंग हैं। प्राचीन काल के हमारे बड़ो में सामंजस्य, सहिष्णुता तथा सहयोग का दृष्टिकोण निहित है। भगवान बुद्ध के करुणा का संदेश तथा महान सम्राट अशोक के शिलालेख बहुवाद और समन्वय की दिशा मे अत्यंत प्रभावकारी थे।

वास्तव में यदि हमारे इतिहास से हमें कोई बौद्धिक तथा सामाजिक धरोहर विरासत में मिली है, तो यह है — समझदारी, समन्वय तथा सामंजस्य की भावना। ये वे प्रमुख अवधारणाए हैं, जो हमारी सभ्यता को जीवन्तता प्रदान करती हें तथा हमारे राजनीतिक जीवन में लोकतंत्र उनकी अभिव्यक्ति है।

इसी प्रकार विधान के प्रति सम्मान हमारी लोक चेतना का एक शास्वत तत्व रहा है। ऐतिहासिक काल से ही हमारे समाज में विधान को सत्य माना गया हैं। यह केवल सुविधा के लिए निर्मित एक संस्था नहीं है न ही व्यवस्था सुनिश्चित करने की एक प्रणाली मात्र है, बल्कि हमारे देश तथा उसकी संवैधानिक प्रणाली का नैतिक आधार हे। हमारे एक महान राजनीतिक दार्शनिक ने इसका सार निकालते हुए कहा है, "विधान और नैतिकता विश्व के आधार हैं।"

लोकतंत्र के संचालन की विधियां भी प्राचीन भारत में ही विकसित की गई। इनमें शामिल थे · प्रातिनिधिक सभाओं का गठन और संचालन, समितियाँ एवं उप-समितिया, कोरम, मतदान, गुप्त मतदान, दल सचेतक, संकल्प तथा प्रतिनिधिक मतदान। कार्रवाईयों का रिकार्ड रखने तथा पूर्वोदाहरणों का इस्तेमाल करने की भी प्रथा थी। इन सबने भारत को ऐसे तत्व, शक्ति तथा राजनीति का लोकतांत्रिक रूप दिया, जो विचार एवं आत्मा की विरासत से प्रेरित थे, और जो पूरे भारत में व्याप्त थे। इसने ग्राम परिषद जैसी लोकतांत्रिक प्रणाली की एक स्थायी परम्परा का निर्माण किया, जो आज देश भर में एक आधुनिक संसदीय लोकतंत्र को मूलभूत आधार प्रदान करती हें।

लोकतांत्रिक मूल्यों और परम्पराओं को एक सुगठित ससदीय लोकतत्र में परिवर्तित करने मे हमारे स्वतंत्रता आंदोलन के प्रमुख तत्वो का भी प्रभाव था। महात्मा गांधी द्वारा प्रेरित स्वतत्रता संग्राम के आधार थे — मानवीय स्वतत्रता, गरिमा तथा अहिंसा के प्रति गहरी वचनबद्धता। यह एक अद्‌भुत शातिपूर्ण सघर्ष था, जिसने सेनानियो में इस विश्वास का सचार किया कि भारत में कोई भी राजनीतिक परिवर्तन शांतिपूर्ण ही होना चाहिए। इसके अतिरिक्त एक ऐसे समाज में, जिसकी प्रवृत्ति अत्यन्त व्यक्तिपरक थी, यह स्वाभाविक ही था कि एक ऐसी राजनीतिक प्रणाली को चुना जाए, जो मानवाधिकारो की रक्षा करे तथा व्यक्ति स्वतत्रता को छीने बिना जनता की भागीदारी को प्रोत्साहित करे ... तक चलें स्वतंत्रता सघर्ष ने हमारे नेताओ को आत्मनि... और इस बात का निर्धारण करने का भी अनुभव प्रदान कि... विमर्श की समयावधि क्या होनी चाहिए। मार्च, 1931 मे ... काग्रेस के अधिवेशन में राष्ट्रपिता महात्मा गांधी द्वारा प्रस्... पर एक ऐतिहासिक संकल्प पारित किया गया था। मूल... स्वतंत्रता के अतिरिक्त महात्मा गांधी ने इस प्रस्ताव मे अल्प... भापा एवं लिपि के संरक्षण, सार्वजनिक रोजगारो में महिला... भेदभाव को समाप्त करने तथा लोकतत्र एव एक कल्याणका... के लिए आवश्यक अन्य अनेक बातों का भी उल्लेख किया...

अत भारत मे संसदीय लोकतत्र का अपनाया जाना समन्व... की संस्कृति का प्रतीक था। ससदीय लोकतंत्र भारत की सास्कृतिक... उसकी राजनीतिक आकांक्षाओं के सर्वथा अनुकूल राजनीतिक प... है

पंडित नेहरू ने 25 फरवरी, 1956 को अपने एक भाष... कतंत्र के बारे मे कहा था .

> "उद्देश्यों की प्राप्ति का यह उपयुक्त जरिया है, ... कि यह शातिपूर्ण तरीका है। दूसरे यह उन दबावों को दूर ... है, जो अन्य प्रकार की सरकारें व्यक्तियों पर डाल सकती है यह प्रशासन द्वारा लगाए गए अनुशासन को आत्मानुशासन में बदल देती है ... लोकतत्र व्यक्ति को अपनी तरक्की करने का मौका देता है।"

चुनाव लोकतान्त्रिक प्रक्रिया का एक महत्वपूर्ण अंग है, क्योकि राजनीतिक सत्ता के सक्रमण का स्वरूप ही इसकी विशेपता है। हम आज गर्व से एक सुदृढ़ एव जीवन्त लोकतत्र होने का दावा कर सकते हैं, जिसमे सभी प्रकार के विचारों को मुक्त अभिव्यक्ति मिलती है। हमारे यहा अभी तक दस आम चुनाव हो चुके है, तथा सन् 1991 मे हुए चुनावों में लगभग 28 करोड़ लोगों ने अपना-अपना प्रतिनिधि चुनने के लिए वोट डाले।

लोकतत्र मात्र चुनाव ही नहीं है। प्रत्येक राजनीतिक प्रक्रिया के अपने नियम-विनियम, अपनी परम्पराए एवं प्रथाएं होती हैं। एक सच्चा लोकतंत्र व्यक्ति तथा राज्य के अधिकारो एव दायित्वो के बीच समन्वय स्थापित करता है। लोकतांत्रिक राजनीति निरन्तरता तथा परिवर्तन के सिद्धान्तों का मूर्तरूप है, जो एक राष्ट्रीय जीवन के लिए अत्यत महत्वपूर्ण है। और अतत एक लोकतांत्रिक प्रणाली को जो प्रवृत्तियां बनाती और तोडती है, वे है—आत्मानुशासन तथा संयम, क्योकि अनुशासन और स्वार्थ त्याग की भावना द्वारा ही समस्याओ का शांतिपूर्ण ढग से समाधान किया जाता है। और जहा शाति और समझदारी होती है, वहीं लोकतान्त्रिक आम राय कायम हो सकती है, और राष्ट्रीय विकास हो सकता है। मेरे विचार से एक बहुआयामी सच्चे विकास की पृष्ठभूमि एक लोकतांत्रिक सस्कृति होनी चाहिए।

लोकतत्र मे सर्वांग दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है। लोकतान्त्रिक जीवन बहुआयामी होता है। चूकि इसमें समस्त मानवजाति बराबर मानी जाती है, इसलिए इसका आर्थिक आयाम भी अत्यत महत्वपूर्ण है। निस्सदेह स्वतंत्रता निरर्थक है, यदि समानता न हो, और समानता निरर्थक है, यदि इसमे लोगो की आर्थिक प्रगति न हो। अत लोकतान्त्रिक विचार तथा सामाजिक-आर्थिक न्याय के बीच एक जीवन्त संबध है।

यह राष्ट्रीय असेम्बली, जिसे सम्बोधित करने का आज मुझे गौरव प्राप्त हुआ है, बल्गारिया के लोगो की आकाक्षाओं और उनके द्वारा लोकतांत्रिक ढंग से निर्वाचित सरकार के बीच एक महत्वपूर्ण सबध का प्रतीक है। हम भारतवासी आपकी ससदीय प्रणाली के सुदृढीकरण को बहुत महत्वपूर्ण मानते हैं, क्योकि हम इसे दोनो देशों के बीच एक सशक्त बन्धन के रूप मे देखते हैं।

यही कारण था कि आपके सविधान के लागू किए जाने के बाद हमारी लोकसभा के अध्यक्ष के नेतृत्व मे सासदों का एक शिष्टमडल बल्गारिया आया था, और हमने भी श्री योरदानोव के नेतृत्व में एक संसदीय शिष्टमंडल का भारत

मे स्वागत किया था। आने वाले वर्षों में हम इन संस्थागत संबंधो को सुदृढ़ बनाने की आशा करते हैं।

सनं 1879 में आप के देश में तुसोवो द्वारा एक संविधान तैयार किया गया था, जिसमें निर्वाचित एक सदन वाली संसद की परिकल्पना थी। ऐतिहासिक परिस्थितियों के कारण उसे लागू नहीं किया जा सका। सौ से भी अधिक वर्षो के बाद लोकतांत्रिक युग का प्रादुर्भाव हुआ है, और भारत के लोगों को आपकी इस उपलब्धि से अत्यंत प्रसन्नता है।

मैं यहाँ ऋग्वेद की संस्कृत मे कुछ पंक्तियां उद्धृत करना चाहूँगा, जो मानवजाति का प्राचीनतम् उपलब्ध साहित्य है। ये पंक्तियां प्रातिनिधिक संस्थानों के [illegible] रूप से प्रासंगिक हैं, तथा हमारी साझी विरासत है ·

सं गच्छध्वं सं वदध्व स वो मनांसि जानताम्।
समानो मत्र: समिति : समानी समानं मन: सह चित्तम् [illegible]
समान् मंत्रम् अभि मंत्रये व·
समानी व आकूतिः समाना हृदयानि व
समानम् अस्तु वो मनो यथा वः सुसहासति॥

(एक साथ बैठो, एक साथ वार्ता करो, एक जैसा सोचो। तुम्हारे [illegible] हों, समिति समान हों, चिंतन समान हो, विचार समान हो। मैं तुम्हारे [illegible] एक समान उद्देश्य रखता हूँ तुम्हारे उद्देश्य समान [illegible] हृदय [illegible], तुम्हारे मस्तिष्क एक से हों, ताकि सभी खुशी [illegible])

शिक्षा से व्यक्तित्व का निर्माण

ग्ह मेरे लिए अत्यत गौरव की बात है कि सोफिया के सेट क्लीमेट ओरड्स्की त्रिश्वद्यिालय द्वारा मुझे विधि में डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्रदान की जा रही न यह मानता हूँ कि यह अवसर भारत की बौद्धिक परपरा को बल्गारिया मान्यता प्रदान करने तथा हमारे समान मूल्यों एवं सभी के कल्याण के हमारे ग्यो का प्रतीक है।

सभ्यता के विकास मे ज्ञान की खोज करना एक सतत् प्रयास रहा है, जिसकी गति के साथ-साथ मानवजाति का विकास हुआ। इसका मूल स्रोत मनुष्य का अपने बारे मे, अपने अस्तित्व , अपने उद्देश्य और अपनी नियति के बारे मे जानने की जिज्ञासा रहा ह। सत्य की यही खोज हमे विवेचन, अन्वेपण, निष्कर्ष तथा सत्य का प लगाने की क्षमता विकसित करने को प्रेरित करती है। प्रत्येक पीढ़ी अपनी अग पीढ़ी के लिए अपनी प्रगति की एक अमूल्य धरोहर छोड़ जाती है, तथा ज्ञान प्राप्ति और मानव कल्याण के लिए उसके प्रयोग की प्रक्रिया शिक्षा का मुख उद्देश्य है। इस प्रकार शिक्षा की एक नैतिक प्रासगिकता होती है, जो इसके उ्य और इसके महान लक्ष्य का निर्धारण करती है। वास्तव मे ज्ञान, जिसमे खोज की प्रक्रिया निहित है, ज्ञान से व्युत्पनन विधि, जिसका उपयोग वास्तविक स्थितिया का नियमित करने के लिए किया जाता है, सत्य तथा अन्तिम लक्ष्य के रूप मे मानव कल्याण की भावना — ये सभी लम्बे समय से एक सपूर्ण इकाई क अग माने जाते रहे है। और जिसमे से प्रत्येक एक दूसरे के बिना अधूरा है।

इतिहास हमे बताता है कि सभी सस्कृतियों ने शिक्षा को मूल्यो का सचार करने से जोडा। हमारे प्राचीन ग्रन्थ उपनिपदों ने छात्रो के लिए एक सदेश के रूप में इसका संक्षिप्त सार प्रस्तुत किया, जो आज भी उतना ही प्रासंगिक है, जितना उस समय था

''सदा सत्य बोले, धर्म पर चले, सच्चे ज्ञान तथा प्रगति के लिए निरंतर प्रयत्नशील रहें, सदा कल्याण की नेह राह पर चले, विश्व को उसी निष्ठा से ज्ञान

सोफिया विश्वविद्यालय (बल्गारिया) मे, बल्गारिया, 27 मई, 1994

दे, जिस निष्ठा से स्वयं ज्ञान अर्जित किया है, प्रतिदिन जीवनपर्यन्त इसी प्रकार का आचरण करें, और इस प्रकार रचनात्मक रूप से आगे बढ़ते हुए व्यवहार करें।''

शिक्षा व्यक्तिगत तथा सामूहिक दोनों ही प्रकार के व्यक्तित्व का निर्माण करती है। मानवजाति की अन्य सभी चीजों की तरह इसका प्रयोग समाजसेवा के लिए अथवा दमन के लिए किया जा सकता है। निस्सदेह इसके व्यवहारिक एव भौतिक लाभ हैं, जो अपने आप में महत्वपूर्ण है, लेकिन इसके महत्व को देखते हुए नैतिकता के बिना शिक्षा की सकल्पना सभव नही है।

आपके विश्वविद्यालय के संरक्षक सेंट क्लीमेंट ओहरिद्स्की शिक्षा ... आयामो के एक शक्तिशाली उदाहरण है। ओहरिद् विद्यालय, जिसकी उन्होंने ... की, बल्गारिया में व्यवस्थित शिक्षा का पर्याय है, जो आपके देश की ... बौद्धिक एवं सास्कृतिक प्रगति के लिए उत्तरदायी है। इसके पाठ्यक्रम ... प्राकृतिक विज्ञान तथा धर्म विज्ञान शामिल था।

कई वर्षो से इस विश्वविद्यालय ने आपके समाज के लि... वाले उद्देश्यों एवं लोक चेतना का पोपण किया है। इससे सम्म... स्वजनत्व निर्मित करने वाली विविध सांस्कृतिक धाराओ की पुष्टि, ... हुई है।

मानवजाति में विभिन्नता हर जगह नजर आती है, जो भूगोल त... की अनिवार्यताओं के अनुरूप होती हैं। प्रत्येक संस्कृति ने अपने ... साहित्य, अपनी कला और सगीत की रचना की है, जिनमे स्थानीयत... साथ सार्वभौमिकता का पुट भी परिलक्षित होता है।

ऐसे देश बहुत कम हैं, जिन्हे भारत की तरह विभिन्न बौद्धिक ... समागम का सौभाग्य प्राप्त हुआ है। प्रारम्भ से ही हमारी प्रवृत्ति साम... समझ-बूझ पर आधारित थी, जिसने सभी ओर से उत्कृष्ट एवं रचनात्मक प्रभावों का स्वागत किया, सत्य के प्रति विभिन्न दृष्टिकोणों को ग्रहण किया तथा, यह विश्वास करते हुए कि प्रत्यक्ष विभिनताओ में एकता अन्तर्निहित होती है, उनका सम्मान किया भगवद्गीता में एक श्लोक है :

सर्वभूतेपु येनैः काम
भावम् अव्ययम् ईक्षते।

अविभक्तम् विभक्तेपु
तद् ज्ञानम् विधि सात्विकम्॥

(जो पत्यक्ष विभिन्नताओ मे भी एकत्व देखता है, वही सत्य का ज्ञाता है।)

इसी नर सदियों से भारतीय सस्कृति की समृद्धि, व्यापकता और जीवनंतता आधारित की है। भारत विश्व के सभी धर्मो का गेह और आश्रय-स्थल बना। भारत मे ईसाई धर्म का आगमन सन् 52 मे धर्म प्रचारक संत थामस के पदार्पण के साथ हुआ था, जिन्होंने दक्षिण भारत मे सात गिरजाघरों की स्थापना की थी। अत भारत मे ईसाई धर्म का आगमन यूरोप में इसके प्रादुर्भाव से कई शताब्दी पूर्व हो चुका था।

राष्ट्रपिता महात्मा गाधी ने "धर्म ऐसे विभिन्न मार्ग है, जो एक ही बिंदु पर आकर मिलते हैं", कहकर भारतीय चिन्तन का सारतत्व प्रस्तुत किया।

जब भारत और बल्गारिया की तरह एक दूसरे से पर्याप्त दूरी पर स्थित सभ्यताएं फैलती है, और एक दूसरे से पारस्परिक समझ-बूझ स्थापित करती है, तो यह खुलेपन और सार्वभोमिकता की भावना ही है, जो सहजानुभूत रूप से व्यक्त होती है। भारत और बल्गारिया दोनों ही एक ऐसी परम्परा के उत्तराधिकारी हैं, जो अपनी विरासत के सकारात्मक तत्वों की रक्षा तथा विकास करते हुए प्रत्येक सस्कृति के अच्छे और प्रासगिक तत्वो को आत्मसात करते हैं। मानव जाति की प्रगति के लिए ज्ञान और सार्वभोमिक मूल्यो की खोज की समान इच्छा आधारित संबंधो से बेहतर और कोई सबंध नहीं है।

भारत को समझने और उसकी व्याख्या करने के लिए बल्गारिया के बुद्धिजीविया, विशेपकर सोफिया विश्वविद्यालय के बुद्धिजीवियों के प्रयासों को देखकर मुझे विशेप सन्तोप हुआ। 19वीं शताब्दी मे भारत विपयक अध्ययन केन्द्रों की स्थापना मे रेकोवेस्की एव सिलीमिनस्की की भूमिका अच्छी तरह ज्ञात है। आपके राष्ट्रीय पुनरुत्थान से भारतीय लोगो और उनकी संस्कृति में आपकी दिलचस्पी और बढ़ी है। इस सदर्भ मे सिसमानोव तथा अनदाव जैसे विद्वानों के योगदान का स्मरण करना समीचीन होगा। विचारों और सम्पर्को के इस सतत प्रवाह मे सन् 1926 मे रवीन्द्रनाथ टैगोर की बल्गारिया यात्रा अपना एक विशेप स्थान रखती है, तथा विशेप उल्लेख के योग्य है। वे अपनी इस यात्रा से पूर्व भी यहा जाने जाते थे। बल्गारिया में मेटोडी वेचरोव तथा अन्य लेखकों के द्वारा गीताजलि

की उनकी कविताओं के अनुवादों तथा निकोलाई रिनोव की कृतियों के द्वारा उन्होंने बल्गारिया के बुद्धिजीवियों की कल्पना शक्ति को प्रभावित किया।

दोनो देशों के बीच साहित्यिक और सांस्कृतिक क्रियाकलापों मे पाठक वर्ग के माध्यम से पर्याप्त वृद्धि हुई है। हमारे रामायण, महाभारत तथा पचतन्त्र जैसे महाकाव्य बल्गारिया में सुविख्यात हैं। ठीक इसी प्रकार प्रेमचन्द तथा मुल्कराज आनन्द जैसे आधुनिक रचनाकारों की कृतियां भी। इवान मार्को तथा बोरिस जार्जोव के चित्रों पर भारत का प्रभाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। जब हम एक दूसरे के प्रति अपनी आंतरिक भावना व्यक्त करने की कोशिश करते हैं, तो हम स्वाभाविक रूप से समान अनुभवो के प्रति प्रेरणा की प्रतीक्षा करते हैं। आपके राष्ट्रीय पुनरुत्थान और हमारे स्वतत्रता सघर्ष में समानताए थीं। रकोवेन्स्की के सन् 1857 के इस आहवान को कुछ भारतीय बेहतर तरीके से व्यक्त कर सकते थे कि "भारत भारतीय रहा है, भारत को भारतीय ही होना चाहिए भारत भारतीय ही रहेगा।" आप सभी को यह जानकर आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि हरिस्तो बीतेव तथा हरिस्तो स्मीरेस्की की कृतियां भारतीय भापाओ मे अनुदित हुए हैं। प्रो0 कांचो कानेव ने वेदो का अनुवाद करने तथा बल्गारिया ओर भारत के पुरातन धर्म ग्रन्थों के बीच सम्पर्को का अध्ययन करने और साथ ही गाधी तथा नेहरु के दर्शन का प्रतिपादन करने के लिए अपना जीवन समर्पित कर दिया। इस प्रकार हमारे दोनों देशो के ज्ञान की परम्परा मे उनका योगदान एक उल्लेखनीय स्थान रखता है।

भारत-बल्गारियाई सबंध इस बात के द्योतक हे कि ज्ञान की पिपासा राष्ट्रो के बीच एक प्रभावी संघटक शक्ति है। वह समय अब समाप्त हो गया हे, जब सस्कृति और भापा को एकान्तिक माना जाता था। शिक्षा मन-मस्तिष्क को उदार बनाने की एक प्रक्रिया है, जिसे अंध राष्ट्रभक्ति ओर असहिष्णुता के खतरो के प्रति जागरूकता पैदा करनी चाहिए। इसका कार्य एकता के सूत्र मे बाधना, सुदृढ़ करना तथा समृद्ध बनाना होना चाहिए। हमारे इस एकाकार विश्व के सामने दु साध्य समस्याए हैं, जिनके समाधान के लिए सर्वसम्मत हल तलाशना ही होगा। यदि हम मानव जाति की प्रगति के प्रति समर्पित हैं, तो हम सभी का यह दायित्व है कि उन मूल्यों को बढ़ाएं, जो मानव मात्र के लिए लाभकारी है।

मानवता, शान्ति और मानवजाति की उन्नति के लिए पवित्र दृष्टिकोण भावी पीढ़ी की आवश्यकताए हैं। शिक्षा के द्वारा यह बात मन में बैठा दी जानी चाहिए

कि ये बाते अत्यत आवश्यक है, तथा हमारे भविष्य के प्राणधार है। हमारे दोनो देशों के शैक्षिक समुदाय, चिन्तक, लेखक व कवि, वैज्ञानिक एवं प्रौद्योगिकीविद् इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए एक दूसरे से सहयोग करके महत्वपूर्ण योगदान कर सकते हैं।

हैं। श्री गुलाम नबी आजाद जम्मू-कश्मीर से हैं तथा केन्द्रीय नागर विमानन एवं पर्यटन मंत्री हैं। श्री अरविंद नेताम कृषि राज्य मंत्री हैं तथा वे भारत के सबसे बड़े राज्य से हैं। श्री सलमान खुर्शीद विदेश राज्य मंत्री हैं, जो मेरे देश के तृतीय राष्ट्रपति डॉ0 जाकिर हुसैन के नाती है। इस शिष्टमंडल में श्री सुशील कुमार शिंदे हैं, जो ससद सदस्य हैं और भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के महासचिव भी है। सांसद श्री व्ही नारायणसामी हैं, जो काग्रेस ससदीय दल के सचिव भी हैं। सासद श्री शिवाजी राव गिरधर पाटिल सहकारी आदोलन के नेता हैं। सांसद श्री सैयद सिब्ते जी विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी से संबद्ध स्थायी संसदीय समिति के अध्यक्ष है। सासद श्री रामदास अग्रवाल राजस्थान से है, जहा उनका वह दल सत्ता में हैं, जो केन्द्र न विपक्ष का दल है। सांसद श्री शंकर दयाल सिंह, बिहार से हैं, जहा उनका दल सत्ता में है। ये हिंदी के एक जाने-माने लेखक एवं साहित्यकार हैं। सासद मौलाना ओवेदुल्ला खान आजमी भी इसी दल से हैं, तथा अरबी के विद्वान है। वे जिस र ज्य से है, उसकी जनसंख्या 13 करोड़ 90 लाख है (1991 मैं)। सांसद श्री एस मचद्रन पिल्लई भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी-मार्क्सवादी की पोलित ब्यूरो के सदस्य । यह पार्टी दो राज्यो में सत्ता में है। सांसद श्री लोकनाथ चौधरी लोक के सदस्य है, तथा ससद मे अपने दल भारतीय कम्युनिस्ट पार्टी के ता है। प्रकार मेरे देश की विभिन्न राजनीतिक विचारधाराओं का प्रतिनिधित्व मौजूद जो रोमानिया की लोकतांत्रिक परिवर्तनों के प्रति अपना समर्थन व्यक्त करता

रोमानिय के लोगों को स्वतत्रता और लोकतत्र आसानी से प्राप्त नहीं हुई है, इसीलिए यह और अधिक मूल्यवान हो गई है। हम आपके राष्ट्रीय ध्वज में लाल पट्टी के महत्त्व को अच्छी तरह समझ सकते हैं, जो उन लोगों को अमरत्व प्रदान करती है, जिन्होने रोमानिया की स्वतत्रता और सप्रभुता के लिए अपना खून बहाया है। मैं उनके साहस और त्याग के प्रति अपनी श्रद्धांजलि अर्पित करता हूँ।

अधिकांश देशों का यह अनुभव रहा है कि स्वतंत्रता को कायम रखना तथा एक स्वीकार्य शासन प्रणाली की स्थापना करना उतना ही चुनौतीपूर्ण कार्य है, जितना की स्वतंत्रता के लिए संघर्ष करना।

निस्संदेह कुछ ऐसे मूल्य एवं सिद्धांत हैं, जो मार्गनिर्देशक सिद्धातों का कार्य करते है। राजनीतिक बहुवाद को पूरी तरह से स्वीकार करने की आवश्यकता

एक सच्चे लोकतंत्र की अन्तर्निहित विशेपता है। मानवाधिकारों तथा व्यक्तिगत स्वतंत्रता को सुनिश्चिय किसी भी सभ्य समाज का आधार माना जाना चाहिए। इनके अपने ही माध्यम और सुरक्षा उपाय होने चाहिए; जैसे स्वतंत्र न्यायपालिका तथा स्वतंत्र प्रेस।

इसके साथ ही यह भी मानना महत्वपूर्ण है कि स्वतन्त्रता अपने आप मे साध्य नहीं है, वल्कि यह मूल्यों, आदर्शो तथा वांछित उद्देश्यो के अनुरूप मानवीय स्थितियों को श्रेष्ठ वनाने की दिशा में एक कठिन यात्रा की शुरुआत है। इस यात्रा की कठिनाइयॉ कम हो जाती हैं, यदि इसके लिए सारा देश [illegible] पूरे देश की एक राय हो, तथा लोकतंत्र के तरीको एव प्रणालियो का [illegible] सहारा लिया जाए।

लोकतंत्र की संस्था से ही समाज में व्याप्त मतभेदो का अन्त [illegible] वल्कि इसके विपरीत विचार, अभिव्यकित ओर वोलने की [illegible] अनेक प्रकार के विचार उत्पन्न होते हैं। इन मतभेदो मे सामंजस्य [illegible] एक आम राय कायम करना, तथा वीच का एक ऐसा मार्ग [illegible] न्यायोचित हो, तर्कसंगत हो, तथा सवको स्वीकार्य हो, एक वहुत ही [illegible] काम है। इसके लिए अनुभव, अन्तर्दृष्टि, अपने विचारो से अलग दूसरो के विचारो के प्रति सहनशीलता के साथ-साथ मेल-जोल और वातचीत के द्वारा समझौता करने की इच्छा-शक्ति की भी आवश्यकता होती है।

लोकतंत्र का सवसे वड़ा लाभ यह है कि यह व्यक्तियो दलो एव समुदायों के विभिन्न हितों के वीच शान्तिपूर्ण तथा सृजनात्मक ढग से एक ऐसे तरीके से सामंजस्य वैठाने की सवसे अच्छी प्रणाली है, जो सभी के लिए लाभकारी हो।

रोमानिया के लोगों ने स्वतंत्रता और लोकतत्र के पक्ष मे जो निर्णायक चुनाव किया है, उसमें भारतीय लोक चेतना की गहरी अनुगूज मिलती है। यह स्वाभाविक ही है कि दोनों देशो की संसदों को, जो दोनों देशवासियो की इच्छा ओर शक्ति का प्रतिनिधित्व करती हैं, दोनो देशो को एक-दूसरे के निकट लाने मे विशेप भूमिका निभानी होगी। हमारे वीच पहले से ही संपर्क स्थापित हो चुके हैं, तथा यह सतोप की वात है कि संसद के स्तर पर पारस्परिक कार्यकलाप वढ़ रहा हैं। आपके नए संसद भवन मे भारतीय कक्ष की स्थापना करने की आपकी पहल से हम विशेप रूप से अभिभूत हैं।

भारत और रोमानिया के बीच सास्कृतिक एवं व्यापारिक सबंध कई सदियो पहले से है। अब यह शुभ अवसर है कि ससदीय सरकार वाले दोनों लोकतान्त्रिक देशो -भारत और रोमानिया के सबधो को हमारे लोगों तथा विश्व शान्ति एव कल्याण के लिए स्वीकार्य, व्यापक और तेज किया जाए।

मानव कल्याण के लिए ज्ञान का प्रयोग

बुखारेस्ट विश्वविद्यालय से डॉक्टरेट की मानद उपाधि प्राप्त ... अत्यधिक सम्मान का अनुभव कर रहा हूँ।

मैं यह कहना चाहूँगा कि आज का यह समारोह ... शिक्षाविदों और शैक्षिक संस्थाओं की इस समान इच्छा का ... तथा अनुसंधान, संस्कृति, कला तथा विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी ... लाभ के लिए सहयोग के क्षेत्र विस्तृत किये जाये, और ...

मेरे विचार मे बुखारेस्ट विश्वविद्यालय इस प्रकार के ... करने के लिए पूरी तरह उपयुक्त है। यह विश्वविद्यालय ... रूप में प्रसिद्ध है, जिसका रोमानिया के भौतिक, बौद्धिक तथा ... पर बहुत ही अच्छा प्रभाव पड़ा।

यह उल्लेखनीय है कि सामंजस्य एव समन्वय, सत्य की ... से मानव कल्याण के लिए ज्ञान के प्रयोग पर बल देने संबंधी ... के सिद्धांत, भारत में शिक्षा के उन आदर्शो ओर उद्देश्यो के ... हमने प्राचीन काल से लेकर आज तक पल्लवित-पुष्पित ...

बुखारेस्ट विश्वविद्यालय का गूढ़ आदर्श वाक्य "... बुद्धि ..." इस बात को दर्शाता है कि हम दोनो की बौद्धिक परम्परा ... दूसरे मे गुथी हुई हैं। "नैतिकता एवं बुद्धिमत्ता" एक ... आदर्श है, जिसे यह महान् विश्वविद्यालय श्रेष्ठता प्रदान ... लिए भी सर्वोपरि है, जो इसकी दहलीज पार करके जाते ... भारत की बौद्धिक तथा आध्यात्मिक चिंतन की परंपरा मे निहित ...

भगवद्गीता में उदात्त तथा प्रवुद्ध लोगों की चार ... का वर्णन करते हुए यह कहा गया है कि जो व्यक्ति सच्चरित्र और प्रबुद्ध है वहा सर्वश्रेष्ठ है। गीता का यह श्लोक इस प्रकार है:

बुखारेस्ट विश्वविद्यालय (रोमानिया) द्वारा डॉक्टरेट की मानद उपाधि के लिये आयोजित विशेष दीक्षात समारोह मे, रोमानिया, 1 जून, 1994

तेपा ज्ञानी नित्ययुक्त एकभक्तिर्विशिष्यते।
प्रियो हि ज्ञानिनोऽत्यर्थमह स च मम प्रियः॥

भगवद्गीता, 7-17

नैतिकता और बुद्धिमत्ता का सम्मिश्रण, जो आपका आदर्श-वाक्य है, तुरंत ही भारत और रोमानिया का आदर्श प्रस्तुत करता है। इससे निश्चय ही हमारी अपनी-अपनी सामाजिक अवस्थाओं के नियामक मानदंडों तथा मूल्यों में एकरूपता एव निरंतरता प्रतिबिम्बित होती है। हमें इस प्रेरणाप्रद विश्वास की नींव पर उन्नति करनी चाहिए।

पारस्परिक लाभ के उद्देश्य को लेकर एक-दूसरे की भापा मे साहित्यिक कृतियों के अनुवाद, उनकी व्याख्या तथा उन्हें लोकप्रिय बनाने के कार्य को प्रोत्साहित तथा तेज किया जा सकता है। इस संबध में पहले से ही भारत-रोमानयाई परंपरा है। 19वीं शताब्दी में रोमानिया के वे भापाशास्त्री, जो भारतीय विद्या की और प्रवृत्त हुए, जिसमें संस्कृत भी शामिल थी, ने विद्वता के क्षेत्र में एक सराहनीय कीर्तिमान स्थापित किया है। रोमानिया के महान् कवि मिहाईल मिनेस्कू ने पहली वार सस्कृत व्याकरण को रोमानिया में लिखकर और भारतीय साहित्य के विचारको को अपनी कविताओं में रोमानिया के लोगों के लिए प्रस्तुत करने का जो उत्कृष्ट कार्य किया है, उसके लिए वे हमेशा याद किए जाते रहेंगे। बोगड्रन हस्देयू, उनके शिष्य लाजार सैनियानू, सी डो. जार्जियन, वैसाईल बुरला, वैसाईल पागोर, अन्थेनेस्कू तथा अन्य विद्वान भी विशेप उल्लेख के योग्य हैं।

इन सबके योगदानों से रोमानिया के लोगों में भारतीय सस्कृति से परिचित होने तथा उसके लोकप्रिय होने की प्रक्रिया शुरू हुई।

सन् 1926 में रवींद्रनाथ टैगोर की रोमानिया की यात्रा और वहां उनकी व्याख्यान माला से यह प्रक्रिया और सुदृढ़ हुई। रोमानिया के कवि और दार्शनिक लुसियन ब्लागा के वारे में यह कहा जाता है कि वे रोमानिया में रबींद्रनाथ टैगोर के साथ घनिष्ठ रूप से जुड़े रहे थे।

भारत और रोमानिया की अकादमियों, संस्थाओं और विश्वविद्यालयों के सम्मिलित प्रयासों से ही दोनों देशों के बीच सांस्कृतिक एवं बौद्धिक क्रियाकलापों को व्यापक बना पाना सभव हो सकता है। यह कार्य हमारी विरासत की सपदा की पूरी-पूरी सराहना करने तथा आने वाले वर्पो में भारत एव रोमानिया के बीच

सद्भाव, मैत्री और सहयोग को सुदृढ़ एवं व्यापक वनने के
जाना चाहिए।

हाल ही के कुछ वर्षों में रोमानिया के लोग लोकतंत्र,
सम्मत एक ऐसी शासन व्यवस्था की ओर लौटे है,
के साथ-साथ स्वतंत्र प्रेस की व्यवस्था है। इन
ने स्वागत किया है। अब हमें लोकतांत्रिक
एक विश्व की स्थापना के लक्ष्य के प्रति हमारी
रोमानिया सबंधों में गुणात्मक और परिणामत्मक
करना चाहिए।

भारत से मैं त्रि-आयामी संदेश लाया हूँ।
सहयोग तथा समस्त मानवजाति को एक
समरसता।

नियामक आदर्श "नैतिकता और बुद्धि
सार्वभौमिक दृष्टिकोण परिलक्षित होता है।

हमारे प्राचीन ग्रंथ 'हितोपदेश' मे कहा गया है--

अय निजः परावेति गणनां लघुचेतसाम्।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥

(यह मेरा है, और यह पराया है, की भावना
वालों के लिए तो संपूर्ण विश्व ही परिवार के स

मुझे विश्वास है कि बुखारेस्ट विश्वविद्यालय
अन्य विश्वविद्यालय आने वाले वर्षो में इस दृष्टिकोण
का प्रयास करेंगे।

भारत-टोगो संबंध घनिष्ठ और मैत्रीपूर्ण

आपकी यह यात्रा मेरे देश में टोगो के किसी राष्ट्राध्यक्ष की प्रथम यात्रा है। इससे हमारे पारस्परिक सबंधो का नया अध्याय खुला है। भारत और टोगो के सबध हमेशा से ही घनिष्ठ और मित्रतापूर्ण रहे हैं, जो एशिया और अफ्रीका के लोगों के भाई-चारे के सबधों को व्यक्त करते हैं। हमारे ऐतिहासिक अनुभव एक जैसे रहे है, तथा हम दोनो ही राष्ट्रीय पुनर्निर्माण और विकास के कार्यो मे लगे हुए है। हम दोनों ने अपने लोगों की प्राथमिकता के अनुसार उनकी समृद्धि और हित के लिए काम किये है। साथ ही अपने-अपने क्षेत्रों मे शांति को बढावा देने के प्रयास किये हैं। गुटनिरपेक्ष आदोलन के सदस्य के रूप में अतर्राष्ट्रीय संबधों पर हमारे एक-से उद्देश्य है।

शीत युद्ध की समाप्ति के बाद आज विश्व अवसरों और चुनौतियों के चौराहे पर खड़ा है। मानवता केवल तभी आगे वढ़ सकेगी, जबकि हम सभी विवादो और प्रतिद्वंद्विताओ को किनारे करके अपने, तथा पूरे विश्व की समृद्धि के लिए स्वय को केन्द्रित करे। इस उद्देश्य से हमने भारत मे आर्थिक सुधार और उदारीकरण के कार्यक्रम शुरू किए हैं, जिसके लाभ दिखाई देने लगे हैं। हम यह चाहते हैं कि आर्थिक सुदृढीकरण की प्रक्रिया बिना कोई क्षति पहुँचाये आगे बढ़े। सच तो यह है कि हम समृद्धि और स्थायित्व को आगे बढ़ाना चाहते हैं, जो क्षेत्रीय सहयोग के लिए आवश्यक है।

हालाकि विश्व सहयोग तथा सामूहिक-प्रयास की ओर बढ़ रहा है, फिर भी कुछ ऐसी चुनौतियाँ उभरी हैं, जो हमारे इन प्रयासों के लिए खतरनाक हैं। कट्टरतावाद और मादक-पदार्थो की काली छाया धीरे-धीरे फैली है, जिससे हमारे समाज के आधारभूत मूल्यो को चुनौती मिली है। यह दुखद है कि इन्हें कुछ ऐसे देशों का सहयोग मिल रहा है, जो अपने संकीर्ण उद्देश्यों के लिए विश्व की शाति और स्थायित्व को भग करना चाहते है।

टोगो के राष्ट्रपति जनरल नासिगवे यादमा के सम्मान मे आयोजित राजकीय भोज के अवमर पर, नई दिल्ली, 27 सितवर, 1994

हम आपकी इस यात्रा को केवल हमारे पारस्परिक संबंधों को प्रेरित करने के रूप में नहीं ले रहे हैं, बल्कि इसलिए भी महत्व दे रहे हैं, क्योंकि आपने विश्व के मामलों में अपनी बुद्धिमत्ता और अनुभव की छाप छोडी है। आपके नेतृत्व में टोगो अफ्रीका महाद्वीप मे सामजस्य और बहुजातियता की आवाज़ रही है। आप पारस्परिक मामलों को बातचीत के द्वारा सुलझाने का समर्थन करते हैं, न कि हिंसा के द्वारा। यह विश्व के मामलों में हमारी भागीदारी की एक प्रमुख समानता है।

आपकी यह यात्रा हमारे दोनों देशों में हित के लिए पारस्परिक-कार्यकलापों को निश्चित रूप से बढ़ावा देगी। हमारे प्रथम प्रधानमत्री पंडित नेहरू ने सन् 1955 मे बांडुंग में आयोजित "एशियाई-अफ्रीका सम्मेलन" मे कहा था — "यह एशिया के ऊपर है कि हम अपनी सर्वोत्तम क्षमता के अनुसार अफ्रीका की मदद करे, क्योंकि हमारे दोनों महाद्वीप बहनों की तरह है।" इसी भावना के अनुरूप हम टोगो के लोगों के साथ उनके विकास में अपने अनुभवों को बॉटना चाहते हैं।

में आपके और आपके प्रतिनिधिमंडल के सुखद एवं सार्थक यात्रा की कामना करता हूॅ। आप अपनी यात्रा के दौरान हमारे यहां हो रही विकासात्मक गतिविधियों को देखेंगे, तथा हमारे सहयोग की भरपूर क्षमता का मूल्याकन करेंगे। आपकी यह यात्रा हमारे पारस्परिक संबंधों के लिए एक महत्वपूर्ण घटना होगी।

भाग ४

हिन्दी में अनुवाद

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी ने सन् 1936 में राष्ट्रभापा प्रचार समिति, वर्धा की स्थापना की थी। स्वतंत्रता की लड़ाई के समय बापू तथा हमारे महान नेताओं ने जन जागृति के लिए देश की महान भापाओं के महत्व को पहचाना था। लोकमान्य बालगंगाधर तिलक ने कहा था कि राष्ट्रीय स्वाभिमान और सुविधा की दृष्टि से हिन्दी उपयुक्त भापा है। आचार्य विनोवा जी ने हिंदी के लिए अपने प्राणों की बाजी लगा दी थी।

यह प्रसन्नता की वात है कि पिछले छप्पन वर्पो से संस्था का काम निरंतर चल रहा है। मैं चाहूँगा कि देश की भावात्मक एकता के लिए हिंदी साहित्य का अन्य भापाओं में तथा अन्य भापाओं के साहित्य का हिदी में अनुवाद हो। इसके साथ ही संविधान के अनुसार हिंदी अन्य भापाओं से शब्द स्वीकार कर अपने को समृद्ध करके हमारे देश की 'सामासिक संस्कृति' का प्रतिविंव वने।

हिंदी दिवस के अवसर पर मैं राष्ट्रभापा प्रचार समिति वर्धा की सफलता की कामना करता हूँ।

राष्ट्रभापा प्रचार समिति, वर्धा द्वारा हिदी दिवस समारोह के आयोजन पर, 3 सितवर 1992

संवाद समिति की भूमिका

भारतीय पत्रकारिता को देश के आम लोगों से जोड़कर उसे सच्चे जनमत का रूप देने में यूनीवार्ता संवाद समिति की महत्वपूर्ण भूमिका है। अपने एक दशक के काल में इसने हिंदी पत्रकारिता को उसका अपना मुहावरा दिया, तथा छोटे एवं मझोले समाचार पत्रों को मूल हिंदी भाषा में सामग्री उपलब्ध कराकर सहायता की।

मैं आशा करता हूँ कि यह संवाद समिति और भी अधिक आधुनिकतम संचार तकनीकी से युक्त होकर स्वस्थ समाचार संकलन एवं वितरण द्वारा हमारी लोकतांत्रिक प्रणाली को सुदृढ़ बनाने में योगदान करती रहेगी।

एक दशक पूरा किये जाने के अवसर पर मैं यूनीवार्ता संवाद समिति से जुड़े सभी को अपनी हार्दिक बधाई देता हूँ, और समिति के उज्ज्वल भविष्य की कामना करता हूँ।

सवाद ममिति के दशक पूरा किया जाने के अवसर पर, 5 मार्च, 1993

ब्रज की संस्कृति

ब्रज की संस्कृति अनुराग और मिठास की सस्कृति है। मध्यकाल में यह हमारे देश की संस्कृति तथा काव्य-रचना का केंद्र रहा है। श्रीकृष्ण की वाल-लीलाओं से पगी यह भूमि मध्यकाल के भक्तों की श्रद्धा भूमि रही है। श्रीकृष्ण के जीवन प्रसंगों तथा यहां की प्रकृति के उपकरणो को अपने भावों का आलंबन वनाकर सूरदास, नंददास, मीरा तथा रसखान आदि भक्त कवियों ने मानव की उदात्त चेतना को अभिव्यक्ति दी। यही अभिव्यक्ति हमें दक्षिण के आलवार सतो, तथा उत्तर-पूर्व के शंकरदेव, माधव देव एव बंगाल के चैतन्य महाप्रभु में मिलती है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि आकाशवाणी मथुरा-वृन्दावन केन्द ने अपनी स्थापना के पच्चीस वर्ष पूरे कर लिये हैं।

मेरा विश्वास है कि यह केन्द्र अपने रोचक एव शिक्षाप्रद कार्यक्रमों द्वारा इस मिट्टी की मानवीय संस्कृति को देश के कोने-कोने मे पहुँचायेगा।

आकाशवाणी के मथुरा-वृन्दावन केन्द्र के पच्चीस वर्ष पूरे किये जाने के अवसर पर, 26 जून, 1993

शिक्षक का दायित्व

[illegible]क्षक दिवस के अवसर पर देश मे शिक्षक समुदाय के सभी सदस्यो को बधाई और शुभकामनाए देते हुए मुझे अपार हर्ष हो रहा है।

डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन का जन्मदिन हम "शिक्षक दिवस" के रूप मे [illegible]नाते हैं। वे युवाओं एव उन विभिन्न शैक्षिक संस्थाओं, जिनको उन्होंने सुशोभित [illegible]किया, के कल्याण कार्य के साथ गहरे रूप से जुड़े हुए थे।

गुरू के प्रति अपरिमित श्रद्धा और सम्मान हमारी परंपरा की अद्वितीय विशेषता है। राष्ट्र की सेवा तथा मातृभूमि की एकता और अखडता की रक्षा के लिए हमारे युवकों एव युवतियो को प्रशिक्षित करने तथा उन्हे तैयार करने की विशेष जिम्मेदारी आज शिक्षकों पर पहले से कहीं अधिक आ गई है।

मै सभी भाई-बहनों से अपील करता हूँ कि इस पुनीत कार्य को पूरा करने में हमारे शिक्षकों को अपना सहयोग और सहायता प्रदान करें।

शिक्षक दिवस के अवसर पर, 5 सितम्बर 1993

मानव जाति के गौरव विवेकानन्द

स्वामी विवेकानन्द वेदान्त दर्शन के ऐसे प्रज्ञा [illegible] विचारों मे प्राचीन और आधुनिक, धर्म और [illegible] सन्तुलित समन्वय करके विश्व को शाश्वत जीवन [illegible] के विश्व धर्म महासभा में उन्होने सर्वधर्मसमभाव [illegible] सस्कृति की प्रतिबद्धता को दोहराते हुए [illegible]

"मै एक ऐसे धर्म का अनुयायी होने मे [illegible] ससार को सहिष्णुता तथा सार्वभौम स्वीकृति, [illegible] ही सब धर्मो के प्रति केवल सहिष्णुता मे ही विश्वास नही [illegible] को सच्चा मान कर स्वीकार करते है।"

स्वामी विवेकानन्द जी के विचारो मे हमें [illegible] समानतापूर्ण समाज की रचना, कर्म के प्रति अदमनीय लगाव [illegible] प्रेम तथा प्रगतिशील जीवन दृष्टि का संदेश मिलता है। महासागर [illegible] उसके ऊपर चमकते हुए मार्तण्ड की तरह पखर, किन्तु सान्ध्य [illegible] में डुबकी लगाने के लिए उद्धत दिनकर की तरह सौम्य, आकर्षक [illegible] प्रभावशाली यह व्यक्तित्व भारत के लिए ही नही, बल्कि सम्पूर्ण मानव जाति के लिए एक गौरव है।

मुझे यह जानकर हार्दिक प्रसन्नता हुई कि लिम्बडी मे ऐसे महान् व्यक्तित्व द्वारा स्थापित रामकृष्ण मिशन आश्रम का केन्द्र प्रारम्भ होने जा रहा है। मुझे विश्वास है कि गुजरात का यह द्वितीय केन्द्र "दीप-स्तभ" की तरह मानव जाति को सही रास्ता दिखाने वाला सिद्ध होगा।

मैं इस नए केन्द्र के उज्ज्वल भविष्य के लिए अपनी हार्दिक शुभकामनाए प्रेपित करता हूँ।

लिबडी मे रामकृष्ण मिशन आश्रम के केद्र की स्थापना के अवसर पर, 1 फरवरी, 1994

भाषायी सद्भाव

हमारी आजादी की लड़ाई के दौरान हिन्दी भापा सम्पूर्ण देश की भावनाओ के आदान–प्रदान की भापा रही है। इसके इसी गुण के कारण सविधान में इसे राजभापा के रूप में स्वीकार करके इस पर सामासिक संस्कृति को अभिव्यक्त करने वाली भापा बनने का दायित्व डाला गया। ऐसा तभी सम्भव है, जबकि हिन्दी भापा तथा हमारे राष्ट्र की अन्य भापाएं एक दूसरे से मिल–जुल कर एक दूसरे को विकसित करने का प्रयास करे। दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास जैसी संस्थाएं इस दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि दक्षिण भारत हिन्दी प्रचार सभा, मद्रास का 20 फरवरी, 1994 को 58वां वार्पिक दीक्षांत समारोह आयोजित किया जा रहा है।

मैं इस अवसर पर सभी उपाधि प्राप्तकर्ताओं को अपनी बधाई देता हूँ और आशा करता हूँ कि वे अपने प्रयासो से हमारी भापायी सद्भाव के द्वारा राष्ट्र की भावनात्मक एकता को और मजबूत वनाने का प्रयास करेगे।

दक्षिण भारत हिदी प्रचार सभा, मद्रास के 58वे दीक्षात समारोह के अवसर पर, 19 फरवरी, 1994

खादी-स्वदेशी एवं राष्ट्र प्रेम का प्रत.

हमारे स्वतत्रता संघर्ष के समय खादी स्वदेश
और शुद्ध चरित्र का भी प्रतीक थी। विन
जीवन जीने की एक पद्धति तथा सामाजिक प
थे। खादी के काम मे वे जीवन पर्यन्त लगे

मै समझता हूँ कि खादी के साथ इस
महत्व की बात है। यह विशेप लगाव न के
उपभोक्ताओ मे भी होना चाहिए। मेरा विश्वास है
मे इस बात की ओर भी ध्यान देगा।

मै खादी सभा के सम्मेलन की सफलता के लि
करता हूँ।

खादी सभा के सम्मेलन के अवसर पर, 15 मार्च, 1994

शहीदों को श्रद्धांजलि

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि भारत सघ में भोपाल राज्य के विलय संबंधी आन्दोलन मे भाग लेने वाले स्वतंत्रता सेनानियों की स्मृति मे 'यादगार ए-शहीद' विषय पर सम्मेलन का आयोजन किया जा रहा है।

इस आन्दोलन में मे भी सक्रिय रहा, और जब बरेली तथा बोरस बखर का दमन किया जा रहा था उस समय मैं भोपाल जेल में था। मुझे स्मरण है कि इन शहीदों की कुर्बानी ने इस आन्दोलन को बहुत बल दिया था, जिससे दमनकारी शासन समाप्त हुआ। इससे पूरे देश को सगठित करने के प्रयास को शक्ति मिली थी।

यह आवश्यक है कि हमारे स्वतत्रता सेनानियों के बारे में नई पीढी को जानकारी मिले, ताकि वे उनके जीवन से प्रेरणा पा सकें।

मैं चाहूंगा कि उस क्षेत्र में समाजोत्थान की कुछ ठोस यादगार बनाई जाए, जहां हमारे स्वतंत्रता सेनानी शहीद हुए थे।

मैं इस सम्मेलन की सफलता के लिए अपनी शुभकामनाएं प्रेपित करता हूं।

भोपाल राज्य के भारत मे विलय, सबधी आदोलन मे भाग लेनेवाले स्वतत्रता सेनानियो की स्मृति मे आयोजित "यादगार-ए-शहीद" सम्मेलन के अवसर पर, 1 अप्रैल, 1994

मादक पदार्थों से मुक्ति का संकल्प

नशीले पदार्थो का सेवन हमारे राष्ट्र के सामाजिक ताने-बाने को छिन्न-भिन्न करता है। इस लत का शिकार रोगी केवल अपने ही शरीर और दिमाग को नुक्सान नहीं पहुँचाता, बल्कि अपने परिवार को तबाह करता है, दूसरो के साथ अपने सबधो को बिगाडता है। ओर इस प्रकार का असंतुलन उसे अनेक सामाजिक कार्यो तथा समाज की शाति एव सद्भाव भग करने के लिए उकसाता है। इस बुराई को जड़ से उखाडने के महत्वपूर्ण काम में जो सरकारी और गैर-सरकारी ऐजेसिया लगी हुई हैं, उन्हे चाहिए कि इस गभीर समस्या को हल करने के लिए अच्छे तालमेल वाले दृष्टिकोण के सभी तरीको की खोज करे।

मादक पदार्थो के उपयोग एवं अवैध व्यापार के विरोध मे मनाये जाने वाले इस अतराष्ट्रीय दिवस के अवसर पर आइये, हम सब विश्व को इससे मुक्त कराने का सकल्प लेकर इस काम में लगें।

मैं उन सभी को अपनी शुभकामनाएँ देता हूँ जो मानवजाति की प्रगति और समृद्धि के लिए खतरनाक इस प्रवृत्ति से लड़ने और उसे समूल नष्ट करने के काम में लगे हुए हैं।

मादक पदार्थों के विरोध मे आयोजित अतर्राष्ट्रीय दिवस के अवसर पर, 22 जून, 1994

बापू को श्रद्धांजलि

इस बार दो अक्तूबर से हम महात्मा ... की 125वी जयन्ती मना रहे है।

बापू हमारे स्वतंत्रता आंदोलन ... ही नही थे, बल्कि वे हमारी स्वतत्रता की आकांक्षा के प्रतीक भी ... अपने देश की दबी हुई आवाज को बुलद किया।

उन्होंने हमे सत्य और नैतिकता ... और बताया कि समाज का विकास ओर अस्तित्व अहिंसा ... है। उनकी सत्याग्रह की भावना दुनिया के कोने-कोने के लोगों ... बुराइयो के विरुद्ध उन्हे सघर्प के लिए उत्साहित करती है।

बापू भारतीय जन-मानस से गहरे ... उनका यह दृढ विश्वास था कि हमारे समाज की नींव सर्व धर्म ... मिली-जुली सस्कृति पर आधारित है। वे कहा करते थे "सभी ... सभी मुझे उसी तरह प्रिय है, जिस तरह कि मेरा अपना ध... कथन उनके दर्शन का सार है और इसी के लिये उन्होंने आप... कुर्बानी दी। जन-समूह मे गहराई से डूबे रहने के कारण समाज के ... पास अपनी एक अनोखी अतर्दृष्टि थी। उनकी बाते हमें मानवीय ... पक्षो पर काम करने की प्रेरणा देती है, चाहे वह समाज सुधार हो ... आर्थिक विकास और सरकार का संचालन हो।

महात्मा गाधी का संदेश हमेशा प्र... बापू की हत्या पर पडित जी ने कहा था - "उन्होंने हम लोगों को ... रास्ता दिखाया। उन्होने हम लोगो को मरने का रास्ता दिखाया और ... इस पाठ को नही समझ सके तो बेहतर है कि हम उनकी कोई याद ... उनके लिए सबसे अच्छी श्रद्धाजलि यही होगी कि हम पूरे मन से ... दिखाए गए रास्ते पर चलें और अपनी जिदगी और मौत पर अपना ... आज के दिन बापू को दी गई यही सच्ची श्रद्धांजलि होगी।

महात्मा गाधी की 125वीं जयती के अवसर पर, ...

सत्याग्रह का दर्शन

उत्तरी बिहार मे चंपारन के गरीब किसान लबे समय से नील उगाने वाले अग्रेजों की तानाशाही से कराह रहे थे। दिसबर, 1916 में भारतीय राष्ट्रीय काग्रेस के इकतीसवे लखनऊ अधिवेशन मे उन्होने अपनी दु:ख भरी दास्तान सुनाई। जैसा कि राजेन बाबू ने चपारन सत्याग्रह का विवरण देते हुए कहा, इतिहास में पहली बार काग्रेस ने किसानो की शिकायते एक किसान के मुँह से सुनी। हालांकि बापू उस समय भारतीय राजनीतिक परिदृश्य मे नए थे, तथापि उन्होने उनकी तकलीफें ध्यान से सुनी। उनके अनुनय-विनय के उत्तर में उन्होने चंपारन आने का वायदा किया।

इस प्रकार बिहार के अपेक्षाकृत अपरिचित क्षेत्र मे यह सत्याग्रह शुरू हुआ, जो स्वाधीनता सग्राम के लिए एक उदाहरण बना। हमारे स्वतत्रता आदोलन मे 18 अप्रैल, 1917 एक ऐतिहासिक दिन है, जब बापू ने उपनिवेशवादियों की चपारन छोड़ देने की माग को अस्वीकार कर जेल जाना मजूर किया। उस समय बापू ने मजिस्ट्रेट के समक्ष जो कुछ कहा, वह हमारे सत्याग्रह का दर्शन बन गया। बापू ने कहा -

"मैने अपने लिए जारी किए गए आदेश का पालन करने से इकार किया है, न्यायिक सत्ता की अवमानना के लिए नहीं, बल्कि अपने अस्तित्व के उच्चतर न्याय के अनुपालन के लिए, अपनी आत्मा की आवाज के लिए।"

उनके इस निर्णय से औरो को भी सविनय अवज्ञा की प्रेरणा मिली। बापू ने दुनिया को दिखा दिया कि किस प्रकार दबाया-सताया, दीनहीन और निरक्षर आम आदमी भी खड़ा हो सकता है, तथा अत्याचारी को झुकने के लिए बाध्य कर सकता है। जब तक चंपारन सत्याग्रह अपनी तार्किक समाप्ति तक पहुँचा, मोहनदास करमचद गाधी "महात्मा गाधी" बन चुके थे।

चपारन वास्तव में हमारे राष्ट्रीय आंदोलन की एक युगातकारी घटना है। बापू ने स्वय "दक्षिण अफ्रीका मे सत्याग्रह" की भूमिका मे लिखा है कि चंपारन

श्री शकर दयाल सिंह की (महात्मा गाधी पर) पुस्तक हेतु, 2 दिसम्बर 1994

का संघर्ष पहला अवसर था, जब सत्याग्रह करना पड़ा, केवल तैयारी पर्याप्त नहीं थी।

यह सतोप की बात है कि बापू की 125वीं जयंती के अवसर पर चंपारन की गाथा को फिर से याद किया जा रहा है, और वह भी बिहार के एक लेखक द्वारा। श्री शंकर दयाल सिंह ने इस शताब्दी के आरंभ के गरीब किसानों के बयानो को संभाल कर रखने और उन्हे प्रस्तुत करने का एक महत्वपूर्ण कार्य किया है। किसानों के इन बयानों से विदेशी भूस्वामियो के प्रति उनके क्रोध और दर्द को महसूस किया जा सकता है। इसमे आशा की वह किरण भी देखी जा सकती है, जो अंततः हमारी आजादी की अग्रदूत बनी।

चपारन सत्याग्रह को एक स्थान पर प्रस्तुत करके श्री शकर दयाल सिह ने वास्तव में एक बहुमूल्य कार्य किया है। यह पुस्तक न सिर्फ ऐतिहासिक अभिलेख की दृष्टि से मूल्यवान है, अपितु शोपित व्यक्ति के आर्थिक-सामाजिक आधार को समझने के लिए एक अंतर्दृष्टि भी प्रदान करती है।

कला का उद्देश्य

कला का मूल उद्देश्य होता है – व्यक्ति की सरचनात्मक क्षमता को परिष्कृत करके उसे विस्तार देना। अपने स्वरूप में कला स्वयं असीम होती है। तूलिका का रंग, नृत्य के पदचाप, अभिनय की मुद्रा, सगीत की ध्वनि तथा साहित्य के भाव सभी तरह के बधन से परे होते हैं। इसलिए इसमे विश्व को जोडने का इतना अधिक सामर्थ्य होता है।

मुझे यह जानकर प्रसन्नता हुई कि जनवरी,1995 मे अवधेश प्रताप सिह विश्व विद्यालय रीवा में पूर्व क्षेत्र अन्तर्विश्वविद्यालय युवा उत्सव का आयोजन किया जा रहा है। मै आशा करता हूँ कि यह आयोजन हमारे युवाओ को सार्वजनिन बनाने मे सहायक सिद्ध होगा।

मै आयोजन की सफलता की कामना करता हूँ।

अवधेश प्रताप सिह विश्वविद्यालय रीवा मे पूर्व क्षेत्र अतर्विश्वविद्यालय, युवा उत्सव के आयोजन पर, 14 दिसम्बर, 1994

अनुक्रमणिका